स्वाध्याय स्वमन्थन स्वावलम्बन

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

उत्तर प्रदेश सरकार का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय

।। सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ।।

B.Ed. E- 06

Understanding Discipline and Subjects

(अनुशासन एवं विषय की समझ)

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज - 211013

www.uprtou.ac.in

टोल फ्री नम्बर- 1800-120-111-333

कुलपति

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

उत्तर प्रदेश सरकार का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय

संदेश

प्रयागराज की पवित्र भूमि पर भारत रत्न राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन के नाम पर वर्ष 1999 में स्थापित उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज उ0प्र0 का एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय है। यह विश्वविद्यालय उ0प्र0 जैसे विशाल जनसंख्या वाले राज्य में उच्च शिक्षा के प्रत्येक आकांक्षी तक गुणात्मक तथा रोजगारपरक उच्च शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराने में निरन्तर अग्रसर एवं प्रयत्नशील है। तत्कालीन देश की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों में एक वैकल्पिक व नवाचारी शिक्षा व्यवस्था के रूप में भारत में मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा प्रणाली का पदार्पण हुआ था, परन्तु वर्तमान परिस्थितियों तथा तकनीकी का सार्थक प्रयोग करते हुये मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा आज की सर्वोत्तम पूरक शिक्षा व्यवस्था के रूप में स्थापित हो चुकी है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली के सामने व्याप्त पाँच मुख्य चुनौतियों - (i) पहुँच (Access), (ii) समानता (Equity), (iii) गुणवत्ता (Quality), (iv) वहनीयता (Affordability) तथा (v) जवाबदेही (Accountability) को केन्द्र में रखकर घोषित देश की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP-2020) के प्रस्तावों को क्रियान्वित करने में उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय कृत संकल्पित है। उ0प्र0 की माननीय राज्यपाल एवं कुलाधिपति की सद्इच्छाओं के अनुरूप उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, शैक्षिक दायित्वों के साथ-साथ सामाजिक दायित्वों के निर्वहन में भी लगातार नवप्रयास कर रहा है। चाहे वह गाँवों को गोद लेकर उनके समग्र विकास का प्रयास हो या ग्रामीण महिलाओं, ट्रान्सजेन्डर व सजायाफ्ता कैदियों को शुल्क में छूट प्रदान कर उनमें आत्मविश्वास जागृति व उच्च शिक्षा के प्रति अलख जगाने का प्रयास हो।

राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए शिक्षा एक मूलभूत जरूरत है। ज्ञान-विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्रों में हो रहे तीव्र परिवर्तनों व वैश्विक स्तर पर रोजगार की परिस्थितियों में आ रहे परिवर्तनों के कारण भारतीय युवाओं को विभिन्न क्षेत्रों में गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर करेगा। इसीलिए विभिन्न क्षेत्रों में सफलता हेतु शिक्षा को सर्वसुलभ, समावेशी तथा गुणवत्तापरक बनाना समसामयिक अपरिहार्य आवश्यकता है। वर्तमान परिस्थितियों ने परम्परागत शिक्षा को और भी सीमित कर दिया है जिसके कारण मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा व्यवस्था ही एकमात्र पूरक एवं प्रभावी शिक्षा व्यवस्था के रूप में सार्थक सिद्ध हो चुकी है। ऐसी स्थिति में विश्वविद्यालय का दायित्व और भी बढ़ जाता है। इस दायित्व को एक चुनौती स्वीकार करते हुए विश्वविद्यालय ने प्राचीन तथा सनातन भारतीय ज्ञान, परम्परा तथा सांस्कृतिक दर्शन व मूल्यों की समृद्ध विरासत के आलोक में सभी के लिए समावेशी व समान गुणवत्तायुक्त शिक्षा सुनिश्चित करने तथा जीवन पर्यन्त शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए अपने शैक्षिक कार्यक्रमों में जागरूकता में प्रमाणपत्र, डिप्लोमा, परास्नातक डिप्लोमा, स्नातक, परास्नातक तथा शोध उपाधि के समसामयिक शैक्षिक कार्यक्रमों की संख्या तथा गुणात्मकता में वृद्धि की है।

शैक्षिक कार्यक्रमों में संख्यात्मक वृद्धि, गुणात्मक वृद्धि तथा रोजगारपरक बनाने के साथ-साथ प्रत्येक उच्च शिक्षा आकांक्षी तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए अध्ययन केन्द्रों व क्षेत्रीय केन्द्रों के विस्तार के साथ-साथ प्रवेश परीक्षा, प्रशासन तथा परामर्श (शिक्षण) में आनलाइन व्यवस्थाओं को सुनिश्चित किया गया है। विश्वविद्यालय कार्यप्रणाली में पारदर्शिता तथा जवाबदेही सुनिश्चियन की दृष्टि से तकनीकी के प्रयोग को बढ़ाया गया है। 'चुनौती मूल्यांकन' की व्यवस्था सुनिश्चित करने का कार्य किया गया है, तो शिक्षार्थी सहायता सेवाओं में भी वृद्धि की जा रही है। शिक्षार्थियों की समस्याओं के त्वरित निस्तारण हेतु शिकायत निवारण प्रकोष्ठ को सुदृढ़ करने के साथ-साथ पुरातन छात्र परिषद को गतिशील किया गया है।

"गुरुकुल से छात्रकुल" के सूक्त वाक्य को आत्मसात करते हुए विश्वविद्यालय ने शिक्षार्थियों को विश्वविद्यालय द्वारा तैयार किये गये गुणवत्तापूर्ण स्वअध्ययन सामग्री उपलब्ध कराने के साथ-साथ विश्वविद्यालय की वेबसाइट पर भी उपलब्ध कराया गया है। छात्रहित को ध्यान में रखते हुए शिक्षकों द्वारा तैयार व्याख्यान को भी ऑनलाईन उपलब्ध कराया गया है।

शोध और नवाचार के क्षेत्र में अग्रसर होते हुए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) नई दिल्ली तथा माननीय राज्यपाल एवं कुलाधिपति, उ0प्र0 की अनुमति से विश्वविद्यालय में शोध कार्यक्रम पुनः प्रारम्भ किया गया है तथा वर्ष पर्यन्त समसामयिक विषयों पर व्याख्यान, सेमिनार, वेबिनार तथा आनलाइन संगोष्ठियों आदि की श्रृंखला भी प्रारम्भ की गयी है। विभिन्न क्षेत्रों में रिसर्च प्रोजेक्ट सम्पादन पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया है। पुस्तकालय को अत्याधुनिक तथा सुदृढ़ बनाने हेतु कदम उठाये गये हैं। शिक्षकों व कर्मचारियों के स्वास्थ्य तथा कल्याण की योजनायें क्रियान्वित की गयी हैं।

प्रो0 सत्यकाम
कुलपति

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed. E- 06
Understanding Discipline and Subjects
(अनुशासन एवं विषय की समझ)

खण्ड – 01 : अनुशासनिक ज्ञान की प्रकृति एवं भूमिका **5–37**

इकाई 1 : अनुशासन की प्रकृति 5–16
इकाई 2 : ज्ञान के विकास में अनुशासन की भूमिका 17–27
इकाई 3 : अनुशासन में प्रतिमान विस्थापन 28–37

खण्ड – 02 : भाषाओं में विद्यालयी पाठ्यचर्या का विश्लेषण **40–97**

इकाई 4 : भाषा में विद्यालयी पाठ्यचयार्य की प्रमुख विशेषताएं 40–51
इकाई 5 : भाषा की विधियाँ 52–74
इकाई 6 : विद्यालयीय पाठ्यचर्या में भाषा की प्रासंगिकता 75–97

खण्ड – 03 : सामाजिक विज्ञानों में विद्यालयी पाठ्यक्रम का विश्लेषण **99–145**

इकाई 7 : सामाजिक विज्ञानों में विद्यालयी पाठ्यक्रम की प्रमुख विशेषताएं 99–111
इकाई 8 : सामाजिक विज्ञान की शिक्षण विधियाँ 112–133
इकाई 9 : विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक विज्ञानों की प्रासंगिकता 134–145

खण्ड – 04 : विज्ञानों में विद्यालयी पाठ्यक्रम का विश्लेषण **147–186**

इकाई 10 : विज्ञानों में विद्यालयी पाठ्यक्रम की प्रमुख विशेषताएं 147–157
इकाई 11 : विज्ञान की विधियाँ 158–176
इकाई 12 : विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान की प्रासंगिकता 177–186

खण्ड – 05 : गणित में विद्यालयी पाठ्यक्रम का विश्लेषण **188–239**

इकाई 13 : गणित में विद्यालयी पाठ्यचर्या की प्रमुख विशेषताएँ 188–200
इकाई 14 : गणित की विधियाँ 201–223
इकाई 15 : विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित की प्रासंगिकता 224–239

B.Ed. E-06 : Understanding Discipline and Subjects
(अनुशासन एवं विषय की समझ)

उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो. सत्यकाम	कुलपति उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

प्रो. पी.के. स्टालिन	निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो. पी.के. पाण्डेय	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो. छत्रसाल सिंह	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो. के.एस. मिश्रा	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो. धनन्जय यादव	विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रो. मीनाक्षी सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ. जी.के. द्विवेदी	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ. दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ. सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ. आकांक्षा सिंह	सह आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (इकाई– 1,2,3)
प्रो. पार्थ सारथी पाण्डेय	क्षेत्रीय निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, शिलांग, मेघालय (शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार) (इकाई– 4,5)
डॉ. जय शंकर सिंह	सहायक आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, सतीश चन्द्र कॉलेज बलिया (इकाई– 6)
डॉ. शक्ति शर्मा	आचार्य, बी.एड. विभाग, के.पी.बी.एड. ट्रेनिंग कालेज, प्रयागराज (इकाई– 7,8,9)
प्रो. नागेन्द्र कुमार	आचार्य, शिक्षा संकाय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (इकाई– 10,11,12)
डॉ. प्रतीक उपाध्याय	सहायक आचार्य, बी.एड. विभाग, के.एन.पी.जी. कॉलेज, ज्ञानपुर, सं. र. न., भदोही (इकाई– 13,14,15)

सम्पादक

प्रो. श्रवण कुमार	आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

परिमापक

प्रो. पी.के. पाण्डेय	आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्यक

डॉ. सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज– 211021

2024 (मुद्रित)

ISBN : 978-93-48270-38-2

सर्वाधिकार सुरक्षित इस सामग्री के किसी भी अंश को उ. प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठ्यक्रम सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आंकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन– उ. प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक– कुलसचिव, कर्नल विनय कुमार, उ. प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्रक : चंद्रकला यूनिर्वल प्राइवेट लिमिटेड, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज– 211006

खण्ड– 01 : अनुशासनिक ज्ञान की प्रकृति एवं भूमिका

खण्ड परिचय

यदि प्रश्न किया जाय कि शिक्षक विद्यालय में क्या करता है ? इसका उत्तर होगा कि शिक्षक विद्यालय में पढ़ाता है। इसके साथ ही अगला सवाल उठता है कि शिक्षक विद्यालय में क्या पढ़ाता है? ज्यादातर लोग कहेंगे कि वह विद्यार्थियों को विषय का ज्ञान प्रदान करता है। यह सत्य है किसी भी शिक्षक के लिए विषय का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। विषय के ज्ञान के साथ ही एक अच्छा अध्यापक बनने के लिए शिक्षण शास्त्र का ज्ञान होना भी आवश्यक है। इसलिए शिक्षक बनने हेतु, अपने विषय के साथ शिक्षण शास्त्र से सम्बंधित डिग्री जैसे कि बी.एड. भी करना आवश्यक होता है।

एक शिक्षक के लिए अपने विषय के ज्ञान के साथ यह जानना भी अत्यंत आवश्यक है कि कोई भी विषय क्यों विद्यालयी पाठ्यक्रम का हिस्सा बनता है। यह निर्णय किस आधार पर किया जाता है कि कौन सा विषय किस कक्षा में पढ़ाना प्रारंभ किया जाये? किस विषय के अंतर्गत क्या क्या पढाया जाये? यह अत्यंत आवश्यक है कि भावी शिक्षक यह समझें की विद्यालय में जो विषय पढाये जा रहे हैं उनका क्या आधार है? उनको पढ़ाने से विद्यार्थियों को क्या लाभ होगा? विभिन्न विषय किस प्रकार से विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में सहायक हो सकते हैं। विषय एवं अनुशासन का क्या आधार है? विषय एवं अनुशासन शब्द किन संदर्भो में प्रयुक्त होते हैं। अनुशासन का उद्भव किस प्रकार हुआ? इत्यादि।

प्रत्येक विषय का अपना महत्त्व है। अध्यापक को यह जानना आवश्यक है कि विषय अध्ययन अध्यापन की सुविधा के लिए बांटे गए हैं न कि ज्ञान को बाँटने के लिए, इन सभी मुद्दों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत खंड "अनुशासनिक ज्ञान की प्रकृति एवं भूमिका" पर चर्चा की गयी है।

प्रस्तुत खण्ड "अनुशासनिक ज्ञान की प्रकृति एवं भूमिका" को तीन ईकाइयों में बांटा गया है, जो इस प्रकार है–

इकाई 1 के अंतर्गत अनुशासन की प्रकृति का अध्ययन किया जायेगा। इस इकाई में अनुशासन शब्द के अर्थ, अनुशासन के ऐतिहासिक परिपेक्ष्य का वर्णन किया जायेगा एवं उनके विभिन्न उपागम की जानकारी प्रदान की गयी है। इसी के साथ शिक्षाशास्त्र को अनुशासन के रूप में प्रतिष्ठित किये जाने की समालोचना की गयी है।

इकाई 2 में ज्ञान के विकास में अनुशासन की भूमिका पर चर्चा की गयी है। ज्ञान की विभिन्न शाखाओं का उदय एवं ज्ञान की अवधारणा भी प्रस्तुत किया गया है। ज्ञान के प्रकार एवं ज्ञान के क्या स्रोत माने जाते हैं? विद्यालयी विषयों व् पाठ्यचर्या का निर्धारण किस प्रकार किया जाता है और पाठ्यचर्या निर्धारण के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य की चर्चा भी की गयी है।

इकाई 3 में अनुशासन के क्षेत्र में किस प्रकार परिवर्तन हो रहे हैं व् अनुशासन के प्रति नए दृष्टिकोण की चर्चा की गयी है। इस इकाई में यह भी चर्चा की गयी है कि विद्यालय में विभिन्न विषयों को केवल अकादमिक अनुशासन के परिप्रेक्ष्य से ही नहीं पढ़ाना चाहिए बल्कि बालक को ज्ञान के निर्माण की प्रक्रिया में भागीदार बनाने की आवश्यकता है।

इकाई– 1 : अनुशासन की प्रकृति

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 इकाई के उद्देश्य
1.3 अनुशासन शब्द का अर्थ
1.4 अनुशासन का उद्भव
1.5 अनुशासन के प्रमुख लक्षण
1.6 अनुशासन के उपागम
1.7 विषय व अनुशासन में अन्तर
1.8 शिक्षा एक अनुाासन के रूप में
1.9 शिक्षाशास्त्र का अन्तः अनुशासनात्मक रूप
1.10 सारांश
1.11 अभ्यास के प्रश्न
1.12 चर्चा के बिंदु
1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

किसी भी अध्यापक के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि वह विषय को केवल ज्ञान के सम्प्रेषण तक न समझे बल्कि ज्ञान के विकास की क्या प्रक्रिया रही? विषय विशेष में क्या नए कार्य हो रहे हैं? ज्ञान किस प्रकार संकलित किया गया? और आज विद्यालयों एवं उच्च शिक्षा संस्थानों में किस प्रकार विभिन्न अनुशासन एवं विषय का अध्ययन किया जा रहा है? विषय एवं अनुशासन में क्या अंतर है? विद्यालय पाठ्यचर्या में किन विषयों का होना आवश्यक है? क्या सभी विषय महत्वपूर्ण है अथवा कुछ नए ज्ञान का समावेश होना चाहिए? किसी भी अनुशासन के क्या लक्षण होते है? क्या शिक्षाशास्त्र एक अनुशासन है? इन सभी प्रश्नों को समझने व उनके समाधान तलाशने के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि अनुशासन के प्रत्यय को समझने का प्रयास किया जाये।

1.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. अनुशासन शब्द का अर्थ समझ सकेंगे।
2. अन्य सन्दर्भ में प्रयुक्त अनुशासन शब्द से विभेद कर सकेंगे।
3. अनुशासन के विकास का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य समझ सकेंगे।
4. अनुशासन के उपागम समझ सकेंगे।
5. अनुशासन एवं विषय के सम्बन्ध को समझ सकेंगे।
6. 'शिक्षाशास्त्र एक अंतर्विषयी अनुशासन है' इसकी समालोचना कर सकेंगे।

1.3 अनुशासन शब्द का अर्थ

अनुशासन लैटिन शब्द discipulus जिसका अर्थ शिक्षण अधिगम होता है और फ्रेंच शब्द disciplina जिसका अर्थ छात्र होता है से उत्पन्न हुआ माना जाता है। अनुशासन शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है। अनुशासन का एक अर्थ होता है नियंत्रित करना अर्थात् विद्यालयों में विद्यार्थियों को विशेष प्रकार का व्यवहार करने के लिए नियंत्रित करना। विद्यार्थियों को नियम के अनुसार कार्य करवाना अथवा उनको पुरूस्कार एवं दण्ड दे कर अनुशासित करना है।

अनुशासन का दूसरा अर्थ अर्थ अध्ययन क्षेत्र होता है। अनुशासन शब्द का प्रयोग अध्ययन क्षेत्र अथवा विषय वस्तु के सन्दर्भ में भी किया जाता है। अनुशासन का अर्थ ज्ञान की शाखा के अर्थ में प्रयुक्त होता है। अनुशासन ज्ञान की वह शाखा होती है जिसे अकादमिक रूप से सामजिक स्वीकृति प्राप्त होती है और अध्ययन के उस विशेष क्षेत्र में राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर विशेषज्ञों द्वारा कार्य किया जा रहा होता है। अकादमिक संस्थानों में ज्ञान की विभिन्न शाखाओं के लिए अनुशासन शब्द का प्रयोग करना प्रचलित रहा है। यहाँ पर अनुशासन शब्द का अर्थ ज्ञान की शाखा के सन्दर्भ में प्रयुक्त किया गया है।

आदि काल से मानव अपने अनुभवों को संचित करता रहा है और मानवीय ज्ञान में वृद्धि होती रही है। समय के साथ मानव ने यह भी समझा कि वर्तमान अनुभवों को संगठित कर भविष्य में उसका प्रयोग किया जा सकता है। इसी ज्ञान के संकलन का परिणाम मनुष्य की उन्नति में परिणित हुआ। मानव द्वारा संकलित ज्ञान को सुगमता की दृष्टि से व संकलन के लिए अनुशासन में विभाजित किया गया। शिक्षा संस्थानों में अध्ययन अध्यापन एवं शोध की सुगमता के लिए अनुशासन का विभाजन किया गया। जैसे–जैसे मानवीय ज्ञान में वृद्धि होने लगी उनके संग्रहण के लिए विभिन्न अनुशासन का जन्म हुआ। अनुशासन मानवीय अनुभवों, प्रयासों तथा मानसिक विकास का परिणाम होता है। अतः कहा जा सकता है समय के साथ जैसे–जैसे ज्ञान में वृद्धि होती गयी अध्ययन व संग्रहण की सुगमता के लिए ज्ञान को विभिन्न अनुशासनों में बांटा गया। शैक्षिक संस्थाए सुगमता के लिए विभिन्न संकाय एवं विभागों में विभाजित होती हैं और तद्नुरूप ज्ञान का विस्तार करती हैं।

शैक्षिक जगत में विद्यालय, महाविद्यालय व विश्वविद्यालय में जो विषय पढ़ाये जाते हैं वह विभिन्न अनुशासन के अंतर्गत ही आते हैं। प्रत्येक अनुशासन के अंतर्गत उसकी अपनी पाठ्यवस्तु, प्रविधियां व मूल्य होते हैं। उनकी अपनी ज्ञान प्राप्त करने की विधियाँ होती हैं। सीखा हुआ ज्ञान अथवा अनुशासन मानवीय अनुभवों प्रयासों तथा मानसिक विकास का परिणाम समझा जाता है।

पुस्तकालयों में भी पुस्तकों का संग्रहण करने के लिए उनको विभिन्न अनुशासन के आधार पर सुगमता से संग्रहित किया जाता है। मानव द्वारा संचित सूचना, ज्ञान एवं विवेक को अनेक अनुशासनों में विभक्त किया गया है और सूचना क्रांति के इस युग में नित नए ज्ञान में वृद्धि होती जा रही है। ज्ञान को अध्ययन एवं शोध की सुविधा के लिए अनुशासन में विभक्त किया गया। प्रायः एक अनुशासन ज्ञान की एक विशेष शाखा का प्रतिनिधित्व करता है। उदहारण स्वरुप मनोविज्ञान, विज्ञान एवं दर्शन आदि अलग अलग अनुशासन हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. अनुशासन शब्द किन–किन अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है ?

.....

.....

2. अनुशासन के विभाजन की आवश्यकता क्यों पड़ी?

.....

.....

1.4 अनुशासन का उद्‌भव

ज्ञान को संग्रहित करने और उसे अपनी आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाने के लिए अनुशासन का उदय हुआ। प्रारंभिक अनुशासन का उदय मानव की सामजिक एवं व्यावसायिक क्रिया से हुआ है। उदाहरण स्वरुप कृषि विज्ञान का सम्बन्ध खेती से, वाणिज्य का सम्बन्ध व्यापार से हुआ। मनोविज्ञान का सम्बन्ध व्यवहार से और शिक्षा का सम्बन्ध शिक्षण से है। कृषि एवं व्यवसाय की जानकारी मनुष्य अपने परिवेश से सीखता था। इसके अतिरिक्त मत्स्य पालन, पशु पालन, खाद्य संग्रहण, गृह निर्माण, शस्त्र निर्माण, आदि व्यावसायिक एवं सामजिक कुशलता व्यक्ति अपने परिवार, समाज व परिवेश से ही सीख लेता था।

सर्वप्रथम ज्ञान का अर्थ फिलोसोफी अथवा दर्शन का ज्ञान ही होता था। इसका अर्थ ही होता है ज्ञान के प्रति प्रेम। परन्तु समय के साथ जब ज्ञान का प्रचार प्रसार बढ़ने लगा और ज्ञान का संकलन प्रारंभ हुआ तब यह आवश्यकता हुई कि ज्ञान का समुचित प्रकार से वर्गीकरण किया जाना चाहिए। प्रारम्भ में निम्न तीन अनुशासन का ही अस्तित्व था।

(i) भाषा और साहित्य

(ii) गणित

(iii) दर्शन

औषधि शास्त्र, धर्म शास्त्र, कानून भी प्राचीन अनुशासन माने जाते रहे हैं. परन्तु उत्तरोत्तर कई अलग अलग अनुशासन का निर्माण हुआ। जैसे भाषा, राजनीती शास्त्र, साहित्य, अर्थशास्त्र आदि। बाद में ज्ञान को व्यवस्थित रूप से संस्थाओं में प्रदान किया जाने लगा। विश्वविद्यालयों में अध्ययन–अध्यापन की सुविधा के लिए विभिन्न अनुशासन के अंतर्गत अध्ययन–अध्यापन किया जाने लगा। 19वीं शताब्दी में जर्मनी व् अन्य विश्वविद्यालयो में अनुशासन शब्द का प्रयोग प्रचलित हुआ। 19वीं शताब्दी में ज्यादातर विश्वविद्यालयों में मुख्यतः निम्न तीन अनुशासन का अध्ययन कराया जाता था–

(i) भाषा एवं साहित्य
(ii) सामाजिक विज्ञान
(iii) प्राकृतिक विज्ञान

सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, मानव विज्ञान, आदि अनुशासनों का उदय हुआ। विज्ञान एवं तकनीकी की प्रगति के साथ विज्ञान की विशेष अध्ययन शाखाओं का उदय हुआ, जैसे– पादप विज्ञानं, जंतु विज्ञान, रसायन शास्त्र, भौतिकी, अभियांत्रिकी आदि। इस प्रकार के क्रमिक विकास प्रक्रिया में किसी अनुशासन में निहित मूल तत्व ही जिम्मेदार होते हैं। यदि किसी अनुशासन में कोई गुण इतना प्रभावी हो जाता है अथवा समय की आवश्यकता के कारण वह अपना स्वतंत्र अस्तित्व खोजने लगता है तब नए अनुशासन का जन्म होता है। जब किसी नवीन अध्ययन क्षेत्र का महत्त्व जीवन की उपयोगिता की दृष्टि से स्पष्ट हो जाता है तब उसे एक नए अनुशासन के रूप में मान्यता मिल जाती है।

२०वीं शताब्दी में अनेक अनुशासन व्यवसायिक दृष्टिकोण से भी उत्पन्न हुए, जैसे– प्रबंधन, संगीत, कला आदि। अनुशासन का उद्‌भव सामाजिक विकास की प्रक्रिया का अभिन्न अंग है। मानव की अपने वातावरण को समझने की जिज्ञासा विभिन्न अनुशासनों के जन्म का कारण है। अनुशासन एक प्रकार का व्यवस्थित ज्ञान है जिसके अंतर्गत उच्च स्तरीय अध्ययन एवं अनुसंधान सम्बंधित गतिविधि की जाती है। जैसे–जैसे मानव ज्ञान

बढ़ता गया, ज्ञान को अध्ययन की सुगमता के लिए विभिन्न अनुशासनों के अंतर्गत विभाजित करके अध्ययन एवं अनुसंधान किया जाने लगा। मुख्यतः विश्विद्यालयो में निम्न पांच अनुशासन के अंतर्गत विभिन्न अध्ययन शाखाओं का अध्ययन किया जाता है–

1. ललित कला जिसके अंतर्गत कला, संगीत, दृश्य कला, प्रदर्शन कला आदि का विशिष्ट अध्ययन आता है।

2. मानविकी के अंतर्गत भाषा, साहित्य, दर्शन, धर्म आदि का अध्ययन आता है।

3. समाज विज्ञान के अंतर्गत मानव विज्ञान, राजनीति शास्त्र, इतिहास भूगोल, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि का अध्ययन किया जाता है।

4. विज्ञान के अंतर्गत भौतिकी, रसायन शास्त्र, जंतु विज्ञान, पादप विज्ञान, खगोल शस्त्र आदि का अध्ययन किया जाता है।

5. गणित के अंतर्गत सांख्यिकी एवं तर्कशास्त्र आदि का अध्ययन किया जाता है।

इनके अतिरिक्त अनेक नयी अध्ययन शाखाओं का भी उदय हो रहा है। अध्ययन को सुविधा के लिए विषयों को अनेक शाखाओं में बाँट लिया जाता है, जैसे–

पदार्थ विज्ञान के अन्तर्गत यांत्रिकी, द्रव, गति विज्ञान और ऊष्मा, चुम्बक, प्रकाशिकी, परमाणु भौतिकी, नाभिकीय भौतिकी आदि आता है।

जंतु विज्ञान के अंतर्गत पक्षी विज्ञानं, मत्स्य विज्ञान, जैव भौतिक विज्ञान, प्रतिक्षण विज्ञान आदि आते हैं। वनस्पति विज्ञानं के अंतर्गत पादप रोग विज्ञान, आर्थिक वनस्पति आदि आते हैं।

सामाजिक अध्ययन का क्षेत्र इतना व्यापक है कि सम्पूर्ण विश्व में मानव का वर्तमान सामजिक जीवन ही इसका अध्ययन क्षेत्र है। वर्तमान युग में विश्व के सभी देश करीब आ रहे हैं। यह अन्तर्राष्ट्रीयता का युग है। इस समय अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, विश्व संगठन, विश्व शांति एवं सुरक्षा आदि मुद्दों ने सामजिक अध्ययन को और व्यापकता प्रदान की है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. प्रारंभ में किन मुख्य अनुशासनों का अस्तित्व था?

.....

.....

4. नए अनुशासन का जन्म किस प्रकार होता है?

.....

.....

1.5 अनुशासन के प्रमुख लक्षण

प्रत्येक अनुशासन की अपनी विशेषता होती है जिसके आधार पर उसे अन्य अनुशासन से भिन्न समझा जाता है। किसी भी अनुशासन को अनुशासन कहलाने के लिए उसमें निम्न लक्षण का होना आवश्यक है–

1. अनुशासन का अपना अध्ययन क्षेत्र होता है। उसकी अपनी निजी पाठ्य वस्तु होती है। उनकी अपनी एक मान्य संरचना होती है।
2. अनुशासन की अपनी विशिष्ट अध्ययन शैली होती है। अनुशासन की अपनी विशिष्ट अध्ययन एवं अनुसंधान विधियाँ होती है। अनुशासन में नवीन ज्ञान को समाहित करने, विचार क्षेत्र में वृद्धि करने के सम्बन्ध में निश्चित नियम होते हैं।
3. प्रत्येक अनुशासन का अपना मूल्य व् चिंतन क्षेत्र होता है।
4. अनुशासन के अपने विशेष सिद्धांत एवं प्रत्यय होते हैं। अनुशासन की अपनी विशिष्ट शब्दावली होती है। अनुशासन का अपना इतिहास व परम्पराएँ होती हैं और यही उस अनुशासन की संरचना व नियमों के निर्धारण के लिए उत्तरदायी होती हैं।
5. शैक्षिक संस्थाओं में उनका अध्ययन–अध्यापन किया जाता है। वह अकादमिक अनुशासन कहलाते हैं। उनका अपना स्वतंत्र संकाय होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. अनुशासन के क्या लक्षण होते हैं?

.....

.....

6. अकादमिक अनुशासन से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

1.6 अनुशासन के उपागम

कभी–कभी ज्ञान की दो शाखायें मिल कर एक स्वतंत्र अध्ययन के क्षेत्र में विकसित हो जाती हैं। इस प्रकार के उदाहरण सभी अनुशासनों में मिलते हैं, जैसे– सामजिक मनोविज्ञान, शैक्षिक समाजशास्त्र, आर्थिक भूगोल एवं जीव रसायन शास्त्र। इसी प्रकार शिक्षा के अंतर्गत शिक्षा दर्शन एवं शैक्षिक मनोविज्ञान आते हैं। इस प्रकार का नया अध्ययन क्षेत्र यदि समाज के लिए उपयोगी होता है तब उसे नए अनुशासन के रूप में मान्यता मिल जाती है। किसी भी अनुशासन को अपना औचित्य व उपयोगिता को साबित करना होता है– तभी वह अनुशासन का दर्जा पाता है। अनुशासन को निम्न प्रकार के उपागम में बांटा जा सकता है–

- बहु अनुशासनात्मक (Multidisciplinary)
- अन्तः अनुशासनात्मक (Interdisciplinary)
- पारगमन अनुशासनात्मक (Transdisciplinary

- संकर अनुशासनात्मक (Cross disciplinary)

बहुअनुशासनात्मक

इस उपागम में लोग अलग–अलग अनुशासन से सम्बन्ध रखते हुए भी किसी समस्या के समाधान हेतु एक साथ मिल कर कार्य करते हैं। वह सम्बंधित समस्या के समाधान के लिए अपने अपने अनुशासन के ज्ञान का प्रयोग करते हैं। उदाहरण स्वरुप साइबर क्राइम से निबटने के लिए तकनीकी व संचार दोनों का ज्ञान आवश्यक है।

अन्तः अनुशासनात्मक

इस उपागम में अलग अलग अनुशासन से ज्ञान प्राप्त करके स्वतंत्र रूप से नए अनुशासन का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार के आयाम में ज्ञान की विधियों एवं विचारों को अलग अलग अनुशासन से एकत्रित किया जाता है और एक नए अनुशासन का निर्माण किया जाता है। शिक्षाशास्त्र को इसी के अंतर्गत रखा जाता है।

पारगमन अनुशासनात्मक

यह अन्तः अनुशासनात्मक का व्यापक रूप हैं। इसमें अनुशासन की सीमाओं से आगे बढ़ कर सम्पूर्णता में तथ्यों को ग्रहण किया जाता है। यह अनुशासनों को सम्पूर्णता में व्यवस्थित करता है।

संकर अनुशासनात्मक

इस उपागम में एक अनुशासन को दूसरे अनुशासन के सन्दर्भ में अवलोकित किया जाता है। जैसे संगीत की भौतिकी, साहित्य की राजनीति का अध्ययन।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. बहु अनुशासनात्मक का क्या अर्थ है ?

.....

.....

8. अन्तः अनुशासनात्मक का क्या अर्थ है ?

.....

.....

1.7 विषय व अनुशासन में अंतर

विषय व अनुशासन में निम्न अंतर है–

- प्रायः अनुशासन शब्द उच्च अध्ययन के लिए प्रयुक्त किया जाता है और विषय विद्यालयी स्तर पर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के लिए प्रयुक्त किया जाता है। एक अनुशासन के अंतर्गत अनेक विषय आ सकते हैं। अनुशासन उच्च शिक्षा के सन्दर्भ में प्रयुक्त किया जाता है। यह उच्च शिक्षा में अनुसंधान व विशेषज्ञता उत्पन्न करने का कार्य करता है।
- विद्यालयी विषय अनुशासन से ही निकले होते हैं। परन्तु कुछ विद्यालयी विषयों का अनुशासनिक सम्बन्ध

नहीं होता है।

- अनुशासन एक वृहत प्रत्यय है। इसके अंतर्गत वह क्षेत्र आता है जहाँ तक अध्ययन किया जा सकता है और विषयवस्तु का अर्थ उस सीमा तक होता है जहाँ तक अध्ययन किया जा चुका है।
- अनुशासन को विषय के रूप में भी विद्यालय में पढाया जाता रहा है।
- विद्यालयी विषय विद्यालयी पाठ्यक्रम में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं और उनका सुनिश्चित एवं कक्षा के स्तर के अनुसार निर्धारित ज्ञान क्षेत्र होता है। जैसे– गणित, विज्ञान, भाषा, इतिहास, भूगोल आदि विद्यालयों में पढ़ाये जाते हैं।
- जहाँ विद्यालयी विषय विद्यार्थियों में मूलभूत कौशल विकास करने का कार्य करते हैं वही अकादमिक अनुशासन उच्च शिक्षा संस्थानों में विशेषज्ञों व अनुसंधानकर्ताओं के विकसित होने का अवसर प्रदान करते है।
- विद्यालयी विषय विचारों को तुलनात्मक रूप से सरलता से संप्रेषित करते हैं जबकि अकादमिक अनुशासन सिद्धांत व प्रत्यय को गहनता से अध्ययन करने पर बल देता है।
- विद्यालयी विषय विद्यालय तक ही सीमित होते हैं परन्तु अकादमिक अनुशासन के द्वारा उच्च शिक्षा संस्थानों एवं जहाँ विशेषज्ञों की आवश्यकता है वहां तक अपने ज्ञान को संप्रेषित करते हैं।
- विद्यालयी विषय विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुरूप होते हैं जबकि अकादमिक अनुशासन पूर्णतः ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया से जुड़े होते हैं।
- विद्यालयी विषय में विशेष अभिरुचि बालक को किसी विशेष अनुशासन के अध्ययन की तरफ प्रेरित करती है।

अनुशासन से ही विषयों का उदय हुआ विद्यालयों में दिया जाने वाला विषय ज्ञान अनुशासनिक अध्ययन का प्रारंभ बिंदु माना जा सकता है। विद्यालय स्तर पर कुछ विषयों के चयन के पीछे यह विचार था कि इन विषयों के ज्ञान द्वारा बच्चों के अन्दर विभिन्न कौशलों का विकास किया जा सकेगा व उनका मानसिक, सामाजिक, नैतिक एवं चारित्रिक विकास होगा।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. विषय व अनुशासन में क्या अंतर है?

.....

.....

10. अनुशासन एवं विषय में किसका अध्ययन क्षेत्र ज्यादा विस्तृत होता है?

.....

.....

1.8 शिक्षा एक अनुशासन के रूप में

शिक्षा मानव सभ्यता का अभिन्न अंग रही है। शिक्षा के द्वारा ही–

- मनुष्य ज्ञान का संचयन करता है
- ज्ञान का प्रसार करता है
- ज्ञान में वृद्धि करता है

किसी भी अध्ययन क्षेत्र में निम्न विशेषताओं का होना उसे अनुशासन का दर्जा प्रदान करता है–

- निजी पाठ्यवस्तु
- विशिष्ट गतिविधि
- विशिष्ट शोध विधियाँ
- चिंतन क्षेत्र

शिक्षाशास्त्र एक अनुशासन है क्योंकि उसमें निम्न विशेषताए विद्यमान हैं–

निजी पाठ्यवस्तु

शिक्षाशास्त्र की भी अपनी निजी पाठ्यवस्तु है। इस पाठ्यवस्तु के अंतर्गत शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षा के सिद्धांत, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियाँ, प्रविधियां, शिक्षक, छात्र, पुस्तक, प्रशासन, शिक्षा व्यवस्था, शिक्षण के प्रतिमान, शिक्षक व्यवहार, शैक्षिक निर्देशन, परीक्षायें, मूल्यांकन आदि सम्मिलित किया जाता है।

विशिष्ट क्रिया गतिविधि

प्रत्येक अनुशासन की पाठ्यवस्तु किसी सामाजिक तथा व्यावसायिक क्रिया से सम्बंधित होती है। शिक्षा की समस्त पाठ्य वस्तु प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में शिक्षण क्रिया गतिविधि से सम्बंधित है। शैक्षणिक गतिविधि सामजिक एवं व्यावसायिक दोनों ही है। शिक्षण को कला एवं विज्ञान दोनों ही माना जाता है।

विशिष्ट विधियाँ

शिक्षा की पाठ्यवस्तु सिद्धांत एवं व्यवहार का मिश्रण होती है। इनमें विशेष विधियों के प्रयोग द्वारा विभिन्न कौशलों के विकास का प्रयास किया जाता है। शिक्षा की पाठ्यवस्तु सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक दोनों हैं। इसलिए शिक्षा में दो प्रकार की विधियां प्रयोग में लायी जाती है। छात्र को पाठ्यवस्तु का अध्ययन भी करना होता है और कक्षा शिक्षण भी करना होता है। मूल्यांकन भी दोनों सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक पक्षों का किया जाता है।

शोध विधियाँ

शिक्षा में अनुसंधान के लिए विभिन्न प्रकार की विधियों का प्रयोग किया जाता है। उच्च स्तर पर शिक्षा में किये गए अनुसंधान पर उपाधि भी प्रदान की जाती है।

चिंतन क्षेत्र

प्रत्येक अनुशासन का चिंतन क्षेत्र पृथक होता है। हर अनुशासन के अपने मूल्य होते हैं तथा उनका अपना प्रभाव होता है। शिक्षाशास्त्र का अपना चिंतन क्षेत्र होता है। शिक्षाशास्त्री चिंतन करके विद्यार्थी के विकास के लिए अनेक प्रयास करते हैं। उनका मुख्य चिंतन शिक्षा की प्रक्रिया में सुधार लाना होता है। वह नवीन विधियों द्वारा बालक के विकास के लिए प्रयास करते हैं।

स्वतंत्र संकाय

विश्वविद्यालयों में ज्ञान की शाखाओं को संकाय में विभाजित किया गया है। जैसे– कला संकाय के

अंतर्गत सामाजिक एवं मानविकी का अध्ययन, विज्ञानं संकाय के अंतर्गत भौतिकी, रसायन एवं अन्य विज्ञान से सम्बंधित विषयों का अध्ययन किया जाता है। कुछ विश्वविद्यालय शिक्षाशास्त्र एवं अध्यापक शिक्षा को कला संकाय के अंतर्गत रखते हैं और कुछ विश्वविद्यालय शिक्षाशास्त्र को अलग संकाय में रखते हैं। इसके पीछे यह तर्क दिया जाता है कि शिक्षा कला एवं विज्ञान दोनों ही है। इसलिए इसको न ही केवल कला संकाय के अंतर्गत रखा जा सकता है और न ही केवल विज्ञान संकाय के अंतर्गत रखा जा सकता है। अतः यह शिक्षा संकाय के अंतर्गत आता है।

1.9 शिक्षाशास्त्र का अन्तः अनुशासनात्मक रूप

शिक्षा केवल एक प्रक्रिया अथवा प्रशिक्षण मात्र ही नहीं है बल्कि इसको स्वतंत्र अनुशासन के रूप में मान्यता दी जाती है। शिक्षाशास्त्र ज्ञान की वह शाखा है जिसमें शिक्षा से सम्बंधित विभिन्न अंगो, प्रक्रिया एवं समस्याओं का विभिन्न दृष्टिकोणों से अध्ययन किया जाता है। कुछ विद्वान इसे एक स्वतंत्र अनुशासन नहीं मानते हैं। जो शिक्षाशास्त्र को स्वतंत्र अनुशासन नहीं मानते है वह यह तर्क देते हैं कि शिक्षा के अंतर्गत दर्शन, मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र का अध्ययन किया जाता है। इसमें शिक्षा का अपना कुछ भी विशिष्ट नहीं है।

परन्तु जो शिक्षाशास्त्र को अनुशासन मानते है वह यह तर्क देते हैं कि शिक्षाशास्त्र एक अन्तः अनुशासनात्मक ज्ञान का क्षेत्र है। शिक्षा ने अपने विशिष्ट अध्ययन एवं ज्ञान के क्षेत्रों का विकास किया है। ऐसे अनेक क्षेत्र हैं जिनमें शिक्षा अपना योगदान दे रही है, जैसे– अध्यापकों का व्यावसायिक प्रशिक्षण, शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन, विद्यालयों की प्रशासनिक व्यवस्था, किसी विषय को पढ़ने एवं पढाने की उपयुक्त विधियों का चुनाव, दूरस्थ शिक्षा आदि।

शिक्षा का अन्य अनुशासनों से सम्बन्ध

शिक्षाशास्त्र में जीवन के विभिन्न दृष्टिकोण देखने के लिए दर्शन का भी अध्ययन करते हैं। शिक्षा समाज का अभिन्न अंग होती है। यह व्यक्तिगत एवं सामजिक विकास में सहायक होती है। अतः समाजशास्त्रीय दृ ष्टिकोण से भी शिक्षा को देखा जाता है। इसके अंतर्गत समाज व शिक्षा का आपसी सम्बन्ध, शिक्षा व सामाजिक परिवर्तन का आपसी सम्बन्ध आदि का अध्ययन किया जाता है।

शिक्षाशास्त्र के व्यावहारिक पक्ष में मनोविज्ञान का सहारा लिया जाता है। बालक के विकास, सीखने की प्रक्रिया और उनकी रूचि, योग्यता, स्मृति आदि क्षमताओं का अध्ययन किया जाता है। शिक्षा के इतिहास, तुलनात्मक शिक्षा, शैक्षिक प्रशासन आदि शिक्षा शास्त्र के अन्य अध्ययन क्षेत्र हैं। शिक्षा में तकनीकी एवं संचार तकनीकी के प्रयोग से भी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाया जा रहा है और ज्यादा से ज्यादा लोगों तक शिक्षा को पहुंचाने का कार्य किया जा रहा है।

इस प्रकार शिक्षाशास्त्र का अन्तः अनुशासनिक स्वरुप शिक्षा को अनुशासन के रूप में प्रभावी रूप से प्रतिष्ठित करता है। किसी भी राष्ट्र के विकास में वहां की शिक्षा व्यवस्था महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और इसके लिए शिक्षा अनेक सैद्धांतिक व व्यावहारिक स्वरुप का विकास करती है। अतः शिक्षा को एक अनुशासन के रूप में प्रतिष्ठित करना उपयुक्त माना जायेगा। साथ ही शिक्षा के विशेषज्ञों को अनुसंधान में प्रयाप्त गुणवत्ता को बढाने की अत्यंत आवश्यकता है। शिक्षा के क्षेत्र की जटिल समस्याओ का समाधान विशेषज्ञों द्वारा ही दिया जा सकता हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11. कौन कौन विशेषता किसी भी अध्ययन क्षेत्र को अनुशासन का दर्जा प्रदान करता है?

.....

.....

12. एक अनुशासन के रूप में शिक्षा की विशेषता बताइये?

.....

.....

1.10 सारांश

प्रस्तुत इकाई में हमने यह जाना की अनुशासन शब्द का प्रयोग नियंत्रण के लिए भी किया जाता है और ज्ञान की शाखा के लिए भी किया जाता है। यहाँ पर अनुशासन शब्द का प्रयोग अकादमिक सन्दर्भ में ज्ञान की शाखा के रूप में किया गया है। मानव ने अपने अनुभवों द्वारा जो भी ज्ञान प्राप्त किया उनको शिक्षण संस्थानों में व्यवस्थित करने के लिए व ज्ञान के क्षेत्र में शोध करने के लिए, नए ज्ञान का निर्माण करने के लिए विभिन्न अनुशासनों का उदय हुआ। समय एवं सामाजिक प्रगति के साथ अनुशासन के अनेक उपागम आये। जैसे अन्तः अनुशासन, बहु अनुशासन, पारगमन अनुशासन, संकर अनुशासन आदि। शिक्षा शास्त्र के भीतर वह सारी विशेषताएं हैं जो कि एक अनुशासन में होनी चाहिए।

1.11 अभ्यास के प्रश्न

1. शिक्षा एक अनुशासन है इसकी समालोचना कीजिये?
2. अनुशासन व विषय में क्या अंतर है ?

1.12 चर्चा के बिंदु

1. अनुशासन क्या है? चर्चा कीजिए।

1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. अनुशासन शब्द का प्रयोग दो अर्थों में किया जाता है। अनुशासन का अर्थ होता है नियंत्रित करना अर्थात विद्यालयों में विद्यार्थियों को विशेष प्रकार का व्यवहार करने के लिए नियंत्रित करना। विद्यार्थियों को नियम के अनुसार कार्य करवाना अथवा उनको पुरूस्कार या दण्ड देकर अनुशासित करना। दूसरे अर्थ में अनुशासन का अर्थ अध्ययन क्षेत्र होता है। अनुशासन शब्द का प्रयोग अध्ययन क्षेत्र अथवा विषय वस्तु के सन्दर्भ में भी किया जाता है।

2. आदि काल से मानव अपने अनुभवों को संचित करता रहा है और मानवीय ज्ञान में वृद्धि होती रही है। मानव द्वारा संकलित ज्ञान को सुगमता की दृष्टि से अनुशासन में विभाजित किया गया। क्योंकि अनुशासन

मानवीय अनुभवों, प्रयासों तथा मानसिक विकास का परिणाम होता है।

3. प्रारंभ में निम्न तीन अनुशासन का ही अस्तित्व था–

   (i) भाषा और साहित्य

   (ii) गणित

   (iii) दर्शन

4. यदि किसी अनुशासन में कोई गुण इतना प्रभावी हो जाता है अथवा समय की आवश्यकता के कारण वह अपना स्वतंत्र अस्तित्व खोजने लगता है तब नए अनुशासन का जन्म होता है। जब किसी नवीन अध्ययन क्षेत्र का महत्त्व जीवन की उपयोगिता की दृष्टि से स्पष्ट हो जाता है तब उसे एक नए अनुशासन के रूप में मान्यता मिल जाती है।

5. किसी भी अनुशासन को अनुशासन कहलाने के लिए उसमे निम्न लक्षण का होना आवश्यक है– अनुशासन का अपना अध्ययन क्षेत्र होता है। उसकी अपनी निजी पाठ्य वस्तु होती है। उनकी अपनी एक मान्य संरचना होती है। अनुशासन की अपनी विशिष्ट अध्ययन शैली होती है। अनुशासन की अपनी विशिष्ट अध्ययन एवं अनुसंधान विधियाँ होती है। अनुशासन में नवीन ज्ञान को समाहित करने, विचार क्षेत्र में वृद्धि करने के सम्बन्ध में निश्चित नियम होते हैं। प्रत्येक अनुशासन का अपना मूल्य व चिंतन क्षेत्र होता है। अनुशासन के अपने विशेष सिद्धांत एवं प्रत्यय होते हैं। अनुशासन की अपनी विशिष्ट शब्दावली होती है। अनुशासन का अपना इतिहास व परम्पराएँ होती हैं और यही उस अनुशासन की संरचना व नियमों के निर्धारण के लिए उत्तरदायी होती हैं।

6. शैक्षिक संस्थाओं में जिन अकादमिक अनुशासन का अध्ययन अध्यापन किया जाता है। वह अकादमिक अनुशासन कहलाते हैं। उनका अपना स्वतंत्र संकाय होता है।

7. बहुअनुशासनात्मक उपागम में लोग अलग–अलग अनुशासन से सम्बन्ध रखते हुए भी किसी समस्या के समाधान हेतु एक साथ मिल कर कार्य करते हैं। वह सम्बंधित समस्या के समाधान के लिए अपने–अपने अनुशासन के ज्ञान का प्रयोग करते हैं। उदाहरण स्वरुप साइबर क्राइम से निबटने के लिए तकनीकी व संचार दोनों का ज्ञान आवश्यक है।

8. अन्तः अनुशासनात्मक उपागम में अलग–अलग अनुशासन से ज्ञान प्राप्त कर के स्वतंत्र रूप से नए अनुशासन का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार के आयाम में ज्ञान की विधियों एवं विचारों को अलग–अलग अनुशासन से एकत्रित किया जाता है और एक नए अनुशासन का निर्माण किया जाता है।

9. प्रायः अनुशासन शब्द उच्च अध्ययन के लिए प्रयुक्त किया जाता है और विषय विद्यालयी स्तर पर शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के लिए प्रयुक्त किया जाता है। एक अनुशासन के अंतर्गत अनेक विषय आ सकते हैं।

10. अनुशासन एक वृहत प्रत्यय है इसके अंतर्गत वह क्षेत्र आता है जहाँ तक अध्ययन किया जा सकता है और विषयवस्तु का अर्थ उस सीमा तक होता है जहाँ तक अध्ययन किया जा चुका है।

11. किसी भी अध्ययन क्षेत्र में निम्न विशेषताओं का होना उसे अनुशासन का दर्जा प्रदान करता है–

    - निजी पाठ्यवस्तु
    - विशिष्ट गतिविधि

- विशिष्ट शोध विधियाँ
- चिंतन क्षेत्र

12. शिक्षा एक अनुशासन है क्यूंकि उसकी निम्न विशेषताये हैं–

- निजी पाठ्यवस्तु
- विशिष्ट क्रिया गतिविधि
- विशिष्ट विधियाँ
- शोध विधियाँ
- चिंतन क्षेत्र

1.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क फॉर स्कूल एजुकेशन (2000), नई दिल्ली, एन.सी.ई.आर.टी.
2. गिलियन, लजर, (1993), 'लिटरेचर एंड लैंग्वेज टीचिंग', कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस
3. तिवारी, भोलानाथ, (2013) 'भाषा विज्ञान प्रवेश, किताब घर प्रकाशन, नयी दिल्ली
4. 'राष्ट्रीय पाठचर्या की रूपरेखा' (2005), रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
5. Smith, B.O. & Standly, W.O. Shores, J.H. (1957). *Fundamental of Curriculum Development*. New Yark: Harcant, Brace and World.

इकाई– 2 : ज्ञान के विकास में अनुशासन की भूमिका

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 इकाई के उद्देश्य

2.3 ज्ञान की अवधारणा

2.4 ज्ञान के स्रोत व प्रकार

2.5 ज्ञान एवं अनुशासन का सम्बन्ध

2.6 अनुशासन का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

2.7 विद्यालयी विषय

2.8 विद्यालयी पाठ्यचर्या का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

2.9 सारांश

2.10 अभ्यास के प्रश्न

2.11 चर्चा के बिन्दु

2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

इस इकाई में ज्ञान के विकास में अनुशासन की भूमिका पर चर्चा की जाएगी। अनुशासन का उद्भव उतना ही प्राचीन है जितना कि मानव की उन्नति व विकास की गाथा। अनुशासन किस प्रकार अस्तित्व में आये इसके बारे में जानने से पहले ज्ञान की अवधारणा को जानना होगा। यह जानना भी आवश्यक है कि ज्ञान किस प्रकार प्राप्त किया जाता है और उसका संगठन किस प्रकार किया गया। विभिन्न अनुशासन और विद्यालयी विषय एवं पाठ्यचर्या का निर्धारण किस प्रकार किया जाता है इसकी चर्चा भी की जाएगी।

2.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. ज्ञान की अवधारणा को समझ सकेंगे।
2. ज्ञान प्राप्ति की विधियों का वर्णन कर सकेंगे।
3. अनुशासन के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
4. विद्यालयी पाठ्यचर्या की पृष्ठभूमि से परिचित हो सकेंगे।

5. विद्यालयी विषय के आधार को समझ सकेंगे।

2.3 ज्ञान की अवधारणा

ज्ञान के उद्‌भव का इतिहास उतना ही पुराना है जितना कि मानव स्वयं। जिस दिन मानव ने सभ्य होने की तरफ कदम अग्रसर किये वह ज्ञान के संग्रहण व संचरण की तरफ उसका पहला कदम था। इसको इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि ज्ञान के संग्रहण एवं संचरण ने मानव को विकास के पथ पर अग्रसर किया। ज्यादा पीछे न जाते हुए यदि हम अतीत पर दृष्टि डाले जब मानव ने आग की खोज की वह ज्ञान की तरफ उसका प्रयास था। मनुष्य की हर खोज उसे नए ज्ञान की तलाश के लिए प्रेरित करती रही।

ज्ञान सदा किसी की तरफ इंगित करता है। यह प्राकृतिक वस्तु, मानव निर्मित वस्तु, घटना, प्रक्रिया, व्यक्ति अथवा सम्बन्ध हो सकते है, अर्थात् ज्ञान मनुष्य की समस्त भौतिक एवं अभौतिक जगत के प्रति समझ का परिणाम है, अर्थात् ज्ञान समग्रता में किसी घटना (फेनोमेना) के विषय में जानना है। ज्ञान से मनुष्य अपने परिवेश के सम्बन्ध में जानता है। वह भौतिक, जैविक, सामाजिक, मानसिक अथवा आध्यात्मिक ज्ञान हो सकता है। ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया में बालक अथवा मनुष्य अज्ञात से ज्ञात की ओर अग्रसर होता है। मानव की ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया जिज्ञासा से जुड़ी हुई है। जिज्ञासा ही मनुष्य को ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रेरित करती है और उसी के फलस्वरूप मनुष्य ज्ञान प्राप्त करता है। अतः कहा जा सकता है ज्ञान वह है जो सार्वभौम व प्रमाणित है जो सुसंगत है और विवादों से स्वतंत्र है।

ज्ञान के आदान प्रदान से जुड़े लोगों को यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि ज्ञान प्राप्त करने की क्या प्रक्रिया है? किस प्रकार के ज्ञान को सही माना जाये. क्या मात्र सूचनाओं का संग्रहण ही ज्ञान है? ज्ञान की प्रक्रिया का प्रथम चरण जिज्ञासा होता है। पाठ्यक्रम का चयन व शिक्षण विधि का निर्धारण भी इस पर निर्भर करता है कि ज्ञान हमें किन स्रोतों से प्राप्त होता है। ज्ञान को प्राप्त करने के उपकरण विद्यार्थियों के सीखने की प्रक्रिया के सम्बन्ध में समझ प्रदान करते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. ज्ञान से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

2. शिक्षक के लिए ज्ञान की अवधारणा को समझना क्यों आवश्यक है ?

.....

.....

2.4 ज्ञान के स्रोत व प्रकार

ज्ञान से सम्बंधित मुख्यतः तीन प्रश्न होते हैं ज्ञान का श्रोत, ज्ञान का स्वरूप एवं ज्ञान की प्रमाणिकता

क्या है?

ज्ञान के चार मौलिक स्रोत हैं–

1. इन्द्रिय अनुभव
2. साक्ष्य
3. तर्क बुद्धि
4. अन्तःप्रज्ञा

1. इन्द्रिय अनुभव

इन्द्रिय अनुभव का अर्थ है मनुष्य द्वारा अपनी इन्द्रियों के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करना। मनुष्य अपनी इन्द्रियों के माध्यम से ही संसार के संपर्क में आता है। जब कोई वस्तु इन्द्रियों के सम्पर्क में आती है तब वह संवेदना उत्पन्न करती है। यह संवेदना ज्ञानेन्द्रियों को उत्तेजित करती है और इसके द्वारा वस्तु का ज्ञान प्राप्त होता है।

2. साक्ष्य

जब व्यक्ति दूसरों के अनुभव तथा निरीक्षण पर आधारित ज्ञान को मान्यता देता है तब इसे साक्ष्य कहते हैं। साक्ष्य में व्यक्ति स्वयं निरीक्षण नहीं करता है वह दूसरों के निरीक्षण पर ही तथ्य का ज्ञान प्राप्त करता है हमारे जीवन में साक्ष्य का बहुत उपयोग किया जाता है। उदहारण स्वरुप हमने स्वयं बहुत से स्थानों को नहीं देखा है किन्तु जब किसी अन्य द्वारा उनका वर्णन सुनते हैं तो हम उन स्थानों के अस्तित्व पर विश्वास करने लगते हैं।

3. तर्क बुद्धि

यह एक मानसिक प्रक्रिया है। हमारा बहुत सारा ज्ञान तर्क पर भी आधारित होता है। हमको अनुभव द्वारा संवेदनायें प्राप्त होती हैं उनको तर्क द्वारा संगठित करके ज्ञान का निर्माण किया जाता है।

4. अन्तः प्रज्ञा

यह भी ज्ञान का स्रोत है इसका तात्पर्य है किसी तथ्य को अपने आप में पा जाना। इसके लिए किसी तर्क की आवश्यकता नहीं होती। इसके अतिरिक्त सत्ता अधिकृत ज्ञान भी ज्ञान का श्रोत माना जा सकता है। उच्च शिक्षित व्यक्तियों द्वारा अथवा अध्यापक द्वारा दिया गया ज्ञान इसके अंतर्गत आता है। वह व्यक्ति जिसने ज्ञान के क्षेत्र में कार्य किया है वह उस ज्ञान के विषय में बताने के लिए अधिकृत सत्ता हो जाता है। परन्तु इस प्रकार के ज्ञान प्राप्ति में सजग रहना चाहिए कि वह व्यक्ति जिसे हम सत्ता मान रहे हैं वह कितना अधिकृत है।

ज्ञान के प्रकार

ज्ञान को तीन प्रकार में बाँट सकते हैं–

1. आगमनात्मक ज्ञान
2. प्रयोगमूलक ज्ञान
3. प्राग्नुभव ज्ञान

1. आगमनात्मक ज्ञान

इस प्रकार का ज्ञान हमारे अनुभव तथा निरीक्षण पर आधारित होता है। जॉन लॉक के अनुसार बालक का मन जन्म के समय कोरी स्लेट के सामान होता है। जैसे– जैसे अनुभव मिलते हैं बालक के ज्ञान में वृद्धि होती है। शिक्षा के क्षेत्र में यह माना जाता है कि सीखाने के लिए समग्र अनुभव प्रदान करने चाहिए।

2. प्रयोगमूलक ज्ञान

इस प्रकार का ज्ञान प्रयोग द्वारा प्राप्त होता है। प्रयोजनवादी जॉन डीवी मानते हैं कि ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रयास करना और प्रयास के परिणाम स्वरुप जो फल प्राप्त होते हैं उनसे सीखना, अर्थात इस प्रकार का ज्ञान प्रयोग, निरीक्षण एवं अनुभव पर केन्द्रित होता है।

3. प्राग्नुभव ज्ञान

इस प्रकार के ज्ञान को बुद्धि बिना अनुभव के प्राप्त करती है। इस विचारधारा के प्रवर्तक कान्ट हैं। वह कहते हैं सामान्य सत्य अनुभव से स्वतंत्र होने चाहिए। उनको स्वयं में स्पष्ट तथा निश्चित होना चाहिए। गणित का ज्ञान प्राग्नुभविक ज्ञान समझा जाता है।

ज्ञान प्राप्ति की विधियाँ

मानव ज्ञान की तीन अवस्थायें होती हैं– ज्ञान का संचयन, ज्ञान का अंतरण व ज्ञान का सृजन। ज्ञान प्राप्ति की निम्न विधियाँ हैं–

विश्लेषण – इसमें तार्किक विश्लेषण द्वारा ज्ञान प्राप्ति की तरफ अग्रसर हुआ जाता हैं।

वैक्तिक अनुभव विधि– इस प्रकार के वैक्तिक अनुभवों से प्राप्त ज्ञान को अनुभवजनित ज्ञान कहते हैं। यहाँ यह समझना आवश्यक है कि इस प्रकार के ज्ञान प्राप्ति विधि में कुछ अनुभव ही पर्याप्त नहीं होते बल्कि एक श्रृंखलाबद्ध तरीके से बार–बार प्राप्त अनुभवों की पुष्टि से ज्ञान प्राप्त होता है।

ज्ञान की अधिकारिता विधि - प्रायः जब किसी समस्या की उत्पत्ति होती है तो व्यक्ति अपने से श्रेष्ठ व्यक्ति से परामर्श ले कर उस समस्या का समाधान प्राप्त करने का प्रयास करता है। उस श्रेष्ठ व्यक्ति को ज्ञान के क्षेत्र में आधिकारिक मान लिया जाता है। ज्ञान प्राप्ति की इस विधि को अधिकारिता विधि कहते हैं।

अधिकारिकता ज्ञान में यह ध्यान रखना चाहिए कि सत्ता कितनी प्रमाणिक है। समय के साथ इसमें परिवर्तन भी हो सकता है। उदाहरणस्वरूप बहुत सी धारणाएं जो पहले सत्य मानी जाती थी परन्तु बाद में गलत साबित हो गयी। जैसे सूर्य पृथ्वी का चक्कर लगाता है, पृथ्वी चपटी है आदि। यह आज सत्य नहीं माना जाता है। इसलिए यह विधि ज्ञान प्राप्ति की प्रमाणिक विधि नहीं मानी जाती है।

ज्ञान प्राप्ति की निगमन विधि– इस विधि में ज्ञात से अज्ञात की तरफ जा कर ज्ञान प्राप्ति की दिशा में अग्रसर हुआ जाता है। प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात का नाम इस विधि से जुड़ा हुआ है।

ज्ञान प्राप्ति की आगमन विधि– इस विधि में विशिष्ट से सामान्य की तरफ अग्रसर हुआ जाता है और नए ज्ञान की प्राप्ति होती है।

आगमन व निगमन विधि एक दूसरे के विपरीत होती हैं साथ ही यह एक दूसरे की पूरक भी होती हैं।

ज्ञान प्राप्ति की वैज्ञानिक विधि– यह विधि किसी भी प्रकार के पूर्वाग्रह से स्वतंत्र होती है। इसमें ज्ञान की विश्वसनीयता को स्थापित किया जाता है। इसमें सर्वप्रथम समस्या को चिन्हित किया जाता है। उसके पश्चात् परिकल्पना बनाई जाती है। उसके अनुरूप आकड़े एकत्रित कर विश्लेषण किया जाता है।

शिक्षण प्रदान करते समय शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए की किस विषय के लिए किस प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता है। जैसे गणित अथवा तर्कशास्त्र प्रागनुभव प्रकार का ज्ञान है। गणित शिक्षण में इसका ध्यान रखना चाहिए। अलग अलग अनुशासन भी अलग अलग ज्ञान प्राप्ति की विधियों को मान्यता देते है। अध्यापक को विषय शिक्षण में इनकी जानकारी होनी चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. ज्ञान के प्रकार बताइए।

.....

.....

4. ज्ञान के स्रोत कौन–कौन से है?

.....

.....

2.5 ज्ञान एवं अनुशासन का सम्बन्ध

प्रारंभ में मनुष्य पशु समान था, परन्तु जैसे ही मानव ने अपने ज्ञान को संकलित एवं संयोजित करने की कुशलता प्राप्त कर ली वह उन्नत होता चला गया। मनुष्य ने यह सीखा कि किस प्रकार वर्तमान अनुभव को संगठित करके उन्हें भविष्य में प्रयोग किया जा सकता है। अध्यापक के लिए यह समझना अत्यंत आवश्यक है कि ज्ञान के विकास की प्रक्रिया में विभिन्न अनुशासन अस्तित्व में आये। विशेषज्ञ अपने–अपने क्षेत्र में गहनता से अध्ययन करते हैं। अनुशासन के विशेषज्ञ स्वयं ही अपने अनुशासन के क्षेत्र को सीमित करके उसमें गहराई से अध्ययन करते हैं।

अध्ययन की सुगमता के लिए ज्ञान को अनुशासनों में वर्गीकृत किया गया। शिक्षण संस्थानों का कार्य समाज की भावी पीढ़ी तक संचित ज्ञान को पहुंचाना व उन्हें संमाज के लिए तैयार करना है। उच्च शिक्षा में शोध के द्वारा ज्ञान के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जाती है। अनुशासन अपनी ज्ञान मीमांसा, अनुसंधान विधि एवं अध्ययन क्षेत्र के आधार पर एक दूसरे से भिन्न होते हैं।

हालाँकि जीवन का प्रत्येक अनुभव ज्ञान प्रदान करता है परन्तु विद्यालय का ज्ञान अपना विशेष स्थान रखता है। अध्यापक ज्ञान के आदान प्रदान की प्रक्रिया में प्रमुखता से जुड़ा होता है। उनके लिए ज्ञान के प्रत्यय को समझना अत्यंत आवश्यक है।

शिक्षक प्रायः सूचनाओं के सम्प्रेषण को ही ज्ञान प्रदान करना समझते हैं। वह पाठ्य पुस्तक में लिखी सामग्री को बालक तक संप्रेषित कर अपने कर्तव्यों को समझ लेते हैं। आज ज्ञान पाठ्यक्रम तक सीमित हो कर रह गया है और अध्यापक उसे बिना किसी समालोचना के स्वीकार कर लेते हैं। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षक यह समझे कि वह बालक के ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में सहायक बनें न की स्वयं को सूचनाओं के सम्प्रेषण तक सीमित रखें। अध्यापक को जानकारी देने वाला न होकर ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में सहायक होना चाहिए।

यहाँ यह समझना भी आवश्यक है कि ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया में भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका है। ज्ञान को उसके सांस्कृतिक एवं सामजिक परिप्रेक्ष्य में भी देखना चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. ज्ञान को अनुशासन में क्यों वर्गीकृत किया गया ?

.....

.....

6. ज्ञान के सन्दर्भ में शिक्षक को क्या समझना आवश्यक है?

.....

.....

2.6 अनुशासन का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

अनुशासन का उद्‌भव समाज की आवश्यकता के अनुरूप होता है। यह समझना अत्यंत आवश्यक है कि अनुशासन को कभी भी सीमित नहीं किया जा सकता है। यह समाज के अनुरूप प्रकट और विकसित हो सकते हैं। वह राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, तकनीकी संदर्भों से प्रभावित होता है। पिछले 50 वर्षो में अनुशासन के क्षेत्र में अनेक परिवर्तन हुए हैं। आज के समय में अनेक अध्ययन शाखायें विकसित हो रही हैं और अनेक अप्रचलित हो रही हैं।

आज यह सवाल भी उठ रहे हैं कि विषयों को सामाजिक न्याय के सन्दर्भ में पुनर्रचित करने की आवश्यकता है। अध्यापक को सचेत रहने की आवश्यकता है कि किस प्रकार पाठ्‌यचर्या का कुछ हिस्सा समय के साथ नवीनीकरण चाहता है। बालकों के लिए सामाजिक संदर्भों में जो जानने की आवश्यकता है उसको पाठ्‌यचर्या में समाहित करना और अप्रचलित हिस्से को हटाते रहना चाहिए।

विद्यालयी विषय अनुशासन के उदय एवं अप्रचलित होने से अप्रभावित नहीं रह सकते। यह सत्य है कि विद्यालयी पाठ्‌यचर्या देश के इतिहास भूगोल व विशेष सामजिक, राजनैतिक व बौद्धिक संदर्भो पर निर्भर करती है। किसी भी विषय का पाठ्‌यचर्या में होने या न होने का अपना सामाजिक इतिहास होता है। उदाहरण स्वरुप औपनिवेशिक भारत में आधुनिक भारतीय चिन्तक राजाराम मोहन रॉय चाहते थे कि भारत के विद्यालयों में पाश्चात्य विज्ञान, गणित एवं दर्शन को पढाया जाये जिससे भारतीय भी उन क्षेत्रो में हुए विकास के बारे में जान सकें। परन्तु ब्रिटिश सरकार ने पाठ्‌यचर्या में मुख्यतः भाषा, इतिहास एवं नागरिक शास्त्र पर बल दिया क्योंकि वह भारत के लोगों में औपिनिवेशिक विचारधारा को भरने में सहायता करता और उनके राज्य की स्थापना में सहायक होता।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय सरकार ने विज्ञान एवं गणित के शिक्षण पर बल दिया। क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यह माना जाता है कि किसी भी देश के विकास के लिए वैज्ञानिक प्रगति एवं विज्ञान का ज्ञान आवश्यक है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. अनुशासन का उद्‌भव किस पर निर्भर करता है ?

.....

.....

8. पाठ्यचर्या निर्माण में अध्यापक को क्या ध्यान रखना चाहिए ?

.....

.....

2.7 विद्यालयी विषय

विद्यालयी शिक्षा में विषय वस्तु का चुनाव करके उसको पाठ्यक्रम में व्यवस्थित करके बालक तक इस प्रकार पहुँचाया जाना चाहिए कि बालक अपने ज्ञान का निर्माण स्वयं कर सके। किसी विषय का विद्यालय के पाठ्यक्रम में होना भी सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। जैसे कि समाज की आवश्यकता के अनुरूप अनेक नए अनुशासनों का उदय हुआ, जैसे– प्रबंधन, मीडिया अध्ययन, महिला अध्ययन आदि। अनुशासन वह ज्ञान की शाखा होती है जिसे अकादमिक रूप से विशेषज्ञों की सामाजिक स्वीकृति प्राप्त होती है और राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर विशेषज्ञों द्वारा कार्य किया जा रहा होता है।

विद्यालय का कार्य समाज की भावी पीढ़ी तक संचित ज्ञान को पहुंचाना व उनको समाज के लिए तैयार करना है। विद्यालयों का कार्य मुख्यतः यही है कि वह बालक के भीतर वह क्षमता उत्पन्न करें कि वह ज्ञान का निर्माण स्वयं कर सके। विद्यालयी शिक्षा इस प्रकार की होनी चाहिए कि–

- वह बालक को समाज के लिए उत्पादक एवं जिम्मेदार नागरिक बनाये।
- बालक को आर्थिक व सांस्कृतिक भूमंडलीकरण के दौर में उत्पन्न होने वाली चुनौतियों के लिए तैयार करे।

विद्यालय में बालको को विभिन्न अनुभव प्रदान करने के लिए ज्ञान को विषय के अंतर्गत संगठित कर विद्यालयों में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया संचालित की जाती है। विद्यालयी विषय कहीं पर प्रदत्त नहीं होते बल्कि उनको समाज की आवश्यकता एवं विकास के अनुरूप परिवर्तित किया जा सकता है। हालाँकि विद्यालयी विषय मुख्यतः अनुशासन से प्रस्फुटित होते हैं। विद्यालय में प्रदान की जाने वाली शिक्षा मुख्यतः निम्न चार अनुशासनों के इर्द गिर्द घूमती है–

(i) भाषा

(ii) गणित

(iii) सामाजिक विज्ञान

(iv) विज्ञान

यह माना जाता है कि विद्यालयी पाठ्यचर्या में भाषा की प्रभावी भूमिका होती है। बालक से विद्यालय में उसी भाषा में बात करनी चाहिए जिस भाषा का प्रयोग वह घर में करता है। क्योंकि भारत में बहुभाषी लोग रहते हैं

इसी का ध्यान रखते हुए हमारे देश की पाठ्यचर्या में त्रि–भाषा सूत्र दिया गया है।

गणित शिक्षण के द्वारा बालक में तार्किक अभिक्षमता का विकास करने का उददेश्य होता है। इसके द्वारा बालक अमूर्त तथ्यों को समझ सकने का ज्ञान प्राप्त करता है।

प्राकृतिक विज्ञान के अंतर्गत जीवविज्ञान एवं स्थूल विज्ञान आते हैं। जिसमें जीव एवं जंतु जगत से सम्बंधित तथ्यों का अध्ययन किया जाता है। स्थूल विज्ञान के अंतर्गत भौतिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है जैसे भौतिकी, रसायन आदि।

सामजिक विज्ञान के अंतर्गत वह अध्ययन क्षेत्र आते है। जिनमें वैज्ञानिक विधि से समाज की घटनाओं का अध्ययन किया जाता है, जैसे– मानव विज्ञान, मनोविज्ञान, शिक्षा, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि। मानविकी के अंतर्गत कला, संस्कृति, दर्शन, भाषा, धर्म आदि अध्ययन क्षेत्र आते हैं। सामाजिक विज्ञान को प्राकृतिक विज्ञान एवं मानविकी के मध्य का समझना चाहिए क्योंकि सामजिक विज्ञान संबोधित तो मनुष्य को करता है परन्तु यह वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करता है। इसके अतरिक्त ललित कला, स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा व् कार्य अनुभव को भी विद्यालयी पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग होना चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. विद्यालयी शिक्षा किन अनुशासनों के इर्द गिर्द घूमती है ?

.....

.....

10. सामाजिक विज्ञान व मानविकी में क्या अंतर है?

.....

.....

2.8 विद्यालयी पाठ्यचर्या का ऐतिहासिक परिपक्ष्य

विद्यालय में ज्ञान प्रदान की प्रक्रिया की सरलता के लिए पाठ्यचर्या का निर्माण किया जाता है। पाठ्यचर्या विद्यालय के अन्दर तथा बाहर अपनाई जाने वाली सभी सैद्धांतिक, व्यावहारिक तथा क्रियात्मक गतिविधियों का संगठन है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53) के अनुसार "पाठ्यचर्या का अर्थ केवल सैद्धांतिक विषय ही नहीं है बल्कि उन सभी अनुभवों की सम्पूर्णता है जो कि विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन बालक को प्रदान करता है। जैसे– कक्षा, खेल का मैदान, प्रयोगशाला, पुस्तकालय, शिक्षक शिक्षार्थी सम्बन्ध आदि। यहाँ यह जानना आवश्यक है कि–

- संविधान में निहित मूल्य शिक्षा नीति बनाने में सहायता करते हैं।
- शिक्षा नीति पाठ्यचर्या निर्माण में सहायता प्रदान करती है अर्थात पाठ्यचर्या निर्माण में संविधान में निहित मूल्य सर्वोपरि होते हैं।

1976 तक राज्य सरकारों को विद्यालयी शिक्षा सम्बन्धी निर्णय लेने का अधिकार था। इसके अंतर्गत विद्यालयों में क्या पढ़ाया जाये अर्थात् विद्यालयों की क्या पाठ्यचर्या हो इसका निर्णय राज्य सरकार स्वयं करती थी। केंद्र केवल नीतिगत विषयों पर राज्यों का मार्गदर्शन करते थे। 1976 में संविधान संशोधन के पश्चात् शिक्षा

के उत्तरदायित्व को समवर्ती सूची में लाया गया और 1986 में पूरे देश के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनी।

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने यह सिफारिश की कि पूरे देश की विद्यालयी पाठ्यचर्या के मूल में एक सर्वमान्य (कॉमन कोर) तत्व हो। पाठ्यचर्या निर्माण केवल एक बार ही किया जाने वाला प्रयास नहीं है बल्कि यह एक सतत प्रक्रिया है जिसमें राष्ट्रीय लक्ष्यों को शैक्षिक अनुभवों में रूपांतरित किया जाता है।

प्रायः राष्ट्रीय शिक्षा नीति के आधार पर राष्ट्रीय पाठ्यचर्या बनती है और उसके आधार पर अध्यापक शिक्षा की पाठ्यचर्या का विकास करना चाहिए। 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में की गयी सिफारिश के आधार पर एन.सी.ई.आर.टी. ने 1988 में प्रारंभिक और माध्यमिक शिक्षा के लिए "राष्ट्रीय पाठ्यक्रम एक रूपरेखा" तैयार की।

1986 की शिक्षा नीति में जिन विषयों पर बल दिया गया था उनका समावेश किया गया और यह महसूस किया गया कि इसकी वजह से बालक पर बोझ बढ़ गया और स्कूली पढ़ाई बाल्यावस्था व किशोरावस्था के निर्माणात्मक वर्षो में तनाव का श्रोत बन गयी। 1993 में प्रो. यशपाल की रिपोर्ट "शिक्षा बिना बोझ के" (लर्निंग विद आउट बर्डन) आई। इसके पश्चात 2000 एवं 2005 में विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा बनाई गयी। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में निम्न बिंदुओं पर बल दिया गया–

(i) विद्यालयी ज्ञान को स्कूल के बाहर से तारतम्य स्थापित करने वाला होना चाहिए। अधिगम में रटने पर बल नहीं दिया जाना चाहिए।

(ii) पाठ्यचर्या को पुस्तक केन्द्रित न हो कर बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास से सम्बंधित होना चाहिए।

(iii) परीक्षा को लचीला होना चाहिए और कक्षा शिक्षण के साथ एकीकृत होना चाहिए।

इसमें यह बल दिया गया कि बालक अपने ज्ञान का निर्माण स्वयं करे अर्थात यह संरचनावाद पर आधारित है। यह माना गया कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 के अनुसार विद्यालयों में शिक्षा प्रदान करने के लिए अध्यापकों को भी विशेष तैयारी की आवश्यकता होगी। इसीलिये अध्यापक शिक्षा के लिए भी 2010 में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या विकसित की गयी जिसमें अध्यापक शिक्षा में कुछ बदलाव प्रस्तावित किये गए। अध्यापक शिक्षा में उन प्रस्तावों को 2015 से लागू कर दिया गया। उसी श्रृंखला में बी.एड. पाठ्यक्रम दो वर्ष का कर दिया गया।

यदि ध्यान से देखा जाये तो हमारे विद्यालयी पाठ्यक्रम में विभिन्न विषय अत्यंत सैद्धांतिक हो गए हैं और वह सामजिक ज्ञान एवं व्यावहारिकता से दूर हो गए हैं। वह शिक्षार्थी केन्द्रित न हो कर अनुशासन केन्द्रित हो गए हैं जबकि बहुत बार वह विषय बालक को विद्यालय के बाद कोई सहायता नहीं प्रदान करते। इसलिए अध्यापक को यह समझना अत्यंत आवश्यक है कि विद्यालयी पाठ्यचर्या में अनुशासनिक ज्ञान के अतिरिक्त अन्य ज्ञान का भी समावेश करना चाहिए जो कि अभी अनुशासन के अंतर्गत अभिहित नहीं किये गए हैं। उनको सृजनात्मक रूप से विद्यालयी स्तर पर विकसित करने की आवश्यकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के मुख्य बिंदु क्या हैं?

.....

.....

12. पाठ्यचर्या निर्माण में किन मूल्यों का ध्यान रखा जाता है ?

.....

.....

2.9 सारांश

शिक्षा के द्वारा ज्ञान को एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी तक संचारित किया जाता रहा है। परन्तु समय के साथ पाठ्यचर्या में प्रदत्त विषयवस्तु का सम्प्रेषण करना ही शिक्षक का कार्य समझा जाने लगा। यहाँ तक कि पाठ्यचर्या में किन नए विषयों को रखना चाहिए आदि चिंतन करना अध्यापक के लिए आवश्यक हो जाता है। ऐसे में अध्यापक का यह जानना आवश्यक है कि ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में अनुशासन का उदय हुआ। अनुशासन के विशेषज्ञ स्वयं ही अपने अनुशासन के क्षेत्र को सीमित करके उसमें गहराई से अध्ययन करते हैं। विद्यालय में पढाये जाने वाले विषय अनुशासन से ही उदय हुए। विद्यालय का पाठ्यक्रम बनाते हुए अनुशासन के क्षेत्र में होने वाले अनुसंधानों व परिवर्तनों को दृष्टिगत रखना अत्यंत आवश्यक है।

2.10 अभ्यास के प्रश्न

1. विद्यालय में मुख्यतः किन विषयों की शिक्षा प्रदान की जाती है?
2. ज्ञान के सन्दर्भ में शिक्षक की क्या भूमिका है ?

2.11 चर्चा के बिंदु

1. विद्यालय में ज्ञान का संगठन किस प्रकार किया जाता है। चर्चा कीजिए।

2.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ज्ञान सदा किसी की तरफ इंगित करता है। यह प्राकृतिक वस्तु ,मानव निर्मित वस्तु, घटना, प्रक्रिया, व्यक्ति अथवा सम्बन्ध हो सकते हैं अर्थात ज्ञान मनुष्य की समस्त भौतिक एवं अभौतिक जगत के प्रति समझ का परिणाम है।
2. ज्ञान के आदान प्रदान से जुड़े लोगों को यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि ज्ञान प्राप्त करने की क्या प्रक्रिया है? किस प्रकार के ज्ञान को सही माना जाये। ज्ञान की प्रक्रिया का प्रथम चरण जिज्ञासा होता है। पाठ्यक्रम का चयन व शिक्षण विधि का निर्धारण भी इस पर निर्भर करता है कि ज्ञान हमें किन स्रोतों से प्राप्त होता है। ज्ञान को प्राप्त करने के उपकरण विद्यार्थियो के सीखने की प्रक्रिया के सम्बन्ध में समझ प्रदान करते हैं। इसलिए शिक्षक के लिए ज्ञान के सन्दर्भ में जानना आवश्यक है।
3. ज्ञान को तीन प्रकार में बाँट सकते हैं–

   1.आगमनात्मक ज्ञान 2. प्रयोगमूलक ज्ञान 3. प्रागनुभव ज्ञान
4. ज्ञान के चार मौलिक स्रोत है–

   (i) इन्द्रिय अनुभव (ii) साक्ष्य (iii) तर्क बुद्धि (iv) अन्तःप्रज्ञा
5. अध्ययन की सुगमता के लिए ज्ञान को अनुशासनों में वर्गीकृत किया गया ज्ञान के विकास की प्रक्रिया में विभिन्न अनुशासन अस्तित्व में आये। विशेषज्ञ अपने–अपने क्षेत्र में गहनता से अध्ययन करते हैं। अनुशासन के विशेषज्ञ स्वयं ही अपने अनुशासन के क्षेत्र को सीमित कर के उसमें गहराई से अध्ययन करते हैं।
6. शिक्षक प्रायः सूचनाओं के सम्प्रेषण को ही ज्ञान प्रदान करना समझते हैं। वह पाठ्य पुस्तक में लिखी सामग्री को बालक तक संप्रेषित कर अपने कर्तव्यों को समझ लेते हैं। आज ज्ञान पाठ्यक्रम तक सीमित हो कर रह गया है और अध्यापक उसे बिना किसी समालोचना के स्वीकार कर लेते हैं। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षक यह समझे कि वह बालक के ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में सहायक बनें न की स्वयं को सूचनाओं के सम्प्रेषण तक सीमित रखें।
7. अनुशासन का उद्भव समाज की आवश्यकता के अनुरूप होता है। यह समझना अत्यंत आवश्यक है कि

अनुशासन को कभी भी सीमित नहीं किया जा सकता है यह समाज के अनुरूप प्रकट और विकसित हो सकते हैं। वह राजनैतिक, सामजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, तकनीकी संदर्भों से प्रभावित होता है।

8. विषयों को सामाजिक न्याय के सन्दर्भ में पुनर्रचित करने की आवश्यकता है। अध्यापक को सचेत रहने की आवश्यकता है कि किस प्रकार पाठ्यचर्या का कुछ हिस्सा समय के साथ नवीनीकरण चाहता है। बालकों के लिए सामाजिक संदर्भों में जो जानने की आवश्यकता है उसको पाठ्यचर्या में समाहित करना और अप्रचलित हिस्से को हटाते रहना चाहिए।

9. विद्यालय में प्रदान की जाने वाली शिक्षा मुख्यतः निम्न चार अनुशासनों के इर्द गिर्द घूमती है– भाषा, गणित, सामाजिक विज्ञान एवं विज्ञान।

10. सामजिक विज्ञान के अंतर्गत वह अध्ययन क्षेत्र आते है जिनमे वैज्ञानिक विधि से समाज की घटनाओं का अध्ययन किया जाता है जैसे मानव विज्ञान, मनोविज्ञान, शिक्षा, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि। मानविकी के अंतर्गत कला, संस्कृति, दर्शन, भाषा, धर्म आदि अध्ययन क्षेत्र आते हैं।

11. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में जिन बिंदुओं पर बल दिया गया वे हैं– विद्यालयी ज्ञान को स्कूल के बाहर से तारतम्य स्थापित करने वाला होना चाहिए। अधिगम में रटने पर बल नहीं दिया जाना चाहिए। पाठ्यचर्या को पुस्तक केन्द्रित न हो कर बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास से सम्बंधित होना चाहिए। परीक्षा को लचीला होना चाहिए और कक्षा शिक्षण के साथ एकीकृत होना चाहिए।

12. संविधान में निहित मूल्य शिक्षा नीति बनाने में सहायता करते हैं। शिक्षा नीति पाठ्यचर्या निर्माण में सहायता प्रदान करती है अर्थात पाठ्यचर्या निर्माण में संविधान में निहित मूल्य सर्वोपरि होते हैं।

2.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क फॉर स्कूल एजुकेशन (2000), नई दिल्ली, एन.सी.ई.आर.टी.
2. गिलियन, लजर, (1993), 'लिटरेचर एंड लैंग्वेज टीचिंग', कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस
3. तिवारी, भोलानाथ, (2013) 'भाषा विज्ञान प्रवेश, किताब घर प्रकाशन, नयी दिल्ली
4. 'राष्ट्रीय पाठचर्या की रूपरेखा' (2005), रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
5. Smith, B.O. & Standly, W.O. Shores, J.H. (1957). *Fundamental of Curriculum Development*. New Yark: Harcant, Brace and World.

इकाई– 3 : अनुशासन में प्रतिमान विस्थापन

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 इकाई के उद्देश्य

3.3 ज्ञान एवं सूचना में अन्तर

3.4 अनुशासन का वर्गीकरण

3.5 ज्ञान के संदर्भ में डीवी के विचार

3.6 अनुशासन के क्षेत्र में नवीन प्रवृत्तियाँ

3.7 विद्यालयी पाठ्यचर्या में नवीन दृष्टिकोण

3.8 विभिन्न स्तरों पर पाठ्यचर्या

3.9 सारांश

3.10 अभ्यास के प्रश्न

3.11 चर्चा के बिन्दु

3.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में हमने अनुशासन की प्रकृति एवं अनुशासन के सन्दर्भ में ज्ञान की भूमिका पर चर्चा की। हम अब तक यह जान चुके हैं कि मानव ने अध्ययन की सुगमता के लिए ज्ञान को विशिष्ट शाखाओं में बाँट कर संकलित किया जिनको अनुशासन कहते हैं। परन्तु अब यह महसूस किया जा रहा है कि विद्यालयों में प्रदान किया जाने वाला ज्ञान चूँकि अनुशासन से प्रेरणा लेता है, यह बालक को अपने ज्ञान का निर्माण स्वयं नहीं करने देता। विद्यालयों में बालक पर विभिन्न सूचनाओं व सिद्धांतों को रटने का दबाव होता है। अध्यापक का कार्य मात्र सूचनाओं का स्थानांतरण रह गया है। इस इकाई में हम यह जानने का प्रयास करेंगे कि विद्यालय में अनुशासन के सन्दर्भ में किन नयी प्रवृत्तियों का उदय हो रहा है।

3.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. विद्यार्थी ज्ञान एवं सूचना में विभेद कर सकेंगे।
2. ज्ञान के सन्दर्भ में डीवी के विचार को जान सकेंगे।
3. अनुशासन के वर्गीकरण को समझ सकेंगे।
4. अनुशासन के क्षेत्र में नयी प्रवृत्तियों को समझ सकेंगे।
5. विद्यालायी पाठ्यचर्या में नए दृष्टिकोण को समझ सकेंगे।

3.3 ज्ञान एवं सूचना मं अन्तर

प्रायः हमारे समाज में व विद्यालयों में ज्ञान और सूचना में ज्यादा भेद नहीं किया जाता है। वह व्यक्ति, जो बहुत सूचनाएं रखता है वह स्वाभाविक रूप से जानकार मान लिया जाता है। शिक्षा की प्रक्रिया में बालक को अनेक सूचनाएं प्रदान की जाती हैं। उन सूचनाओं में व्यावहारिकता व अनुभव परिमार्जन का समावेश करके सूचनाओं द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जाता है अर्थात् सूचना ज्ञान में परिवर्तित होती है। यह सत्य है कि सूचनाओं के मूल में भी आंकड़े होते हैं और ज्ञान का उद्‌भव होने के लिए भी आंकड़ों (डाटा) की आवश्यकता होती है परन्तु ज्ञान सूचनाओं का अधिक विकसित रूप है। ज्ञान को आत्मसात करने के उपरान्त प्रज्ञा की प्राप्ति होती है।

विद्यालयों में पढाये जाने वाले विषय किसी न किसी अनुशासन से प्रेरणा लेते हैं और वह ज्ञान को तैयार सामान की तरह देखते हैं। जिसको कि बालक के दिमाग में स्थानांतरित करने की प्रक्रिया विद्यालय में पूर्ण की जाती है। ज्ञान को अंतिम उत्पाद के रूप में देखा जाता है और बालक निष्क्रिय ग्रहणकर्ता के रूप में होता है। धीरे–धीरे विभिन्न अनुशासनों में बढ़ने वाली जानकारी, सूचनाओं का बढ़ता हुआ प्रवाह पारंपरिक विद्यालयी ज्ञान को विस्तृत करता जाता है। इस प्रकार का ज्ञान बालक बिना समझे प्राप्त करता रहता है और उसको उपयोग नहीं कर पाता है। विद्यालयी शिक्षा को ध्यान से देखे तो यह रटने पर बल देती है। विद्यालयी शिक्षा पाठ्यक्रम केन्द्रित हो गयी है। किसी भी विषय का पाठ्यक्रम उससे सम्बंधित अनुशासन से प्रेरणा लेता है। अनुशासन को अनेक प्रकार से वर्गीकृत किया गया है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. सूचना किस प्रकार ज्ञान में परिवर्तित होती है?

   .....

   .....

2. विद्यालयों में ज्ञान को किस प्रकार देखा जाता है?

   .....

   .....

3.3 अनुशासन का वर्गीकरण

बिग्लेन ने अनुशासन का वर्गीकरण मुख्यतः तीन आयाम पर किया है, जो निम्नलिखित है–

(i) कठोर व मृदु
(ii) जीवित व अजीवित
(iii) शुद्ध व प्रयुक्त

कठोर व मृदु का तात्पर्य यह है कि कोई अनुशासन किस हद तक दिए हुए दृष्टिकोण को मानता है अथवा तुलनात्मक रूप से कम मानता है। अर्थात् वह अनुशासन जो कि मृदु होते है वह अनुशासन में नयी प्रवृतियों को मानने वाले होते हैं।

जीवित और अजीवित का तात्पर्य उनके अध्ययन में सम्मिलित विषय सजीव अथवा निर्जीव है।

शुद्ध व एप्लाइड से तात्पर्य है कि किसी अनुशासन को किस हद तक व्यवहारिक रूप में प्रयोग में लाया

जा सकता है।

इन तीन आयाम पर निम्न आठ प्रकार के वर्गीकरण किया गया–

(i) कठोर/जीवित/शुद्द
(ii) कठोर/अजीवित/अशुद्द
(iii) मृदु/जीवित/शुद्द
(iv) मृदु/अजीवित/शुद्द
(v) कठोर/जीवित/प्रयुक्त
(vi) कठोर/अजीवित/प्रयुक्त
(vii) मृदु/जीवित/प्रयुक्त
(viii) मृदु/अजीवित/प्रयुक्त

(i) कठोर/जीवित/शुद्ध - इनके अंतर्गत वनस्पतिविज्ञान, कीटविज्ञान, कीटाणु विज्ञान, शरीरक्रियाविज्ञान, प्राणीविज्ञान आते हैं।

(ii) कठोर/अजीवित/अशुद्ध – इनके अंतर्गत खगोल, रसायन, भूगर्भ शास्त्र, गणित, भौतिकी आते हैं।

(iii) मृदु/जीवित/शुद्ध - इसके अंतर्गत मानव विज्ञान, राजनीति विज्ञान, मनोविज्ञान, समाज शास्त्र, संचार आते हैं।

(iv) मृदु/अजीवित/शुद्ध - इसके अंतर्गत भाषा, इतिहास, दर्शन, आते हैं।

(v) कठोर/जीवित/प्रयुक्त - इसके अंतर्गत कृषिविज्ञान, डेयरी विज्ञान व सम्बंधित अनुशासन आते है।

(vi) कठोर/अजीवित/प्रयुक्त – इसके अंतर्गत अभियांत्रिकी, मैकेनिकल इंजीनियरिंग, कंप्यूटर साइंस आदि आते हैं।

(vii) मृदु/जीवित/प्रयुक्त – इसके अंतर्गत शैक्षिक प्रशासन, विशिष्ट शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा आते हैं।

(viii) मृदु/अजीवित/प्रयुक्त – इसके अंतर्गत लेखांकन (एकाउंट), वित्त, अर्थशास्त्र आते हैं।

वह अनुशासन जो कि मृदु के अंतर्गत आते हैं उनको हम अनुशासन में नए दृष्टिकोण के अंतर्गत् रख सकते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. बिग्लेन ने अनुशासन का वर्गीकरण मुख्यतः किन तीन आयाम पर किया?

.....

.....

4. कठोर अथवा मृदु अनुशासन से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

3.5 ज्ञान के सन्दर्भ में डीवी के विचार

डीवी कहते है कि पाठ्यक्रम में ज्यादातर सूचनाएं ही होती हैं। प्रारंभ में यह संग्रहित सूचनाएं इतनी ज्यादा नहीं थी। परन्तु समय के साथ यह संग्रह बहुत बढ़ गया है और किसी भी व्यक्ति के द्वारा पूरा का पूरा उस पर अधिकार करना पूर्णतः असंभव है। डीवी के अनुसार हमारे विद्यालय जानकारी एकत्र करने के सिद्धांत पर ही कार्य कर रहे हैं। प्राथमिक विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक की शिक्षा का पाठ्यक्रम बनाया जाता है और हर विषय के सरल भाग को प्रारंभ के वर्षों में रखा जाता है और कठिन भाग को बाद के वर्षों में रखा जाता है।

अनुशासन के क्षेत्र में होने वाली प्रगति एवं अनुसंधान के फलस्वरूप विद्यालयी पाठ्यक्रम की विषयवस्तु में वृद्धि होती रहती है। इस प्रकार के ज्ञान जो बालक दूसरे के द्वारा शब्दों के माध्यम से प्राप्त करता है वह उसके आचरण को प्रभावित नहीं करता। इसलिए विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक उपयोगिता के अनुरूप विषयवस्तु को रखना चाहिए। विषय वस्तु ऐसी होनी चाहिए जो कि मानव की वर्तमान परिस्थितियों को बेहतर बना सके। उदाहरणस्वरूप आज बहुधा विद्यालयों में विज्ञान की जो जानकारी दी जाती है वह इतनी सतही होती है कि उसे सही अर्थों में वैज्ञानिक जानकारी नहीं कह सकते हैं। विद्यालयों में पढाया जाने वाला विज्ञान इतनी तकनीकि भाषा में होता है कि उसका दैनिक जीवन में प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

विद्यालयों में इस प्रकार की प्रवृत्ति को अनुशासन के सन्दर्भ में समझा जा सकता है। यह माना जाता रहा है कि विद्यार्थियों को किसी भी अनुशासन के सिद्धांतों की प्रारंभिक जानकारी दे कर आगे चल कर उनमें विशेषज्ञतापूर्ण योग्यता प्राप्त करने की प्रवृत्ति का विकास करना होता है। इससे वह उस विशिष्ट क्षेत्र में व्यवसाय प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील होते हैं, जैसे– विज्ञान की जानकारी द्वारा वैज्ञानिक बनना।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. डीवी ने परंपरागत विद्यालयी ज्ञान की आलोचना किस प्रकार की?

   .....

   .....

6. डीवी के अनुसार विद्यालयी पाठ्यक्रम किस प्रकार का होना चाहिए?

   .....

   .....

3.6 अनुशासन के क्षेत्र में नवीन प्रवृतियाँ

विद्यालय में अध्यापकों को अपने विषय से संबद्ध अनुशासन की जानकारी होने से उनकी विषय की समझ बेहतर होती है। किसी भी अध्यापक के लिए यह आवश्यक है कि वह अनुशासन के अंतर्गत आने वाले विभिन्न विषयों की सराहना कर सके। ऐसे अध्यापक ही छात्रों की अंतर–अनुशासनिक समझ विकसित कर सकते हैं और समग्रता में अधिगम अनुभव प्रदान कर सकते हैं। अध्यापक का यह समझना कि वह विषय वस्तु का सम्प्रेषण कर बालकों के ज्ञान में वृद्धि कर रहा है तो यह गलत सोच है। यह अध्यापक को समझना होगा कि समाज एवं छात्र की आवश्यकता के अनुरूप पाठ्यक्रम को परिवर्तित होते रहना चाहिए। अनुशासन के अनुरूप ही शिक्षण विधियों का प्रयोग करना चाहिए। शिक्षक–शिक्षा में भी शिक्षण विधियों को उन्नत करने के क्षेत्र में अनेक प्रयास किये गए परन्तु पाठ्यक्रम में होने वाले परिवर्तनों को अध्यापक–शिक्षा द्वारा और उन्नत बनाने का कम ही प्रयास हुआ। आज की शिक्षा विद्यालयों से कटी हुई प्रतीत होती है। अनुशासन के क्षेत्र में अनेक परिवर्तन होते रहते हैं परन्तु उनको

विद्यालयी विषयों व पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाने में बहुत समय लग जाता है।

आज की शिक्षा विद्यालय व समाज को जोड़ने का कार्य नहीं कर रही है। अध्यापक पाठ्यक्रम की समालोचना या चिंतन किये बगैर उसको कक्षा में संप्रेषित करते रहते हैं। अध्यापक का यह समझना आवश्यक है कि वह बालक के ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में सहायक हों न कि उनको सूचनाओं का भण्डार बनने के लिए तैयार करें।

अनेक बार ज्ञान के कुछ अंग जो कि पाठ्यपुस्तकों के अंतर्गत नहीं आते व उनका मूल्यांकन अंको के आधार पर नहीं किया जा सकता वह पाठ विषयेत्तर कह दिए जाते हैं। परन्तु यह समझना आवश्यक है कि वह पाठ्यचर्या का अभिन्न हिस्सा होने चाहिए।

अनुशासन के क्षेत्र में बहुअनुशासनात्मक व साझे शोध को प्रोत्साहित किया जा रहा है। जब अलग–अलग अनुशासन के लोग एक साथ आ कर शोध करेंगे तब व्यावहारिकता पर ज्यादा बल होगा। अनुशासन के क्षेत्र में आजकल व्यावहारिकता पर ज्यादा बल दिया जा रहा है। अनेक नए–नए अनुशासन ज्ञान की विशिष्ट शाखा के रूप में उभर रहे हैं पर उनका विद्यालयी शिक्षा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा है। विद्यालयी शिक्षा में भी उन नए ज्ञान का समावेश करना चाहिए। विद्यालय अभी भी उन्ही परंपरागत विषयों में से बालक को चुनने का अवसर प्रदान करते हैं जबकि आवश्यकता है कि बालक को नए अनुशासनों से अवगत कराया जाये।

आज के समय की आवश्यकता यह भी है कि बालक को जीवन पर्यंत सीखते रहने की आदत डाली जाये। उनको विस्तृत दृष्टिकोण प्रदान करने की आवश्यकता है। वह विषय अथवा अनुशासन की सीमा में बंध कर न रहे बल्कि ज्ञान को समग्रता में समझने का प्रयास करें।

विद्यालय में विषयों का सम्मिश्रण कर सामान धारा के विषयों को मिलकर पढाया जाये। जैसे एक ही अनुशासनिक सम्बन्ध रखने के बाद भी अनेक विषयों के मध्य बढ़ी हुई दूरी को कम करने की आवश्यकता है। उदहारण स्वरुप इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र को अलग–अलग विषयों में बाँट कर पढ़ने से बेहतर होगा कि सामजिक अध्ययन के रूप में बच्चो का समग्र दृष्टिकोण विकसित किया जाये।

आज आवश्यकता है कि बच्चों को ऐसे अनुभव उपलब्ध करवाए जायें जो विभिन्न विषयों के माध्यम से उनको अपने आस–पास की दुनिया को समझने का मौका दें, उनको संवेदनशील बनाए, उनको सीखने की प्रक्रिया से जोड़ें। उनको ज्ञान सृजन की प्रक्रिया में भागीदार बनाये न कि ज्ञान संचयन पर बल दें। जब हम ज्ञान को तैयार माल समझते हैं तब हमारा पूरा ध्यान उसे बालक तक पहुँचाने में ही लगा रहता है और बालक भी निष्क्रिय भाव से उसे ग्रहण करने में लगा रहता है। जबकि आवश्यकता है कि बालक सक्रिय रूप से जुड़े। जिस प्रकार अकादमिक विषय पर बल दिया जाता है उसी प्रकार विभिन्न कौशलों के विकास पर बल दिया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में शिक्षक शिक्षा का एक प्रमुख दोष क्या है?

   .....

   .....

8. अनुशासन के क्षेत्र में किस प्रकार के शोध को प्रोत्साहित किया जा रहा है?

   .....

   .....

3.7 विद्यालयी पाठ्यचर्या में नवीन दृष्टिकोण

आज इस बात पर बल दिया जा रहा है कि शिक्षा को ज्यादा से ज्यादा प्रासंगिक बनाया जाये। पारंपरिक रूप से विषयों के मध्य की दूरी को कम किया जाये। जैसे– माध्यमिक स्तर पर गणित व भौतिकी की अवधारणा को परस्पर जोड़ कर नहीं बताया जाता। उनमें इनके संबंधो की समझ विकसित करनी चाहिए। अनुशासन के क्षेत्र में होने वाली नयी प्रवृतियों को विद्यालयी पाठ्यचर्या में शामिल करना चाहिए। समय–समय पर ऐसा होता भी रहा है, जैसे– माइक्रोबायोलॉजी, बायोटेक्नोलॉजी आदि नए विषयों का विद्यालयी पाठ्यक्रम में समावेश। परन्तु जिस तेजी से नयी–नयी विधा व ज्ञान के क्षेत्र का उदय हो रहा है विद्यालयों को भी उसी के अनुरूप अपनी पाठ्यचर्या में बदलाव करते रहना चाहिए। बालकों को समाज से सम्बंधित एवं प्रासंगिक जानकारी देनी चाहिए।

इसका अर्थ यह बिलकुल नहीं है कि नए–नए विषयों का समावेश कर दिया जाये। आवश्यकता इस बात की है कि विद्यालयी पाठ्यक्रम के विषय समाज के समकालीन मुद्दों को संबोधित करें परन्तु यह अनुचित प्रवृति बन गयी है कि विद्यालयी पाठ्यचर्या में समकालीन मुद्दों को संबोधित करने के लिए नए विषय बना दिए जाते हैं। उसके साथ ही पाठ्यपुस्तक, अभ्यास पुस्तक व मूल्यांकन के तरीके भी बना दिए जाते हैं। उदाहरणस्वरूप जब यह महसूस किया गया कि विद्यालयों में कंप्यूटर शिक्षा देना आवश्यक है, क्योंकि कंप्यूटर की जानकारी आज के समाज की आवश्यकता है। परन्तु कंप्यूटर की समझ विकसित करने के लिए कंप्यूटर पर किताबें एवं पाठ्यक्रम विकसित कर दिया गया जिसे बालक छोटी कक्षाओं से ही पढ़ने लगते हैं जबकि वह कंप्यूटर पर कार्य करने में असमर्थ होते हैं। प्रायोगिक ज्ञान का अभाव किसी भी प्रकार से शिक्षा के उददेश्य की पूर्ति नहीं करता है।

यह आवश्यक है कि पहले से मौजूद विषयों व चल रही गतिविधियों के द्वारा नए सामायिक मुद्दों को पाठ्यचर्या में शामिल किया जाए तो इनको ज्यादा बेहतर तरीके से संबोधित किया जा सकता है। नए मुद्दों को विषयो की तरह जोड़ने से पाठ्यचर्या का बोझ भी बढ़ता है और ज्ञान के अवांछित विखंडन को बढ़ावा भी मिलता है। विद्यालय में ज्ञान को अलग अलग बाँट कर नहीं बल्कि समग्रता में समझाना चाहिए।

सुझाव : विद्यालयी पाठ्यचर्या में नये दृष्टिकोण हेतु सुझाव निम्न हैं–

- जिस प्रकार अनुशासनों के क्षेत्र में बदलाव हो रहे हैं नए–नए अनुशासन अस्तित्व में आ रहे हैं उसी के साथ हमारे विद्यालयों की पाठ्यचर्या में भी गहन पुनर्विचार की आवश्यकता है। बदलती हुई सामजिक जरूरतों के अनुसार पाठ्यचर्या में बदलाव आवश्यक है।
- स्वास्थ्य व शारीरिक शिक्षा आर्थिक, सामजिक एवं व्यक्तिगत विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं परन्तु पारंपरिक रूप से विद्यालयों में उनको पाठ्य सहगामी क्रिया की कोटि में डाल कर उनका अकादमिक अवमूल्यन कर दिया गया है। यह विद्यालयों को सुनिश्चित करना चाहिए कि बालको में आत्मनिर्भरता, शांति आधारित मूल्य व स्वास्थ्य की संस्कृति का सामाजीकरण हो।
- विद्यालयी वातावरण रटने से मुक्त होना चाहिए।
- पाठ्यचर्या का इस प्रकार संवर्धन करना चाहिए कि वह बालक को सर्वांगीण विकास के अवसर प्रदान करे न कि पाठ्य पुस्तक केन्द्रित हो कर रह जाये।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. विद्यालयी पाठ्यचर्या में किस पर बल दिये जाने की आवश्यकता है?

.....

.....

10. पाठ्यचर्या का किस प्रकार संवर्धन करना चाहिए?

.....

.....

3.8 विभिन्न स्तरों पर पाठ्यचर्या

प्राथमिक स्तर पर यह उददेश्य होना चाहिए की बच्चा अपने चारो तरफ के पर्यावरण के प्रति अथवा चीजों के प्रति जो भी जिज्ञासा प्रदर्शित करे उसको पोषण मिले। उनमें बोलना, पढ़ना व लिखना विकसित करने का उददेश्य होना चाहिए। भाषा शिक्षण पर बल देना चाहिए। भाषा शिक्षण केवल भाषा की कक्षा तक ही सीमित न होकर सम्पूर्ण विद्यालयी पाठ्यक्रम का हिस्सा होना चाहिए। विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से भाषा शिक्षण ज्यादा मनोरंजक व प्रभावपूर्ण हो सकता है।

उच्च प्राथमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण को सामूहिक क्रियाकलाप, सर्वेक्षण, आकड़ों का नियोजन, प्रदर्शनी आदि से मनोरंजक बनाना चाहिये न कि सरल रूप में वैज्ञानिक शब्दावली व परिभाषा के रटने पर बल दिया जाना चाहिए।

माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर रटने के स्थान पर कल्पना व मौलिकता पर बल दिया जाना चाहिए। सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत इतिहास, भूगोल, राजनीति शास्त्र व अर्थशास्त्र मुख्यतः विद्यालयी स्तर पर पढाये जाते हैं। इन विषयों में तथ्यों को बिना व्याख्या किये रटने पर बल देने के स्थान पर उनकी संज्ञानात्मक समझ विकसित करने का प्रयास करना चाहिए।

कला का पाठ्यचर्या में विशिष्ट स्थान होता है धीरे धीरे विद्यालयी पाठ्यचर्या में कला को हाशिये पर ढ़केला जाता रहा है। यह अत्यंत आवश्यक है कि विद्यालयी पाठ्यचर्या में कला से सम्बंधित सुविधाएं हो। कला के अंतर्गत संगीत, नृत्य, दृश्य कला और नाटक को शामिल किया जाना चाहिए। पाठ्यचर्या में कला गतिविधियों के लिए पर्याप्त समय होना चाहिए। संगीत, नृत्य और नाटक विद्यार्थियों के ज्ञानात्मक व सामजिक विकास में सहायक होते हैं। अतः प्राथमिक और पूर्व प्राथमिक स्तरों पर इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। कला के द्वारा सभी विद्यार्थियों की भागीदारी सुनिश्चित करनी चाहिए। माध्यमिक व उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी को अपनी रूचि की किसी कला में विशेषज्ञता लेने दी जा सकती है। इन कक्षाओं से ही कला व सौन्दर्यबोध के सैद्धांतिक ज्ञान प्रदान किये जा सकते हैं।

शारीरिक शिक्षा, योग, खेल आदि पर उतना ही ध्यान देना आवश्यक है जितना कि अन्य विषयों पर। बच्चे पर शारीरिक शिक्षा व योग का गहरा प्रभाव पड़ता है। यह बच्चे के शारीरिक, सामाजिक, भावनात्मक व

मानसिक विकास में अपना योगदान प्रदान करते हैं। स्वस्थ नागरिक ही स्वस्थ समाज का निर्माण करते हैं। अतः पाठ्यचर्या में इस क्षेत्र में होने वाली गतिविधियों को समावेशित करने की आवश्यकता है।

उच्च माध्यमिक स्तर पर अनुशासन में होने वाले बदलाव व विकास के प्रति सजग रहना चाहिए। ज्ञान के विकास की प्रक्रिया में अनेक अनुशासनों की सीमाएं परिवर्तित होती रहती हैं। बहु–अनुशासनिक अध्ययन का ध्यान रखना चाहिए। विभिन्न अनुशासन के अन्दर ही अध्ययन के अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जिनका महत्त्व बढ़ रहा है। ऐसे में वैकल्पिक मोड्यूल के पाठ्यक्रम भी बनाए जा सकते हैं। सभी बच्चों को सब कुछ पढ़ने से बेहतर होगा कि जिनकी रूचि हो वह उसमें ज्यादा पढ़ सकते हैं। उदाहरणस्वरूप इतिहास में पुरातत्व या वर्ल्ड हिस्ट्री का वैकल्पिक मोड्यूल बनाया जा सकता है। इसी प्रकार भौतिकी में खगोल विज्ञान अथवा अंतरिक्ष विज्ञान में वैकल्पिक मोड्यूल विकसित कर के छात्रों को पाठ्यचर्या के बढ़ते बोझ से बचाया जा सकता है और नए अनुशासनों से अवगत भी कराया जा सकता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में कहा गया है कि बालक को विषय पढ़ते हुए स्थानीय के साथ जुड़ाव महसूस होते रहना चाहिए। आवश्यकता है कि उनमें अपने परिवेश के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण विकसित हो। वह विभिन्न अनुशासनों में अंतर्सम्बन्ध देख सकें। वह ज्ञान में अंतर्निहित जुड़ाव को समझ सकें और बच्चों की कल्पनाशीलता का विकास किया जाए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11. प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का क्या उददेश्य होना चाहिए?

.....

.....

12. विद्यालयी पाठ्यचर्या में कला का क्या स्थान होना चाहिए?

.....

.....

3.9 सारांश

विद्यालयों की पाठ्यचर्या में दिन प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है। ऐसा इसलिए हो रहा है की मात्र सूचनाओं को ही ज्ञान समझ लिया गया है। परन्तु सूचना व् ज्ञान में अंतर होता है। सूचनाओं में व्यवहारिकता व अनुभव परिमार्जन का समावेश करके सूचनाओं द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जाता है। विद्यालयी पाठ्यचर्या की कमियों पर डीवी ने भी कहा है कि हमारे विद्यालय जानकारी एकत्र करने के सिद्धांत पर ही कार्य कर रहे हैं। आज की शिक्षा विद्यालय व समाज को जोड़ने का कार्य नहीं कर रही है। विद्यालयी पाठ्यचर्या अनुशासन से प्रेरणा लेती है और अनुशासन को बिग्लेन ने तीन आयाम पर वर्गीकृत किया है। विद्यालयों में भी अनुशासन के क्षेत्र में विकसित नयी प्रवृतियों का ध्यान रखना चाहिए। समसामयिक मुद्दों से बच्चों को अवगत करना चाहिए। परन्तु पाठ्यचर्या पर बोझ न बढ़ाते हुए वैकल्पिक मोड्यूल विकसित करने चाहिए। इसके द्वारा अनुशासन के क्षेत्र में होने वाली नयी गतिविधियों से छात्रों को अवगत कराया जा सकता है।

3.10 अभ्यास के प्रश्न

1. बिग्लेन द्वारा दिए गए अनुशासन के वर्गीकरण का वर्णन कीजिये।

3.11 चर्चा के बिंदु

1. विद्यालयी शिक्षा में किस प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता है? चर्चा कीजिए।

3.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सूचनाओं में व्यावहारिकता व अनुभव परिमार्जन का समावेश करके सूचनाओं द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जाता है अर्थात सूचना ज्ञान में परिवर्तित होती है।

2. विद्यालयों में ज्ञान को तैयार सामान की तरह देखते है। जिसको कि बालक के दिमाग में स्थानांतरित करने की प्रक्रिया विद्यालय में पूर्ण की जाती है।

3. बिग्लेन ने अनुशासन का वर्गीकरण मुख्यतः तीन आयाम पर किया -

   (i) कठोर/मृदु
   (ii) जीवित/अजीवित
   (iii) शुद्ध/प्रयुक्त

4. कठोर व मृदु का तात्पर्य यह है कि कोई अनुशासन किस हद तक दिए हुए दृष्टिकोण को मानता है अथवा तुलनात्मक रूप से कम मानता है अर्थात वह अनुशासन जो कि मृदु होते हैं वह अनुशासन में नयी प्रवृतियों को मानने वाले होते हैं।

5. डीवी के अनुसार हमारे विद्यालय जानकारी एकत्र करने के सिद्धांत पर ही कार्य कर रहे हैं। आज की शिक्षा विद्यालय व समाज को जोड़ने का कार्य नहीं कर रही है।

6. विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामजिक उपयोगिता के अनुरूप विषयवस्तु को रखना चाहिए। विषय वस्तु ऐसी होनी चाहिए जो कि मानव की वर्तमान परिस्थितियों को बेहतर बना सके।

7. शिक्षक शिक्षा में शिक्षण विधियों को उन्नत करने के क्षेत्र में अनेक प्रयास किये गए परन्तु पाठ्यक्रम में होने वाले परिवर्तनों को अध्यापक शिक्षा द्वारा और उन्नत बनाने का कम ही प्रयास हुआ।

8. अनुशासन के क्षेत्र में बहुअनुशासनात्मक व साझे शोध को प्रोत्साहित किया जा रहा है। जब अलग–अलग अनुशासन के लोग एक साथ आ कर शोध करेंगे तब व्यावहारिकता पर ज्यादा बल होगा।

9. विद्यालयी पाठ्यचर्या में इस बात पर बल दिया जा रहा है कि शिक्षा को ज्यादा से ज्यादा प्रासंगिक बनाया जाये। पारंपरिक रूप से विषयों के मध्य की दूरी को कम किया जाये। जैसे– माध्यमिक स्तर पर गणित व भौतिकी की अवधारणा को परस्पर जोड़ कर नहीं बताया जाता। उनमें इनके संबंधो की समझ विकसित करनी चाहिए।

10. पाठ्यचर्या का इस प्रकार संवर्धन करना चाहिए कि वह बालक को सर्वांगीण विकास के अवसर प्रदान करे न कि पाठ्य पुस्तक केन्द्रित हो कर रह जाये।

11. प्राथमिक स्तर पर यह उददेश्य होना चाहिए की बच्चा अपने चारो तरफ के पर्यावरण के प्रति अथवा चीजो के प्रति जो भी जिज्ञासा प्रदर्शित करे उसको पोषण मिले। उनमें बोलना, पढना व लिखना विकसित करने का उददेश्य होना चाहिए। भाषा शिक्षण पर बल देना चाहिए। भाषा शिक्षण केवल भाषा की कक्षा तक ही सीमित न होकर सम्पूर्ण विद्यालयी पाठ्यक्रम का हिस्सा होना चाहिए। विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से भाषा शिक्षण ज्यादा मनोरंजक व् प्रभावपूर्ण हो सकता है।

12. कला का पाठ्यचर्या में विशिष्ट स्थान होता है धीरे–धीरे विद्यालयी पाठ्यचर्या में कला को हाशिये पर ढ़केला जाता रहा है। यह अत्यंत आवश्यक है कि विद्यालयी पाठ्यचर्या में कला से सम्बंधित सुविधाएं हों। कला के अंतर्गत संगीत, नृत्य, दृश्य कला और नाटक को शामिल किया जाना चाहिए। पाठ्यचर्या में कला गतिविधियों के लिए पर्याप्त समय होना चाहिए। संगीत, नृत्य और नाटक विद्यार्थियों के ज्ञानात्मक व सामजिक विकास में सहायक होते हैं। अतः प्राथमिक और पूर्व प्राथमिक स्तरों पर इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है।

3.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क फॉर स्कूल एजुकेशन (2000), नई दिल्ली, एन.सी.ई.आर.टी.
2. गिलियन, लजर, (1993), 'लिटरेचर एंड लैंग्वेज टीचिंग', कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस
3. तिवारी, भोलानाथ, (2013) 'भाषा विज्ञान प्रवेश, किताब घर प्रकाशन, नयी दिल्ली
4. 'राष्ट्रीय पाठचर्या की रूपरेखा' (2005), रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
5. Smith, B.O. & Standly, W.O. Shores, J.H. (1957). *Fundamental of Curriculum Development*. New Yark: Harcant, Brace and World.

खण्ड– 02 : भाषाओं में विद्यालयी पाठ्यचर्या का विश्लेषण

खण्ड परिचय

तमाम आलोचनाओं के बावजूद भी पाठ्यपुस्तकों की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता। यह सस्ता और आसानी से उपलब्ध होने वाला ऐसा संसाधन है जो विद्यार्थियों के कौशलों के विकास में मदद करता है। यह शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों के लिए ही आधार सामग्री का कार्य करती हैं। इस खण्ड में चार इकाईयाँ हैं जो इस प्रकार हैं–

इकाई 4 भाषा में विद्यालयी पाठ्यचर्या की प्रमुख विशेषताआं से सम्बन्धित है। इसमें पाठ्यचर्या बच्चे के सीखने को सुगम बनाने की योजना है। यह योजना शुरू होती है वहां से जहां बच्चा होता है। यह सीखने के उन सभी आयामों और पहलुओं को सूचीबद्ध करती है जो जरूरी हैं। पाठ्यक्रम का अर्थ है कि विषयवस्तु के हिसाब से क्या पढ़ाया जाए और वे ज्ञान, कौशल एवं अभिवृत्तियां जो स्तर विशिष्ट उद्देश्यों के साथ हो और जिन्हें खास रूप से बढ़ावा मिले।

विद्यालयों में जो भी पढ़ाया जाता है उसका उदेश्य मात्र पढ़ने–लिखने में योग्यता बढ़ाना और ज्ञान में वृद्धि करना नहीं होता। उसका विद्यार्थियों के मन–मस्तिष्क पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। विषय–सामग्री के सकारात्मक प्रस्तुतीकरण से बच्चों का दृष्टिकोण सकारात्मक होता है, जबकि नकारात्मक प्रस्तुतीकरण से नकारात्मक दिशा में ही उनका विकास संभव होगा। शिक्षा व्यवस्था में सुधार हेतु यह आवश्यक है कि पाठ्यपुस्तकों का समय – समय पर विश्लेषण किया जाए। विश्लेषण करने से पहले कुछ आधार बिन्दुओं का निर्माण किया जाना चाहिए जिनके आधार पर पाठ्यपुस्तक का विश्लेषण किया जा सके।

इकाई 5 भाषा की विधियों से सम्बन्धित है। इसमें 'पढ़ने की समझ' को लेकर प्रायः शिक्षकों में ही समझ का अभाव पाया जाता है। इसके लिए एक शिक्षक को सर्वप्रथम पढ़ने की समझ से अवगत होना पड़ेगा और साथ ही कक्षा में भाषाई कौशलों की समझ को विकसित करने के लिए विभिन्न उपकरणों का कक्षा में प्रयोग करने के साथ–साथ नए उपकरणों की तलाश भी करनी होगी। कक्षा में विद्यार्थियों को पढ़ने एवं समझ विकसित करने के उचित अवसर देने होंगे। अब तो बाहरी दुनिया की समझ बनाने के लिए भी पढ़ना आना' आवश्यक है। इसके साथ ही पढ़ने की इस समझ का मूल्यांकन कैसे किया जाए यह भी गहन चर्चा का विषय है। हम जानते हैं कि 'पढ़ना' भाषा का अर्जित किया जाने वाला कौशल है। इसलिए यह समझ बनाना बहुत जरूरी है कि बच्चे इस कौशल को कैसे अर्जित कर रहे हैं। प्रश्नों का सही जवाब लिखने के लिए या अपनी बात को व्यक्त करने के लिए हमारा लेखन कला में दक्ष होना आवश्यक है। इसके लिए हमारे पास सही शब्द, वाक्य संरचना, अनुच्छेद आदि की समझ होना आवश्यक है। अच्छे लेखन के लिए हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि लेखन का उद्देश्य क्या है। जो भी लिखा जा रहा है वो विषय के अनुरूप है या नहीं। शब्दों का चुनाव ठीक ढंग से किया गया है या नहीं। भाषा की दृष्टि से लेखन में त्रुटियां तो नहीं हैं। विराम चिह्नों का प्रयोग ठीक ढंग से हुआ है या नहीं। लिखते हुए इन सारी बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। लेखन कौशल के अंतर्गत ही नोट लिखना या नोट बनाना, सारांश लिखना, रिपोर्ट लिखना आदि शामिल हैं। इन सब की अपनी कुछ विशेषताएं हैं, उनके अनुसार लिखने के अलावा जो बातें हमें लिखते हुए ध्यान रखनी चाहिए वह इन सबके लेखन पर भी लागू होती हैं

पढ़ना सीखने का शुरुआती दौर बच्चों एवं शिक्षकों दोनों के लिए ही महत्वपूर्ण होता है। पिछले कुछ दशकों में पढ़ना सीखने वाले की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। परंतु इनमें बड़ी तादाद में ऐसे बच्चे शामिल हैं जो पढ़ तो सकते हैं परंतु अपने पढ़े हुए को समझ पाने की क्षमता उनमें नहीं है। भले ही इस क्षेत्र में किए गए अथक प्रयासों से हालात सुधरे हैं परंतु कुल मिलाकर स्थिति बेहद निराशाजनक है। समझ कर पढ़ने के कौशल का विकास कक्षा तीन–चार के विद्यार्थियों में भी नहीं हो पाता। भाषा शिक्षण का तात्पर्य पाठ्यपुस्तक के पाठों का वाचन और भाषा पाठ्यक्रम को पूरा करने से कहीं अधिक व्यापक है।

इकाई 6 विद्यालय पाठ्यचर्या में भाषा की प्रासंगिकता से सम्बन्धित है। इसके अंतर्गत पाठ्यचर्या में भाषा

क्या है? भाषा के विकास की प्रविधियां क्या हैं? भाषाई कौशल एवं उनका विकास किस प्रकार होता है? तथा प्रारंभिक बाल्यावस्था, देखभाल और शिक्षा में भाषा के विषय में विस्तृत वर्णन दिया गया है। इस इकाई में पूर्व प्राथमिक स्तर, प्राथमिक स्तर तथा भाषा समृद्ध वातावरण बनाने पर बल दिया गया है साथ ही भाषा सीखने के लिए कार्य नीतियों का वर्णन किया गया है। इस इकाई में त्रिभाषा सूत्र, प्रथम भाषा, द्वितीय भाषा एवं तृतीय भाषा पर भी प्रकाश डाला गया है। यह इकाई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भाषा से संबंधित महत्वपूर्ण सिद्धांतों पर प्रकाश डालती है। राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढांचा 2005 में भाषा से संबंधित क्या प्रावधान किए गए हैं? इसके विषय में इस इकाई में विस्तृत वर्णन दिया गया है। बहुभाषिक कक्षा, बुनियादी साक्षरता एवं भाषा, भाषा शिक्षण में समावेशन, भाषा समझ और ज्ञान तथा विषय के रूप में भाषा का विषद वर्णन दिया गया है।

इकाई– 4 : भाषा में विद्यालयी पाठ्यचर्या की प्रमुख विशेषताएं

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 इकाई के उद्देश्य

4.3 भाषा : अर्थ, अवधारणा

4.4 विषयों की बेहतर समझ

4.5 शिक्षा में भाषा भूमिका

- 4.5.1 शिक्षा और पाठ्यक्रम में भाषा का महत्व
- 4.5.2 भाषा की परिभाषा
- 4.5.3 भाषा की प्रकृति

4.6 पाठ्यक्रम के पार भाषा का स्वरूप

- 4.6.1 अधिगमकर्ता की भाषागत पृष्ठभूमि
- 4.6.2 मौखिक भाषा तथा भाषायी रणनीतियों का प्रयोग
- 4.6.3 पढ़ने–लिखने की प्रकृति की समझ
- 4.6.4 पाठयक्रम के पार भाषा के स्वरूप में भाषायी विशेषताएं
- 4.6.5 छात्राध्यापकों हेतु पाठ्यक्रम के पार भाषा विषय की उपादेयता

4.7 सारांश

4.8 अभ्यास के प्रश्न

4.9 चर्चा के बिन्दु

4.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

भाषा संचार का एक रूप और साधन है। यह मानव से घनिष्ठ रूप से संबंधित है क्योंकि यह अकेले मनुष्य की सार्वभौमिक और अनन्य विशेषता है। यह मानव मन और मनुष्य के पास मौजूद मुखर तंत्र का उत्पाद है। यह उनका अब तक का सबसे महत्वपूर्ण उपकरण है। यह वह उपकरण है जो उसे अपना जीवन यापन करने, अपना घर बनाने और अपने जीवन को संवारने में सक्षम बनाता है। यह वह साधन है जो उसकी सोच को आदेश और संगठन देता है।

यह इकाई भाषा की परिभाषा, प्रकृति, अवधारणा, अर्थ, कार्यों से संबंधित है। इसमें ज्ञान विषय के बजाय कौशल के रूप में शिक्षण भाषा तथा पाठ्यक्रम में भाषा की भूमिका आदि भी सम्मिलित है।

4.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. भाषा की अवधारणा, अर्थ और भूमिका का ज्ञान प्राप्त करे सकेंगे।

2. भाषा की अवधारणा, अर्थ और भूमिका को समझ सकेंगे।
3. भाषा के कार्यों को जानने में रुचि का विकास कर सकेंगे।
4. अंग्रेजी पढ़ने और सीखने के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित कर सकेंगे।
5. पाठ्यचर्या में भाषा की आवश्यकता एवं महत्व को समझ सकेंगे।

4.3 भाषा : अर्थ, अवधारणा

भाषा सीखना मूल रूप से एक आदत बनाने की प्रक्रिया है जिसके दौरान सीखने वाला नई आदतें सीखता है। सृष्टि में अकेले मनुष्य को ही भाषा के प्रयोग की शक्ति प्रदान की गई है। वह अपने मस्तिष्क का उपयोग वस्तुओं को सोचने, वर्गीकृत करने और नाम देने के लिए करता है और वाणी के अंगों का उपयोग ध्वनि, ध्वनि समूह, शब्द और वाक्य बनाने के लिए करता है। भाषा उसे दूसरों के प्रति अपनी भावनाओं और भावनाओं को व्यक्त करने में मदद करती है और उससे संबंध बनाए रखती है।

भाषा हमारे विचारों को व्यक्त करने का माध्यम है। यह वह माध्यम है जिसके माध्यम से शिक्षक विचारों को संप्रेषित करने में सक्षम होते हैं छात्रों और शिक्षार्थियों के लिए विचार उनके सीखने के स्तर को व्यक्त करने में सक्षम हैं। सीखने की प्रक्रिया में भाषा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भाषा न केवल हमें अपने विचारों और विश्वासों को व्यक्त करने में सक्षम बनाती है बल्कि सीखने के लिए और समझ बढ़ाने के लिए एक प्रभावी एजेंट तथा एक उपकरण के रूप में भी कार्य करती है। उनका मानना है कि भाषा और सीखना अलग–अलग डिब्बों में नहीं हो सकता क्योंकि वे परस्पर जुड़े हुए हैं इसलिए यह दृष्टिकोण मुख्य रूप से भाषा के रचनात्मक और सक्रिय सीखने पर केंद्रित है जो शिक्षार्थियों को विकसित करने में मदद करता है।

निष्कर्शतः कहा जा सकता है कि–

- भाषा केवल संचार कौशल नहीं है यह बोलने और लिखने की क्षमताओं से कहीं अधिक व्यापक है।
- भाषा अधिग्रहण में सोचने की प्रक्रिया शामिल है और भाषा का उपयोग सोच प्रक्रियाओं में किया जाता है।
- भाषा मौजूदा ज्ञान के साथ सूचना की अवधारणा को जोड़ने के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में कार्य करती है।
- भाषा मानसिक गतिविधियों का समर्थन करके विषय सीखने को बढ़ावा देती है, जिसके लिए सटीक संज्ञान आवश्यक है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. भाषा की प्रमुख विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

4.4 विषयों की बेहतर समझ

चूंकि भाषा संज्ञानात्मक क्षमताओं और व्यावहारिक दृष्टिकोण के बीच की खाई को पाटती है जो किसी विशिष्ट समस्याओं को हल करने में तथा मानसिक क्षमता को लागू करने में सक्षम बनाती है। पाठ्यचर्या में भाषा दृ ष्टिकोण शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के भीतर और बाहर इसे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रभावी ढंग से निष्पादित करने के लिए, युवा शिक्षार्थियों को भाषा के महत्व को समझने में मदद करता है। इस निम्न प्रकार भी समझा जा सकता है–

(i) पाठ्यक्रम एवं पाठ्यचर्या

'पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें' के राष्ट्रीय फोकस समूह के आधार पत्र (2005) में कहा गया है कि "वर्तमान में पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकें तैयार करने के लिए जो पद्धति अपनाई गई है उसकी विशेषता यह है कि वह शिक्षा के लक्ष्य, अधिगम की जरूरतों एवं बच्चों के सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिवेश पर आधारित न होकर परीक्षा व्यवस्था की जरूरतों एवं तरीकों से निर्धारित होती है।"

पाठ्यचर्या का क्या अर्थ है? किसी विद्यालय के अंदर होने वाली सभी प्रक्रियाएं पाठ्यचर्या के अंतर्गत आती हैं। इन सभी प्रक्रियाओं में शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों परस्पर सम्मिलित होते हैं। इसके अंतर्गत केवल पठन–पाठन ही नहीं अपितु वे सभी क्रियाएं आती हैं जिनका संबंध शिक्षा एवं शिक्षण से होता है। पाठ्यचर्या की इस परिभाषा की भी काफी आलोचना की जाती है। जैसे यह कहा जाता है कि यदि पाठ्यचर्या के अंतर्गत विद्यालय की सभी गतिविधियां आती हैं तो क्या विद्यालय की दीवारों को रंगने के लिए चुना गया रंग पाठ्यचर्या के अंतर्गत आता है? इसी प्रकार जब विद्यार्थी एक–दूसरे को धमकाते हैं तो क्या यह क्रिया भी पाठ्यचर्या के अंतर्गत आती है? इस संदर्भ में क्रिस्टोफर विंच लिखते हैं कि "क्या पढ़ाया जाना चाहिए क्या नहीं, इस पर जब भी चर्चा होती है तो दुर्भाग्यवश यह अपारदर्शी होती है जो कभी बहुत विस्तार से तो कभी संकुचित रूप में परिभाषित करती है कि पाठ्यचर्या को क्या गठित करता है।" इस संदर्भ में पाठ्यचर्या की एक अन्य परिभाषा देखते हैं–– "नियोजित, संपोषित और नियमित अधिगम, जिसे गंभीरतापूर्वक लिया गया हो, जिसकी एक सुनियोजित विषयवस्तु हो और जो अधिगम की अवस्थाओं के साथ चलता हो।" (विल्सन, 1977) पाठ्यचर्या की ये परिभाषा ऐसी गतिविधियों की बात करती है जिसको गंभीरतापूर्वक लिया गया हो, अब यह एक जटिल प्रश्न है कि किन गतिविधियों को गंभीरतापूर्ण मानकर पाठ्यचर्या में शामिल किया जाए। 1975 में पाठ्यचर्या समिति जिसने 'द करीकुलम फॉर टेन इयर स्कूल ए फ्रेमवर्क' लिखा था उसने पाठ्यचर्या को इस प्रकार परिभाषित किया है– "सोचे–समझे रूप में शैक्षिक अनुभवों के नियोजित समुच्चयों का सम्पूर्ण योग पाठ्यचर्या है, जो बच्चों को विद्यालय द्वारा दिए जाते हैं। इस प्रकार यह संबंधित है–

1. एक विशिष्ट अवस्था या कक्षा में शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों से।
2. विषय आधारित निर्देशात्मक उद्देश्य और विषयवस्तु से।
3. अध्ययन के कोर्स और समय निर्धारण से।
4. शिक्षण–अधिगम अनुभवों से।
5. निर्देशात्मक साधनों और सामग्रियों से।
6. अधिगम आगमों के मूल्यांकन और विद्यार्थियों, शिक्षकों और अभिभावकों की प्रतिपुष्टि से। "

यह परिभाषा कक्षा में सामान्य उदेश्य से लेकर अधिगम आगमों के मूल्यांकन तक की विशालता को अपने में समेटे हुए है। परंतु इसके बिन्दु 3 एवं 4 में जो विवरण दिए गए हैं। उनके अनुसार यह परिभाषा पाठ्यक्रम की अधिक प्रतीत होती है।

भारत में विभिन्न शैक्षिक दस्तावेजों में पाठ्यचर्या की परिभाषा को बहुत ही व्यापक रूप में लिया गया है। विभिन्न संगोष्ठियों, नीति–दस्तावेजों, शोधकर्ताओं, विभिन्न प्रकाशनों आदि में यही कहा गया है कि विद्यालय में जो कुछ हो रहा है वह पाठ्यचर्या का ही हिस्सा है। पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों के राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र इस संदर्भ में कहता है कि "साहित्य दावा करता है कि सभी कुछ पाठ्यचर्या बने और दूसरी ओर योजनाबद्ध दृष्टिकोण विद्यालयी अनुभव के बहुत ही संकुचित हिस्से को घेरता है। लेकिन घोषित रूप में सभी कुछ पाठ्यचर्या है। यह नियोजन के लिए चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस प्रकार जो आवश्यक माना जाता है वह नियोजित है तथा पाठ्यचर्या के विस्तृत परिदृश्य के बचे हुए भाग को संयोग से होने के लिए छोड़ दिया जाता है।"

(ii) पाठ्यक्रम के पार भाषा का अर्थ

विषय के नाम से ही स्पष्ट है कि इसमें ऐसी भाषा की आवश्यकता प्रतिपादित की गई है जो विभिन्न पाठ्यक्रम से अलग है। पाठ्यक्रम के पार भाषा का संकुचित अर्थ है पाठय विषयों के व्यवस्थित रूप तथा उनमें प्रयुक्त तकनीकी या पारिभाषिक भाषा के रूप से भिन्न ऐसी सामान्य भाषा के ज्ञान से हो जो सभी विषयों के शिक्षकों के लिए आवश्यक है। यह विज्ञान, टेक्नोलॉजी, कला, वाणिज्य, इतिहास, भूगोल, भाषा के निर्धारित पाठ्यक्रम से अलग ऐसी अध्ययन– अध्यापन की भाषा है जिसका सभी विषयों के शिक्षकों को ज्ञान होना चाहिए। अपने विस्तृत अर्थ में पाठ्यक्रम के पार भाषा वह सामान्य भाषा है जो विद्यालय की सभी गतिविधियों में किसी न किसी रूप में व्यापत है। यह शिक्षक के शिक्षण तथा विद्यार्थी के अधिगम से संबंधित भाषा होने के साथ–साथ पाठ्यक्रम, पाठ्यसहगामी व पाठ्यक्रमेत्तर भाषा हैं। यह वह भाषा है जो अध्ययन, लेखन, शिक्षण और प्रस्तुतीकरण में सहायक है।

राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद की मान्यता है कि भारत में भाषा व साक्षरता को सामान्यतः भाषा शिक्षक से ही संबंधित माना जाता है, परिणामतः अन्य विषयों के शिक्षक भाषा को उतना महत्त्व नहीं देते। परन्तु सत्य यह है कि किसी भी विषय का शिक्षक बिना भाषायी वातावरण के असंभव है। रसायनशास्त्र या इतिहास के शिक्षक अपने विषय का अध्यापन करें तो भी संप्रेषण के माध्यम के रूप में भाषा की उपयोगिता सर्वत्र विद्यमान है। पाठ्यक्रम के पार भाषा की दूसरी विशेषता यह भी है कि शिक्षण में सामूहिक रूप से कक्षा अध्यापन में शिक्षक के लिए यह जानना आवश्यक है कि उनके विद्यार्थियों की भाषागत पृष्ठभूमि क्या है। विभिन्न छात्रों की भाषायी पृष्ठभूमि भिन्न–भिन्न हो सकती है क्योंकि उनकी मातृभाषा, शिक्षा का माध्यम, घरेलू भाषा पृथक होना संभव है। कक्षा में विभिन्न जाति, धर्म संप्रदाय, वर्ग, भाषा के छात्र अध्ययनरत रहते हैं उनके शिक्षक को छात्रों की भाषायी विभिन्नता की विशेषताओं को ध्यान में रखकर शिक्षण व लेखन की सामान्य भाषा का कक्षा अन्तक्रिया. चर्चा, प्रश्न, अभ्यास, गतिविधि, शिक्षण व लेखन में प्रयोग प्रोत्साहित करना चाहिए। छात्रों की भाषा की वैयक्तिक विभिन्नता का उनके अधिगम पर दुष्प्रभाव न हो इसका शिक्षक को ध्यान रखना चाहिए।

भाषा की अधिकांश परिभाषाएँ कहती हैं कि यह एक विशिष्ट मानवीय गुण है, जो मनमाना, मुखर प्रतीकों की एक प्रणाली के माध्यम से खुद को अभिव्यक्त करता है। भाषा की शक्ति मनुष्य को देश के शासन के लिए उपयुक्त तंत्र बनाने के अलावा, दूसरों को प्रभावित करने और सामाजिक संपर्क बनाने में मदद करती है।

मनुष्य चाहे जहाँ भी रहे, जो कुछ भी करता है चाहे खेत जोत रहा हो, निहाई पर काम कर रहा हो या हथौड़ी चला रहा हो, चाहे वह कार्यालय में हो, या चाय या कॉफी का आनंद ले रहा हो, कैफेटेरिया में या अपने घर पर चाहे वह उड़ रहा हो, चल रहा हो, दौड़ रहा हो, तैर रहा हो या अपने शयन कक्ष में पढ़ने के लिए हाथ में किताब लिए लेटा हो इन सभी गतिविधियों में वह भाषा का प्रयोग करता है। भाषा, इस प्रकार एक प्रिज्म की तरह है, जो मानव भाषा और गतिविधि के विविध रंगों को दर्शाती है। संक्षेप में भाषा का क्षेत्र मानव जीवन जितना ही विस्तृत है।

(iii) पाठ्यचर्या में भाषा की आवश्यकता

भाषा व साक्षरता विद्यालय में पढ़ाए जाने वाले सभी विषय सीखने के लिए आवश्यक हैं। छात्र सुनने, बात करने, पढ़ने व लिखने के माध्यम से व विशेष विषयों से संबद्ध विशिष्ट शब्दों वाक्यांशों व विन्यास को

समझकर व उनका उपयोग करके ज्ञान को आत्मसात करते हैं।

(iv) पाठ्यक्रम में भाषा

(1) श्रवण (सुनना), भाषण (बोलना), वाचन (पढ़ना) तथा लेखन (लिखना) ये चारों भाषायी कौशलों का बोधपूर्वक अर्थपूर्ण प्रयोग। (2) संप्रेषण, विचाराभिव्यक्ति, भावाभिव्यक्ति का माध्यम। (3) कक्षा अन्तक्रिया की भाषा। यह अन्तक्रिया शिक्षक व छात्रों के मध्य सम्पन्न होती है।

(v) पाठ्यचर्या में भाषा का महत्व

भाषा वह माध्यम है जिसके द्वारा बच्चे स्वयं से और दूसरों से बात करते हैं। शब्दों से ही वे अपने यथार्थ का सृजन तथा उसकी समझ बनाना शुरू करते हैं। सीखने की प्रक्रिया के लिए भाषा को समझने और उसे स्पष्ट तथा प्रभावी ढंग से उपयोग करने की क्षमता हासिल करना आवश्यक है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

2. पाठ्यचर्या का क्या अर्थ है?

.....

.....

3. पाठ्यचर्या में भाषा का होना क्यों आवश्यक है?

.....

.....

4. पाठ्यक्रम में भाषा क्या है उदाहरण दीजिए?

.....

.....

5. पाठ्यचर्या में भाषा का क्या महत्व है?

.....

.....

4.5 शिक्षा में भाषा की भूमिका

शैक्षिक विकास की दृष्टि से बच्चों की प्रारम्भिक शिक्षा यदि उनके घर की भाषा या मातृभाषा में दी जाती है तो विषय में प्रवेश सरल और रुचिकर तो होगा ही वह संस्कृति को भी जीवंत रखेगा। उनकी सामाजिक भागीदारी, लगाव और दायित्व बोध में भी बढ़ोत्तरी होगी। अपनी भाषा सीखते और उस माध्यम से अन्य विषयों को सीखना सुखद होगा।

4.5.1 शिक्षा और पाठ्यक्रम में भाषा का महत्व

भाषा बिना हम शिक्षा के किसी भी क्रियाकलाप की कल्पना नहीं कर सकते इसलिए भाषा शिक्षण का महत्व अपने आप में बढ़ जाता है। भाषा संस्कृति का आधार, साहित्य का आधार, सामाजिक प्रक्रिया का आधार, मनुष्य के चिंतन का माध्यम व संप्रेषण का भी आधार है। भाषा से ही हमारा बौद्धिक, मानसिक, संवेगात्मक व सामाजिक विकास हुआ है।

4.5.2 भाषा की परिभाषा

विभिन्न भाषाविदों ने विभिन्न प्रकार से भाषा को परिभाषित किया है। बलोच और टैगोर के अनुसार "भाषा मनमाना मुखर प्रतीकों की एक प्रणाली है जिसके माध्यम से एक सामाजिक समूह संचार करता है" जैसा कि जेस्परसन बताते हैं "भाषा मानव आदतों का समूह है, जिसका उद्देश्य विशेष रूप से मानव विचारों और भावनाओं को अभिव्यक्ति देना है।" उन्हें दूसरों को प्रदान करने के लिए एडवर्ड सैपियर के शब्दों में, "स्वैच्छिक रूप से उत्पादित प्रतीकों की एक प्रणाली के माध्यम से विचारों, भावनाओं और इच्छाओं को संप्रेषित करने के लिए भाषा विशुद्ध रूप से मानवीय और गैर– सहज तरीका है। ये प्रतीक पहले उदाहरण में श्रवण और भाषण के तथाकथित अंग हैं। उन्हें उत्पन्न करें। मानव भाषण के लिए ऐसा कोई सहज सहज आधार नहीं है। "ये परिभाषाएँ भाषा की प्रकृति की स्पष्ट समझ देती हैं।

4.5.3 भाषा की प्रकृति

भाषा की प्रकृति को निम्न बिन्दुओं में समझा जा सकता है–

(i) भाषा एक व्यवस्था है

भाषा एक व्यवस्था है। यह व्यवहार का एक संगठित तरीका है, जिसे व्यवस्थित तरीके से वर्णित किया जा सकता है, जैसे हमारे शरीर की विभिन्न प्रणालियाँ (जैसे हृदय, फेफड़े, हाथ, आँखें आदि) हालांकि अलग–अलग होते हुए भी समन्वय में काम करती हैं, उसी तरह भाषा की प्रणाली भी कार्य करती है। ध्वनियों, शब्दों और संरचनाओं के माध्यम से। ये एकीकृत हैं और भाषा बनाते हैं। प्रत्येक भाषा एक अनूठी प्रणाली है जिसकी सहायता से अर्थ संप्रेषित किया जाता है। इस प्रणाली में ध्वनियाँ, संरचनाएँ और शब्दावली की वस्तुएँ शामिल हैं। इसीलिए जब कोई व्यक्ति कोई नई भाषा सीखना चाहता है; उसे नई ध्वनियाँ, संरचनाएँ और शब्दावली की नई वस्तुएँ सीखनी होती हैं।

(ii) भाषा मनमाना है

यह आवश्यक नहीं है कि शब्द और जिस वस्तु के लिए वह बोला जाता है, उसके बीच कोई संबंध हो। एक ही वस्तु के लिए अलग–अलग भाषाओं में अलग–अलग शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है। अंग्रेजी में पुस्तक, तमिल में पुस्तागम या नूल आदि।

(iii) भाषा के प्रतीक स्वर हैं

"भाषा, शब्द की उत्पत्ति लैटिन शब्द "लिंगुआ" से हुई है, जिसका अर्थ है, "जो जीभ से उत्पन्न होता है।'' भाषा मूल रूप से भाषण है। लेखन भाषण का चित्रमय प्रतिनिधित्व है। कई भाषाएँ केवल बोलचाल के रूप में मौजूद हैं; उनके पास लिखित रूप नहीं है।

(iv) भाषा प्रतीकों की एक प्रणाली है

किसी भाषा के प्रतीक उसके शब्द हैं। किसी भाषा के बेहतर संचालन के लिए यह आवश्यक है कि वक्ता और श्रोता दोनों को शब्दों का ज्ञान हो। प्रत्येक शब्द की एक निश्चित ध्वनि और एक निश्चित अर्थ होता है। विचारों के संप्रेषण के लिए यह आवश्यक है कि उसकी ध्वनि में कोई अर्थ जोड़ा जाए।

(v) भाषा हमेशा बदलती रहती है

प्रत्येक भाषा एक जीवित भाषा है। वक्ता की आवश्यकताओं के अनुसार भाषा लगातार बदलती और

विकसित होती रहती है। नए शब्द समय–समय पर किसी भाषा में उधार लिए जाते हैं और उसमें समाहित किए जाते हैं।

(vi) भाषा आदतों से बनती है

एक व्यक्ति की भाषा उस समुदाय की आदतों को दर्शाती है जिससे वह संबंधित है। भाषा अनिवार्य रूप से एक आदत बनाने की प्रक्रिया है। भाषा – विचार का साधन, उसके साथ स्वचालित आदत का मामला। इस प्रकार भाषा आदतों से बनती है और इसके लिए भाषा के प्रयोग में अभ्यास की आवश्यकता होती है।

(vii) भाषा सीखी जाती है

भाषा एक कौशल है। यह व्यवहार का एक रूप है, जिसे सीखा जाता है। एक नवजात शिशु रोने और रोने के अलावा कोई भाषा नहीं जानता। जैसे–जैसे समय बीतता है बच्चे के रोने और बड़बड़ाने की आवाजें उसके समूह की सार्थक भाषण ध्वनियों में विकसित हो जाती हैं। वह अपने घर में अपने आसपास के बड़ों को सुनकर भाषा सीखता है। वह नकल और अभ्यास द्वारा भाषा सीखता है।

(viii) भाषा सामान्य सांस्कृतिक अनुभव पर आधारित है

प्रत्येक भाषा एक विशेष समाज और संस्कृति का उत्पाद है। मानव भाषा एक विशेष व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में भौतिक विरासत से नहीं, बल्कि सीखने से प्रसारित होती है। इसका अर्थ केवल एक विशेष संस्कृति और समाज में होता है। हमें दो अलग–अलग भाषाओं में बिल्कुल समान शब्द नहीं मिलते। ऐसा इसलिए है क्योंकि संस्कृतियां अलग हैं।

(ix) भाषा संप्रेषण के लिए होती है

विचारों का एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक संप्रेषण भाषा का प्रमुख कार्य है। सही संचार में भाषा का सही उपयोग शामिल है।

(x) हर भाषा अनूठी होती है

हर भाषा अपने आप में अनूठी होती है। दुनिया की किन्हीं दो भाषाओं में समान शब्द, ध्वन्यात्मक प्रतीक और व्याकरणिक पैटर्न नहीं हैं। भौगोलिक और सांस्कृतिक विविधताएं हैं और इसी वजह से हर भाषा अपने तरीके से अनूठी होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. शिक्षा में भाषा की क्या भूमिका है?

.....

.....

7. शिक्षा और पाठ्यक्रम में भाषा का क्या महत्व है?

.....

.....

8. एडवर्ड सैपियर के शब्दों में भाषा की परिभाषा दीजिए।

.....

.....

9. भाषा की प्रकृति को समझाइए।

.....

.....

4.6 पाठ्यक्रम के पार भाषा का स्वरूप

पाठ्यक्रम को रूपायित करते हुए राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद ने पाठ्यक्रम की संरचना में निम्नलिखित तीन विस्तृत क्षेत्रों पर प्रकाश केन्द्रीकृत किया है–

4.6.1 अधिगमकर्ता की भाषागत पृष्ठभूमि

छात्रों की प्रथम भाषा, द्वितीय भाषा, घरेलू भाषा, शिक्षण की भाषा, पुस्तक की भाषा, लेखन की भाषा, संप्रेषण व संचार की भाषा के विशिष्टता के प्रति शिक्षकों को संवेदनशील होना चाहिए। इससे कक्षा के बहुभाषावाद को सैद्धान्तिक व व्यावहारिक समझ का आधार तैयार होगा। प्रायः देखा गया है कि पुस्तकीय भाषा में दी गई स्पीच की अनेक बातें सभी छात्र नहीं समझ पाते हैं। उच्च स्तर पर भाषण द्वारा शिक्षण उपयोगी हो सकता है परन्तु माध्यमिक स्तर तक भाषण के स्थान पर शिक्षण का स्वरूप त्रिमुखी होता है जिसमें शिक्षक छात्र के पूर्व ज्ञान, छात्र की भाषा पृष्ठभूमि, छात्र मनोविज्ञान को समझकर पाठ्यक्रम का शिक्षण करता है तथा छात्र अपने संदेह, शिक्षक से पूछकर अधिगम प्राप्त करते हैं। घर में विद्यार्थी जो भाषा बोलते हैं वह स्कूल की भाषा से इस अर्थ में भिन्न होती है कि स्कूली भाषा स्तरीय होती है न कि घरेलू भाषा जैसी आम। छात्र की घरेलू अपरिष्कृत भाषा की प्रवृत्ति कक्षा शिक्षण में अधिगम में भाषा संबंधी अवरोध उत्पन्न करती है। शिक्षक का कार्य परिस्थिति के अनुसार शिक्षण में सामान्य भाषा का प्रयोग करना है।

4.6.2 मौखिक भाषा तथा भाषायी रणनीतियों का प्रयोग

दूसरा क्षेत्र शिक्षक द्वारा कक्षा शिक्षण में मौखिक भाषा के उपयोग द्वारा विषय संबंधी ज्ञान के अधिगम हेतु भाषायी रणनीतियों के इस्तेमाल से संबंधित है। बातचीत में छात्रों के साथ परस्पर चर्चा में, कक्षा अन्तक्रिया में प्रश्न करने में, कक्षा में नियंत्रण रखने में मौखिक भाषा का उपयोग होना चाहिए। इस क्षेत्र की समझ शिक्षक हेतु आवश्यक है।

4.6.3 पढ़ने–लिखने की प्रकृति की समझ

पाठ्यक्रम के पार भाषा का तीसरा विस्तृत क्षेत्र वाचन या पठन की भाषा की प्रकृति तथा लेखन की प्रकृति की समझ है। वाचन का अर्थ केवल पढ़ना न होकर बोधपूर्वक पढ़ना है अर्थात् पढ़ते समय कथ्य को समझना भी आवश्यक है अन्यथा वाचन निरर्थक हो सकता है। यह समझ के साथ वाचन सभी विषयों के अधिगम में आवश्यक है। सामाजिक विज्ञान, विज्ञान, गणित की विषयवस्तु का वाचन विवरणात्मक पाठय विरुद्ध व्याख्यात्मक पाठय, व्यावहारिक पाठ विरुद्ध परावर्तक पाठय, रूपरेखा योजना का सिद्धान्त, पाठय का ढांचा, पाठयपुस्तकों के विषयवस्तु का परीक्षण, विद्यार्थी की वाचन संबंधी रणनीतियाँ. नोटस तैयार करना, सारांश तैयार करना, वाचन– लेखन अन्तसम्बन्ध बनाना, प्रक्रिया लेखन, छात्रों के लेखन का विश्लेषण करना ताकि उसकी संकल्पनाओं को समझा जा सके, प्रयोजनपूर्ण लेखन करना सीखने व समझने के लिए लिखना अर्थात् पढ़ने–लिखने की प्रकृति की समझ संपूर्ण शिक्षण व अधिगम क्षेत्र को स्पर्श करती है।

उपरोक्तानुसार पाठ्यक्रम के परे की भाषा सभी छात्रों के शिक्षण अधिगम, कक्षा– शिक्षण को सभी प्रक्रियाओं तथा वाचक लेखन के सभी क्षेत्रों में प्रयुक्त बोधगम्य सामान्य भाषा है।

4.6.4 पाठ्यक्रम के पार भाषा के स्वरूप में भाषायी विशेषताएं

पाठ्यक्रम के पार भाषा के स्वरूप में निम्नलिखित भाषायी विशेषताएं सम्मिलित हैं–

(1) श्रवण (सुनना), भाषण (बोलना), वाचन (पढ़ना) तथा लेखन (लिखना) ये चारों भाषायी कौशलों का बोधपूर्वक अर्थवत्तापूर्ण प्रयोग।

(2) संप्रेषण, विचाराभिव्यक्ति, भावाभिव्यक्ति का माध्यम।

(3) कक्षा अन्तर्क्रिया की भाषा, यह अन्तक्रिया शिक्षक व छात्रों के मध्य सम्पन्न होती है।

(4) सभी प्रकार के पाठ्यों की समझ द्वारा भाषायी प्रवीणता उत्पन्न करना।

(5) पाठ्यक्रम व पाठय सहगामी क्रियाओं में अन्तर्निहितता तथा उपयोग।

(6) स्वाध्याय या स्वयं अध्ययन करना संदर्भ पुस्तकों से समझना।

(7) चर्चा, विचारविमर्श व समीक्षात्मक कौशल उत्पन्न करना।

(8) नोट्स तैयार करना।

(9) तर्क व विश्लेषण करना तथा समूह चर्चा में सहभागिता।

(10) सार लेखन।

(11) पत्र (लेख) तैयार करना, लोकप्रिय विषयों से लेकर शैक्षिक शोध विषयों तक।

(12) पत्र प्रस्तुतीकरण तथा प्रश्न के उत्तर देने की तैयारी।

4.6.5 छात्राध्यापकों हेतु पाठ्यक्रम के पार भाषा विषय की उपादेयता

शिक्षा स्नातक पाठ्यक्रम के इस विषय के अध्ययन का उद्देश्य छात्राध्यापकों में निम्नलिखित समझ तथा प्रवीणता उत्पन्न करना है (चाहे वह किसी भी विषय का पाठ्यक्रम पढ़ाये जा रहे हों)

(1) छात्राध्यापकों में भाषा ज्ञान द्वारा विचारशीलता उत्पन्न करना।

(2) उनमें अपने विचारों के परावर्तन, अभिव्यक्ति व संप्रेषण कुशलता उत्पन्न करना।

(3) शिक्षण की भाषा को सरल, बोधगम्य, विषयकेन्द्रित बनाना।

(4) पाठय आधारित भाषायी गतिविधियों श्रवण, पठन, भाषण, लेखन, समझसक्षम के आयोजन में बनाना।

(5) विभिन्न स्तरों के भाषा की योग्यताओं को समझकर उसका समूह चर्चा आदि में अनुप्रयोग करना।

(6) वर्णनात्मक व विवरणार्थ वृत्तान्तों से जुड़ाव हेतु वाचन, पुनर्कथन करना, सारांश लेखन, परिशुद्धता व परिष्कार करना।

(7) लोकप्रिय विषय आधारित व्याख्यात्मक लेखन करना।

(8) पत्रकारिता से संबंधित समसामयिक विषयों पर लेखन।

(9) विभिन्न प्रकार के पाठों को पढ़ना व समझना।

(10) विभिन्न प्रकार के लेखन कार्य द्वारा विचारों का संप्रेषण करना।

(11) स्वअधिगमकर्ता बनना, शैक्षिक विषयों की पत्र पत्रिकाएं लेख पढ़ना।

(12) संदर्भ पुस्तकों से विषयगत जानकारी प्राप्त कर उसका उपयोग शिक्षण व लेखन में करना।

(13) तर्क व समीक्षा करना, विचार विनिमय करना।

(14) शैक्षिक विषयों पर लेख लिखना।

(15) स्वरचित लेखों को समूह के समक्ष आत्मविश्वास के साथ प्रस्तुत करना व अत में श्रोताओं के प्रश्नों के उत्तर देने की क्षमता विकसित करना।

इस प्रकार अच्छे पाठक, शिक्षक, लेखक तथा भाषणकर्ता बनने की योग्यताएं सभी छात्राध्यापकों में उत्पन्न करना पाठ्यक्रम के परे भाषा विषय का उद्देश्य है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10. पाठयक्रम के पार भाषा के स्वरूप में कौन सी भाषायी विशेषताएं सम्मिलित हैं?

.....

.....

11. छात्राध्यापकों हेतु पाठ्यक्रम के पार भाषा विषय की उपादेयता को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

4.7 सारांश

विद्यालयों में जो भी पढ़ाया जाता है उसका उद्देश्य मात्र पढ़ने–लिखने में योग्यता बढ़ाना और ज्ञान में वृद्धि करना नहीं होता। उसका विद्यार्थियों के मन–मस्तिष्क पर भी गहरा प्रभाव पड़ता है। विषय–सामग्री के सकारात्मक प्रस्तुतीकरण से बच्चों का दृष्टिकोण सकारात्मक होता है जबकि नकारात्मक प्रस्तुतीकरण से नकारात्मक दिशा में ही उनका विकास संभव होगा। शिक्षा व्यवस्था में सुधार हेतु यह आवश्यक है कि पाठ्यपुस्तकों का समय–समय पर विश्लेषण किया जाए। विश्लेषण करने से पहले कुछ आधार बिन्दुओं का निर्माण किया जाना चाहिए जिनके आधार पर पाठ्यपुस्तक का विश्लेषण किया जा सके।

4.8 अभ्यास के प्रश्न

1. पाठ्यक्रम में भाषा क्या है उदाहरण दीजिए?
2. पाठ्यचर्या में भाषा का क्या महत्व है?
3. शिक्षा में भाषा की क्या भूमिका
4. शिक्षा और पाठ्यक्रम में भाषा का क्या महत्व है?

4.9 चर्चा के बिन्दु

1. पाठ्यचर्या में भाषा का होना क्यों आवश्यक है? चर्चा कीजिए।

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. भाषा केवल संचार कौशल नहीं है यह बोलने और लिखने की क्षमताओं से कहीं अधिक व्यापक है। भाषा अधिग्रहण में सोचने की प्रक्रिया शामिल है और भाषा का उपयोग सोच प्रक्रियाओं में किया जाता है। भाषा मौजूदा ज्ञान के साथ सूचना की अवधारणा को जोड़ने के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में कार्य करती है।
2. किसी विद्यालय के अंदर होने वाली सभी प्रक्रियाएं पाठ्यचर्या के अंतर्गत आती हैं। इन सभी प्रक्रियाओं में शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों परस्पर सम्मिलित होते हैं। इसके अंतर्गत केवल पठन–पाठन ही नहीं अपितु वे सभी क्रियाएं आती हैं जिनका संबंध शिक्षा एवं शिक्षण से होता है।
3. भाषा व साक्षरता विद्यालय में पढ़ाए जाने वाले सभी विषय सीखने के लिए आवश्यक हैं। छात्र सुनने, बात करने, पढ़ने व लिखने के माध्यम से व विशेष विषयों से संबद्ध विशिष्ट शब्दों वाक्यांशों व विन्यास को समझकर व उनका उपयोग करके ज्ञान को आत्मसात करते हैं।
4. (1) श्रवण (सुनना), भाषण (बोलना), वाचन (पढ़ना) तथा लेखन (लिखना) ये चारों भाषायी कौशलों का बोधपूर्वक अर्थवत्तापूर्ण प्रयोग। (2) संप्रेषण, विचाराभिव्यक्ति, भावाभिव्यक्ति का माध्यम। (3) कक्षा अन्तर्क्रिया की भाषा। यह अन्तक्रिया शिक्षक व छात्रों के मध्य सम्पन्न होती है।
5. भाषा वह माध्यम है जिसके द्वारा बच्चे स्वयं से और दूसरों से बात करते हैं। शब्दों से ही वे अपने यथार्थ का सृजन तथा उसकी समझ बनाना शुरू करते हैं। सीखने की प्रक्रिया के लिए भाषा को समझने और उसे स्पष्ट तथा प्रभावी ढंग से उपयोग करने की क्षमता हासिल करना आवश्यक है।
6. शैक्षिक विकास की दृष्टि से बच्चों की प्रारम्भिक शिक्षा यदि उनके घर की भाषा या मातृभाषा में दी जाती है तो विषय में प्रवेश सरल और रुचिकर तो होगा ही वह संस्कृति को भी जीवंत रखेगा। उनकी सामाजिक भागीदारी, लगाव और दायित्व बोध में भी बढ़ोत्तरी होगी। अपनी भाषा सीखते और उस माध्यम से अन्य विषयों को सीखना सुखद होगा।
7. भाषा बिना हम शिक्षा के किसी भी क्रियाकलाप की कल्पना नहीं कर सकते इसलिए भाषा शिक्षण का महत्व अपने आप में बढ़ जाता है। भाषा संस्कृति का आधार, साहित्य का आधार, सामाजिक प्रक्रिया का आधार, मनुष्य के चिंतन का माध्यम व संप्रेषण का भी आधार है। भाषा से ही हमारा बौद्धिक, मानसिक, संवेगात्मक व सामाजिक विकास हुआ है।
8. एडवर्ड सैपियर के शब्दों में, "स्वैच्छिक रूप से उत्पादित प्रतीकों की एक प्रणाली के माध्यम से विचारों, भावनाओं और इच्छाओं को संप्रेषित करने के लिए भाषा विशुद्ध रूप से मानवीय और गैर– सहज तरीका है।''
9. भाषा एक व्यवस्था है, भाषा के प्रतीक स्वर हैं, भाषा प्रतीकों की एक प्रणाली है, भाषा हमेशा बदलती रहती है, भाषा सीखी जाती है, भाषा संप्रेषण के लिए होती है।
10. अधिगमकर्ता की भाषागत पृष्ठभूमि, मौखिक भाषा तथा भाषायी रणनीतियों का प्रयोग और पढ़ने–लिखने की प्रकृति की समझ।
11. छात्राध्यापकों में भाषा ज्ञान द्वारा विचारशीलता उत्पन्न करना, उनमें अपने विचारों के परावर्तन, अभिव्यक्ति व संप्रेषण कुशलता उत्पन्न करना, शिक्षण की भाषा को सरल, बोधगम्य, विषय केन्द्रित बनाना, पाठ आधारित भाषायी गतिविधियों श्रवण, पठन, भाषण, लेखन, समझसक्षम के आयोजन में बनाना।

4.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. क्रिस्टोफर, शिक्षा दर्शन में मुख्य अवधारणाएं : रूटलेज, लंदन, यू.के. संस्करण
2. डेविड, स्कॉट, (सं.), 'करीकुलम स्टडीस : मेजर थीम्स इन एडुकेशन', रूटलेज, लंदन, संस्करण 2003
3. यादव, एस. के. 'टेन इयर्स स्कूल करीकुलम इन इंडिया–ए स्टेट्स स्टडी', एनसीईआरटी, दिल्लीय संस्करण 2003
4. लोर्च सू 'बेसिक राईटिंगसः ए प्रकटिकल अप्रोच', विन्थ्रोप पब्लिशर्स, संस्करणए 1981

इकाइ– 5 : भाषा की विधियाँ

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

5.2 इकाई के उद्देश्य

5.3 भाषा और विचार

5.4 भाषा सीखने के सिद्धान्त

5.5 भाषा की व्यवस्था

5.6 भाषा के कार्य

5.7 भाषा का मौखिक एवं लिखित रूप

5.8 प्रथम एवं द्वितीय भाषा

5.9 भाषायी कौशल

5.9.1 सुनना (श्रवण कौशल)

5.9.2 बोलना

5.9.3 पढ़ना (वाचन कौशल)

5.9.4 लिखना

5.10 भाषा में अधिगम संसाधनों का प्रयोग

5.10.1 शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाओं का प्रयोग

5.11 भाषा शिक्षण और कक्षागत अंतः क्रिया

5.11.1 कक्षा में विद्यार्थी–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया

5.11.2 कक्षागत व्यवहार का स्वरूप

5.12 सारांश

5.13 अभ्यास के प्रश्न

5.14 चर्चा के बिन्दु

5.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.16 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

'पढ़ने की समझ' को लेकर प्रायः शिक्षकों में ही समझ का अभाव पाया जाता है। इसके लिए एक शिक्षक को सर्वप्रथम पढ़ने की समझ से अवगत होना पड़ेगा और साथ ही कक्षा में भाषाई कौशलों की समझ को विकसित करने के लिए विभिन्न उपकरणों का कक्षा में प्रयोग करने के साथ–साथ नए उपकरणों की तलाश भी करनी होगी। कक्षा में विद्यार्थियों को पढ़ने एवं समझ विकसित करने के उचित अवसर देने होंगे। अब तो बाहरी दुनिया की समझ बनाने के लिए भी पढ़ना आना' आवश्यक है। इसके साथ ही पढ़ने की इस समझ का मूल्यांकन कैसे किया जाए यह भी गहन चर्चा का विषय है। हम जानते हैं कि 'पढ़ना' भाषा का अर्जित किया

जाने वाला कौशल है। इसलिए यह समझ बनाना बहुत जरूरी है कि बच्चे इस कौशल को कैसे अर्जित कर रहे हैं। प्रश्नों का सही जवाब लिखने के लिए या अपनी बात को व्यक्त करने के लिए हमारा लेखन कला में दक्ष होना आवश्यक है। इसके लिए हमारे पास सही शब्द, वाक्य संरचना, अनुच्छेद आदि की समझ होना आवश्यक है। अच्छे लेखन के लिए हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि लेखन का उद्देश्य क्या है। जो भी लिखा जा रहा है वो विषय के अनुरूप है या नहीं। शब्दों का चुनाव ठीक ढंग से किया गया है या नहीं। भाषा की दृष्टि से लेखन में त्रुटियां तो नहीं हैं। विराम चिह्नों का प्रयोग ठीक ढंग से हुआ है या नहीं। लिखते हुए इन सारी बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। लेखन कौशल के अंतर्गत ही नोट लेना एवं नोट बनाना, सारांश लिखना, रिपोर्ट लिखना आदि शामिल हैं। इन सब की अपनी कुछ विशेषताएं हैं, उनके अनुसार लिखने के अलावा जो बातें हमें आम लिखते हुए ध्यान रखनी चाहिए वह इन सबके लेखन पर भी लागू होती हैं।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो जाएंगे कि–

1. भाषा और विचार को समझ सकेंगे।
2. भाषा में विद्यालयी पाठ्यक्रम का विश्लेषण कर सकेंगे।
3. भाषा सीखने में व्यवहारवाद एवं संरचनावाद की भूमिका को समझ सकेंगे।
4. भाषा शिक्षण में कक्षागत अन्तःक्रिया को समझ सकेंगे।

5.3 भाषा और विचार

भाषा और विचार के बीच के संबंध को तीन अलग–अलग तरीकों से देखा जा सकता है–

1. विचार की प्रधानता होती है।
2. विचार भाषा पर हावी है।
3. भाषा और विचार परस्पर निर्भर हैं।

बेंजामिन व्हार्फ (1956) पहले दावे के मुख्य प्रस्तावक हैं, जिन्होंने परिकल्पना की थी "वह भाषा विचार तय करती है।

दूसरी ओर, पियाजे (1926) और उनके अनुयायी दूसरे दावे के मुख्य प्रस्तावक हैं"

तीसरा दावा रखने वाले सिद्धांतकारों का प्रतिनिधित्व वायगोत्स्की द्वारा किया जाता है।

विचार की प्रधानता

व्हॉर्फ का तर्क है कि प्रत्येक भाषा में प्रतिमानों की एक प्रणाली होती है, जो अन्य भाषाओं से भिन्न होती है। उन्होंने जोर देकर कहा कि दुनिया को समझने लिए हम जिन श्रेणियों और संबंधों का उपयोग करते हैं, वे हमारी विशेष भाषा से आते हैं, ताकि विभिन्न भाषाओं के बोलने वाले अलग–अलग तरीकों से दुनिया की अवधारणा करें। भाषा अर्जन का अर्थ है सोचना सीखना, न कि केवल बात करना सीखना। विचार स्वयं भाषा के माध्यम से होता है। यह भाषा के माध्यम से ही है कि मनुष्य प्रकृति का विश्लेषण करता है, विभिन्न घटनाओं और वस्तुओं को देखता या अनदेखा करता है, उसे चैनलाइज़ करता है तार्किक सोच और अपनी चेतना विकसित करता है। इसका अर्थ है कि भाषा के बिना विचार का अस्तित्व नहीं हो सकता। एक व्यक्ति जो भाषा बोलता है, वह तय करती है कि उसके लिए किस प्रकार के विचार संभव हैं। व्हॉफ्स परिकल्पना को संज्ञानात्मकवादियों द्वारा खारिज कर दिया गया है। उदाहरण के लिए जिपर (1992), एस्किमो की भाषा 'होपी' के आधार पर व्हॉर्फ द्वारा निकाले गए निष्कर्षों पर सवाल उठाते हैं। गिप्पर बताते हैं कि व्हार्फ ने होपी के कई गुणों पर विचार नहीं किया है हालांकि व्हॉर्फ ने भाषा और विचार के बीच घनिष्ठ संबंध देखा है सोचा कि यह रिश्ता कैसे काम करता है, इस बारे में वह कुछ नहीं कहता। इसी तरह, व्होफ्स परिकल्पना में भाषा के

सामाजिक और संचारी पहलुओं का लेखा–जोखा नहीं है। उनकी परिकल्पना यह नहीं बताती है कि भाषा कैसे प्राप्त की जाती है।

अगर हम व्हॉर्फ एस के दावों पर चलते हैं, तो हम यह कहने के लिए मजबूर हो जाएंगे कि भाषा अधिग्रहण एक प्रोत्साहन प्रतिक्रिया प्रक्रिया (Stimulus Response Process) है।

विचार भाषा पर हावी है

जीन पॉल पियाजे ने दिखाया है कि विचार भाषा पर हावी है। व्हॉर्फ भाषा प्रणालियों पर ध्यान केंद्रित करता है, पियाजे व्यक्ति की भूमिका पर जोर देता है पूछता है कि बच्चे के दिमाग में विचार कैसे उत्पन्न होता है और यह उसकी भाषा में कैसे परिलक्षित होता है। पियाजे की चर्चा का केंद्रीय बिंदु यह है कि बच्चे कैसे ज्ञान का निर्माण करते हैं, न कि कैसे वे वास्तविकता को समझते हैं।

पियाजे मानता है कि बुद्धि और विचार का विकास पहले ही शुरू हो जाता है जब बच्चा एक भाषा सीखता है। संवेदी मोटर चरण के अंत तक की संज्ञानात्मक क्षमता वास्तविकता का प्रतिनिधित्व करने के लिए बच्चा विकसित होता है। यही अंततः भाषा के विकास की ओर ले जाता है। भाषा विचार की उपज है। बच्चा इस अहंकारी भाषण गतिविधियों का उपयोग खेलने के लिए या अपनी सहायता के रूप में करता है। सुगरमैन (1987) ने भी यही विचार रखा है। पियाजे ने 'बालक की भाषा और विचार शीर्षक वाली उनकी पुस्तक में अहं केंद्रित भाषण और विचार के बीच भेद करने का प्रयास किया है। प्रारंभिक अवस्था में बच्चा अपने विचार और बाहरी दुनिया के बीच भेद नहीं करता। यह उस भाषा का विचार है जो वास्तविकता के निर्माण की प्रक्रिया को ट्रिगर करता है। जैसे बच्चा अपने सत्य का निर्माण स्वयं करता है, वैसे ही वह अपनी वास्तविकता भी बनाता है। पियाजे के महत्वपूर्ण योगदानों में से एक है संज्ञानात्मक विज्ञान। यह अहसास है कि विचार के निर्माण और एक भाषा सीखने में बच्चे की सक्रिय भूमिका होती है। संक्षेप में, भाषा विचार को एक प्रतीकात्मक रूप देती है। बधिर बच्चों पर अपने अध्ययन के आधार पर हैंसफोर्थ (1966) द्वारा विचार की प्रधानता की जबरदस्त वकालत की गई थी। उन्होंने बधिरों और बच्चों के प्रदर्शन की तुलना की, जो संज्ञानात्मक गतिविधियों की एक विस्तृत श्रृंखला पर सुन सकते हैं। उदाहरण के लिए, अधिकांश बधिर बच्चों ने आयतन की अवधारणा को समझ लिया था। कुल मिलाकर, बधिर बच्चों ने कई परीक्षणों में सुनने वाले बच्चों के मिलान वाले समूह के साथ–साथ प्रदर्शन किया।

विचार और भाषा एक दूसरे को प्रभावित करते हैं

यद्यपि विचार भाषा पर हावी है, विचार और भाषा एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। इसे हम निम्न विद्वानों के विचारों के आधार पर समझने का प्रयास कर सकते हैं–

वायगोत्स्की (Vygotsky)

वायगोत्स्की (1986) ने शैशवावस्था के विभिन्न चरणों के माध्यम से बच्चे के विकास से संबंधित विचार और भाषा पर एक व्यापक तर्क दिया है। 'विचार और भाषा' शीर्षक वाली उनकी पुस्तक में उन्होंने तर्क दिया है कि बच्चे का रोना और कूकना ऐसी ध्वनियाँ हैं जो गैर–संज्ञानात्मक भाषा है। वायगोत्स्की ने पियाजे द्वारा प्रस्तावित अहंकारपूर्ण भाषण की धारणा पर सवाल उठाया है। पियाजे ने तर्क दिया था कि अहंकारी भाषण संचार के साथ समाप्त नहीं होता है। वायगोत्स्की इस दृष्टिकोण से यह बताते हुए असहमत हैं, कि बच्चे द्वारा उत्पन्न होने वाली अर्थहीन ध्वनियों का भी एक सामाजिक कार्य है। पियाजे के अनुसार जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होता है अहंकारात्मक भाषण बंद हो जाता है जबकि वाइगोत्स्की का दावा है कि अहंकारी भाषण आंतरिक भाषण का अग्रदूत है, जो विचार का प्रतिनिधित्व करता है और इसे संरचना देता है।

आर शेफर (R- Schaffer)

शेफर की राय में, बच्चे को प्राप्त होने वाले भाषाई अनुभव की मात्रा से अधिक, अनुभव की गुणवत्ता मायने रखती है। एक सहज भाषा घटक की धारणा को बनाए रखते हुए, आर. शेफ़र माँ और बच्चे के बीच

संबंधों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। उनका तर्क है कि भाषा का विकास होता है, इसलिए नहीं कि माँ और बच्चे ने एक साथ बहुत समय बिताया है, बल्कि इस तथ्य के आधार पर कि बच्चे को गतिविधियों में पहल करने के अधिक अवसर मिलते हैं।

ब्रूनर (Bruner)

ब्रूनर (1986) ने गैर–मौखिक संचार प्रक्रिया में शामिल वास्तविक तंत्रों की पहचान करने की कोशिश की। माता–पिता का ध्यान आकर्षित करने के लिए बच्चा जिस तरह से सहारा लेता है, वह है "इंगित करना"। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि बच्चा टीवी की ओर इशारा करता है। बच्चा मां के साथ संवाद दर्ज कर सकता है, और फिर उसे चालू कर सकता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि सभी संप्रेषणीय स्थितियों में बच्चा एक स्वार्थी भूमिका निभाता है। कभी–कभी माँ और बच्चा एक–दूसरे को देखकर मुस्कुरा रहे होंगे। इस प्रकार, बच्चा संवाद करना भी सीखता है।

नोम चौमस्की (Noam Chomsky)

जब से 1957 में भाषाविज्ञान का चॉम्स्कीयन मॉडल अस्तित्व में आया, तब से पिछले कुछ दशकों के दौरान सार्वभौम व्याकरण की धारणा पर आधारित कई विचार सामने आए हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. वायगोत्स्की ने बच्चे के विकास से संबंधित विचार और भाषा पर क्या व्यापक तर्क दिया है?

.....

.....

2. ब्रूनर ने भाषा के विकास के संबंध में क्या तर्क दिए है?

.....

.....

3. चॉम्स्कीयन मॉडल कब अस्तित्व में आया?

.....

.....

5.4 भाषा सीखने के सिद्धान्त

पूर्व और पश्चिम दोनों ने समय के विभिन्न बिंदुओं पर भाषा सीखने के बारे में अपने स्वयं के दावों और सिद्धांतों का योगदान दिया है। आइए हम इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण सिद्धांतों और शोध निष्कर्षों की जांच करें।

व्यवहारवाद

यह व्यवहारिक मनोवैज्ञानिक थे जिन्होंने सबसे पहले जानवरों में व्यवहार परिवर्तन के प्रकट होने के संबंध में किए गए अपने प्रयोगों के आधार पर एक उचित प्रतीत होने वाले ध्वनि सिद्धांत का प्रस्ताव रखा था। व्यवहारवाद के प्रमुख समर्थक पावलोव, थार्नडाइक और स्किनर जैसे मनोवैज्ञानिक थे। व्यवहारवादी जॉन लोके द्वारा प्रस्तावित "तबुला रासा" को मानते हैं जो यह बताता है कि बच्चा एक खाली स्लेट – दिमाग के साथ पैदा होता है, जो बाहर के अनुभवों से भर जाता है। व्यवहारवादियों का दावा है कि भाषा का विकास आदत के एक समूह का परिणाम है। उनका मानना था कि ज्ञान उत्तेजना प्रतिक्रिया कंडीशनिंग के माध्यम से पर्यावरण के साथ अंतक्रिया का उत्पाद है। सभी सीखना, चाहे मौखिक (भाषा) या अशाब्दिक (सामान्य शिक्षा) एक ही प्रक्रिया के माध्यम से होता है, अर्थात् आदत निर्माण।

जब भाषा अधिग्रहण की बात आती है तो सिद्धांत प्रस्तावित करता है कि परिचित व्यक्ति अपने वातावरण में वक्ताओं से भाषाई इनपुट प्राप्त करता है और उनकी सही पुनरावृत्ति और नकल से सकारात्मक सुदृढीकरण प्राप्त करता है। यदि शिक्षार्थी की सकारात्मक प्रतिक्रियाओं को सकारात्मक रूप से प्रबलित किया जाता है, तो वे आसानी से भाषा ग्रहण कर लेते हैं। व्यवहारवादियों का विचार है कि भाषा चार कौशलों के प्रदर्शन के माध्यम से प्रकट होती है। ये लिसनिंग, स्पीकिंग, रीडिंग एंड राइटिंग (LSRW) हैं। स्वाभाविक रूप से एक भाषा सीखने का अर्थ है इन कौशलों को सीखना। यह निरंतर अभ्यास से ही संभव है। यह भी तर्क दिया जाता है कि भाषा तथ्यों की समग्रता है जैसे संरचना, शब्दावली, उपयोग। माना जाता है कि व्याकरण और शब्दावली सीखने से भाषा सीखना भौतिक हो जाता है।

संरचनावाद

यदि मनोविज्ञान के क्षेत्र में व्यवहारवाद हावी था, तो भाषाई क्षेत्र संरचनावाद के प्रभाव में था जैसा कि भाषाविद् ब्लूमफ़ील्ड और उनके अनुयायियों ने सोचा था। संरचनावादियों ने दिखाया कि किसी भी वाक्य का विश्लेषण इसके घटक के रूप में किया जा सकता है जिसे रूपिम कहा जाता है, जो बदले में फोनेम नामक सबसे छोटी इकाइयों को प्राप्त करने के लिए आगे विभाजित किया जा सकता है। संरचनावादियों ने "खोज प्रक्रिया" नामक भाषाई विश्लेषण की एक विधि विकसित की जिसके उपयोग से उन्होंने दावा किया कि किसी भी भाषा की संरचना का विश्लेषण किया जा सकता है। संरचनावाद की शुरुआत के साथ भाषा विज्ञान को एक अनुशासन के रूप में शुद्ध विज्ञान का दर्जा दिया गया। व्यवहारवाद और संरचनावाद ने भाषाओं को पढ़ाने की पद्धति तय करने में एक दूसरे का साथ दिया।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. व्यवहारवाद के प्रमुख समर्थक मनोवैज्ञानिकों के नाम बताइए ?

   .....

   .....

5. तबुला रासा का प्रत्यय किसने दिया था?

   .....

   .....

6. व्यवहारवादियों के अनुसार भाषा कौन से चार कौशलों के प्रदर्शन के माध्यम से प्रकट होती है?

.....

.....

5.5 भाषा की व्यवस्था

यदि हम किसी भी भाषा के स्वरूप पर गहनता से विचार करें तो पाएंगे कि भाषा एक व्यवस्था है। इस संदर्भ में निरंजन कुमार सिंह लिखते हैं कि "भाषा की यह व्यवस्था उसके तत्त्वों–ध्वनि व्यवस्था, शब्द व्यवस्था, वाक्य व्यवस्था आदि स्तरों पर देखी जा सकती है।" इस प्रकार भाषा की व्यवस्थात्मक प्रकृति को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है–

(क) प्रत्येक भाषा में कुछ मूल ध्वनियां होती हैं और इन ध्वनियों की भी व्यवस्था होती है जैसे लिपि, चिह्न, स्वर, व्यंजन संयुक्त व्यंजन, ध्वनियों के उच्चारण आदि।

(ख) भाषा में ध्वनियां मिलकर ही शब्द का निर्माण करती हैं। स्वतंत्र ध्वनियां अर्थहीन होती हैं। जब ध्वनियां मिलकर शब्दों का निर्माण करती हैं तब ही वे सार्थक सिद्ध होती हैं।

(ग) शब्दों से वाक्यों का निर्माण होता है। वाक्यों से ही अधिक स्पष्ट अभिव्यक्ति मिलती है। ये भाषा की सार्थक इकाई है। हर भाषा की वाक्य संरचना भिन्न–भिन्न होती है।

(घ) वाक्यों से हमें स्पष्ट अभिव्यक्ति तो मिलती है परंतु भावाभिव्यक्ति नहीं। बहुत सारे वाक्य मिलकर एक अनुच्छेद का निर्माण करते हैं। एक या अधिक अनुच्छेदों से हम अपनी अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करते हैं।

इस प्रकार ध्वनि, शब्द, वाक्य एवं अनुच्छेद आदि के आधार पर भाषा का आकार या ढांचे का निर्माण होता है जो भाषा की व्यवस्था का निर्माण करता है।

भाषा प्रतीकात्मक है

भाषा में ध्वनियों से शब्दों का निर्माण होता है। ये शब्द किसी वस्तु विचार या भाव आदि के प्रतीक हैं। भाषा में प्रयुक्त लगभग हर शब्द प्रतीक होते हैं।

भाषा सदैव परिवर्तित होती रहती है

भाषा को हम अनुकरण के द्वारा सीखते हैं। इसलिए हमारे सीखने की प्रक्रिया में होने वाले परिवर्तन के कारण ही भाषा भी परिवर्तित होती रहती है।ये भाषिक परिवर्तन भिन्न–भिन्न स्तरों पर हो सकते हैं चाहे वह ध्वनि हो, शब्द हो या वाक्य संरचना हो। उदाहरण के लिए यदि हम वर्तमान हिन्दी शब्द भंडार की तुलना सौ–दो सौ साल पुराने शब्द भंडार से करें तो हमको भाषा के परिवर्तन का अर्थ स्पष्ट हो जाएगा।

प्रत्येक भाषा की संरचना स्वतंत्र होती है और दूसरी भाषा से भिन्न होती है

किसी भी दो भाषाओं की संरचना भिन्न होती है। इसलिए कोई नई भाषा सीखने के लिए अपनी भाषा से दूसरी भाषा की भिन्नता को समझना आवश्यक है।

प्रत्येक भाषा का एक मानक रूप अवश्य होता है

हालांकि भाषा परिवर्तनशील है और जब हम भाषा का प्रयोग करते हैं तो विभिन्नताएं पाते हैं परंतु भाषा का एक मानक रूप अवश्य होता है। भाषा शिक्षण में हमें किसी भी भाषा के मानक रूप का ही प्रयोग करना चाहिए जो कि व्याकरण सम्मत हो।

भाषा जटिलता से सरलता की ओर प्रवाहित होती है

मानव समाज में यदि भाषा के विकास का अध्ययन किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाता है कि भाषा का प्रवाह जटिलता से सरलता की ओर है। यह सरलता ध्वनियों के उच्चारण, शब्द रचना, वाक्य संरचना, मुहावरे आदि सभी क्षेत्रों में परिलक्षित होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. भाषा की व्यवस्था का निर्माण कैसे होता है ?

.....

.....

8. भाषा सदैव परिवर्तित होती रहती है। स्पष्ट कीजिए ।

.....

.....

5.6 भाषा के कार्य

भाषा के निम्न कार्य होते हैं–

भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति

भाषा की सबसे बड़ी उपयोगिता यह है कि यह हमारे भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति का साधन है। जब हम किसी भाषा को सीखने लगते हैं तो हमारे भीतर भाव एवं विचार स्फुरित होने लगते हैं। भाषा किसी बालक के शारीरिक एवं मानसिक विकास के साथ जुड़ी हुई होती है।

मनुष्य के भावात्मक विकास का साधन

मनुष्य के भावों का भाषा के साथ महरा संबंध है। भाषा के द्वारा ही किसी बच्चे का भावात्मक विकास किया जा सकता है। किसी भी भाषा के साहित्य के द्वारा प्रेम, उल्लास, क्रोध, करुणा आदि मनोवेगों का उदात्तीकरण किया जा सकता है। भाषा के बिना हमारी बुद्धि सक्रिय नहीं हो पाती। भाषा हमारी बुद्धि को क्रियाशील एवं प्रखर बनाती है।

सामाजिक क्रिया–कलापों का आधार

मनुष्य एक भाषायुक्त सामाजिक प्राणी है। भाषा मात्र विचारों का सम्प्रेषण नहीं है अपितु यह सामाजिक नियंत्रण का साधन भी है। हम जिस भाषा में व्यवहार करते हैं उसमें हमारे सामाजिक जीवन की परंपरा, रीति–नीति, आचरण आदि का ज्ञान भी निहित होता है।

सांस्कृतिक जीवन का आधार

भाषा हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है। किसी भी क्षेत्र की भाषा में वहां की संस्कृति निहित होती है।

किसी भी भाषा के अध्ययन से हम उस क्षेत्र की संस्कृति से वहां के निवासियों से भी जुड़ाव महसूस करते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. भाषा के प्रमुख कार्य स्पष्ट कीजिए ।

.....

.....

5.7 भाषा का मौखिक एवं लिखित रूप

सभी भाषा वैज्ञानिक भाषा के मौखिक रूप को ही उसका मूल रूप मानते हैं। सभी व्यक्ति पहले बोलचाल की भाषा सीखते हैं और फिर लिखित भाषा सीखते हैं। इसलिए बहुत से विद्वान भाषा के मौखिक रूप को ही भाषा का प्राथमिक रूप मानते हैं और भाषा के लिखित रूप को उसका द्वितीय रूप मानते हैं। परंतु इस बात को निर्विरोध स्वीकार किया जा सकता है कि भाषा के दोनों ही रूप स्वायत्त एवं स्वतंत्र होते हैं। व्यावहारिक दृष्टि से भाषा के दो रूप हैं– (1) मौखिक रूप (2) लिखित रूप

भाषा का मौखिक रूप

भाषा के मौखिक रूप को ही भाषा का सहज रूप माना जाता है। जब कोई व्यक्ति अपने विचार बोलकर अभिव्यक्त करता है या आमने–सामने आपस में बात करता है तो वह भाषा का मौखिक रूप कहलाता है। इसको हम भाषा का अमूर्त रूप भी कह सकते हैं। मौखिक रूप के भी दो पक्ष हैं– ग्रहण एवं अभिव्यक्ति जिसको हम सुनना एवं बोलना भी कह सकते हैं। मौखिक भाषा की सूक्ष्मतम इकाई ध्वनि होती है। प्रत्येक भाषा की अपनी ध्वनियां हैं।

भाषा का लिखित रूप

जिस भाषा को लिखकर अथवा पढ़कर हम अपने विचारों को अभिव्यक्त कर सकते हैं वह भाषा का लिखित रूप कहलाता है। इसको भाषा का अमूर्त रूप भी कहा जाता है। लिखित रूप के भी दो पक्ष हैं– ग्रहण एवं अभिव्यक्ति जिसको हम पढ़ना एवं लिखना भी कह सकते हैं।

इसके अतिरिक्त भाषा का एक सांकेतिक रूप भी माना जाता है। उदाहरण के लिए जब ट्रैफिक पुलिस का सिपाही चौराहे पर संकेतों के द्वारा यातायात संचालित करता है या फिर कक्षा में पढ़ा रही अध्यापिका अपने मुंह पर उंगली रखकर विद्यार्थियों को चुप रहने का इशारा करती हैं तो यह भाषा का सांकेतिक रूप है। इसके अतिरिक्त शारीरिक रूप से अक्षम लोग भी सांकेतिक भाषा का प्रयोग करते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10. व्यावहारिक दृष्टि से भाषा के कितने रूप हैं ?

.....

.....

11. भाषा के मौखिक रूप का वर्णन कीजिए ?

.....

.....

12. भाषा के लिखित रूप का वर्णन कीजिए ?

.....

.....

5.8 प्रथम एवं द्वितीय भाषा

भाषा बहुत ही महत्वपूर्ण है। हमारे दिन–प्रतिदिन के लगभग सारे कार्य भाषा पर ही निर्भर हैं। भाषा हर वक्त हमारे साथ है चाहे हम किसी से बातचीत कर रहे हों या फिर चुपचाप बैठे हो, भाषा हर पल हमारे साथ होती है। भाषा के बिना जीवन असंभव सा प्रतीत होने लगता है।

प्रथम भाषा

बच्चे की प्रथम भाषा वह भाषा है जो वह जन्म लेने के बाद सबसे पहले सीखता एवं बोलता है। जब बच्चा जन्म लेता है तो उसके लिए सब कुछ नया होता है द्य जन्म लेने के बाद वह अपने माता–पिता एवं परिवार के अन्य सदस्यों के संपर्क में आता है और उनके मुख से उच्चरित ध्वनियों को सुनता है। बच्चा इन ध्वनियों को सुनकर समझने का और उनका अनुकरण करने का प्रयास करता है। बच्चा जब बड़ा होता है तो संभव है कि वह अन्य भाषाओं के संपर्क में भी आता है और उनको सीखता है। वह विद्यालय जाता है वहां भी वह अन्य भाषाओं का अध्ययन करता है परंतु वह अपनी प्रथम भाषा घर में ही सीखता है अर्थात बच्चा जो भाषा सर्वप्रथम सीखता है वह उसकी प्रथम भाषा है। मातृभाषा एवं प्रथम भाषा को प्रायः एक–दूसरे का पर्यायवाची समझा जाता है। स्कूली शिक्षा के दौरान सभी स्तरों पर या कम से कम आरंभिक स्तर तक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा होनी चाहिए।" (एन.सी.एफ. 2000) परंतु अभी ऐसा पूर्णतः संभव नहीं हो सका है।

द्वितीय भाषा

मातृभाषा के अतिरिक्त व्यक्ति अन्य बहुत सी भाषाओं को सीखता है। इनमें से द्वितीय भाषा वह भाषा होती है जो बच्चा अपने परिवार से तो नहीं सीखता परंतु उसके आस–पास के परिवेश में यह भाषा पर्याप्त सुनाई देती है। यह भाषा हमारे परिवेश में बोली जाने वाली भाषा हो सकती है, हमें विद्यालयों में सिखाई जाने वाली भाषा हो सकती है, हमारे किसी मित्र या रिश्तेदार के द्वारा बोलने वाली भाषा हो सकती है, हमारे क्षेत्र के कामकाज की भाषा हो सकती है, हमारे प्रमुख मीडिया संस्थानों की भाषा हो सकती है, हमारे स्वयं के कार्यस्थल

के क्षेत्र की भाषा हो सकती है। कई बार द्वितीय भाषा को विदेशी भाषा मान लिया जाता है। विदेशी भाषा प्रयोक्ता के भाषाई समुदाय से भिन्न कोई भी भाषा हो सकती है। 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण – 2005' के अनुसार "वे भाषाएं जो कक्षाओं में पढ़ाई जाती हैं, और जहां उनको बोलने वाले, सीखने वालों के साथ न हों और अजनबी हों तो उन्हें विदेशी भाषाएं कहा जा सकता है।" द्वितीय भाषा एवं विदेशी भाषा में अंतर को इस प्रकार से समझा जा सकता है।

स्कूल के पाठ्यक्रम में अंग्रेजी की स्थिति

अंग्रेजी पढ़ाने के उद्देश्यों के दो मुख्य पहलू हैं, अर्थात्, भाषा के पहलू जैसे शब्द, वाक्य, उच्चारण, वर्तनी और व्याकरण और दूसरा पहलू साहित्य का पहलू है जिसमें शब्द, वाक्य, विचारों, भावनाओं और अनुभवों को व्यक्त करना शामिल है। भारत में अंग्रेजी को दूसरी भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है। एक विदेशी भाषा के रूप में अंग्रेजी और दूसरी भाषा के रूप में अंग्रेजी के बीच थोड़ा अंतर है। एक विदेशी भाषा मुख्य रूप से दूसरे राष्ट्र के लोगों की संस्कृति और जीवन शैली को जानने के लिए सीखी जाती है, जबकि दूसरी भाषा मुख्य रूप से समाज में लक्षित भाषा का उपयोग करने के लिए सीखी जाती है। इस तरह, अंग्रेजी को भारत में दूसरी भाषा के रूप में पढ़ाया जाना चाहिए। सीधे शब्दों में कहें तो अंग्रेजी के शिक्षकों को अपने छात्रों को विश्व स्तर पर अंग्रेजी का उपयोग करने के लिए तैयार करना चाहिए। इसका मतलब है, उन्हें अपने छात्रों को दिन–प्रतिदिन की स्थिति में अंग्रेजी भाषा का उपयोग करने के लिए एक उचित मंच प्रदान करना होगा।

स्कूली पाठ्यक्रम में अंग्रेजी अनिवार्य हो गई है। यह प्रथम भाषा, द्वितीय भाषा और तृतीय भाषा जैसे सभी पदों का आनंद लेता है। अंग्रेजी माध्यम के सभी स्कूलों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी है। इस प्रकार, इन स्कूलों में अंग्रेजी पहली भाषा है। अन्य स्कूलों में अंग्रेजी दूसरी भाषा के रूप में पढ़ाया जाता है। गुजरात, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, उड़िया जैसे गैर–हिंदी उत्तर भारतीय राज्यों में, उनकी क्षेत्रीय भाषा पहली भाषा है, हिंदी दूसरी भाषा है और अंग्रेजी तीसरी भाषा है। चूँकि अंग्रेजी को शैक्षणिक क्षेत्र में तीनों स्थान प्राप्त हैं, इसलिए भारत में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं होगा जो अंग्रेजी से परिचित न हो, जिसने अपनी पढ़ाई पूरी की हो। प्रो. गैटेनबी के अनुसार दो सामान्य उद्देश्य हैं:

(1) भाषा सीखना,

(2) जब भाषा सीखी जाती है तो उसके साथ कुछ करना, जिसका अर्थ है कि बोली या लिखी जाने वाली भाषा को समझना और भाषण के साथ–साथ लिखित रूप में अपने विचारों, भावनाओं और विचारों को व्यक्त करना। अंग्रेजी पढ़ाने का उद्देश्य एक छात्र को बनाना है

a) बोले जाने पर अंग्रेजी समझें

b) बोधगम्य अंग्रेजी बोलते हैं

c) अंग्रेजी पढ़ें और सामग्री को समझें

d) तार्किक सामंजस्य के साथ अंग्रेजी लिखें

संचार कौशल

अंग्रेजी को दूसरी भाषा के रूप में पढ़ाने के लिए कई तरीके और दृष्टिकोण रहे हैं। व्याकरण अनुवाद पद्धति, प्रत्यक्ष विधि और परिस्थितिजन्य दृष्टिकोण भी दूसरी भाषा के रूप में अंग्रेजी सीखने को पर्याप्त रूप से बढ़ावा नहीं दे सके। फिर अंग्रेजी पढ़ाने के दृष्टिकोण में बदलाव आया जिसने अंग्रेजी में संचार कौशल विकसित करने पर जोर दिया। अमेरिकी भाषाविद नोआम चॉम्स्की द्वारा संरचनात्मक भाषाई सिद्धांत के खिलाफ की गई आलोचना, जिसने संरचनाओं की मात्र महारत के बजाय संचार प्रवीणता पर भाषा शिक्षण में ध्यान केंद्रित करने का मार्ग प्रशस्त किया। भाषा सीखने का मूल उद्देश्य संवाद करना है। संचार कौशल सिखाने के

लिए शुरू से ही संवाद करने के प्रयासों को प्रोत्साहित किया जाता है। लक्ष्य भाषा में भाषाई प्रणाली संवाद करने के लिए संघर्ष करने की प्रक्रिया के माध्यम से सबसे अच्छी सीखी जाती है। लेकिन, हर तरह से संचार क्षमता वांछित लक्ष्य है। छात्रों में संचार कौशल विकसित करने में शिक्षकों का मूल उद्देश्य उन्हें किसी भी तरह से काम करने में मदद करना है जो उन्हें भाषाओं के साथ काम करने के लिए प्रेरित करे। प्रवाह और स्वीकार्य भाषा मुख्य लक्ष्य है और सटीकता को प्रासंगिक रूप से आंका जाता है। छात्रों से अपेक्षा की जाती है कि वे अपने साथियों के समूह के साथ अंग्रेजी में संवाद करें। तथा इसके लिए प्रयोग में निपुणता प्राप्त करना अनिवार्य है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

13. प्रथम भाषा किसे कहते है?

.....

..

.....

14. द्वितीय भाषा किसे कहते है?

.....

.....

15. भाषा कौशलों से क्या अभिप्राय है? भाषायी कौशल कितने प्रकार के होते हैं?

.....

.....

5.9 भाषायी कौशल

भाषा कौशलों से अभिप्राय है किसी भी भाषा में काम करने की समर्थता हासिल करना। इनमें चार भाषायी कौशल शामिल हैं– सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना। किसी भी भाषा को सीखने के लिए इन चारों कौशलों में दक्ष होना पड़ता है। किसी व्यक्ति का भाषा ज्ञान इस बात से पता चलता है कि वह किसी भाषा के इन चार कौशलों में कितना समर्थ है। इन कौशलों को हम दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। पहले दो प्रकार के कौशलों (सुनना एवं पढ़ना) को संग्राहक कौशल कह सकते हैं क्योंकि इन कौशलों से भाषा प्रयोक्ता जानकारी को ग्रहण करने का कार्य करता है जबकि अन्य दो कौशल (बोलना एवं लिखना) अभिव्यक्ति से संबंधित हैं इसलिए इनको व्युत्पादक कौशल कहा जाता है। इनके द्वारा भाषा प्रयोक्ता अपनी बात प्रस्तुत करता है।

कहीं–कहीं इन कौशलों को 'प्रधान कौशल' या 'गौण कौशल' या फिर सक्रिय कौशल' एवं 'निष्क्रिय कौशल' में विभाजित किया जाता है। यह सही नहीं है। भाषा का हर एक कौशल समान रूप से महत्वपूर्ण है। सुनने एवं पढ़ने का कौशल भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि लिखने एवं पढ़ने का। वर्तमान समय में किसी भी भाषा का लिखने एवं पढ़ने का कौशल भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है इसलिए इनको गौण मानना सही नहीं है। इसी प्रकार सुनने–पढ़ने के कौशल को क्रियाशील नहीं माना जाता। जबकि यह भी उतने ही क्रियाशील हैं जितने बोलना और लिखना। हालांकि सुनने एवं पढ़ने में क्रियाशीलता को हम प्रत्यक्ष रूप से नहीं देख सकते। यह आंतरिक रूप से होती है।

आइए इन पर विस्तार से चर्चा करते हैं–

5.9.1 सुनना (श्रवण कौशल)

सुनना भाषा के चार कौशलों में से एक प्रमुख कौशल है। बच्चों में सुनने के कौशल का विकास बच्चे के जन्म से ही हो जाता है। महाभारत के अनुसार तो जन्म से पहले ही अभिमन्यु ने अपनी मां के गर्भ में होते हुए भी चक्रव्यूह भंग करने की विधि सुन ली थी। जन्म के बाद बच्चे की प्रारम्भिक शिक्षा उसकी श्रवण शक्ति पर ही निर्भर करती है। अपने माता–पिता एवं आस–पास के लोगों द्वारा उच्चरित ध्वनि सुन–सुनकर वह समझ बनाने की कोशिश करता है। विद्यालयों में तो विद्यार्थी अपना आधा समय सुनने में ही लगाते हैं। परंतु सुनना केवल शारीरिक क्रिया नहीं है बल्कि इसमें एकाग्रता एवं इंद्रियों का संयम होना अत्यंत आवश्यक है। यदि कोई व्यक्ति भाषा सुनते हुए तत्पर एवं सतर्क रहता है तो वह दूसरे व्यक्ति के भावों को बेहतर रूप से समझ सकता है।

शिक्षण की दृष्टि से श्रवण कौशल का विकास विद्यार्थियों में ऐसी क्षमता का विकास करना है जिससे वह किसी बात को ध्यान से सुन सके, उसमें निहित अर्थ को समझ सके, और सुनकर किसी बात का विश्लेषण कर सके। जो विद्यार्थी भाषा को सुनकर ठीक से समझ नहीं पाता उसको बोलने एवं लिखने में भी परेशानी होती है। सुनने के कौशल का विकास करने के लिए कुछ विधियों के उदाहरण दिए गए हैं–

मौखिक अभिव्यक्ति

विद्यार्थी भाषा को जितना अधिक ध्यान से सुनेंगे उतना ही उनका सुनने के कौशल का विकास होगा। मौखिक अभिव्यक्ति के लिए शिक्षक को कक्षा में विद्यार्थियों को बातचीत के पूरे अवसर प्रदान करने चाहिए। ऐसी गतिविधियां करवाई जाएं जिनसे बच्चों को एक दूसरे से बात करने का मौका मिले। इसके अतिरिक्त अपना परिचय देना, अपने परिवार, समाज एवं संस्कृति के बारे में बताना, विद्यालय के बारे में चर्चा करना, किसी समसामयिक विषय को सुनकर उस पर अपने विचार रखना, तर्क–वितर्क करना आदि के माध्यम से विद्यार्थियों के श्रवण कौशल का विकास किया जा सकता है।

विभिन्न विधाओं के माध्यम से

शिक्षक विद्यार्थियों को विभिन्न साहित्यिक विधाओं में से सामग्री का चयन करके सुना सकता है। इनमें कहानी सुनाना, कविता पाठ, संस्मरण या किसी रोचक घटना का वर्णन आदि शामिल हो सकता है। वह किसी कहानी या घटना का थोड़ा वर्णन करते हुए बच्चों से पूरा करने के लिए कह सकता है जिससे बच्चे प्रस्तुत की गई कहानी या घटना वर्णन को ध्यान से सुनेंगे।

तकनीकी माध्यम के द्वारा

श्रवण कौशल को विकसित करने के लिए वर्तमान में तकनीक का सहारा लिया जाता है। इनमें रेडियो, टेलिविजन, कम्प्यूटर जैसे संसाधनों का प्रयोग शामिल है जिनके द्वारा बच्चा तरह–तरह की चीजें सुन कर समझ सकता है। टेलिविजन एवं कम्प्यूटर पर तो वह सुनने के साथ–साथ देख भी सकता है।

निर्देशों का पालन करना

बच्चों को कई बार ऐसी गतिविधियां भी करवाई जा सकती हैं जिनमें उनको दिए गए निर्देशों का पालन करना हो। इससे बच्चे निर्देशों को ध्यान से सुनेंगे और सुनकर दिए गए कार्य को करने का प्रयास करेंगे। इसमें बच्चे ध्यान से सुनने का प्रयत्न करेंगे क्योंकि उनका कार्य करना, उनके ध्यान से सुनने पर ही निर्भर करेगा।

इस प्रकार की अनेक गतिविधियों के माध्यम से हम किसी बच्चे के सुनने के कौशल का विकास कर सकते हैं। इसके द्वारा ही बच्चा ध्वनियों में अंतर करना सीखता है। उसकी वाचन क्षमता का विकास भी उसकी सुनने की क्षमता पर निर्भर करता है। किसी की भावाभिव्यक्ति को श्रवण कौशल के माध्यम से ही बेहतर समझा जा सकता है। सुनकर ही कोई व्यक्ति अपनी मूल्यांकन क्षमता का विकास कर सकता है। वह दूसरे के विचारों,

भावों एवं तर्कों के आधार पर अपनी राय व्यक्त कर सकता है।

5.9.2 बोलना

बोलना भाषा कौशलों में से एक प्रमुख कौशल है। लगभग हर भाषा में भाषा के लिए प्रयुक्त शब्द के मूल में बोलना ही है जैसे– भाष, वाक, जुबान, सपदहनं आदि। कोई शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ बच्चा अपनी सुनने की क्षमता के कारण अपनी भाषा में बोलना सहज ही सीख लेता है। तीन वर्ष का होते–होते वह अपनी बात दूसरों को समझाने लगता है। यही कारण है कि विद्यालय में बोलने के विकास के लिए हर संभव प्रयत्न किए जाते हैं। वैसे तो बोलना बच्चा घर से ही सीखता है परंतु बौद्धिक स्तर के विकास के लिए विद्यार्थी स्कूल में योजनाबद्ध तरीके से शिक्षा ग्रहण करता है। बोलने के कौशल का विकास करने के लिए कुछ गतिविधियां इस प्रकार हैं–

सस्वर वाचन

बच्चे से सही उच्चारण करवाना सस्वर वाचन कहलता है। विद्यार्थियों से कक्षा में कविता, कहानी, नाटक एवं उपन्यास का कोई अंश पढ़ने के लिए कहा जा सकता है।

बातचीत

बातचीत बोलने एवं सुनने का अच्छा माध्यम है। इससे न केवल भाषा का विकास होता है बल्कि एक–दूसरे को समझने का मौका भी मिलता है। जब बच्चा विद्यालय जाना प्रारम्भ करता है तो वह एकदम से अपने आप को अभिव्यक्त नहीं कर पाता। ऐसे में शिक्षक को चाहिए कि वह बच्चों को अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करे जिससे बच्चे बात करने में स्वतंत्र महसूस कर सकें।

कहानी सुनाना

कहानी सुनना एवं सुनाना दोनों ही भाषा की मौखिक अभिव्यक्ति के लिए सहायक हैं। बच्चे बड़े चाव से स्वयं कहानी गढ़ते एवं सुनाते हैं। कक्षा में बच्चों को कहानी सुनाने के अवसर दिए जाएं। हो सकता है कि बच्चे अपनी प्रथम भाषा या मातृभाषा में कहानी सुनाए ऐसे में शिक्षक को उनको हतोत्साहित नहीं करना चाहिए। बच्चे के कहानी सुनाते समय शिक्षक को बच्चे के उच्चारण पर विशेष ध्यान देना चाहिए। बोलते समय उसकी त्रुटियों का सुधार करना चाहिए।

चित्र वर्णन

ये गतिविधि कक्षा में बहुत रुचिपूर्ण ढंग से करवाई जा सकती है। किसी भी चित्र को दिखाकर बच्चों से उसका वर्णन करने को कहा जा सकता है। इसमें बच्चे का भाषिक विकास के साथ–साथ बौद्धिक विकास भी होगा।

घटना वर्णन

इसमें बच्चों से आस–पास घटी किसी घटना का वर्णन करने को कहा जा सकता है। इसके साथ ही बच्चे अपने किसी अनुभव, किसी विशेष घटना, कोई त्योहार, कहीं घूमने का अनुभव आदि का वर्णन भी कक्षा में कर सकते हैं। इन सबके लिए शिक्षक को कक्षा में अवसर देने की आवश्यकता है।

वाद–विवाद

वाद–विवाद मौखिक भाषा के विकास के लिए सबसे अच्छा माना जाता है। इससे न केवल बोलने की क्षमता अपितु तर्क शक्ति, हाजिरजवाबी एवं विचारों को संक्षिप्त रूप में प्रकट करने का गुण भी विकसित होता है।

किसी भी व्यक्ति की वाणी में स्पष्टता, मधुरता एवं प्रभावशीलता लाने के लिए बोलने के कौशल का विकास करना आवश्यक है। भाषा की इस मौखिक अभिव्यक्ति को भाषा का सहज माध्यम भी कहा जाता है।

भावी जीवन यात्रा में सशक्त वाणी मनुष्य को संबल प्रदान करती है। प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री बैलार्ड की मान्यता है कि "मौखिक अभिव्यक्ति की शिक्षा का स्वतंत्र अस्तित्व है.....

बालक के लिए उसकी शिक्षा की तैयारी आवश्यक है और ऊंची कक्षाओं में भी इसकी शिक्षा को स्थान मिलना चाहिए।"

5.9.3 पढ़ना (वाचन कौशल)

वाचन शब्द 'वच' धातु से बना है जिसका अर्थ है पढ़ना, पाठ करना आदि। संस्कृत भाषा में वाचन के लिए 'पठ' शब्द का प्रयोग भी किया जाता है। अंग्रेजी भाषा में 'रीडिंग' शब्द का प्रयोग किया जाता है। सामान्यतः पढ़ने के कौशल का अर्थ भाषा की लिपि को पहचानकर उसको उच्चरित करने एवं अर्थ ग्रहण करने से लिया जाता है। किसी भी पाठ्य सामग्री को पढ़ने से पहले पाठक पहले से ही अनुमान लगा लेता है कि प्रस्तुत सामग्री में क्या कहा जाएगा। वह इस संदर्भ में पूर्वानुमान लगाता है। उसके बाद जब वह किसी सामग्री को पढ़ना प्रारम्भ करता है तो यह आवश्यक नहीं कि वह उसे पूरे बोध के लिए पढ़े, बल्कि वह अपनी रुचि अनुसार कुछ भाग पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित करता है। वह उन बातों पर ध्यान नहीं देता जिसमें उसकी दिलचस्पी नहीं है। इसके साथ ही वह उस सामग्री में प्रस्तुत मुख्य बात या उसके केन्द्रीय भाव को ग्रहण कर लेता है। सामग्री को पढ़ते हुए पाठक कई बार लेखक के मत एवं दृष्टिकोण को भी समझने का प्रयास करता है। एक कुशल पाठक, लेखक के दृष्टिकोण को सामग्री में दिए गए संकेतों के माध्यम से जान लेता है।

भाषा शिक्षाविदों ने पठन में प्रयुक्त इन तत्त्वों के महत्वपूर्ण प्रकार माने हैं–

- विहंगावलोकन (Skimming)
- सूक्ष्मवीक्षण (Scanning)
- द्रुत पठन (Rapid Reading)
- गहन अध्ययन (Study)

विहंगावलोकन

जब किसी सामग्री पर सरसरी दृष्टि से शीघ्रता से यह पता लगा लिया जाता है कि यह सामग्री किस बारे में है तो वह विहंगावलोकन कहलाता है। इसमें उनको पूरी सामग्री को सरसरी तौर पर ही पढ़ना पड़ेगा।

सूक्ष्मवीक्षण

सूक्ष्मवीक्षण पाठ्य सामग्री में से किसी विशेष बिन्दु को ढूंढ़ने की प्रक्रिया है। जब हमें किसी विशिष्ट प्रश्न का उत्तर ढूंढना होता है तब हम इस प्रक्रिया से करते हैं। उदाहरण के लिए जब समाचारपत्र में से किसी व्यापारिक समाचार को ढूंढकर पढ़ना होता है तब हम इसका प्रयोग करेंगे।

द्रुत पठन

भाषा शिक्षक का यह दायित्व बनता है कि वह अपने विद्यार्थियों में द्रुत पठन की क्षमता का विकास करे। पठन – शिक्षण के पीछे केवल पढ़ने के कौशल का विकास ही नहीं बल्कि द्रुत पठन का विकास भी लक्ष्य होना चाहिए। द्रुत पठन सीखने के बाद पढ़ना एक आनंददायी प्रक्रिया बन जाता है।

गहन अध्ययन

मानक हिन्दी कोश के अनुसार, अध्ययन से आशय है "किसी विषय के सब अंगों या गूढ़ तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसे देखना पढ़ना और समझना। " किसी विषयवस्तु की गहन जानकारी के लिए किया गया पठन ही अध्ययन कहलाता है। गहन अध्ययन में पठन सामग्री में निहित एक – एक विचार का बारीकी से अवलोकन किया जाता है।

5.9.4 लिखना

मौखिक भाषा की ध्वनियों को विशिष्ट चिह्नों द्वारा लिखित रूप में लिपि के द्वारा व्यक्त जाता है। अपने विचारों को लिपिबद्ध करके प्रस्तुत करना ही लेखन कहलता है। एक कौशल है जिसमें निपुण होने के लिए निरंतर अभ्यास की आवश्यकता होती लेखन कौशल के बिना किसी भी भाषा का पूर्ण विकास नहीं हो सकता।

बच्चा सर्वप्रथम मौखिक भाषा सीखता है। सबसे पहले वह ध्वनियों का उच्चारण करना है। फिर वह शब्दों को बोलना सीखता है और बातचीत करना प्रारंम्भ कर देता वह बोली गई भाषा को लिपिबद्ध करना नहीं जानता इसके लिए उसे विद्यालय पड़ता है। शिक्षक विद्यालय में योजनाबद्ध तरीके से बच्चे को लिखना सिखाते हैं। लेखन कौशल को विकसित करने के लिए शिक्षक निम्नलिखित विधियां अपना सकते हैं–

माण्टेसरी विधि

इस विधि में बच्चा खेल–खेल में ही लिखना सीख जाता है। इसमें गत्ते, लकड़ी या प्लास्टिक आदि के वर्णों का प्रयोग किया जाता है। बालक वर्ण को देखकर उसकी पहचान बनाता है और खेल खेल में ही लिखना सीख जाता है।

स्वतंत्र लेखन विधि

इस विधि में बिना किसी वर्ण को देखे या बिना उसकी नकल किए उसकी अपने मस्तिष्क में बनाई गई छाया के आधार पर ही वर्ण लिखता है। कक्षा में अध्यापक द्वारा दी जाने वाली श्रुतलेख इसी विधि का उदाहरण है।

विश्लेषण विधि

इस विधि में बच्चे को पहले चित्र दिखाया जाता है फिर चित्र के नीचे उस वस्तु का नाम लिख दिया जाता है। उसके बाद बच्चे का ध्यान चित्र के पहले वर्ण की ओर दिलाया जाता है और फिर लिखना सिखाया जाता है।

संश्लेषण विधि

इस विधि में बच्चे को पहले वर्ण लिखना सिखाया जाता है। वर्ण लिखना सिखाने के बाद उससे शब्द निर्माण और फिर उसके बाद वाक्य लिखना सिखाया जाता है।

इस प्रकार की अनेक विधियां जैसे सृजनात्मक लेखन, पुस्तक समीक्षा, नोट लेना, निबंध एवं पत्र लेखन, संक्षिप्तीकरण आदि माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी के लेखन कौशल को विकसित करने के लिए अपनाई जा सकती हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

16. शिक्षण की दृष्टि से श्रवण कौशल का महत्व बताइए ।

.....

.....

17. शिक्षण की दृष्टि से मौखिक अभिव्यक्ति का विकास कैसे करेंगें?

.....

.....

18. लेखन किसे कहते हैं ?

.....

.....

5.10 भाषा में अधिगम संसाधनों का प्रयोग

भाषा मनुष्य को उसके अस्तित्व का एहसास दिलाती है। मनुष्य जिस समाज में रहता है उसी समाज की भाषा सीखता है। हालांकि वह अपने परिवार, अपने आस–पास के परिवेश से भाषा सीख लेता है, परंतु फिर भी भाषा सिखाने की आवश्यकता पड़ती है। मनुष्य का विकास उसकी भाषा के विकास के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है। केवल एक समाज की भाषा सीख कर उसका काम नहीं चल सकता। साथ ही अपनी मातृभाषा में भी उसको चारों कौशलों में दक्षता प्राप्त करनी है। इसलिए भाषा सीखना एक चुनौतीपूर्ण कार्य भी कहा जा सकता है।

5.10.1 शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाओं का प्रयोग

भाषा अधिगम के लिए हमारे पास बहुत से ऐसे संसाधन हैं जो हमें न केवल भाषा अधिगम में मदद करते हैं बल्कि हमारे आस–पास की दुनिया को भी बेहतर समझने में हमारी सहायता करते हैं। ऐसे ही कुछ संसाधन हैं– शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाएं जिनके बारे में हम यहां पढ़ेंगे। हम इनके महत्व एवं भाषा शिक्षण में इनके प्रयोग को जानने का प्रयास करेंगे। इसके साथ ही कक्षागत अंतः क्रियाओं को भी भाषा अधिगम संसाधन के रूप में देखते हुए इसके विभिन्न घटकों पर भी चर्चा करेंगे।

शब्दकोश

जिस ग्रंथ में शब्दों को अर्थ सहित किसी विशेष क्रम में सुनियोजित कर दिया जाता है उस ग्रंथ को शब्दकोश कहा जाता है।

वेबस्टर्स न्यू इंटरनेशनल डिक्शनरी के अनुसार, "यह एक संदर्भ ग्रंथ है जिसमें साधारणतया शब्द वर्णक्रमानुसार संयोजित रहते हैं और उसमें उनके रूप, उच्चारण, कार्य, व्युत्पत्ति, अर्थ तथा अर्थपरक मुहावरेदार प्रयोग संकलित रहते हैं। "

लुईस शोर्स के अनुसार, "भाषागत शब्दों की संग्रहात्मक पुस्तक को कोश कहते हैं। इसमें शब्द वर्णक्रमानुसार या अन्य किसी निश्चित क्रम से संयोजित रहते हैं और उनकी अर्थपरक व्याख्या तथा अन्य सूचनाएं उसी भाषा या अन्य भाषा में दी हुई रहती हैं।"

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, "कोश वह पुस्तक है, जिसमें सामान्यतः वर्णानुक्रम से किसी भाषा के शब्दों अथवा विशेष या फिर लेखक आदि के संबंध में अध्ययन होता है।"

शब्दकोश के लिए प्रायः 'शब्द संग्रह', 'पर्याय कोश', 'डिक्शनरी', 'पारिभाषिक शब्दावली' जैसे शब्दों का भी प्रयोग किया जाता है। ये पुस्तकालय के संदर्भ विभाग में रखे जाते हैं।

विश्वकोश

विश्वकोश का अर्थ है विश्व के समस्त ज्ञान का भंडार। यह एक ऐसी पुस्तक या पुस्तकों का समुच्चय है जिसमें ज्ञान की विभिन्न शाखाओं या कुछ अन्य व्यापक क्षेत्रों के साथ सूचनात्मक लेखों को वर्णानुक्रम में व्यवस्थित किया जाता है।

एक विश्वकोश वस्तुओं के कौन, क्या, कहां, कब, कैसे को समझाता है। सामान्य विश्वकोश सामान्य ज्ञान में वृद्धि करने, ज्ञात प्रकरणों पर सूचना प्रदान करने एवं लेखों के अंत में ग्रंथसूची प्रदान करते हैं, जिससे प्रकरण पर ज्यादा सूचना ढूंढ़ने में सहायता मिलती है।

समाचारपत्र एवं पत्रिकाएं

समाचारपत्र अथवा अखबार समाज और देश में हो रही घटनाओं पर आधारित एक प्रकाशन है। इसमें मुख्यतः ताजी घटनाएं, खेल–कूद, व्यक्तित्व, राजनीति, विज्ञापन की जानकारियां छपी होती हैं। समाचारपत्र संचार के साधनों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। ये कागज पर शब्दों से बने वाक्यों को लिखकर या छापकर तैयार होते हैं। अधिकांश समाचारपत्र दैनिक होते हैं लेकिन कुछ समाचारपत्र साप्ताहिक, मासिक एवं छमाही भी होते हैं। अब तो समाचारपत्र विशिष्ट उदेश्यों के साथ भी निकाले जाते हैं जैसे एम्प्लायमेंट न्यूज, इकोनोमिक टाइम्स इत्यादि। स्थानीय स्तर के समाचारपत्र स्थानीय भाषाओं में और स्थानीय विषयों पर केन्द्रित होते हैं जबकि राष्ट्रीय स्तर के समाचारपत्रों में खबरों का केंद्र बिन्दु राष्ट्रीय स्तर की खबरें होती हैं।

पत्रिकाएं

पत्रिकाएं खास विषयों पर लिखी जाती हैं। इनका प्रकाशन साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, छमाही एवं वार्षिक भी हो सकता है। पत्रिकाएं भिन्न–भिन्न प्रकार की होती हैं। ये सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि विषयों पर लिखी जा सकती हैं।

कुछ पत्रिकाएं मुख्य रूप से बच्चों के लिए होती हैं। इनको बाल–पत्रिकाएं कहा जाता है। इनका प्रमुख उद्देश्य बच्चों का मनोरंजन करना एवं उनको जानकारी प्रदान करना होता है। कुछ पत्रिकाएं सामाजिक विकास के लिए होती हैं जिनमें समाज से जुड़ी जानकारी, समाज के कल्याण के लिए योजनाएं, समाज की समस्याओं पर विमर्श आदि शामिल होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

19. भाषा में अधिगम संसाधनों से क्या अभिप्राय है? उदाहरण दीजिए।

.....

.....

5.11 भाषा शिक्षण और कक्षागत अंतः क्रिया

वैसे तो कक्षागत अंतः क्रिया किसी भी विषय शिक्षण के लिए महत्वपूर्ण है परंतु भाषा की कक्षा में अंतः क्रिया का होना बेहद आवश्यक है। अंतःक्रिया के अंतर्गत दो या दो से अधिक प्रतिभागियों के बीच किसी विषय पर संवाद होता है। कक्षा के स्तर पर हम अंतः क्रिया के दो स्वरूप देख सकते हैं– (1) कक्षा में विद्यार्थी–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया (2) कक्षा में शिक्षक–विद्यार्थी के मध्य अंतः क्रिया। आइए इनके बारे में विस्तार से पढ़ते हैं।

5.11.1 कक्षा में विद्यार्थी–विद्यार्थी के मध्य अंतः क्रिया

किसी भी विद्यालय में विचारों एवं तथ्यों के सम्प्रेषण के लिए सर्वाधिक उपयुक्त स्थान कक्षा होती है। किसी भी कक्षा में शिक्षक एवं विद्यार्थियों के मध्य शाब्दिक या अशाब्दिक रूप में विचारों, भावों एवं ज्ञान का

एक–दूसरे को आदान–प्रदान करना ही कक्षागत सम्प्रेषण कहलाता है। विद्यार्थी–विद्यार्थी एवं शिक्षक–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया विद्यार्थियों की उपलब्धि के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वर्तमान समय इस बात पर केन्द्रित हो रहे हैं कि शिक्षक–विद्यार्थी एवं विद्यार्थी–विद्यार्थी के बीच प्रेषण को किस प्रकार प्रभावशाली बनाया जा सकता है विद्यार्थियों की उपलब्धि के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वर्तमान समय के शोध इस बात पर केन्द्रित हो रहे हैं कि शिक्षक–विद्यार्थी एवं विद्यार्थी–विद्यार्थी के बीच के सम्प्रेषण को किस प्रकार प्रभावशाली बनाया जा सकता है जिससे शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के बीच मौखिक संवाद की प्रक्रिया सुगमतापूर्वक संचालित हो सके।

कक्षागत अंतः क्रिया के समय विद्यार्थी आपस में प्रायः निम्नलिखित प्रकार की चर्चाएं एवं वाद–विवाद करते हैं–

पढ़ाई जा रही विषयवस्तु पर चर्चा

कक्षा में पढ़ाई जा रही विषयवस्तु के कठिन बिन्दुओं पर विद्यार्थी आपस में चर्चा करके समस्या का समाधान निकालने का प्रयास करते हैं। यदि वे समाधान नहीं निकाल पाते तो फिर शिक्षक की मदद लेते हैं।

गृहकार्य पर चर्चा

कक्षा में शिक्षक द्वारा जो भी गृहकार्य दिया जाता है, विद्यार्थी अक्सर उस पर चर्चा करते हैं।

पाठ्य सहगामी क्रियाओं पर चर्चा

विद्यालय में हो रही पाठ्य सहगामी क्रियाओं के बारे में विद्यार्थी आपस में चर्चा करते हैं। वे अपने एवं अपने साथियों के प्रदर्शन के बारे में चर्चा करते हैं।

समसामयिक मुद्दों पर चर्चा

विद्यार्थी अक्सर अपने आस–पास, देश–विदेश में हो रही घटनाओं पर भी चर्चा करते हैं। इसके अतिरिक्त विद्यार्थी कभी–कभी आपस में विद्यालय के वातावरण, पारिवारिक वातावरण, सामान्य ज्ञान, परीक्षाओं पर, शिक्षकों के बारे में, शैक्षिक भ्रमण, विद्यालय में हो रहे खेलकूद आदि के बारे में भी चर्चा करते हैं।

5.11.2 कक्षागत व्यवहार का स्वरूप

आधुनिक काल में शिक्षण से तात्पर्य विद्यार्थियों को ज्ञान प्रदान करना मात्र ही नहीं है बल्कि शिक्षक–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया से भी है। शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली ढंग से चलाने के लिए शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के बीच संवाद होना बेहद आवश्यक है। शिक्षण–अधिगम कार्य प्रभावशाली होने से विद्यार्थी किसी भी विषय को आसानी से सीख सकते हैं। कक्षा में प्रभावशाली शिक्षण के लिए शिक्षक को सहायक की भूमिका निभानी होती है। उसकी सहायक की भूमिका उसके विद्यार्थियों से सम्प्रेषण एवं अंतः क्रिया पर निर्भर करती है। कक्षागत अंतःक्रिया में शिक्षक – विद्यार्थी व्यवहार एक–दूसरे से सहसंबंधित होते हैं, जो क्रियात्मक रूप से अन्योन्याश्रित भी होते हैं। अतः कक्षागत व्यवहारों का अध्ययन एवं विश्लेषण शिक्षक – विद्यार्थी व्यवहार और उनकी परस्पर अन्योन्याश्रिता का अवलोकन करके ही किया जा सकता है।

भाषा ग्रहण करना एवं अभिव्यक्त करना भाषा के चारों कौशल – श्रवण, वाचन, पठन और लेखन कौशलों पर निर्भर करता है। बच्चों में इनका विकास किस प्रकार हो रहा है इसके लिए अध्यापक को सजग रहना होता है। इन कौशलों का विकास धीरे–धीरे और निरंतर होता है इसलिए इनका मूल्यांकन भी निश्चित रूप से निरंतर और सतत होना चाहिए। अब हम इन कौशलों का सतत और व्यापक रूप से मूल्यांकन कैसे करें इसकी चर्चा करेंगे–

श्रवण कौशल का मूल्यांकन

हम जानते हैं कि भाषा के चारों कौशल एक–दूसरे से पूरी तरह जुड़े हैं। बच्चे में बोलने, पढ़ने और

लेखन के कौशल के विकास के लिए आवश्यक है कि उसमें सुनने के कौशल का विकास हो। शिक्षक के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह जाने कि बालक का श्रवण कौशल कैसा है? वह विभिन्न परिस्थितियों में लोगों की बातों को कितना समझ पाता है।

शिक्षक वाद–विवाद, प्रवचन, भाषण, कविता, कहानी, दूरदर्शन के प्रसारित कार्यक्रम टेप पर रिकार्ड की गई सामग्री आदि को बच्चों को सुनने के लिए देकर उस पर आधारित प्रश्न पूछकर बच्चों की सुनने की योग्यता का मूल्यांकन कर सकते हैं। विद्यार्थियों की सुनने की योग्यता का मूल्यांकन करते समय निम्नलिखित परिवर्तनों की ओर ध्यान देना चाहिए–

- क्या विद्यार्थी ध्यानपूर्वक सुनते हैं?
- क्या वे ग्रहणशीलता की स्थिति बनाए रखते हैं?
- क्या वे श्रुत सामग्री के सारांश व केंद्रीय भावों को ग्रहण कर सकते हैं?
- क्या वे वक्ता के मनोभावों को समझ सकते हैं?
- क्या वे भाषा एवं शैली की दृष्टि से साहित्यिक अंशों में तुलना कर सकते हैं?

अधिकतर यह देखा गया है कि बच्चे सुनकर अर्थग्रहण नहीं कर पाते हैं जिससे वह किसी सुने हुए भाषण, कहानी, कविता, वाद–विवाद आदि को समझ कर सार नहीं पठन एवं लेखन का शिक्षाशास्त्र निकाल पाते हैं। इस योग्यता का आकलन पूरे वर्ष भर होना चाहिए। इसके लिए प्रेक्षण, प्रश्नावली, घटना – क्रम, संचयी – वृत्त, पोर्टफोलियो, रुब्रिक्स आदि के द्वारा विद्यार्थियों की इस योग्यता का मूल्यांकन सतत रूप से किया जा सकता है।

बोलने का कौशल

अपने भावों और विचारों को उपयुक्त शब्दों, वाक्यों, मुहावरों आदि के प्रयोग कर प्रस्तुत करना, मौखिक अभिव्यक्ति है। मौखिक अभिव्यक्ति को तभी सार्थक माना जाता है जब वक्ता की कही हुई बात श्रोता सही ढंग से समझ लेता है।

शिक्षक अधिकांशतः मौखिक अभिव्यक्ति मूल्यांकन के प्रति उपेक्षा का भाव रखते हैं क्योंकि शिक्षक यह नहीं समझ पाते कि वे अभिव्यक्ति के किन पक्षों का मूल्यांकन करें और इसके लिए मूल्यांकन की विधियां क्या हो सकती हैं। शिक्षक को मौखिक अभिव्यक्ति का मूल्यांकन करते समय विद्यार्थियों के निम्नलिखित गुणों का मूल्यांकन करना चाहिए–

- क्या वे सुश्रव्य वाणी में बोल सकते हैं?
- क्या वे प्रसंगानुसार उचित गति के साथ बोल सकते हैं?
- क्या वे शुद्ध उच्चारण, उचित बलाघात और अनुतान में उतार–चढ़ाव बोल सकते हैं?
- क्या वे उचित विराम या उचित प्रवाह के साथ बोल सकते हैं?
- क्या वे भावानुकूल ढंग से विचारों को प्रकट कर सकते हैं?
- क्या वे विचारों को अपनी भाषा में व्यक्त कर सकते हैं?

सुनना कौशल का सार्थक विकास, बोलने के कौशल पर निर्भर है और बोलने के कौशल का विकास और सार्थकता सुनने के कौशल पर निर्भर है। सुनना और बोलना कौशल जानने के लिए निम्नलिखित पक्षों पर ध्यान देना चाहिए–

- विद्यार्थी विभिन्न परिस्थितियों में बोली जाने वाली भाषा को सुनकर समझते हैं।
- विद्यार्थी दूसरों की बातों और विचारों को सुनकर, समझकर अपने ढंग से व्यक्त करते हैं।

- विद्यार्थी अपनी बात स्पष्टता के साथ और खुलकर कहते हैं।
- विद्यार्थी अपने आस – पास घट रही घटनाओं, समस्याओं, सामायिक मुद्दों को सुनकर उन पर अपनी राय व्यक्त कर सकते हैं।
- विद्यार्थी अवसरानुकूल भाषा का प्रयोग करते हैं।

यदि हम वाद–विवाद प्रतियोगिता का उदाहरण लें तो इसमें सुनना एवं बोलना दोनों कौशलों का प्रयोग होता है। वक्ता दूसरों की बात को सुनकर ही उसके पक्ष में या विपक्ष में अपनी बात कहता है।

पठन कौशल के मूल्यांकन

पठन कौशल एक ऐसी विकासशील मनोभाषिक क्रिया है जो लिपि – प्रतीकों को पहचान कर उन्हें शब्द और अर्थ में परिवर्तन करने से आरंभ होकर अर्थग्रहण के दौर से गुजरती हुई पाठक को विश्लेषण, चिंतन–मनन के स्तर तक ले जाती है। कुशल पाठक वहां पहुंचकर पठित सामग्री की सार्थकता, सारता, उपयुक्तता और उपयोगिता का मूल्यांकन करता है और साथ ही उसमें निहित निरर्थकता, अनावश्यकता, अप्रासंगिकता का समीक्षण भी। भाषा की कक्षा में बच्चों को गद्य, पद्य, बच्चों को गद्य, पद्य, कहानी आदि पढ़कर अर्थ ग्रहण की आवश्यकता प्रतिदिन होती है। कई बच्चे पठित सामग्री को पढ़कर अर्थ ग्रहण कर पाते हैं और कई नहीं। शिक्षक का कार्य है कि वह विद्यार्थियों की इस क्षमता का मूल्यांकन करें। इस क्षमता के मूल्यांकन के लिए विद्यार्थियों के निम्नलिखित पक्षों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए–

- क्या वह पाठ्यपुस्तक के अतिरिक्त की गई रचनाओं जैसे कहानी, पाठेत्तर साहित्य के बारे में जानने और उन्हें पढ़ने के लिए उत्सुक है?
- क्या वह पठित सामग्री का सारांश एवं केन्द्रीय भाव ग्रहण कर सकता है?
- क्या वह लेखक के मनोभावों को समझने में सक्षम है?
- क्या वह किसी भी पठित अंश को अपनी भाषा में अभिव्यक्त कर पाता है?

पठित सामग्री की अर्थग्रहण कुशलता के लिए मौखिक एवं लिखित दोनों प्रकार की परीक्षाओं का प्रयोग किया जा सकता है।

लेखन कौशल का मूल्यांकन

लिखित अभिव्यक्ति के विकास के लिए प्रारम्भ से ही विधिवत शिक्षा की आवश्यकता होती है। वैसे तो लिखित अभिव्यक्ति में मौखिक अभिव्यक्ति की अनेक विशेषताएं अपेक्षित एवं आवश्यक हैं, जैसे– शुद्ध, स्पष्ट, प्रभावपूर्ण एवं व्यावहारिक तथा अवसरानुकूल भाषा प्रयोग, क्रमबद्ध एवं सुसंबद्ध रूप से भावों एवं विचारों की कलात्मक अभिव्यक्ति। किन्तु लिपि, शब्द–ज्ञान, पदक्रम, वाक्य गठन के विभिन्न रूपों तथा शैली आदि की प्रयोग क्षमता लिखित अभिव्यक्ति के अनिवार्य पक्ष हैं।

लिखित अभिव्यक्ति के मूल्यांकन के लिए परीक्षा पद्धति महत्वपूर्ण है। आज सतत एवं व्यापक मूल्यांकन के दौर में भी पठन, वाचन एवं श्रवण कौशलों से भी अधिक ध्यान लेखन कौशल के मूल्यांकन पर ही दिया जाता है। उसके बाद भी विद्यार्थियों की लेखन शैली संतोषजनक नहीं होती। उसका कारण है मूल्यांकन के मानदंडों का ठीक न होना जिससे लेखन के सभी पक्षों का मूल्यांकन ठीक से नहीं हो पाता। इसलिए मूल्यांकन के समय लेखन के सभी उद्देश्यों को ध्यान में रखना चाहिए। आप जब भी प्रश्न पत्र बनाए, उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ही प्रश्नपत्र का निर्माण करें।

लेखन कौशल के मूल्यांकन के लिए अनुच्छेद लेखन, निबंध लेखन, पत्र लेखन, कहानी लेखन, संवाद लेखन, एकांकी रचना, नाटक लेखन, संस्मरण लेखन, आत्मकथा, जीवनी, पद्य लेखन, सार लेखन, विचार एवं भाव विस्तार, रिपोर्ताज, संपादकीय लेखन आदि विधियां अपनाई जा सकती हैं। विद्यार्थी की लिखित अभिव्यक्ति

का मूल्यांकन करते समय निम्नलिखित पक्षों को ध्यान में रखना चाहिए–

- क्या विद्यार्थी प्रसंगानुसार उचित गति में लिख सकते हैं?
- क्या वे शुद्ध वर्तनी में लिख सकते हैं?
- क्या वे विराम चिह्नों का ठीक से प्रयोग करके लिख सकते हैं?
- क्या वे क्रमबद्ध रूप से लिख सकते हैं?
- क्या वे विषय तथा अभिव्यक्ति के अनुकूल शैली का प्रयोग कर सकते हैं?
- क्या वे अनुभवों, भावों एवं दूसरों की राय एवं विचारों को लिखने की कोशिश करते हैं?
- क्या वे सुनी हुई कहानी या अन्य रचनाओं को आगे बढ़ाते हुए लिख सकते हैं?
- लिखने व बोलने में अपने आस–पास, स्थानीय सुनी–समझी या पढ़ी हुई भाषा का सटीक, उपयुक्त ढंग से प्रयोग कर पाते हैं या नहीं?

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

20. कक्षा के स्तर पर हम अंतः क्रिया के कितने स्वरूप देख सकते हैं?

.....

.....

5.12 सारांश

पढ़ना सीखने का शुरुआती दौर बच्चों एवं शिक्षकों दोनों के लिए ही महत्वपूर्ण होता है। पिछले कुछ दशकों में पढ़ना सीखने वाले की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। परंतु इनमें बड़ी तादाद में ऐसे बच्चे शामिल हैं जो पढ़ तो सकते हैं परंतु अपने पढ़े हुए को समझ पाने की क्षमता उनमें नहीं है। भले ही इस क्षेत्र में किए गए अथक प्रयासों से हालात सुधरे हैं परंतु कुल मिलाकर स्थिति बेहद निराशाजनक है। समझ कर पढ़ने के कौशल का विकास कक्षा तीन–चार के विद्यार्थियों में भी नहीं हो पाता। भाषा शिक्षण का तात्पर्य पाठ्यपुस्तक के पाठों का वाचन और भाषा पाठ्यक्रम को पूरा करने से कहीं अधिक व्यापक है।

5.13 अभ्यास के प्रश्न

1. विद्यालय के पाठ्यक्रम में भाषा की स्थिति स्पष्ट किजिए।

4. विद्यालय पाठ्यक्रम में भाषा सीखने के दो सामान्य अध्ययन बताएं।

5.14 चर्चा के बिन्दु

1. भाषा में विद्यालयी पाठ्यक्रम के विश्लेषण हेतु चर्चा कीजिए।

5.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. वायगोत्स्की ने शैशवावस्था के विभिन्न चरणों के माध्यम से बच्चे के विकास से संबंधित विचार और

भाषा पर एक व्यापक तर्क दिया है।

2. ब्रूनर ने गैर–मौखिक संचार प्रक्रिया में शामिल वास्तविक तंत्रों की पहचान करने की कोशिश की।

3. 1957 में भाषाविज्ञान का चॉम्स्कीयन मॉडल अस्तित्व में आया।

4. व्यवहारवाद के प्रमुख समर्थक पावलोव, थार्नडाइक और स्किनर जैसे मनोवैज्ञानिक थे।

5. व्यवहारवादी जॉन लोके द्वारा प्रस्तावित "तबुला रासा" का प्रत्यय दिया गया था।

6. व्यवहारवादियों का विचार है कि भाषा चार कौशलों के प्रदर्शन के माध्यम से प्रकट होती है। ये लिसनिंग, स्पीकिंग, रीडिंग एंड राइटिंग (LSRW) हैं।

7. ध्वनि, शब्द, वाक्य एवं अनुच्छेद आदि के आधार पर भाषा का आकार या ढांचे का निर्माण होता है जो भाषा की व्यवस्था का निर्माण करता है।

8. हमारे सीखने की प्रक्रिया में होने वाले परिवर्तन के कारण ही भाषा भी परिवर्तित होती रहती है।

9. भाषा के निम्न कार्य होते हैं–

    - भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति
    - मनुष्य के भावात्मक विकास का साधन
    - सामाजिक क्रिया–कलापों का आधार

10. व्यावहारिक दृष्टि से भाषा के दो रूप हैं– (1) मौखिक रूप (2) लिखित रूप

11. भाषा के मौखिक रूप को ही भाषा का सहज रूप माना जाता है। जब कोई व्यक्ति अपने विचार बोलकर अभिव्यक्त करता है या आमने–सामने आपस में बात करता है तो वह भाषा का मौखिक रूप कहलाता है।

12. जिस भाषा को लिखकर अथवा पढ़कर हम अपने विचारों को अभिव्यक्त कर सकते हैं वह भाषा का लिखित रूप कहलाता है। इसको भाषा का अमूर्त रूप भी कहा जाता है।

13. बच्चे की प्रथम भाषा वह भाषा है जो वह जन्म लेने के बाद सबसे पहले सीखता एवं बोलता है।

14. मातृभाषा के अतिरिक्त व्यक्ति अन्य बहुत सी भाषाओं को सीखता है। इनमें से द्वितीय भाषा वह भाषा होती है जो बच्चा अपने परिवार से तो नहीं सीखता परंतु उसके आस–पास के परिवेश में यह भाषा पर्याप्त सुनाई देती है।

15. भाषा कौशलों से अभिप्राय है किसी भी भाषा में काम करने की समर्थता हासिल करना। इनमें चार भाषायी कौशल शामिल हैं– सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना।

16. शिक्षण की दृष्टि से श्रवण कौशल का विकास विद्यार्थियों में ऐसी क्षमता का विकास करना है जिससे वह किसी बात को ध्यान से सुन सके, उसमें निहित अर्थ को समझ सके, और सुनकर किसी बात का विश्लेषण कर सके।

17. ऐसी गतिविधियां करवाई जाएं जिनसे बच्चों को एक दूसरे से बात करने का मौका मिले। इसके अतिरिक्त अपना परिचय देना, अपने परिवार, समाज एवं संस्कृति के बारे में बताना, विद्यालय के बारे में चर्चा करना, किसी समसामयिक विषय को सुनकर उस पर अपने विचार रखना, तर्क–वितर्क करना आदि के माध्यम से विद्यार्थियों के मौखिक अभिव्यक्ति का विकास किया जा सकता है।

18. मौखिक भाषा की ध्वनियों को विशिष्ट चिह्नों द्वारा लिखित रूप में लिपि के द्वारा व्यक्त जाता है। अपने विचारों को लिपिबद्ध करके प्रस्तुत करना ही लेखन कहलता है।

19. भाषा अधिगम के लिए हमारे पास बहुत से ऐसे संसाधन हैं जो हमें न केवल भाषा अधिगम में मदद

करते हैं बल्कि हमारे आस–पास की दुनिया को भी बेहतर समझने में हमारी सहायता करते हैं। ऐसे ही कुछ संसाधन हैं– शब्दकोश, विश्वकोश, समाचारपत्र एवं पत्रिकाएं।

20. कक्षा के स्तर पर हम अंतः क्रिया के दो स्वरूप देख सकते हैं– (1) कक्षा में विद्यार्थी–विद्यार्थी के मध्य अंतःक्रिया (2) कक्षा में शिक्षक–विद्यार्थी के मध्य अंतः क्रिया।

5.16 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. क्रिस्टल डेविड, 'लिंगुइस्टिक्स', पैंगविन पब्लिकेशन्स, संस्करण 1990
2. गिलियन, लजर, 'लिटरेचर एंड लैंग्वेज टीचिंग' कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस संस्करण 1993
3. तिवारी, भोलानाथ, 'भाषा विज्ञान प्रवेश, किताब घर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2013
4. रा.शै.अ.प्र.प. (2005), 'राष्ट्रीय पाठचर्या की रूपरेखा', नई दिल्ली
5. सिंह, निरंजन कुमार, 'माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, संस्करण 2011

इकाई– 6 : विद्यालयी पाठ्यचर्या में भाषा की प्रासंगिकता

इकाई की संरचना

6.1 प्रस्तावना

6.2 इकाई के उद्देश्य

6.3 पाठ्यचर्या में भाषा

6.4 भाषा विकास की प्रविधियाँ

6.5 भाषाई कौशल एवं इनका विकास

6.6 प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ECCE) में भाषा

6.7 पूर्व–प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण

6.8 प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण

6.9 भाषा समृद्ध वातावरण बनाना

6.10 भाषा सिखाने के लिए कार्य–नीतियाँ

6.11 त्रिभाषा सूत्र

6.12 प्रथम भाषा

6.13 द्वितीय भाषा

6.14 तृतीय भाषा

6.15 राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में भाषा से संबंधित महत्वपूर्ण सिद्धांत

6.16 राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढाँचा– 2005 में भाषा शिक्षा

6.17 बहुभाषी कक्षा

6.18 बुनियादी साक्षरता एवं भाषा

6.19 भाषा शिक्षण में समावेशन

6.20 भाषा, समझ और ज्ञान

6.21 विषय के रूप में भाषा

6.22 सारांश

6.23 अभ्यास के प्रश्न

6.24 चर्चा के बिंदु

6.25 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.26 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

विद्यालयीय पाठ्यचर्या में भाषा सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। प्राथमिक स्तर पर बालक भाषा के माध्यम से ही सभी प्रकार की सूचनाएँ और ज्ञान प्राप्त करता है। बच्चे घर पर अनौपचारिक/परंपरागत तरीके से बिना किसी

विशेष प्रयास के अपनी मातृभाषा को सीखते हैं। विद्यालयीय शिक्षा में छात्र भाषा को एक विषय के रूप में भी पढ़ते हैं तथा साथ ही साथ अन्य विषयों को भी भाषा के माध्यम से ही सीखते हैं। इस प्रकार भाषा विचार विनिमय के साथ–साथ अभिव्यक्ति का माध्यम है। छात्रों को अपने विचारों, भावनाओं एवं दृष्टिकोणों को अभिव्यक्त करने की आवश्यकता पड़ती है। स्व–अभिव्यक्ति बालकों के व्यक्तित्व के विकास का प्रमुख आधार है। भाषा के माध्यम से ही बालक अपनी पाठ्यवस्तु का अधिगम करते हैं। भाषा के माध्यम से बालक स्वयं से तथा अन्य के साथ अपने विचारों का आदान–प्रदान करते हैं। भाषा के रूप में ही बालक अपने ज्ञान का सृजन करते हैं। भाषा अधिगम के अन्तर्गत बालक उचित स्वरूप में समझ के साथ सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना सीखते है। इन भाषाई कौशलों के विकास में शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण है। शिक्षक इनके विकास के लिए औपचारिक ढंग से रणनीतियाँ बनाता है, तथा कक्षा–कक्ष में उपयुक्त ग्रहणीय वातावरण का नियोजन करता है।

पाठ्यचर्या निर्माण का उद्देश्य शिक्षण–अधिगम के उद्देश्यों तथा अधिगम प्रतिफलों को प्रभावी एवं सहज ढंग से प्राप्त करना होता है। किसी भी विषय के शिक्षण–अधिगम में भाषा महत्वपूर्ण है। यदि भाषा के कौशलों के अर्जन में कोई छात्र पिछड़ जाता है, तो अन्य विषयों की उपलब्धियों पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसलिए पाठ्यचर्या के निर्माण में भाषा के विकास तथा भाषाई कौशलों के अर्जन पर पर्याप्त ध्यान दिया जाता है। छात्र की शैक्षणिक उपलब्धि में भाषा का केंद्रीय महत्व है। भाषा के अभाव में शिक्षण–अधिगम संभव नहीं है। भाषा विकास की अपरिहार्यता और भाषाई कौशलों में दक्षता अर्जित करने के उद्देश्य से बालक औपचारिक, अनौपचारिक एवं निरौपचारिक प्रत्येक ढंग से भाषा सीखता है। भाषा विकास, शब्द भंडार का निर्माण तथा भाषाई कौशलों का समुचित उपयोग करके ही बालक अपने मनोभावों, विचारों, समझ एवं दृष्टिकोणों को अभिव्यक्त कर सकते हैं एवं समाज के विचारों/अनुभवों से अवगत होता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा– 2005 (NCF–2005) में भाषा के शिक्षण–अधिगम के संबंध में महत्वपूर्ण ढंग से विचार किया गया है। भाषा को किस तरह पढ़ाया जाए? भाषा कैसे सीखी जाती है? एवं एक शिक्षक की इसमे कहाँ एवं किस प्रकार की भूमिका होनी चाहिए? स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। बिना भाषा समृद्ध वातावरण बनाए आदर्श शैक्षणिक वातावरण की कल्पना नहीं की जा सकती है। भाषा सीखना केवल भाषा की ही कक्षा में नहीं होता है, अपितु सभी विषयों की कक्षाओं में होता है, इसीलिए कहा जाता है कि प्रत्येक विषय का शिक्षक भाषा का शिक्षक होता है। भाषा सीखने की कार्य–नीतियों पर भी यहाँ चर्चा की गई है।

बालक के लिए उसकी मातृभाषा उसकी शैक्षणिक यात्रा का आधार होती है। शिक्षक को इसके महत्व से ही परिचित नहीं बल्कि इसकी शक्ति एवं इसके उपयोग करने की दक्षता में भी कुशल होना चाहिए। साथ ही उसे अन्य भाषाओं के महत्व से भी अवगत होना चाहिए। बहुभाषिकता मानव के उत्थान में अत्यधिक महत्व की चीज है। कक्षा को एक आदर्श शिक्षक हमेशा बहुभाषिक एवं लचीला बनाने का प्रयास करता है। विभिन्न प्रकार की भाषा सीखने की प्रवृत्तियों को आवश्यकतानुसार प्रयोग करते हुए भाषाई कौशलों में छात्रों को निपुण बनाने का प्रयास होता है। बुनियादी साक्षरता के विकास में भाषा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सार्वभौमिक मूल साक्षरता यानी भाषा की साक्षरता के लिए संसाधन एवं रणनीतियों पर विद्यालय एवं शिक्षक को पर्याप्त रूप से विचार करना चाहिए। भाषा केवल मानव विकास के लिए ही आवश्यक नहीं है, बल्कि सामाजिक समावेशन के दृ ष्टिकोण से भी अत्यंत संवेदनशील एवं आवश्यक है।

6.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. भाषा शिक्षण के महत्व को जान सकेंगे।
2. पूर्व–प्राथमिक एवं प्राथमिक, स्तर पर भाषा शिक्षण को जान सकेंगे।
3. त्रिभाषा सूत्र की आवश्यकता एवं महत्व को समझ सकेंगे।
4. भाषा का पाठ्यक्रम में क्या महत्व है जान सकेंगे।

5. भाषा शिक्षण के विभिन्न पक्षों को समझ सकेंगे।

6. बहुभाषी कक्षा के महत्व को जान सकेंगे।

7. भाषा सीखने की प्रकृति को समझ सकेंगे।

8. सीखने में भाषा की भूमिका को समझ सकेंगे।

9. भाषा की कुशलता विकसित करने की युक्तियों को जान सकेंगे।

10. भाषा का अन्य विषयों के शिक्षण से संबंध को समझ सकेंगे।

11. शिक्षा नीति में भाषा के मत व सिद्धांतों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

6.3 पाठ्यचर्या में भाषा

शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया में भाषा सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसीलिए कहा गया है कि प्रत्येक विषय की कक्षा में भाषा सिखाया जाना चाहिए और प्रत्येक अध्यापक को भाषा का अध्यापक होना चाहिए। सभी विषयों को भाषा के माध्यम से ही सीखा जाता है और प्रत्येक विषय की अपनी एक भाषा होती है, जिसका एक बड़ा और सामान्य भाग सार्वनिष्ठ होता है, किंतु एक विशिष्ट भाग होता है, जो विषय की प्रकृति, स्वरूप एवं उसके प्रस्तुतीकरण, संवाद और लेखकीय शैली को इंगित करता है।

भाषा का सीखना सिर्फ भाषा की कक्षा में ही नहीं होता है बल्कि यह कार्य विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी विषयों, व्यवसायिक विषयों, गणित, कंप्यूटर, कला, संगीत आदि के साथ कक्षेत्तर गतिविधियों में भी होता है। भाषा का मुख्य कार्य विचारों का संप्रेषण, विचारों का आदान–प्रदान, विचारों एवं ज्ञान को संरक्षित करने तथा इसका विस्तारण करने में होता है।

विभिन्न प्रकार के प्रोजेक्ट जो छात्रों के स्व– अधिगम, समूह– अधिगम, सह–अधिगम, सृजनात्मकता एवं व्यक्तित्व विकास के निमित्त कराये जाते हैं, में भाषा अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। भाषा के माध्यम से ही छात्र अपनी कल्पना, विचार एवं क्षमता को प्रदर्शित करते हैं। अतः किसी भी विषय के शिक्षण–अधिगम में हमें भाषा के परिष्करण एवं संवर्धन के दृष्टिकोण से कक्षा या कक्षा के बाहर की गतिविधियों में इसका ध्यान रखना चाहिए। भाषा और सीखना छात्र के संदर्भ से घनिष्ठ रूप से जुड़ा रहता है, इसलिए भाषा का प्रयोग संदर्भ के साथ ही अर्थपूर्ण ढंग से किया जा सकता है। इस प्रकार विषयों के शिक्षण, पाठ योजना निर्माण, प्रस्तुतीकरण एवं मूल्यांकन सभी स्तरों पर भाषा का ध्यान रखा जाना चाहिए। यदि कक्षा में आनन्ददायक अधिगम (Joyful learning) के वातावरण का सृजन करना चाहते हैं, तो भाषा की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। किसी भी गतिविधि को आनन्ददायक बनाने में भाषा आधार या मुख्य संगठक के रूप में कार्य करती है।

6.4 भाषा विकास की प्रविधियाँ

भाषा विकास की प्रविधियाँ जो प्रख्यात शिक्षाविदों, मनोवैज्ञानिकों एवं समाज शास्त्रियों द्वारा सुझाई गयी हैं, निम्नवत है–

1. **आँकना** : मानव शिशु अपने वातावरण में उत्पन्न होने वाली संवेदनाओं के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होता है। अपने वातावरण में उत्पन्न होने वाले विभिन्न प्रकार की ध्वनियों को आँकता है, इन पर वह ध्यान देता है तथा इन ध्वनियों को लेकर उसके मस्तिष्क में विभिन्न प्रकार की मानसिक संरचनाएं बनती है, जो उसकी मूल प्रवृत्तियों से संबंधित होती हैं। इसी क्रम में शिशु कुछ ध्वनियों को विशेष संदर्भों से जोड़ना/पहचानना आरंभ कर देता है। माँ की आवाज को सुनकर वह रोने/हँसने लगता है। कुछ ध्वनियों को निकालने के प्रयास में वह बुदबुदाना आरंभ कर देता है। शुरुआत में शिशु अर्थहीन शब्दों को

निकालता (बलबलाता) है। इसी क्रम में मामा, पापा, बाबा, पमपम जैसे आसान शब्दों को बोलने लगता है।

2. **अनुकरण** : यह सीखने का सबसे सरल, निम्नतम एवं महत्वपूर्ण प्रकार है। शिशु/बालक परिवारजनों के विभिन्न क्रियाओं एवं ध्वनियों को देखते एवं सुनते हुए उनका अनुकरण करता है, उसी तरह की क्रियाओं एवं ध्वनियों को निकालने/दोहराने का वह प्रयास करता है। कुछ प्रयासों के बाद वह वैसी ही ध्वनि निकालने लगता है, बोलने लगता है। स्पष्टतः बालक के आरंभिक भाषा विकास की शुरुआत अनुकरण के माध्यम से होती है। स्किनर, 1972 ने भाषा सीखने की प्रक्रिया के संबंध में 'अनुकरण तथा संशोधन प्रतिमान' (Imitation and correction model) में स्पष्ट किया है, कि शिशु/बालक बड़े लोगों के शब्दों, वाक्यों को ध्यान पूर्वक सुनता है एवं इनका अनुकरण करता है, जब सही अनुकरण पर उसकी प्रशंसा की जाती है या उसे अपने कार्यों में सफलता मिलती है, तो वह पुनर्बलित होता है। जिससे सीखने की गति तीव्र होती है। बालक का तीन– चौथाई भाषा विकास अनुकरण के माध्यम से ही संपन्न होता है। इस प्रकार अनुकरण सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाषा सीखने की प्रविधि है।

3. **खेल** : बालक अपनी पूर्व–बाल्यावस्था एवं बाल्यावस्था में अकेले या साथी समूह में तरह–तरह की खेल गतिविधियों में भाग लेता है। खेल– खेल में वह बहुत प्रकार के शब्दों, वाक्यों, तुकबंदियों, कविताओं, लोकोक्तियाँ, मुहावरे, कहावतें आदि को सुनता है, साथ ही वह विभिन्न प्रकार की रेखाएँ, गोले जैसी आकृतियों का निर्माण करना भी सीखता है, जिनके माध्यम से वह अक्षर बनाना तथा बोलना सीखता है। अगले क्रम में वह अपनी मातृभाषा के अक्षरों को बोलना, पढ़ना एवं लिखना आरंभ कर देता है। इस प्रकार खेल के माध्यम से बालक का भाषा का विकास महत्वपूर्ण तरीके से होता है।

4. **गीत एवं कहानियाँ** : बच्चों के ज्ञानवर्धन एवं मनोरंजन हेतु घर के वरिष्ठ सदस्य दादा–दादी, नाना–नानी, भाई–बहन, माता–पिता व अन्य परिवारीजन बच्चों को विविध प्रकार के गीत, तुकबंदियाँ एवं कहानियाँ सुनाते हैं। इन कविताओं, तुकबंदियों एवं कहानियों के माध्यम से बालक नवीन शब्दों को सुनता है एवं उनका कहां और किस संदर्भ में प्रयोग हुआ है? सीखने लगता है। कविता एवं कहानियों को प्राचीन काल से ही बालकों के शिक्षण– अधिगम की मान्य परंपराओं के रूप में स्वीकार किया गया है। बालक इसमें रुचि लेकर सहजतापूर्वक अनौपचारिक रूप से भाषा को सीखता है।

5. **वार्तालाप** : वार्तालाप सहज ज्ञानार्जन, शिक्षण– अधिगम का एक महत्वपूर्ण तरीका है। बालक विभिन्न प्रकार के लोगों से वार्तालाप के माध्यम से अंतः क्रिया करता है और भाषा को सीखता है। वार्तालाप के माध्यम से बालक का शब्द भंडार ही नहीं बढ़ता है, बल्कि शब्दों के माध्यम से सही ढंग से वाक्यों को कैसे बनाते है? कैसे बोलते हैं? इनके बोले जाने का ढंग एवं गति कैसी होती है? इत्यादि भी सीखते हैं। सही ढंग से भाषा लिखने के लिए सही ढंग से भाषा को सुनना एवं बोलना आना अत्यंत आवश्यक है।

6. **वाद–विवाद** : बालक स्वभाव से ही जिज्ञासु होते हैं। परिवेश की घटनाओं के संबंध में अपने परिवारजनों, साथियों से विभिन्न प्रकार के प्रश्नों के माध्यम से अपनी जिज्ञासाओं को शांत करने के साथ वे नवीन जिज्ञासाओं को उत्पन्न करते हैं। जिज्ञासा के माध्यम से बालक सही प्रश्न करना ही नहीं, बल्कि उत्तरों को सही तरीके से और औचित्य के अनुरूप समझना भी सीखते हैं। इससे बालकों में विभिन्न प्रकार के शब्दों, वाक्यों, पाठों को पढ़ने, बोलने तथा लिखने की इच्छा जगती है और धीरे–धीरे वे भाषाई प्रवीणता को प्राप्त करते हैं।

7. **पढ़ना, लिखना व समझना** : भाषा के विकास के दृष्टिकोण से पढ़ना, लिखना और समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है। बालक जब विभिन्न प्रकार की पाठ्यवस्तुओं के संपर्क में आता है, तो वह विविध

प्रकार की लेखन शैली, शब्द– विन्यास, वाक्य संरचना आदि से परिचित होता है तथा अपने लेखन में विविध प्रकार की शैलियों का प्रयोग करता है। बालक अपने विचारों को औपचारिक ढंग से व्यक्त करने की कुशलता अर्जित करता है तथा विभिन्न प्रकार के पाठों को विभिन्न संदर्भों के अनुसार समझने की योग्यता भी प्राप्त करता है।

इस प्रकार भाषा के सीखने की विभिन्न प्रकार की प्रविधियाँ हैं, जो बालकों में उनकी व्यक्तिगत विभिन्नताओं के साथ एक सामान्य क्रम में संपन्न होती हैं। बालकों को शुद्ध, वैज्ञानिक, व्याकरणसम्मत भाषा के अनुभव एवं प्रयोग का अवसर उपलब्ध कराना अभिभावकों एवं शिक्षकों का दायित्व है। जितना सघन एवं सुव्यवस्थित भाषाई अनुभव बालक को प्राप्त होगा, बालक उतनी ही प्रवीणता के साथ भाषाई दक्षताओं को प्राप्त करता है।

6.5 भाषाई कौशल एवं इनका विकास

छात्रों में प्रभावशाली एवं समुन्नत भाषा व्यवहार के विकास के लिए प्रारंभिक शिक्षा के स्तर से ही भाषाई कुशलताओं के शिक्षण–अधिगम एवं विकास पर पर्याप्त ध्यान देना आवश्यक है। भाषा के चार कौशलों की पहचान की गई है– सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना (सुबोपलि)। इन चारों कौशलों के साथ समझ, सोच, चिंतन इत्यादि अनन्य रूप से संबद्ध हैं। सभी कौशल एक दूसरे से अलग होते हुए भी पारस्परिक रूप से समन्वित है। सुनते समय समझना, बोलते समय सुनना व समझना, पढ़ते समय बोलना, सुनना व समझना तथा लिखते समय पढ़ना व समझना साथ– साथ चलने वाली क्रियाएँ हैं, फिर भी सभी कौशलों का अपना अलग–अलग महत्व है और विद्यालयीय शिक्षा के आरंभ में इनके अलग–अलग विकास पर ध्यान देते हुए अलग–अलग कार्य– नीतियाँ बनाई जाती है, आगे चलकर इनको आपस में समन्वित करके सिखाने की योजना बनानी चाहिए, क्योंकि ये सभी कौशल एक दूसरे के संपूरक हैं और किसी एक के पर्याप्त विकास के अभाव में दूसरा नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। निष्फल भी हो सकता है। छात्रों में कौशलों का विकास पर्याप्त अभ्यास या उपयोग (लर्निंग बाय डूइंग) के जरिए विकसित किया जाना चाहिए। कौशलों के विकास को क्रमबद्ध रूप में या इन्हें आपस में समन्वित कर प्राप्त किया जा सकता है। विद्यालयीय गतिविधियों में विविध प्रकार के कौशलों के विकास की पाठ योजनाएं बनाकर ये कार्य किये जा सकते है।

सुनने से संबंधित कौशल का विकास जन्म से ही आरंभ हो जाता है, जो जीवन पर्यंत निर्बाध गति से चलता रहता है। बालक सुनकर ही अधिकांश ज्ञान अर्जित करते हैं। सुनकर ज्ञान को अर्जित करना आसान एवं तीव्र गति से होता है। सुनना औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों तरह से होता है। सुनने के कौशल में एकाग्रचित्त होना एवं धैर्य रखना दो चीजें अत्यंत महत्वपूर्ण है। सुनना ज्ञान प्राप्त करने का सबसे सहज एवं महत्वपूर्ण तरीका है। सुनना एक मानसिक क्रिया है, जिसमें वक्ता के विचार भाव श्रोता तक संप्रेषित होते है।

''श्रवण में किसी कथन को ध्यान पूर्वक सुनने, सुनीं हुई बात पर चिंतन– मनन करने, अपना मंतव्य स्थिर करने और तद्नुसार आचरण या व्यवहार करने जैसी जटिल प्रक्रियाएँ हैं।''

–'मातृभाषा हिंदी शिक्षण',एन.सी.ई.आर.टी.

सुनने का मतलब है संदेशों/विचारों को सुनकर सही रूप में समझना। संदेश/वक्तव्य को स्मृति में लाकर विचार करना, संदेशों को सुनकर उनका विश्लेषण करना, वक्तव्य पर आधारित प्रश्नों का उत्तर देना। सुनने की प्रक्रिया में मस्तिष्क अत्यधिक सक्रिय रहता है। सुनने, सोचने, विचार करने एवं चिंतन करने की प्रक्रिया स्वतःस्फूर्त ढंग से एक साथ चलती रहती है। इसमें हम विचारों– वक्तव्यों को पसंद–नापसंद, स्वीकार–अस्वीकार, आश्चर्य, शंका आदि के रूप में लेते हैं। सुनने का कौशल समझने के साथ ही पूर्ण होता है। श्रवण कौशल के लिए आवश्यक है– धैर्य और एकाग्रचित्त होकर सुनना।

बोलने से आशय है, अपने मनोभावों विचारों को अभिव्यक्त करना एवं दूसरों तक संप्रेषित करना। बोलना स्मृति से जुड़ा मानसिक प्रक्रियाँ है। बोलने के कौशल के अंतर्गत क्या कहना है? और कैसे कहना है? सीखना आवश्यक है। बोलने का अर्थ है अपने मनोभावों एवं विचारों को स्पष्ट, प्रभावपूर्ण, सुसंगत, क्रमबद्ध रूप में उचित

शब्द, गति, अनुतान, बलाघात, ठहराव, संगम तथा विशिष्ट शैली के साथ कहना। बोलने के कौशल में हाव–भाव, मुख–मुद्रा दृष्टि–संपर्क इत्यादि को भी सम्मिलित किया जाता है।

सुनने और बोलने के कौशल के विकास के दृष्टिकोण से बच्चों को सुनने तथा बोलने के अवसर को उपलब्ध कराना सर्वाधिक उपयुक्त प्रविधि है। इसके लिए कक्षा में शिक्षक द्वारा कहानी सुनाना सर्वाधिक मनोरंजक एवं रुचिपूर्ण प्रभावी गतिविधि है। इसके माध्यम से एकाग्रचित्त होकर धैर्य के साथ सुनना सिखाया जा सकता है। कहानी सुनने के माध्यम से कल्पनाशक्ति, तार्किकता, अमूर्त– चिंतन, विश्लेषण की क्षमता आदि का विकास किया जा सकता है। कहानी को पुनः स्मरण कर छात्रों को भी सुनाने को कहा जा सकता है। कहानी पर आधारित वार्तालाप, प्रश्नोत्तर, विचार–विमर्श, वाद–विवाद आदि भी कराया जा सकता है, जिससे छात्र नवीन ढंग से चिंतन, कल्पना, विचार आदि कर सकेंगे। छात्रों के बीच अंत्याक्षरी, पहेलियां, तुकबंदी, प्रश्नोत्तर, सचित्र–कहानियां, चित्र– वर्णन, बालगीत आदि आयोजित किया जा सकता है। जिसके माध्यम से सुनने तथा बोलने के कौशलों में छात्रों को निपुण बनाया जा सकता है। अन्य पाठ्य– सहगामी क्रियाएं जैसे रोल–प्ले, आशु–भाषण, आशु–कविता, लोकगीत आदि का भी आयोजन किया जा सकता है। रेडियो, टी.वी., फिल्में, डॉक्यूमेंट्री आदि को भी सुनने के कौशल को विकसित करने हेतु प्रयोग में लाया जा सकता है। औपचारिक रूप से पढ़ने और लिखने की शुरुआत विद्यालय में ही आरंभ होती है किंतु सुनना– बोलना इससे पहले ही सीख लिया गया होता है। पढ़ने के कौशल से आशय है लिखित सामग्री को समझ/अवबोध के साथ उच्चारित/पठन करना। पढ़ने के लिए बहुत सी पाठ्य सामग्रियां हो सकती है जैसे– पुस्तकें, पत्रिकाएं, समाचारपत्र, वेबपेज इत्यादि।

''पठन एक बहुआयामी जटिल प्रक्रियाँ है, जिसमें लिपि, प्रतीकों की पहचान तथा उनके उच्चारण की कुशलता के साथ–साथ सामग्री का अर्थ ग्रहण एवं उसके पूर्ण आशय समझ लेने की योग्यता का समावेश है। इसमें ग्रहण किए गए अर्थ की व्याख्या, मत, निर्धारण तथा अर्जित ज्ञान का प्रयोग शामिल है।''

– 'मातृभाषा हिंदी शिक्षण', एन. सी. ई. आर. टी.

पढ़ने के लिए केवल लिपि का ज्ञान पर्याप्त नहीं है, बल्कि इसके साथ समझ जरूरी है। पढ़ने के लिए भाषा की व्यवस्था स्वनिम– व्यवस्था– (अनुतान, बलाघात, ठहराव, गति) रूप, वाक्य, अनुनासिक, स्वर, व्याकरण आदि का ज्ञान भी जरूरी है। कुशलतापूर्वक पढ़ने का मतलब है, अर्थ और समझ के साथ बिना अक्षरों और मात्राओं पर बल दिये पढ़ना। श्रेष्ठ पढ़ना वह है जहां हम अक्षरों, मात्राओं, शब्दों को नहीं बल्कि वाक्यों और अनुच्छेदों को पढ़ना आरंभ कर देते हैं। पढ़ने की प्रक्रिया में पुस्तकों में लिखित सामग्री से छात्र संवाद की स्थिति में होते हैं। पढ़ने की प्रक्रिया में हम अनुमान के आधार पर धारा प्रवाह ढंग से आगे बढ़ते जाते हैं। पढ़ना आंखों से अधिक मस्तिष्क द्वारा होने लगता है। कविता वाचन में पाठ को उसके ध्वनि गुणों के आधार पर पढ़ा जाना चाहिए। जिसमें एक विशेष शैली, लय, स्वरों का उच्चावचन, बलाघात, अनुतान, संगम, ठहराव, गति आदि के साथ पढ़ा जाता है। पढ़ने की प्रक्रिया में अर्थ, आशय एवं निहितार्थ निकालना भी आता है। पठित सामग्री के प्रति आलोचनात्मक चिंतन, रचनात्मक मनोस्थिति के साथ अवबोध को प्राप्त करना पढ़ना है। इसके लिए आवश्यक है, पठित सामग्रियों को संदर्भों एवं अनुभवों के साथ जोड़ते हुए पाठक के नजदीक लाया जाए, इस भूमिका का निर्वहन शिक्षक को करना पड़ता है। इसके लिए वह अब तमाम अभ्यास, गतिविधियां व कार्य–योजना बनाता है। आरंभ में बालक सस्वर पठन/वाचन करते हैं, फिर धीरे–धीरे मौन वाचन की क्षमता प्राप्त कर लेते हैं। सस्वर वाचन में आँख, कान, मस्तिष्क और उच्चारण अंग (स्वर यंत्र तथा जिह्वा) क्रियाशील रहते हैं। सस्वर वाचन ही मौन वाचन का आधार तैयार करता है। मौन वाचन में समझने और पढ़ने की गति तीव्र होती है, मस्तिष्क की क्रियाशीलता, कल्पना, रचनात्मक चिंतन भी उच्च स्तरीय रहता है। थकान भी कम होता है। एकाग्रता एवं समझने का स्तर उच्च रहता है। जब मौन वाचन गहनतापूर्वक समझ या विश्लेषण के उद्देश्य से होता है, तब पढ़ने की गति मंद रहती है। इसमें गहन अनुशीलन के साथ पाठ का विश्लेषण एवं आलोचनात्मक व्याख्या पर ध्यान दिया जाता है। इसमें तेजी से पढ़ने के वजाय गहराई से समझने एवं भाव विश्लेषण पर बल रहता है, जैसे– फ्रायड के मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत को पढ़ना, बुद्धि के सिद्धांतों को पढ़ना इत्यादि। मौन वाचन जब सरसरी तौर पर सतही अध्ययन हेतु किया जाता है, तब इसमें पठन गति पर विशेष

बल दिया जाता है, जैसे समाचार पत्र का वाचन, नेट सर्फिंग इत्यादि। इसका उद्देश्य सिर्फ सूचनाओं को कम से कम समय में प्राप्त करना होता है।

पठन कौशल के अंतर्गत शुद्ध उच्चारण, संदर्भानुसार या प्रसंगानुसार वाचन की शैली, गति, बलाघात, अनुतान, ठहराव, संगम, लय, तुकबंदी, आदि का प्रयोग करते हुए धाराप्रवाह वाचन आता है। पढ़ते हुए अर्थ को समझना, सूचनाओं को ज्ञान में तब्दील करना और सही प्रत्युत्तर के लिए तैयार होना भी पठन कौशल के अन्तर्गत आता है अर्थात पठित विषय सामग्री का अर्थ ग्रहण करते हुए स्वयं के तथा विविध प्रकार के संदर्भों से उसे जोड़ना भी है। छात्रों में पठन कौशल के विकास के लिए शिक्षक वातावरण का निर्माण करता है, इसके लिए लर्निंग कार्नर, पुस्तकालय उपयोग, रोल–प्ले, पत्र–पत्रिकाओं, समाचार पत्रों का वाचन, सांस्कृतिक आयोजनों के तहत कविता पाठ आदि का आयोजन किया जाता है।

भाषाई कौशलों में लिखने का कौशल अत्यधिक संश्लिष्ट तथा अपेक्षाकृत बाद में सिखाया जाता है। लिखना अपने मनोभावों को लिखित रूप में अभिव्यक्त करना है। यह एक प्रकार की संवादात्मक प्रक्रियाँ है, जिसमें पाठक के लिए कुछ संदेशों को लिपि, चिन्हों, वर्तनी, वाक्य– विन्यास के रूप में इनकोड किया गया होता है। लिखित सामग्री स्थायी रूप से संरक्षित हो जाती है। जिसे बार–बार पढ़ा जा सकता है। लिखने के कौशल के अंतर्गत लिखावट की गुणवत्ता– स्पष्टता, वर्तनी की शुद्धता के साथ विचारात्मक स्पष्टता भी आता है। लिखने में अक्षरों का आकार एवं आकृति, अक्षरों के बीच स्थान, शब्दों के बीच स्थान, अनुच्छेदों का अंतर, हाशिया, विरामादि चिह्नों का प्रयोग आदि पर ध्यान दिया जाता है। औपचारिक लेखन में एक विशेष प्रारूप को भी प्रयोग में लाया जाता है।

छात्रों में लिखने के कौशल के विकास हेतु उन्हें लिखने का पर्याप्त अवसर मिले शिक्षक इसके लिए वातावरण तैयार कर अनुश्रवण की कार्य– नीतियां बनाता है। बच्चों को लेखन हेतु प्रोत्साहित किया जाय व्यापक एवं सतत संकल्पनात्मक मूल्यांकन करते हुए उनके लेखन कौशल को परिमार्जित करना चाहिए। व्यक्तिगत एवं सामूहिक लेखन के अभ्यास हेतु पाठ योजना एवं कालांश का निर्धारण करने के साथ प्राथमिक स्तर पर कक्षा–कक्ष में लिखने की पट्टी का निर्माण करना चाहिए। शब्दावली के विकास हेतु समानार्थी शब्द, पर्यायवाची शब्द, विलोम शब्द, शब्द–विपर्यय आदि का अभ्यास कराया जाना चाहिए। गृह– कार्य देकर सृजनात्मक लेखन की ओर छात्रों को आगे बढ़ाना चाहिए। शिक्षक को चारों भाषाई कौशलों के विकास करने का समन्वित प्रयास करना होगा, क्योंकि यह चारों कौशल अंतर्संबंधित है। जीवन की घटनाओं से जोड़ते हुए वास्तविक परिस्थितियों में इन कौशलों को प्रयोग करने की क्षमता छात्रों में विकसित करनी चाहिए। भाषा शिक्षण को जीवन के विविध पक्षों, घटनाओं, क्रियाओं से संबद्ध/संदर्भित करते हुए शिक्षण अधिगम में प्रयोग करना तथा छात्रों के लिए इनसे संबंधित पाठ योजनाओं का निर्माण करना चाहिए। पाठ्य–सहगामी गतिविधियों के आयोजन एवं क्रियान्वयन में भाषाई कौशल के विकास का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। भाषाई कौशल के विकास हेतु असरदार वातावरण उपलब्ध कराना शिक्षक एवं विद्यालय का कार्य है तथा परिवार की भी भूमिका महत्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. भाषा विकास की प्रमुख प्रविधियाँ बताइए।

.....

.....

2. भाषा के प्रमुख कौशलों का नाम लिखिए।

.....

.....

3. भाषायी कौशलों के विकास का सामान्य क्रम बताइए।

.....

.....

6.6 प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा ई. सी. सी. ई. (ECCE) में भाषा

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ई.सी.सी.ई.) में शिक्षा का पाठ्यक्रम लचीला, बहुआयामी, बहु–स्तरीय, खेल आधारित, गतिविधि आधारित, खोज आधारित और आनंददायक ढंग से मातृभाषा में नियोजित किया जाता है। इस स्तर पर भाषा के विकास पर अत्यधिक ध्यान दिया जाता है, जिसके तहत इनडोर गेम, आउटडोर गेम, पहेलियां, तार्किक सोच, समस्या सुलझाने की कला, शिल्प, नाटक, कहानी, कविता, समूह कार्य, अंत्याक्षरी आदि पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। यहाँ शिक्षण–अधिगम का समग्र उद्देश्य बच्चों का शारीरिक विकास, संज्ञानात्मक विकास, मनो–गतिक विकास, संवेगात्मक विकास, सामाजिक विकास, सांस्कृतिक विकास, संवाद की क्षमता का विकास व नैतिक मूल्यों का विकास करते हुए प्रारंभिक भाषा साक्षरता एवं संख्यात्मक ज्ञान के विकास में बच्चों को और अधिक सक्षम बनाना है।

एन.सी.ई.आर.टी. ने 8 वर्ष तक के बच्चों के लिए दो भागों में उनकी शिक्षा के लिए एक पाठ्यक्रम एवं शैक्षणिक ढांचा तैयार किया है, जो 0 से 3 और 3 से 8 वर्ष के उप ढांचे में विकसित की जाएगी। जिसके लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 2020 भाषा के संबंध में निर्देशित करती है, कि उन प्रथाओं को जो भारत में कई शताब्दियों पूर्व से बाल्यावस्था की शिक्षा के विकास में उपयोग की जाती रही है और वह स्थानीय संदर्भों में निर्मित एवं विकसित हुई हैं जिनमें कहानियां, कविताएं, गेय कहानियां, गीत, खेल व कला को ई.सी.सी.ई. की शिक्षा प्रक्रिया में पाठ्यचर्या की प्रमुख कार्य– नीति में सम्मिलित किया जाएगा। इसके प्रयोग के लिए शिक्षक एवं माता–पिता सभी को तैयार एवं प्रेरित किया जाएगा, साथ ही नियोजन में भी इसे महत्व दिया जाएगा। आंगनबाड़ी एवं विद्यालय को भाषा सीखने के समृद्ध वातावरण में बदला जाएगा। 5 वर्ष की आयु से पूर्व हर बच्चे को एक प्रारंभिक कक्षा या 'बाल वाटिका' में एक कुशल शिक्षक द्वारा भाषाई रूप से कुशल एवं समृद्ध बनाया जाएगा। यहाँ खेल आधारित शिक्षा के माध्यम से भाषा में प्रारंभिक साक्षरता एवं भाषा की क्षमता विकसित करने के लिए वातावरण (लिखने की पट्टी, लर्निंग–कार्नर, पुस्तकालय तथा संबंधित मल्टीमीडिया के उपयोग की क्षमता) विकसित की जाएगी।

6.7 पूर्व प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण

प्रत्येक बालक अपनी मातृभाषा या प्रथम भाषा को स्वाभाविक रूप से बिना किसी विशेष प्रयास किए सीख जाता है। समस्त मनुष्यों में भाषा सीखने की जन्मजात प्रवृत्ति या क्षमता होती है। इसका किसी विशेष अनुवांशिकता से कोई संबंध नहीं होता है। जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होता है, मातृभाषा के साथ–साथ अन्य भाषाओं को भी अपने परिवेश या वातावरण से औपचारिक या अनौपचारिक रूप से सीखता है। बालक का परिवेश उसे भाषाओं के साथ जितना अधिक अंतर्क्रिया का अवसर प्रदान करता है, जितना सघन भाषाई अनुभव प्रदान करता है व जितना अधिक भाषाई प्रक्रिया में संलग्न करता है, उतना ही अधिक भाषायी कुशलता वह प्राप्त करता है। भारत एक बहुभाषिक देश है, जहाँ बहुत सी भाषाएं बोली जाती है, ऐसे में एक ही कक्षा में कई भाषाएँ बोलने वाले अलग–अलग छात्र मिलेंगे। सभी छात्र अपनी मातृभाषा जानते हैं और विद्यालय में आकर विद्यालय की या राज्य की भाषा सीखते हैं। वे राज्य की भाषा या दूसरी भाषा के रूप में अंग्रेजी भी सीखते हैं। एक शिक्षक के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण एवं विचारणीय है कि वह समझे कि दूसरी भाषा कैसे सीखी जाती है? और भाषा सीखने में बालक के विशिष्ट संदर्भ और कक्षागत संदर्भ या परिस्थितियां भाषा अधिगम को किस प्रकार प्रभावित करती

हैं? शिक्षा में भाषा की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं सर्वप्रथम है। ऐसे में हमें भाषा की प्रकृति, रचना एवं व्याकरण व जीवन के अन्य पक्षों के साथ इसके समन्वय तथा भाषा सीखने की आनुभविक मान्यताओं को जानना होगा, ताकि हम विद्यार्थी के भाषा सीखने के अवसर को और अधिक अनुकूल बनाकर इसे संवर्धित एवं पोषित कर सके।

बच्चे विद्यालय में प्रवेश करते समय अपनी मातृभाषा या प्रथम भाषा (L-1) सीखे रहते हैं। वे अपनी आयु, संज्ञानात्मक स्तर तथा अनुभवजन्य संदर्भ में विभिन्न विषयों पर सार्थक बातचीत कर सकते हैं। बच्चे 3 वर्ष की उम्र तक भाषा की मूल संरचना से परिचित हो चुके होते हैं और सार्थक संवाद कायम कर सकते हैं। यह भाषा शिक्षण शास्त्रियों के लिए भी एक अबूझ पहेली है। इस संबंध में नामचोमस्की ने कहा है– ''एक बच्चा अंतर्निहित भाषाई क्षमता के साथ जन्म लेता है।'' भाषा शिक्षकों को यह मालूम होना चाहिए कि बच्चों की अंतर्निहित क्षमताओं, रूचियों और ज्ञान का प्रयोग कर, वे मातृभाषा के साथ–साथ अन्य दूसरी भाषाओं के शिक्षण को कैसे आगे बढ़ाएंगे? बालक विभिन्न प्रकार की ध्वनियों से शब्द बनाना और विभिन्न शब्दों से वाक्य बनाना जानते हैं, बस हमें पर्याप्त अवसर एवं माहौल देकर इसमें परिष्कार एवं परिमार्जन करना है। अवसर एवं प्रयोग से रुचियाँ विकसित होती हैं तथा रुचियां हमारे व्यक्तित्व को एक स्थाई स्वरूप देने का कार्य करती हैं। बच्चे अनुभव द्वारा सुनकर अपना एक कामचलाऊ व्याकरण विकसित कर चुके होते हैं। हम समझें कि भाषा के व्याकरण से अधिक महत्वपूर्ण उसकी अर्थपरकता है। वायगोतस्की ने कहा है– ''भाषा का केंद्रीय तत्व अर्थ है।'' बच्चों के ज्ञान को परिमार्जित व परिष्कृत करना विद्यालय एवं शिक्षक का कार्य है। छात्रों के सीमित अनुभवों को व्यापक बनाना एवं इसके लिए उचित कक्षायी माहौल बनाना अध्यापक का सर्वप्रमुख कार्य है। इसके लिए अन्य भाषाओं को सिखाने में मातृभाषा या प्रथम भाषा को आधार के रूप में प्रयोग करना होगा।

छात्रों की मातृभाषा एवं पूर्व ज्ञान का उपयोग करना कक्षा के वातावरण को शिक्षण– अधिगम के दृष्टिकोण से समृद्ध करता है। समूह अधिगम/सामाजिक अधिगम विद्यालय के समस्त छात्रों को आपस में वार्तालाप एवं अन्तर्क्रिया का अवसर प्रदान करता है, साथ ही भाषा शिक्षण के समृद्ध वातावरण का सृजन करता है। यहाँ कक्षा के वातावरण को बहुभाषिक बनाने की भी आवश्यकता है। वायगोतस्की के अनुसार इससे अधिगम अनुभवों की आवृत्ति बढ़ जाती है, जिससे छात्र का अधिगम अधिक व्यापक एवं गुणवत्तापूर्ण होता है। छात्र सामाजिक अंतर क्रिया के माध्यम से अधिक सीखते हैं। कक्षा में बहुभाषिक एवं बहु–सांस्कृतिक भाषा– शिक्षण अधिगम की कार्यनीति बच्चों के बहुभाषिक होने के अवसर को बढ़ाती है, जो आगे विभिन्न विषयों के ज्ञान, समझ एवं कौशल प्राप्त करने के लिए आधार एवं अतिरिक्त संसाधन का कार्य करती है। जितने स्वाभाविक और प्राकृतिक रूप से हम मातृभाषा सीखते हैं उतनी अन्य भाषाओं के सीखने की प्रक्रिया नहीं है। मातृभाषा सीखने का माहौल जन्म के समय से चतुर्दिक विद्यमान रहता है। इसमें प्रचुर अन्तर्क्रिया के जैसे अनौपचारिक अवसर प्राप्त होते हैं वैसे अन्य दूसरी भाषा या अंग्रेजी भाषा सीखने के लिए परिवेश स्वाभाविक रूप से उपलब्ध नहीं होते है। इसीलिये दूसरी या तीसरी भाषा के साथ छात्रों का अत्यंत अल्प संपर्क एवं सामीप रहता है।

विभिन्न अनुसंधानों से यह स्पष्ट है कि दो से आठ वर्ष की आयु के बच्चे यानी पूर्व प्राथमिक एवं प्राथमिक स्तर की कक्षा एक एवं दो के छात्र भाषा को तेजी से सीखते हैं। बहु–भाषिकता से इस उम्र के विद्यार्थियों को अत्यधिक संज्ञानात्मक लाभ होता है।

प्रारंभिक शिक्षा वास्तव में भाषा की शिक्षा होती है और बालक का विकास पूरी तरह बालक के संदर्भ, परिवेश और भाषा पर निर्भर करता है। कार्ल सी. गैरिसन के अनुसार–''स्कूल जाने से पूर्व बालकों में भाषा ज्ञान का विकास उनके बौद्धिक विकास की सबसे अच्छी कसौटी है।'' वायगोत्स्की के अनुसार– ''बच्चे ज्ञान का निर्माण करते हैं किंतु इनके अनुसार संज्ञानात्मक विकास एकाकी नहीं हो सकता। यह भाषा विकास, सामाजिक विकास, यहाँ तक कि शारीरीक विकास के साथ–साथ सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ में होता है। भाषा संज्ञानात्मक विकास का महत्वपूर्ण औजार है। आरंभिक काल में ही बच्चा अपने कार्यों के नियोजन एवं समस्या समाधान में भाषा को औजार की तरह प्रयोग करने लगता है। भाषा समाज द्वारा दिया गया प्रमुख सांस्कृतिक उपकरण है, जो कि बालक के विकास में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। व्यक्ति का उसके सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक व राजनीतिक संदर्भ में अध्ययन हमें उसकी समग्र जानकारी प्रदान करता है। अधिगम और विकास

की प्रक्रिया में बालक की सक्रिय भागीदारी होती है, जिसमें भाषा का संज्ञान पर सीधा प्रभाव होता है। अधिगम और विकास अन्तरसम्बन्धित प्रक्रियाएं हैं, जो छात्र के जीवन के पहले दिन से प्रारंभ हो जाती है।'' जर्मन विद्वान मैक्समूलर के अनुसार– ''भाषा और कुछ नहीं केवल मानव के मन की चतुर बुद्धि द्वारा आविष्कृत एक ऐसा उपाय है, जिसकी मदद से हम अपने विचार सरलता और तत्परता से दूसरों पर प्रकट कर सकते हैं और चाहते हैं कि इसकी व्याख्या प्रकृति के उपज के रूप में नहीं, बल्कि मानव कृत पदार्थ के रूप में करना उचित है।''

भाषा शिक्षक को चाहिए कि भाषा के प्रति बच्चे की जागरूकता और उसके पूर्वज्ञान का उपयोग करते हुए उसकी मातृभाषा या प्रथम भाषा का विकास करें। प्रथम भाषा का उपयोग एक आधार के रूप में अन्य भाषाओं के सीखने मे किया जाना चाहिए। बच्चे मातृभाषा में कठिन किंतु सार्थक अवधारणाओं को अधिक आसानी व तेजी से सीखते हैं। पूर्व–प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थी ध्वनि को शब्दों और वाक्यों में परिवर्तित कर सार्थक वाक्य बनाना जानते हैं। विद्यालय का कार्य है– बच्चे जो पहले से जानते हैं, उसे व्यवस्थित करते हुए बेहतर बनाएँ। हम जानते हैं कि बच्चे बेहतर वातावरण में अवसर पाने पर बेहतर करते हैं। मातृभाषा के माध्यम से दूसरी और तीसरी भाषाओं को सीखा जाता है। भाषा के माध्यम से सिर्फ अन्य भाषाएँ ही नहीं सीखी जातीं, बल्कि अन्य विषयों के अधिगम के साथ व्यक्तित्व एवं बुद्धि का भी विकास होता है। भाषा शिक्षण में चारों कौशलों सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना को पूर्व प्राथमिक स्तर पर ही शामिल कर लिया गया है। साथ ही सोचना एवं समझना भी भाषा के संदर्भ में भाषा कौशल के अंतर्गत आता है। ये सभी कौशल परस्पर संबंधित है, किंतु इनके विकास का एक उपयुक्त क्रम है और उचित अभ्यास एवं वातावरण द्वारा इनका समुचित विकास किया जा सकता है। भाषा कौशल का विकास अनौपचारिक एवं औपचारिक दोनों प्रकार से होता है, किंतु विद्यालय की जिम्मेदारी स्पष्ट एवं गुरुतर है। विद्यालय में भाषा शिक्षण में भाषा के शिक्षक द्वारा व्याकरण एवं वर्तनी की त्रुटियों, सुलेख तथा श्रुति लेख एवं वाचन पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। भाषा सीखने का सर्वोत्तम तरीका है, बच्चों को भाषा के प्रयोग का अधिक से अधिक अवसर प्रदान करना। अभ्यास कार्य, प्रोजेक्ट कार्य, कविता, कहानी, श्रवण, वाचन, लेखन, तर्क, कल्पना, चिंतन इत्यादि के अभ्यास कार्य का नियमित कालांश रखा जाना चाहिए। साथ ही भाषा के सभी कौशलों को एक साथ समवेत रूप में सिखाया जाना चाहिए। छोटी कक्षाओं में लिखने की पट्टी का निर्माण भाषा प्रयोग के अवसर को बढ़ा सकती है। 'बाल वाटिका' में विविध प्रकार की चित्रात्मक कहानियाँ, कविताएँ, कार्टून, कामिक्स इत्यादि को रखा जा सकता है। वीडियो, मल्टीमीडिया, छोटी–छोटी फिल्में एवं डॉक्यूमेंट्री इत्यादि दिखाने का प्रबंध कक्षाओं में किया जा सकता है। अन्य विषयों के शिक्षण के समय भी भाषाई कौशलों के विकास का ध्यान रखा जाना चाहिए। सार्थक संवाद के कौशल के विकास हेतु प्रासंगिक प्रकरणों के ऊपर वार्तालाप का आयोजन किया जा सकता है। भाषा के माध्यम से चिंतन, मनन, कल्पना, स्मृति और रुचि से संबंधित संज्ञानात्मक, भावात्मक एवं कार्यात्मक पक्षों का विकास किया जाना चाहिए। पाठ योजना बनाकर शिक्षण कार्य का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली और सकारात्मक बनाया जा सकता है।

6.8 प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण

बच्चों के मस्तिष्क का 85% विकास 6 वर्ष की अवस्था से पूर्व हो जाता है, इस प्रकार शारीरिक एवं मानसिक विकास के दृष्टिकोण से यह अवस्था अत्यधिक महत्वपूर्ण है। बच्चों द्वारा सचेतन रूप से भाषा सीखने का कार्य प्राथमिक स्तर की शिक्षा में शुरू हो जाता है। बच्चों का असंरचित भाषा ज्ञान जिन्हें वे अनौपचारिक तौर पर घर, परिवार एवं साथी समूह से प्राप्त किए रहते हैं, औपचारिक भाषा शिक्षण में इन्हें परिष्कृत किया जाता है और शिक्षण–अधिगम में कच्ची सामग्री के तौर पर प्रयोग किया जाता है। बच्चे प्राथमिक स्तर पर अपनी भाषा की कक्षा में भाषा को व्यवस्थित एवं संरचित रूप में सीखते हैं। जब विद्यालय में शिक्षण– अधिगम का नियोजन किया जाता है, शिक्षक उन्हें बहु–अनुभव एवं बहु–अभ्यास का अवसर प्रदान करता है। साथ ही वह उनका सतत रूप से संकल्पनात्मक मूल्यांकन का भी कार्य करता है, जिससे कक्षा में सामूहिक एवं वैयक्तिक कठिनाइयों की पहचान करते हुए छात्रों के पूर्ण विकास हेतु उपयुक्त उपचारात्मक शिक्षण प्रदान कर सके या शिक्षण– अधिगम की रणनीति में उपयुक्त परिवर्तन कर सके। प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षक के लिए महत्वपूर्ण है कि वह इस स्तर पर शिक्षण–अधिगम के सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्यों को ध्यान में रखकर अपनी पाठ योजना

बनाएँ तथा अन्य सहायक गतिविधियों का आयोजन करें। प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण में निम्न बातों का ध्यान दिया जाना चाहिए–

- सुनकर समझना।
- औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनों स्थितियों में ठीक ढंग से बोलना।
- समझ कर पढ़ना।
- शुद्ध, स्पष्ट एवं सुंदर लिखना।
- अपने विचार, समझ व कल्पना को सृजनात्मक रूप से लिखना।
- लिखने और बोलने में व्याकरण सम्मत भाषा का प्रयोग करना।

शिक्षक विविध प्रकार के शैक्षिक पाठ नियोजनों द्वारा छात्रों में भाषा शिक्षण के मुख्य कौशलों– सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना तथा सोच व समझ का विकास करता है। सृजनात्मकता एवं रुचियों का विकास करना भी पाठ्यचर्या के अंतर्गत शामिल है। इसके लिए भी शिक्षक विविध प्रकार की शैक्षणिक गतिविधियों का आयोजन करता है। छात्र बेहतर ढंग से समझ के साथ संवाद/वार्तालाप एवं जिज्ञासा के प्रश्नों को उठाना सीखें, यह भी भाषा शिक्षण के मुख्य उद्देश्यों में शामिल रहता है।

पाठ्यक्रम में सीखने के प्रतिफल, अधिगम आकलन और शैक्षणिक रणनीतियों के बीच स्पष्ट संबंध को महत्व दिया जाता है तथा शिक्षक विविध पाठ बिंदुओं को रचनात्मक तरीके से सुव्यवस्थित कर पर्याप्त महत्व प्रदान करने के साथ अधिगम प्रतिफलों को प्राप्त करने का प्रयास करता है।

बच्चों को भाषा सिखाने के लिए यह महत्वपूर्ण है कि उन्हें भाषा के संपर्क में आने का अधिक से अधिक अवसर दिया जाए, इसी निमित्त राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में बाल वाटिका एवं बाल भवन के निर्माण की संकल्पना रखी गयी है। बच्चों में जिज्ञासा की प्रवृत्ति स्वाभाविक रूप से पाई जाती है और वे एक भाषा को अच्छी तरह से जानते व समझते हैं। बच्चे अपने आसपास लिखे शब्दों, पोस्टर और होर्डिंग, कागज, किताब, अखबार, वस्तुओं इत्यादि को अनुभूत करते हैं। बच्चों के अनुभवों से पता चलता है कि पढ़ना, लिखना, सोचना व समझना साथ–साथ चलने वाली प्रक्रिया है। इसमें कोई निश्चित क्रम आवश्यक नहीं है। बच्चों में एक साथ सुनने, बोलने, पढ़ने, लिखने, सोचने, समझने एवं अवलोकन करने की क्षमता विकसित होती है। शिक्षक को इस तथ्य से वाकिफ होकर अपने शैक्षणिक गतिविधियों में इन्हें स्थान देना चाहिए।

पढ़ने का महत्व समझने में निहित है। साक्षरता केवल अक्षर, शब्द एवं वाक्य ज्ञान तक सीमित नहीं होनी चाहिए, बल्कि सीखने के लिए आधार के रूप में देखी जानी चाहिए। जिसके अन्तर्गत विचार, चिंतन, कल्पना व जिज्ञासा जैसे संज्ञानात्मक पक्षों का विकास होना चाहिए। बच्चे पढ़ी जाने वाली सामग्री तथा लिखी जाने वाली सामग्री को अपने पूर्व–अनुभव से जोड़ते हुए सार्थक संदर्भ में अर्थ का निर्माण करते हैं, जिसे ज्ञान कहा जाता है। सीखने के अनौपचारिक तरीके भी बच्चों में भाषा ज्ञान तथा समझ का विस्तार करते हैं। विद्यालय में शिक्षक इन्हीं सीखी गई बातों को अपने शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्य से जोड़कर इसे एक औपचारिक स्वरूप या उचित संदर्भ के साथ एक दिशा प्रदान करता है।

बच्चों का सीखने के औपचारिक स्रोतों तक पहुँच सुनिश्चित करना विद्यालय एवं शिक्षक का कार्य है। बच्चों के लिए बाल– साहित्य, बच्चों के सीखने का एक समृद्ध स्रोत है। बच्चे सीखने के बाद विभिन्न तरीकों से अपने ज्ञान और समझ की सहज प्रतिक्रिया भी देते हैं। बच्चों के लिए कहानियाँ एवं कविताएँ समस्त भाषा कौशलों के विकास के लिए सर्वाधिक सशक्त उपकरण हैं। इसे बच्चों के संदर्भ के अनुसार उनकी क्षमताओं, रूचियों, अवस्थाओं व भाषा–क्षमता आदि का ध्यान रखते हुए चयनित करना चाहिए। भाषाई कौशलों के विकास के दृष्टिकोण से कहानी सुनाना एवं सुनना अत्यंत महत्वपूर्ण गतिविधि है। इससे बच्चे भाषा से केवल जुड़ते ही नहीं, बल्कि अपनी समझ एवं संदर्भ के अनुसार भाषा का सृजन भी करते हैं। कहानियों के माध्यम से बच्चों की कल्पना शक्ति का विकास होता है, जो भविष्य में विद्यार्थी की रचनात्मक क्षमता व व्यक्तित्व विकास के लिए

आधार का कार्य करता है। कहानी के माध्यम से विद्यार्थी भाषा की ध्वनियों से परिचित होते हैं। जब बच्चे कहानी के कुछ अंशों व वाक्यांशों को दुहराते हैं, तो उनके बोलने एवं समझने के कौशल का विकास होता है। सचित्र कहानियाँ, कामिक्स, कार्टून, सचित्र कविताएँ, गेय कहानियाँ तथा अध्यापक निर्मित स्थानीय परिवेश संदर्भित कहानियाँ, बच्चों को सार्थक एवं प्रभावशाली ढंग से भाषा सीखने समझने में सहायता करती है। बच्चों को भाषा कौशल सिखाने का लक्ष्य भाषा को सार्थक अधिगम (Meaningful learning) में लाना व बच्चों में स्थानीय परिवेश की समझ के साथ देश–दुनिया की समझ को विकसित करते हुए उनमें सामाजिक एवं वैयक्तिक गुणों का विकास करना व मानवीय मूल्यों जैसे सहानुभूति, समानुभूति, आत्मानुभूति तथा परानुभूति की भावना का विकास करना है, जिनका विकास बाल–साहित्य, कविता और नैतिक कहानियों के माध्यम से किया जा सकता है। बच्चों में आलोचनात्मक विश्लेषण क्षमता, रचनात्मकता, कल्पनात्मक जिज्ञासा एवं सार्थक प्रश्न पूछने/उठाने की क्षमता का भी विकास कहानी एवं कविता के माध्यम से इसी समय किया जाता है। बच्चों में निरीक्षण की क्षमता, संदर्भ के अनुकूल आकलन एवं सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास करना, भाषा– शिक्षण का लक्ष्य होना चाहिए।

शिक्षक, भाषा–शिक्षण के सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्यों को ध्यान में रखने के साथ–साथ इसका अन्य संज्ञानात्मक तथा संज्ञानेतर पक्षों के विकास में महत्व को देखते हुए इस प्रकार की शैक्षणिक/कक्षीय गतिविधियों का आयोजन करता है, जिससे बच्चों के व्यक्तित्व विकास में सहायता मिलती है। इसके लिए कहानी बनाने का प्रोजेक्ट छात्रों को समूह में बाँटकर दिया जा सकता है, जिसमें विद्यार्थी कहानी बनाने की प्रक्रिया में एक दूसरे से संपर्क स्थापित करते हैं व एक दूसरे को सहयोग देते हैं और अन्य छात्रों का सहयोग भी प्राप्त करते हैं। कहानी के प्रत्येक चरण के विकास में छात्र अपनी– अपनी समझ के अनुसार अपना योगदान देते व प्राप्त करते हैं। यहां शिक्षक की भूमिका केवल गतिविधि के नियोजन एवं अनुश्रवण करने तक रहती है। अध्यापक चित्रों की एक श्रृंखला प्रदान कर उससे संबंधित कविता या कहानी की रचना का कार्य भी व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से पाठ के विशिष्ट उद्देश्यों के अनुसार चयनित कर सकता है।

विद्यार्थियों में पठन क्षमता एवं पठन अभिरुचि के विकास के लिए प्रत्येक कक्षा में 'पढ़ने का कोना' (Learning corner) के निर्माण से भाषा सीखने का एक समृद्ध वातावरण बनाने में सहायता मिलती है। पढ़ने के कोने में बच्चों के स्तरानुसार, रूचिकर एवं परिवेश के अनुसार विभिन्न प्रकार की किताबें रखी जानी चाहिए और बच्चों के पठन एवं अभ्यास हेतु कालांश भी निर्धारित किए जाने चाहिए। जिससे बालक स्वतंत्र रूप से स्वरुचि के अनुसार स्व–अधिगम हेतु पुस्तकों का चयन कर उन्हें पढ़ें। इसे व्यक्तिगत व समूह कार्य के रूप में भी आयोजित किया जा सकता है। इसके आकलन हेतु कार्य– नीतियाँ भी बनाई जा सकती हैं।

शिक्षक को भाषा शिक्षण के उद्देश्य, उनके सीखने के चरणों व कक्षा में सीखने के प्रतिफलों को समझने की आवश्यकता है, ताकि कक्षा के प्रभावी शैक्षिक प्रबंधन के लिए पाठ योजना या कार्य–नीतियाँ बनाई जा सके, जिससे विद्यार्थी को उसके संदर्भ में भाषा कौशल की आवश्यकताओं के अनुसार पाठों की अनुक्रमणिका व पाठ योजना का निर्माण करने इत्यादि में अध्यापक को अपेक्षित सहायता मिल सके तथा इन्हीं आधारों पर शिक्षक अपनी कक्षा शिक्षण के लिए पाठ योजना का निर्माण कर सके। सभी के लिए सीखने के प्रतिफलों का कार्यान्वयन शिक्षण– अधिगम का अनिवार्य अंग है। सीखने के प्रतिफल भाषा– शिक्षण के कौशल एवं दक्षता के विकास से सीधे संबंधित होते हैं। प्रत्येक शिक्षक को इन्हें अपने कक्षा शिक्षण का अनिवार्य हिस्सा बनाना चाहिए। सीखने के प्रतिफल शिक्षण अधिगम के उद्देश्यों को योग्यता आधारित शिक्षण–अधिगम में बदल देते हैं।

बच्चों की सुनने, लिखने एवं पढ़ने संबंधी कौशल के विकास हेतु श्रुति लेख गतिविधि का प्रयोग किया जाना चाहिए। बच्चों में बोलने के कौशल के विकास के लिए छात्रों को कक्षा में औपचारिक ढंग से बोलने, कहानी कहने, रोल प्ले आदि का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। बच्चों में पठन क्षमता के विकास के लिए विविध गतिविधियों जैसे गद्यांश पाठ, कविता पाठ इत्यादि का कक्षा में आयोजन कर छात्रों को पढ़ने का अवसर प्रदान करना चाहिए। बच्चों में लिखने की क्षमता के विकास के लिए औपचारिक ढंग से लिखने का अवसर मिलना चाहिए, इससे लिखने और पढ़ने दोनों प्रकार की क्षमताओं के विकास में सहायता मिलती है। पढ़ना एक संवादात्मक एवं रचनात्मक प्रक्रिया है, जो पाठक एवं पाठ के बीच चलती रहती है, जिसके परिणाम स्वरूप पाठ

का अर्थ ग्रहण किया जाता है। पाठ में अक्षर, शब्द, वाक्य एवं अनुच्छेद के माध्यम से घटनाओं तथा तथ्यों को इनकोड किया गया होता है, जिसे पढ़ने की प्रक्रिया में डिकोड कर अर्थ निकाला जाता है, जो पाठक की योग्यता,समझ एवं आनुभविक संदर्भों पर निर्भर करता है। जैसे–जैसे छात्र का अनुभव समृद्ध एवं व्यापक होता जाता है, पाठ का अर्थ भी व्यापक स्वरूप ग्रहण करता जाता है। भाषा कौशलों का अधिगमन एक विकासमान एवं सामाजिक के साथ–साथ वैयक्तिक प्रक्रिया है। इसलिए प्रत्येक विद्यार्थी का पाठ के साथ अंतर्क्रिया अलग–अलग होती है और प्रत्येक विद्यार्थी अपने पूर्व अनुभव एवं समझ के आधार पर अर्थ ग्रहण करता है। वायगोत्सकी के अनुसार–''विभिन्न बालकों के अलग–अलग विकास स्तर पर अधिगम की व्यवस्था समरूप तो हो सकती है किंतु एकरूप नहीं। क्योंकि सभी बच्चों का सामाजिक अनुभव अलग–अलग होता है। सामाजिक अंतर्क्रिया ही बालक की सोच और व्यवहार में निरंतर बदलाव लाता है, जो एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति में भिन्न हो सकती है।'' इनके अनुसार बालक का संज्ञानात्मक विकास अन्य व्यक्तियों से अंतर्संबंधों पर निर्भर करता है।

बच्चे लिखने की क्षमता द्वारा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं, संरक्षित करते हैं तथा अन्य व्यक्तियों तक अपने विचारों को पहुंचाते हैं। लिखने का उद्देश्य विचारों को अभिव्यक्त करना है तथा दूसरे व्यक्ति तक संदेश पहुंचाना है। लिखित भाषा बोली जाने वाली भाषा से संबंधित है, परंतु अलग है। इसके लिए सही वर्तनी, विराम चिह्न, उपयुक्त व्याकरण और शब्दों का चयन सार्थक ढंग से व सावधानीपूर्वक किया जाता है। लिखने के कौशल का विकास बालक के समस्त शैक्षिक उपलब्धि का आधार है। इसके लिए शिक्षक विविध प्रकार की शैक्षणिक गतिविधियों का आयोजन करता है तथा उन्हें लिखित अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान कर इसे समृद्ध बनाता है। लिखने की क्षमता व कौशल के विकास हेतु व्यापक व परिशुद्ध शब्दावली, वर्तनी की शुद्धता, श्रुति लेख, सुलेख एवं व्याकरण का ज्ञान आवश्यक है। इसके लिए कक्षा के भाषाई वातावरण को समृद्ध बनाया जाना चाहिए। सार्थक अभ्यास के माध्यम से लिखने के कौशल में आवश्यक निपुणता प्राप्त की जा सकती है।

6.9 भाषा समृद्ध वातावरण बनाना

भाषा सीखने के संदर्भ में कहा जा सकता है कि, इसे भाषा के रूप में सीखने के बजाय विभिन्न कार्यों में अनुप्रयोग का अवसर देकर सिखाया जाना चाहिए। भाषा शिक्षण जीवंत परिस्थितियों या जीवन की विविध गतिविधियों में इसे लर्निंग बाय डूइंग (Learning by doing) के जरिए सार्थक संदर्भों में सीखा जाए तो यह बेहतर परिणाम लाएगी। भाषा शिक्षण को आनंददायक तरीके से विविध प्रकार के प्रोजेक्ट बनाकर रचनात्मक तरीके से सिखाने के बारे में अध्यापक को विचार करते हुए इसके लिए पाठ योजना का निर्माण करना चाहिए।

''भाषा तब सीखी जाती है, जब वह भाषा के रूप में नहीं पढ़ाई जाती बल्कि सार्थक संदर्भों से जोड़कर उसे पढ़ाया जाता है।'' – राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा– 2005

जब छात्र कार्य करते हुए अपने कार्यानुभव के जरिए सीखता है, तो वह ज्यादा कुशल एवं आत्मविश्वास से परिपूर्ण होता है। साथ ही वह स्व–प्रेरित होकर स्व–अधिगम की ओर उन्मुख होता है, यहाँ पर वह सिर्फ भाषा ही नहीं सीखता है, बल्कि यह भी सीखता है कि सीखना कैसे होता है।

सीखना एक सामाजिक प्रक्रिया है और भाषा सीखने के संदर्भ में तो यह और अधिक प्रासंगिक है। भाषा सीखना संवाद के जरिए होता है, जिसमें शिक्षक–छात्र, छात्र–छात्र, छात्र एवं अन्य तथा स्वयं से संवाद स्थापित होता है। स्पष्ट है कि शिक्षक इसके लिए कार्य–नीति तैयार करें, पाठ योजना बनाएं, विविध प्रकार के भाषा कौशलों के विकास के लिए विविध गतिविधियों को आयोजित करें तथा शिक्षण–अधिगम के आयोजन में स्वयं एक सुगमकर्ता की भूमिका मे रहे, तो ही अच्छा है। शिक्षक का कार्य संकेत (स्कैफोल्डिंग) प्रदान करना है, वो भी केवल चिह्नित कठिनाई के बिंदुओं पर, बाकी तो छात्र को अधिगम के लिए स्वतंत्र छोड़ देना चाहिए। जिससे छात्र स्वयं अपने अनुभवों, संघर्षों व अभ्यासों द्वारा खुद के ज्ञान का सृजन कर सकें। भाषा सीखना केवल सचेतन रूप से ही नहीं होता है, बल्कि अचेतन रूप से भी घटित होता है। नए शब्दों की जानकारी होने पर बच्चे उसका प्रयोग अपने संवाद में एवं वाक्यों में अनायास ही शुरु कर देते हैं। इसलिए उनके शब्दकोश को समृद्ध बनाने के बारे में शिक्षक को औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों रूप से प्रयास करना चाहिए।

भाषा सीखने के लिए बच्चों की भाषा के प्रति रुचि एवं अवधान केंद्रित करने की आवश्यकता होती है, जिसके लिए बच्चों को भाषा के संपर्क में लाने के लिए विविध प्रकार की गतिविधियों के नियोजन करने पड़ते हैं। एक शिक्षक अपने संवाद को विभिन्न प्रकार से बालकों के संदर्भों से जोड़कर बच्चों के लिए एक अर्थपूर्ण संवाद कायम करता है। पुस्तकों की भाषा को भी वह बच्चों के संदर्भों से जोड़कर या उनके नजदीक लाकर वह बच्चों के लिए अर्थपरक बनाता है, जिससे बच्चे भाषा को अपने संदर्भ में सीखने में सक्षम बनते हैं, इस प्रकार बच्चों का आपसी संवाद क्षमता और उनकी संज्ञानात्मक प्रवीणता दोनों साथ–साथ विकसित होती है। बच्चों का परिवेश एवं परिस्थितियां विभिन्नता के साथ ही एक सामान्य कोर या परिक्षेत्र रखती हैं, साथी–समूह के अनुभवों का साथ मिलने पर इनके अधिगम दक्षताओं की सम्प्राप्ति तीव्र गति से होती है। विद्यालय इसके लिए एक समृद्ध वातावरण सृजित कर इसके लिए साथी–समूह–शिक्षण– अधिगम का अवसर प्रदान कर सकता है।

6.10 भाषा सिखाने के लिए कार्य–नीतियाँ

भाषा सिखाने के लिए निम्नलिखित कार्यनीतियों को प्रयोग में लाया जा सकता है–

- कक्षा का वातावरण विद्यार्थियों के अनुकूल बनाएँ और यह सुनिश्चित करें कि कक्षा के प्रत्येक विद्यार्थी को सीखने का अवसर प्राप्त हो।
- बच्चों के परिवेशगत संदर्भों, दैनिक जीवन के क्रिया–कलाप, संस्कृति समाज, रीति–रिवाज को भाषा सिखाने का माध्यम बनाया जाना चाहिए।
- भाषा शिक्षण को स्वाभाविक बनाने के लिए साझा–कार्य, समूह–कार्य, प्रोजेक्ट वर्क जैसी गतिविधियों की योजना बनाएँ और शिक्षण–अधिगम के लिए प्रयोग करें।
- दैनिक जीवन में घटने वाली घटनाओं पर सार्थक विचार–विमर्श, समूह–परिचर्चा, प्रतियोगिता आदि का आयोजन करें।
- स्व–अध्ययन, समूह–अध्ययन एवं सह–अध्ययन के लिए कक्षाओं में लर्निंग–कार्नर, बाल–वाटिका, बाल–भवन तथा विद्यालय के स्तर पर पुस्तकालय की स्थापना करनी चाहिए।
- कक्षा में समाचार–वाचन, पत्र–पत्रिकाओं का पठन एवं आई.सी.टी. का प्रयोग किया जाना चाहिए।
- भाषा कौशल के सभी पक्षों (सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना) के विकास के लिए रोल–प्ले, कहानी सुनाना, कविता–वाचन, निबंध–लेखन, श्रुति–लेख, सुलेख आदि गतिविधियों का नियमित आयोजन किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. अनौपचारिक रूप से भाषा सीखने का कार्य कहां होता है?

.....

.....

5. औपचारिक रूप से भाषा सीखने का कार्य कहां होता है?

.....

.....

6. भाषा शिक्षण के अनौपचारिक साधन क्या हैं?

.....

.....

6.11 त्रिभाषा सूत्र

त्रिभाषा सूत्र 1961 में आयोजित मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में प्रतिपादित किया गया। 1962 में इंदिरा गांधी की अध्यक्षता में गठित राष्ट्रीय एकता परिषद ने इसका समर्थन किया गया। 1964 में गठित राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (कोठारी कमीशन) ने इसकी जाँच की तथा एक वर्गीकृत सूत्र के रूप में सिफारिश की। इसे भारत की प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 में सम्मिलित किया गया। यह त्रिभाषा सूत्र निम्नवत है –

प्रथम भाषा–

- अध्ययन की जाने वाली पहली भाषा मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा होनी चाहिए।

दूसरी भाषा–

- हिंदी भाषी राज्यों में दूसरी भाषा कोई अन्य आधुनिक भारतीय भाषा या अंग्रेजी होगी।
- गैर हिंदी भाषी राज्यों में दूसरी भाषा हिंदी या अंग्रेजी होगी।

तीसरी भाषा–

- हिंदी भाषी राज्यों में तीसरी भाषा अंग्रेजी या दूसरी भाषा के रूप में अध्ययन न की गई कोई आधुनिक भारतीय भाषा होगी
- गैर हिंदी भाषी राज्यों में तीसरी भाषा अंग्रेजी या दूसरी भाषा के रूप में अध्ययन न की गई कोई आधुनिक भारतीय भाषा होगी।

त्रिभाषा सूत्र भाषाई स्थिति की चुनौतियों और अवसरों के समाधान का एक प्रयास है। यह एक रणनीति है, जिसके तहत एक से अधिक भाषाओं को सीखने के लिए एक मंच प्राप्त हो सके। इसका अनुपालन अक्षरशः और इसकी मूल भावना दोनों के साथ किया जाना आवश्यक है। इसका प्राथमिक उद्देश्य दस वर्ष की स्कूली शिक्षा के साथ तीन भाषाओं के अध्ययन के लिए उपबंध कर बहुभाषावाद, भाषाई सौहार्द और भाषाओं के बीच समानता को प्रोत्साहित करके राष्ट्रीय सौहार्द को बढ़ावा देना है।

6.12 प्रथम भाषा

जिस भाषा को हम शैशवावस्था से अपने परिवार एवं माता–पिता से सुनकर सीखते हैं उसे मातृभाषा, प्रथम भाषा या (L-1) कहते हैं। मातृभाषा या प्रथम भाषा को बालक प्राकृतिक रूप से स्वाभाविक परिस्थिति में सीखता है, इसके लिए किसी विशेष शैक्षणिक प्रयास की आवश्यकता नहीं होती है। यह अनौपचारिक ढंग से घर में, पड़ोस में परिवारी जनों, मित्रों के अनुकरण द्वारा सीखी जाती है। इसमें व्याकरण, भाषा शुद्धि आदि पर ध्यान नहीं दिया जाता है, फिर भी यह बालक के विकास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है और विद्यालयीय शिक्षा के शुरुआत के आरम्भ का आधार है। बालक के प्रारंभिक शिक्षा का आधार प्रथम भाषा या मातृभाषा को ही बनाया जाना चाहिए। प्रथम भाषा या मातृभाषा आमतौर पर घर मे बोली जाने वाली या स्थानीय समुदायों द्वारा बोली

जाने वाली भाषा है। यह सर्वविदित है कि छोटे बच्चे अपने घर की भाषा या मातृभाषा में सार्थक अवधारणाओं को अधिक तेजी से सीखते हैं और समझ लेते हैं। जहाँ तक संभव हो प्राथमिक शिक्षा का माध्यम घर की भाषा, मातृभाषा या प्रथम भाषा को ही बनाया जाना चाहिए, साथ ही इसे विषय के रूप में भी स्थान देकर इसे और समृद्ध बनाया जाना चाहिए। आधुनिक विज्ञान, प्रौद्योगिकी, कंप्यूटर, गणित जैसे सभी विषयों में उच्च गुणवत्ता वाली पाठ्य पुस्तकों को मातृभाषा में उपलब्ध कराकर बच्चे की भाषा एवं शिक्षण के माध्यम के बीच कोई अंतराल आने देना नहीं चाहिए। यदि कोई अंतराल उपस्थित हो तो उसे समाप्त किया जाना चाहिए। ऐसे में शिक्षक को बहुभाषी शिक्षण माध्यम का उपयोग करना चाहिए।

6.13 द्वितीय भाषा

शिक्षा का मूल उद्देश्य छात्रों को मानव समाज के विविध व विगत अनुभवों को आत्मसात कराना है व इसके साथ ही छात्रों को ज्ञान के विभिन्न स्रोतों का प्रयोग कर अपने संदर्भानुकूल ज्ञान को विकसित करने योग्य बनाना है। इसके लिए छात्रों को हमारे देश के गैर हिंदी भाषी राज्यों में दूसरी भाषा (L-2) हिंदी या अंग्रेजी होगी, जबकि हिंदीभाषी राज्यों में कोई आधुनिक भारतीय भाषा या अंग्रेजी होगी। इसका उद्देश्य छात्रों को ज्ञान के व्यापक स्रोतों का उपयोग करने की क्षमता प्रदान करना है। द्वितीय भाषा को उद्देश्यपूर्ण तरीके से विशेष प्रयासों एवं शिक्षण– अधिगम द्वारा सीखा जाता है। द्वितीय भाषा को औपचारिक तरीके से ही विद्यालय में इसके विविध भाषाई विशेषताओं यथा भाषा व्याकरण के साथ अभ्यास करते हुए ग्रहण किया जाता है।

6.14 तृतीय भाषा

कभी–कभी ऐसी परिस्थिति आती है, जब बालक की प्रथम भाषा और दूसरी भाषा उसके शिक्षण अधिगम के लिए सहयोग नहीं कर पाती है, तब ऐसी विशिष्ट परिस्थिति में जो भाषा शिक्षण माध्यम के रूप में काम आती है, उसे तीसरी भाषा या तृतीय भाषा (L-3) कहते हैं। त्रिभाषा सूत्र में मातृभाषा के कुछ समय अध्ययन के उपरांत दूसरी भाषा सीखी जाती है, इसके उपरांत बाद की अवस्था में तीसरी भाषा सीखी जाती है। इसका महत्व सीमित किंतु महत्वपूर्ण होता है। यह वहाँ उपयोगी है, जहाँ मातृभाषा एवं दूसरी भाषा को पर्याप्त रूप से उपयोग में नहीं लाया जा सकता है। जहाँ मातृभाषा एवं दूसरी भाषा हिंदी और अंग्रेजी है वहाँ विद्यालयों में उस क्षेत्र में प्राथमिक स्तर पर किसी कम बोली जाने वाली अल्पसंख्यक भाषा को पढ़ाया जाना चाहिए। कक्षा 8 तक की पढ़ाई मे तीन भाषाओं का शिक्षण सी.बी.एस.ई. में अनिवार्य किया गया है।

6.15 राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में भाषा से संबंधित महत्वपूर्ण सिद्धांत

राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के अंतर्गत भाषा शिक्षा को समावेशी और बहुलतावादी समाज के निर्माण के सशक्त उपकरण के रूप में देखा गया है। प्रत्येक बच्चे के शैक्षिक विकास को ध्यान में रखना इस शिक्षा नीति का मूल मंत्र है, जिसके अंतर्गत कुछ मूलभूत सिद्धांत, जो सीधे भाषा से संबंधित हैं, निम्नवत हैं–

- प्रत्येक बच्चे के विशिष्ट भाषाई संदर्भ एवं क्षमताओं को स्वीकृति, पहचान एवं उसके विकास हेतु प्रयास करना।
- बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान को सर्वाधिक प्राथमिकता देना।
- शिक्षा का जीवन से जुड़ाव कायम करना तथा विषयों के बीच अलगाव के साथ भाषाई अवरोध को खत्म करना।
- सभी प्रकार के ज्ञान की एकता और समन्वय को सुनिश्चित करने के लिए एक बहु–विषयक उपागम के साथ बहुभाषी समग्र शिक्षा का आविर्भाव करना।
- शिक्षा में अवधारणाओं की समझ पर बल देना, रचनात्मक एवं तार्किक सोच के साथ बहुभाषिक शिक्षण– अधिगम की क्षमता का विकास करना।

- बहुभाषिकता और अध्ययन– अध्यापन के कार्य में भाषा की शक्ति की पहचान करना तथा प्रयोग व प्रोत्साहन देना।
- सभी पाठ्यक्रमों के शिक्षण शास्त्र एवं शिक्षा की कार्य– नीति में स्थानीय संदर्भ की विविधता के साथ स्थानीय परिवेश एवं भाषा के लिए सम्मान का भाव स्थापित करना।

6.16 राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढांचा–2005 में भाषा शिक्षा

राष्ट्रव्यापी विचार विमर्श के पश्चात तैयार तथा केंद्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड सी.ए.बी.ई. (CABE) द्वारा अनुमोदित NCF–2005 में भाषा शिक्षा के संबंध में निम्नलिखित निर्देश दिए गए हैं–

- भाषा शिक्षण को न केवल बच्चों को पढ़ाई जाने वाली भाषाओं की संख्या बल्कि रणनीतियाँ तैयार करने की दृष्टि से भी बहुभाषी होने की आवश्यकता है, जो बहु–भाषाई कक्षा को एक संसाधन के रूप में उपयोग करें।
- बच्चों की मातृभाषा या गृह भाषा (L-1) स्कूलों में शिक्षण का माध्यम होनी चाहिए।
- यदि किसी स्कूल में उच्च स्तर पर बच्चों की मातृभाषा में शिक्षण का कोई प्रावधान नहीं है, तब प्राथमिक स्कूली शिक्षा अवश्य ही मातृभाषा में दी जानी चाहिए। यह अनिवार्य है कि हम बच्चों की मातृभाषा का सम्मान करें।
- बच्चे प्रारंभ से ही बहु–भाषाई शिक्षा प्राप्त करेंगे। त्रिभाषा सूत्र को उसकी मूल भावना के साथ कार्यान्वित किए जाने की आवश्यकता है, जिससे इस बहु–भाषाई देश में बहु–भाषाई संवाद क्षमता को प्रोत्साहित किया जा सके।
- गैर हिंदी भाषी राज्यों में बच्चे हिंदी पढ़ते हैं। हिंदी भाषी राज्यों के मामले में बच्चे ऐसी भाषा सीखते हैं, जो उनके क्षेत्र में बोली नहीं जाती है। इन भाषाओं के अतिरिक्त एक आधुनिक भारतीय भाषा के रूप में संस्कृत का भी अध्ययन किया जाना चाहिए।
- बाद में शास्त्रीय और विदेशी भाषाओं का अध्ययन शामिल किया जा सकता है। त्रिभाषा सूत्र का मुख्य उद्देश्य दस वर्ष की स्कूली शिक्षा के साथ तीन भाषाओं के अध्ययन के लिए उपबंध करके स्कूली शिक्षा में भाषा सौहार्दता तथा भाषाओं के बीच समानता को प्रोत्साहित करना है।

एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा तैयार किए गए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढांचा– 2005 में प्रभावी कार्यान्वयन हेतु दिशा निर्देश दिए गए हैं।

6.17 बहुभाषो कक्षा

विद्यालय में विभिन्न भाषा–भाषी क्षेत्रों के बालक अध्ययन के लिए प्रवेश लेते हैं। हमारा बहुभाषी होना हमें विभिन्न भाषा–भाषी लोगों से जुड़ने में सहायता करता है। वर्तमान में विज्ञान, प्रौद्योगिकी और तकनीकी के विकास ने भूमंडलीकरण की प्रक्रिया को तेज कर दिया है। जिससे हम विविध प्रकार की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं भाषाई परिवेश के लोगों के साथ संबंधित/समन्वित होते जा रहे हैं। यहाँ पर बहुभाषिकता की भूमिका महत्वपूर्ण है। वर्तमान दौर में एक भाषा, एक राष्ट्र और एक संस्कृति का महत्व नही है।

भारत एक वृहद एवं विविधता भरा देश है। यहां बहुभाषिकता, भारतीय पहचान को समृद्ध ही नहीं करती है, बल्कि हमारी राष्ट्रीय एकता और अस्मिता के लिए भी आवश्यक है। एक शिक्षक प्राथमिक कक्षाओं से ही बालकों में विभिन्न भाषाओं के प्रति सम्मान, सीखने की ललक, उपयोगिता तथा इसके महत्व के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करता है।

एक से अधिक भाषाओं का ज्ञान संज्ञानात्मक संसाधनों, एवं ज्ञान के वृहद स्रोत तक पहुंचने में सहायता करता है, तथा प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति में सहायक होता है। विभिन्न भाषाओं की जानकारी हमें ज्ञान प्राप्त करने के साथ–साथ कार्य करने के अधिक अवसर प्रदान करती है। शिक्षकों को अपनी कक्षा में आवश्यकता अनुसार एक से अधिक भाषाओं का प्रयोग करना चाहिए। बालकों की प्रथम भाषा को पर्याप्त महत्व देते हुए, उन्हें महत्व की अन्य भाषाओं का प्रयोग करने के लिए छात्रों को प्रेरित करना चाहिए।

बच्चे विभिन्न प्रकार के सामाजिक अंन्तर–क्रियाओं के माध्यम से अधिक सीखते हैं। कक्षा में बहुभाषिक एवं बहु–संस्कृत भाषा–शिक्षण–अधिगम के कार्यक्रम की कार्यनीति बच्चों के बहु–भाषिक होने के अवसर को बढ़ाती है, जो आगे विभिन्न विषयों के ज्ञान, समझ एवं कौशल प्राप्त करने के लिए आधार एवं अतिरिक्त संसाधन का कार्य करती है। मनोवैज्ञानिकों ने बहुभाषिक बच्चों को ज्यादा सर्जनात्मक, कल्पनाशील, लचीला तथा स्वाधीन चिंतक माना है। द्विभाषी बच्चों में एकल भाषी बच्चों से ज्यादा संप्रेषण की संवेदनशीलता पाई जाती है। भारतीय भाषाविदों ने बहुभाषिकता को अमूल्य निधि बताया है। प्रोफेसर ए.के. मोहंती ने 'बाइलिंगुअलिज्म इन ए मल्टीलिंगुअल सोसायटीरू साइकोसोशल एंड पेडागोजीकल इंप्लीकेशंस, केंद्रीय भारतीय भाषा केंद्र, मैसूर, 1994, पृष्ठ 84 में कहा है कि– ''कई अध्ययनों में कुछ सुनिश्चित प्राविधिपरक लाभ स्पष्ट है, जो बहु– भाषियों के बेहतर मानसिक निष्पादन के दावे को पुष्ट करते हैं।'' इससे यह स्पष्ट होता है कि बहुभाषिकता बौद्धिक विकास में बाधक न होकर पोषक है। एकल भाषी बालकों की तुलना में द्विभाषी बालकों में भाषाई क्षमता का बेहतर विकास होता है। ''व्यक्ति भाषा के दायरे में रहकर ही सोचता–समझता है और बहुभाषिकता इस दायरे को विस्तार प्रदान करती है, उसे दूसरी भाषाओं के प्रति संवेदनशील बनाती है।''

ब्लूमफील्ड ने अपनी पुस्तक 'लैंग्वेज' मे द्विभाषिकता को ''दो अथवा दो से अधिक भाषाओं पर मातृभाषा के समान दक्षता'' बताया है। टेलर ने अपने ग्रंथ 'इंट्रोडक्शन टू लिंग्विस्टिक्स' में लिखा है ''द्विभाषी व्यक्ति वह है जो उन दो भाषाओं को बोल सकता है जो उच्चारण, शब्दावली और वाक्य विन्यास की दृष्टि से एक दूसरे से भिन्न होती है।'' 'बाइलिंगुअलिज्म थ्रू स्कूलिंग इन इंडिया' में अन्नामलाई ने लिखा है ''विभिन्न परिस्थितियों अथवा प्रयोजनों के लिए अतिरिक्त संसाधन की जरूरत होती है।'' आयको वरल का 'बाइलिंगुअलिज्म एंड कॉग्निटिव डेवलपमेंट' (1972) में प्रकाशित आलेख 'चाइल्ड डेवलपमेंट' का निष्कर्ष था कि द्विभाषी बच्चे अपने एकल भाषी साथियों की तुलना में 2 से 3 वर्ष पहले ही अर्थ की बेहतर समझ प्राप्त कर लेते हैं और विकास की अवस्था में पहुंच जाते है।

भाषा शिक्षण के समय शिक्षक के ध्यान में समावेशी एवं बहुलतावादी समाज के निर्माण का दृष्टिकोण भी होना चाहिए। इसके लिए बहु–भाषिकता तथा अध्ययन–अध्यापन में भाषा की शक्ति को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. त्रिभाषा सूत्र कब लागू किया गया?

   .....

   .....

8. बहु–भाषिक कक्षा किसे कहते हैं?

   .....

   .....

9. पढ़ने का कोना कहाँ बनाया जाता है?

   .....

   .....

6.18 बुनियादी साक्षरता एवं भाषा

राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 2020 मे इस बात पर बल दिया गया है कि 2025 तक प्राथमिक स्तर पर सार्वभौमिक मूल साक्षरता यानी भाषा की साक्षरता तथा संख्या ज्ञान संबंधित संक्रियाओं को सिखाया जाएगा। इसके लिए स्थानीय स्तर पर मौजूद भाषाओं में स्तरानुसार प्रेरणादायक बाल साहित्य और स्कूल पुस्तकालयों में स्थानीय भाषाओं की पुस्तके उपलब्ध कराई जाएँगी साथ ही उच्च गुणवत्ता के अनुवाद उपलब्ध कराए जाएंगे। राष्ट्रीय स्तर पर पढ़ने की संस्कृति विकसित करने के उद्देश्य से पुस्तकालयों की श्रृंखलाएँ विद्यालय स्तर पर एवं सामुदायिक स्तर पर बनाई जाएगी साथ ही डिजिटल पुस्तकालयों का भी निर्माण किया जाएगा। पढ़ने वालों का एक 'बुक क्लब' बनाया जाएगा, जिससे परस्पर विभिन्न विषयों के संदर्भ में स्वस्थ संवाद कायम हो सकेगा। वर्तमान शिक्षा नीति में राष्ट्रीय स्तर पर एक पुस्तक संवर्धन नीति तैयार करने की बात कही गई है। स्थानीय भाषाओं में उच्चस्तरीय साहित्य सृजन करके सभी भारतीय भाषाओं में रुचिकर, ज्ञानवर्धक बालसाहित्य तथा कौशल विकास से संबंधित पुस्तकों के साथ आधुनिक ज्ञान विज्ञान, तकनीकी से संबंधित पुस्तकों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए व्यापक स्तर पर प्रयास करने को कहा गया है।

विद्यार्थियों के समग्र विकास के दृष्टिकोण से समझ व ज्ञान आधारित पाठ्यचर्या के कार्यान्वयन (शिक्षण–अधिगम) पर बल दिया जाएगा। पाठ्यक्रम को कम बोझिल बनाकर आवश्यक एवं बुनियादी क्षमताओं एवं कौशलों पर फोकस किया जाएगा। आलोचनात्मक चिंतन और समग्रता के साथ खोज आधारित ज्ञान, चर्चा आधारित विश्लेषण एवं समझ आधारित अधिगम पर जरूरी ध्यान दिया जाएगा। विषय वस्तु का संयोजन और सीखना अवधारणाओं, विचारों अनुप्रयोगों पर केंद्रित होगी। सीखने की प्रक्रिया को और अधिक सक्रिय सहभागी व संवादात्मक तरीके से कार्यान्वित किया जाएगा। छात्रों में जिज्ञासा भाव, कल्पना, सृजनात्मकता एवं पृच्छा का विकास करने हेतु कक्षा शिक्षण अधिगम को मातृभाषा, स्थानीय, क्षेत्रीय भाषी, द्विभाषी, बहुभाषी माध्यम में अधिक समावेशी बनाई जा सकती है। सीखने को रुचिकर बनाने हेतु क्रिया एवं वस्तु आधारित शिक्षण, सहयोगात्मक व सामूहिक शिक्षण के तरीकों से बढ़ावा दिया जाएगा। सभी विषयों में बच्चों के लिए कहानी आधारित शिक्षण शास्त्र को एक मानक शिक्षण शास्त्र के रूप में स्थान दिया जाएगा।

स्कूलों के स्थानीय समाज या समुदाय से अलगाव को दूर करने के लिए समुदाय के साथ विचार विमर्श कर एक संयुक्त व्यवसायिक शिक्षा विकास कार्यक्रम, शिक्षण अधिगम सामग्री के साझाकरण, कला एवं विज्ञान प्रदर्शनी, क्विज, डिबेट और मेले जैसे संयुक्त गतिविधियाँ, कार्यक्रम आयोजित किए जा सकते हैं। इसी तरह प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय में बालकों के विकास के उद्देश्य से 'बाल– भवन' स्थापित किया जाएगा। जहाँ हर उम्र के बच्चे समय समय पर आपस मे मिलकर कुछ सामूहिक गतिविधियों में प्रतिभाग कर आपस में समन्वय, संवद एवं विचार स्थापित करने की प्रक्रिया को सीख सकेंगे।

शिक्षण अधिगम के कार्यान्वयन में कला समन्वित एवं क्रास करिकुलर शैक्षिक दृष्टिकोण को महत्व दिया जाएगा, जिसमें कला एवं संस्कृति के विभिन्न अवयवों का उपयोग अधिगम के आधार के रूप में किया जाता है। स्थानीय संदर्भों में कला समन्वित शिक्षण, शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को आनंददायक, रूचिपूर्ण, लचीला, समावेशी व अधिक अर्थपूर्ण बनाएगा। स्थानीय भाषा संस्कृति का राष्ट्रीय भाषा संस्कृति के साथ संबंध और अधिक मजबूत होगा और छात्र अपनी जड़ों से जुड़े रहकर उच्च स्तरीय अधिगम कर पाएँगे।

6.19 भाषा शिक्षण में समावेशन

बच्चों में व्यक्तिक भिन्नता पाई जाती है। यह प्राकृतिक रूप से अनुवांशिक या परिवेशगत कारकों के कारण होती है। बच्चों के भाषा सीखने में अलग–अलग बालकों को अलग–अलग प्रकार की कठिनाइयां हो सकती हैं। इन वैयक्तिक कठिनाइयों को दूर करने हेतु शिक्षक इनकी पहचान करके इनके लिए विशिष्ट उपचारात्मक रणनीति बनाता है। जिसकी कुछ कार्य–नीतियां निम्नवत हो सकती हैं–

- जीवन की वास्तविक परिस्थितियों से संबंधित सामग्री को शिक्षण–अधिगम में शामिल किया जाना चाहिए।

- कक्षा को बहुभाषी या अधिकांश बच्चों की भाषा को शिक्षण का माध्यम बनाया जाना चाहिए।
- कक्षा शिक्षण में छात्रों की आयु, रुचियों, अवस्थाओं, संज्ञान– स्तर एवं उनके विशिष्ट संदर्भ (आवास, संस्कृति, बोली का टोन आदि) का ध्यान रखना चाहिए।
- विभिन्न छात्रों के सीखने की गति को ध्यान में रखते हुए कक्षा शिक्षण की गति छात्रों की अधिगम क्षमता के अनुरूप होनी चाहिए।
- दृष्टि बाधित बच्चों के लिए व्यक्तिगत ध्यान तथा अधिक समय की आवश्यकता होती है जिन्हें ध्यान में रखना चाहिए।
- श्रवण बाधित बच्चों को भी विशेष सहायता की आवश्यकता पड़ती है जिससे वे नई शब्दावली, चिन्हों एवं प्रतीकों को आपस में अंतर–संबंधित कर समझ सके।
- सभी बच्चों को सांकेतिक भाषा और ब्रेल लिपि के बारे में जागरूक एवं संवेदनशील बनाया जाना चाहिए। साथ ही जहाँ प्रासंगिक हो स्थानीय सांकेतिक भाषाओं का सम्मान एवं प्रयोग किया जाना चाहिए।
- भाषा शिक्षण में पाठ्य सामग्री एवं पाठ्यचर्या संबंधी कार्यों (शिक्षण–अधिगम, पाठ योजना निर्माण अन्य सह–गतिविधियों) में जेंडर पूर्वाग्रह के कारकों की पहचान, पुरुष एवं महिला पात्रों की भूमिका तय करने और पठन सामग्री के संबंध में पूर्वाग्रह की पहचान करने तथा महिलाओं की यथोचित बराबरी की भूमिका को महत्व देना चाहिए।
- बोलने में कठिनाई का अनुभव करने (तुतलाने) वाले बालकों पर विशेष ध्यान देकर तथा संबंधित तकनीकी एवं परामर्श का उपयोग कर वाणी को स्पष्टता देने में अपेक्षित सहयोग करना चाहिए।
- वर्तनी की त्रुटि के सुधार के लिए विशेष अभ्यास तथा श्रवण क्षमता के विकास के प्रयास किए जाने चाहिए।
- श्रुतिलेख एवं सुलेख के लिए अभ्यास तथा संबंधित तकनीकी का भी प्रयोग किया जाना चाहिए।
- छात्रों के भाषा शिक्षण में बच्चों के संदर्भ, पूर्व–ज्ञान, भाषा–क्षमता के साथ आवश्यकता पड़ने पर परिचित, अनुभवजन्य, संदर्भगत जीवन्त उदाहरणों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
- शिक्षक को वाक्य निर्माण, विचारों एवं अवधारणाओं के बीच संबंध बनाने, विचारों एवं ज्ञान को आत्मसात करने, छात्रों में तत्संबंधी कल्पना निर्माण, तार्किक निर्णयन, सृजनात्मकता को भी ध्यान में रखने की आवश्यकता है।
- संज्ञानात्मक कमजोरी वाले छात्रों के संबंध में शिक्षक के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक छात्रों को मौखिक अभिव्यक्ति का अधिक से अधिक अवसर प्रदान करें जिससे उनका सुनना, बोलना, विचारों की धारा प्रवाह, सुसंगत अभिव्यक्ति की क्षमता, शुद्धता एवं समझ के साथ पठन क्षमता का विकास हो सके।
- छात्रों में भाषा की समझ में कठिनाई आने पर शिक्षक को इनके निराकरण के लिए अपनी पाठ योजना, प्रस्तुतीकरण इत्यादि को और प्रभावशाली एवं पूर्ण बनाकर इसे समावेशी, छात्र–केंद्रित बनाने की आवश्यकता पड़ती है।
- कक्षा में कुछ विशिष्ट पठन–क्षमता संबंधी बीमारियाँ/कठिनाइयाँ जैसे डिस्लेक्सिया, डिसग्राफिया, डिस्कैलकुलिया से पीड़ित बच्चों की पहचान कर उनका यथासंभव सहयोग किये जाने तथा उनके

साथ सहानुभूति रखने की आवश्यकता होती है।

6.20 भाषा, समझ और ज्ञान

भाषा के अभाव में हमारी समझ और ज्ञान अत्यल्प रहती है। भाषा हमारे समझ का आधार है। हमारी समझ हमारी भाषा में ही बनती है, अभिव्यक्त होती है। हमारा मस्तिष्क भाषाओं के रूप में ही घटनाओं को कोडिंग एवं डिकोडिंग करता है तथा संरक्षित करता है। भाषा द्वारा ही हमे अतीत के अनुभवों की जानकारी मिलती है, जिससे हमारी समझ एवं ज्ञान विकसित एवं संवर्धित होती है। मनुष्य अपनी योजनाओं की कल्पना/अमूर्त चिन्तन भी भाषा के माध्यम से ही करता है। इस प्रकार भाषा अतीत, वर्तमान एवं भविष्य को आपस में जोड़ने, समन्वित करने का कार्य करती है। मनुष्य अपने ज्ञान का सृजन अपने अनुभव द्वारा अपने परिवेश में ही करता है, जिससे हमारे अंदर समझ और ज्ञान का सृजन होता है और यह भाषा के माध्यम से ही होता है। भाषा हमें विभिन्न प्रकार के ज्ञान को अंतर्संबंधित करने में सहायता करती है और सार्थक अवधारणाओं के निर्माण में सहयोग देती है। भाषा का प्रयोग हम केवल दूसरों से संवाद स्थापित करने के लिए ही नहीं करते हैं, बल्कि स्वयं से भी संवाद स्थापित करने के लिए हम भाषा का ही प्रयोग करते हैं। भाषा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है, विचारों को व्यक्त करने की क्षमता प्रदान करना। जब तक कि हम पहले अपने आप से बात करना सीखे हो इसके बाद दूसरों के विचारों को उस रूप में ग्रहण करना जिस रूप और भाव में उस व्यक्ति ने अपना विचार प्रकट किये है।

6.21 विषय के रूप में भाषा

जन्म के बाद बालक भाषा सीखना आरंभ कर देता है और मृत्युपर्यंत सीखता रहता है। पूर्व प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक विभिन्न भाषाओं को विषय के रूप में पढ़ा जाता है, जिसके अंतर्गत हम पढ़ी जाने वाली भाषा का विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करते हैं। साथ ही हम जब किसी भी विषय को पढ़ते हैं, उसमें भाषा का शिक्षण अंतर्निहित रहता है। हम उस विषय के साथ भाषा भी सीखते हैं, जिस भाषा माध्यम से हम उस विषय को सीखते हैं। इसलिए कहा जाता है कि सभी विषयों के शिक्षक भाषा के शिक्षक होते हैं। भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम ही नहीं है, बल्कि भाषा के माध्यम से ही हम अधिकांश जानकारी प्राप्त करते हैं। भाषा एक ऐसी व्यवस्था या औजार है जो हमारे आसपास की घटनाओं एवं वास्तविकताओं को हमारे मस्तिष्क में संचित करती है।

6.22 सारांश

इस इकाई में मुख्य रूप से पाठ्यचर्या में भाषा के महत्व के ऊपर प्रकाश डाला गया है। बालक के शैक्षणिक विकास के साथ व्यक्तित्व के विकास के दृष्टिकोण से भाषा अत्यंत महत्वपूर्ण है। पाठ्यचर्या निर्माण में भाषा को केंद्रीय तत्व माना गया है। भाषा, भाषा के रूप में ही नहीं अपितु अन्य विषयों के शिक्षण माध्यम के रूप में भी महत्वपूर्ण है। इसलिए भाषा के कौशलों के विकास के दृष्टिकोण से उपयुक्त प्रविधियों को प्रयोग में लाया जाना चाहिए। बालक में भाषा के कौशलों– समझ के साथ सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखने का विकास अनौपचारिक, औपचारिक एवं निरौपचारिक सभी ढंग से होता है। भाषा सीखना मानव की अस्मिता से जुड़ा है। इसके लिए सभी तरह से प्रत्येक स्तर पर प्रयास किया जाता है। प्रारंभिक बाल्यावस्था देख–रेख और शिक्षा यानी सीखने की नींव में भाषा, पूर्व प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण, प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण के लिए उपयुक्त रणनीतियों एवं प्रविधियों की चर्चा की गई है। भाषा सिखाने की कार्य–नीतियाँ क्या होनी चाहिए? किन–किन रणनीतियों के माध्यम से भाषा को सुगम तरीके से सिखाया जा सकता है? साथ ही समृद्ध वातावरण के निर्माण एवं इसके महत्व की चर्चा की गयी है। त्रिभाषा सूत्र की चर्चा के साथ इसके महत्व एवं प्रथम भाषा, द्वितीय तथा तृतीय भाषा की विशेषता एवं महत्व की चर्चा की गई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भाषा से संबंधित सिद्धांतों के साथ, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप (NCF–2005) में भाषा शिक्षा संबंधी निर्देशों की भी चर्चा की गई है। बहुभाषी कक्षा की विशेषताएँ, नियोजन एवं महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है। भाषा एवं समाज, भाषा एवं संस्कृति के संबंधों तथा एक दूसरे के प्रति उपादेयता की चर्चा की गई। बुनियादी साक्षरता एवं भाषा में

संबंध एवं महत्व पर प्रकाश डालने के साथ भाषा के समावेशन एवं समावेशन में भाषा की भूमिका की चर्चा की गई है। भाषा, समझ एवं ज्ञान के आपसी संबंध का पाठ्यचर्या के दृष्टिकोण से चर्चा की गई है। अंत में विषय के रूप में भाषा की भूमिका पर प्रकाश डाला गया है।

6.23 अभ्यास के प्रश्न

1. पाठ्यचर्या निर्माण में भाषा किस प्रकार महत्वपूर्ण है?
2. भाषा के विकास की प्रमुख प्रविधियाँ कौन–कौन हैं?
3. प्रारंभिक बाल्यावस्था में भाषा के सीखने की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।
4. पूर्व–प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण की क्या रणनीति होनी चाहिए?
5. प्राथमिक स्तर पर भाषा शिक्षण में शिक्षक की किस प्रकार की भूमिका होनी चाहिए?
6. भाषा समृद्ध वातावरण के नियोजन के लिए शिक्षक के रूप में आप क्या करेंगे?
7. सामान्य विद्यालयीय परिस्थिति में भाषा शिक्षण की कार्य–नीतियों का वर्णन करें।

6.24 चर्चा के बिन्दु

1. भाषा के अभाव में एक व्यक्ति को क्या–क्या समस्याएँ हो सकती है? चर्चा कीजिए।
2. एक बहुभाषी व्यक्ति को क्या–क्या अतिरिक्त लाभ हो सकता है? चर्चा कीजिए।
3. बालक के शैक्षणिक विकास में मातृभाषा की क्या भूमिका है? चर्चा कीजिए।
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 में भाषा के सरोकारों पर चर्चा कीजिए।
5. भाषा कौशलों के विकास में शिक्षक की भूमिका के संबंध में चर्चा कीजिए?

6.25 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. भाषा विकास की प्रमुख प्रविधियाँ आँकना, अनुकरण, खेल, गीत एवं कहानियाँ, वार्तालाप, वाद–विवाद तथा पढ़ना, लिखना एवं समझना है।
2. प्रमुख भाषाई कौशल हैं– समझ के साथ सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना।
3. भाषा कौशल का विकास क्रम है– सुनना, बोलना, पढ़ना तथा लिखना।
4. अनौपचारिक रूप से भाषा सीखने का कार्य घर में, परिवार में, मेले, बाजार,बैठकों, खेलों, प्रदर्शनी, संगोष्ठी इत्यादि सभी जगहों पर होता है।
5. औपचारिक रूप से भाषा सीखने का कार्य विद्यालय की कक्षाओं में होता है।
6. अनौपचारिक बात–चीत, रेडियो, टेलीविजन, पत्र–पत्रिकाएं, फिल्में, विज्ञापन होर्डिंग, बैनर,पोस्टर, पर्चे, खेल, संगोष्ठी इत्यादि।
7. त्रिभाषा सूत्र 1968 में लागू किया गया।
8. जिन कक्षाओं में शिक्षण–अधिगम के लिए एक से अधिक भाषा माध्यमों का प्रयोग किया जाता है उसे बहुभाषी कक्षा कहते हैं।
9. पढ़ने का कोना (Learning corner) कक्षाकक्ष मे बनाया जाता है।

6.26 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. गुप्ता, एस.पी. (2019) : उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान सिद्धांत एवं व्यवहार, प्रयागराज : शारदा पुस्तक भवन।

2. पांडे, के. पी. (2013) : नवीन शिक्षा मनोविज्ञान, वाराणसीः विश्वविद्यालय प्रकाशन।

3. सारस्वत, एम. (1999) : शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा, इलाहाबादरू आलोक प्रकाशन।

4. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (2005) : राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा– 2005

5. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (2018) : भाषा शिक्षण, हिंदी, भाग– 1, दिल्ली : अरुण पैकर्स एंड प्रिंटर्स।

6. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (2019) : निष्ठा, वॉल्यूम– 4, माड्यूल– 10, राज्य परियोजना निदेशक, उत्तर प्रदेश, पाठ्य पुस्तक विभाग, शिक्षा निदेशालय (बेसिक) उत्तर प्रदेश

7. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) : retrieved from https://www.education.gov.in at 17.08.2021

खण्ड– 03 : सामाजिक विज्ञानों में विद्यालयी पाठ्यक्रम का वि□लेशण

खण्ड परिचय

यह खण्ड सामाजिक विज्ञानों में विद्यालयी पाठयक्रम से सम्बन्धित हैं। अन्य खण्डों की भांति इस खण्ड में भी तीन इकाईयाँ हैं जो इस प्रकार हैं–

इकाई– **7** सामाजिक विज्ञानों में विद्यालयी पाठ्यक्रम की प्रमुख विषेशताएं

इकाई– **8** सामाजिक विज्ञानों की शिक्षण विधियाँ

इकाई– **9** विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक विज्ञान की प्रासंगिकता

इकाई– 7 में सामाजिक विज्ञान विषय की प्रमुख विशेषताओं का आप अध्ययन करेंगे। इस इकाई के माध्यम से आप यह जान सकेंगे कि हमारे भारत देश के प्रजातान्त्रिक समाज में यह विषय अत्यन्त उपयोगी है क्योंकि यह छात्रों में सामाजिकता की भावना लोकतान्त्रिक नागरिकता के गुण, नेतृत्व की क्षमता, कर्तब्य परायणता, सहयोगात्मक प्रवृत्ति, सह अस्तित्व में विश्वास, एक दूसरे के प्रति सम्मान का भाव, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सहिष्णुता तथा वसुधैव कुटुम्बकम का भाव विकसित करता है और ये सभी प्रजातन्त्र की सफलता के आधार स्तम्भ हैं। इस इकाई के माध्यम से आप यह जान सकेंगे कि सामाजिक विज्ञान पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं क्या होती हैं। यह विषय छात्रों को मात्र सैद्धान्तिक ज्ञान ही प्रदान नहीं करता वरन् एक कुशल सामाजिक तथा राजनैतिक जीवन जीने की कला को भी सिखाता है। यही कारण है कि यह विषय छात्रों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर उसके सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास में अपना योगदान देता है।

इकाई– 8 में आप उन विभिन्न शिक्षण विधियों से अवगत होंगे जिनके माध्यम से अध्यापक सामाजिक विज्ञान विषय की विषयवस्तु को आप तक सम्प्रेषित कर आपके ज्ञान भण्डार में वृद्धि करता है और आपकों एक आदर्श नागरिक बनने तथा आदर्श जीवन जीने की प्रेरणा देता है। इस इकाई के माध्यम से आप सामाजिक विज्ञान की उन विधियों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे जिनका एक अध्यापक कक्षा शिक्षण के दौरान प्रयोग करता है और आवश्यकतानुसार उन विधियों का प्रयोग करते हुए वांछित लक्ष्य को प्राप्त करता है।

इकाई– 9 आपको यह बोध कराएगी कि आपके विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक विज्ञान विषय की कितनी अधिक प्रासंगिकता है। क्योंकि यही वह विषय है जो प्रजातान्त्रिक शासन व्यवस्था की सफलता के लिए वह पृष्ठभूमि तैयार करता है जिसके कारण देश का प्रत्येक नागरिक "हम की भावना" के साथ राष्ट्र हित को सर्वोपरि मानता है तथा देश की विभिन्न समस्याओं के समाधान में अपनी सक्रिय भूमिका निभाने के लिए तैयार रहता है। यह इकाई आपको प्रस्तुत विषय की प्रासंगिकता का बोध कराएगा। आप इस बात को महसूस कर सकेंगे कि किस प्रकार विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के कारण मानव समाज में बहुत अधिक परिर्वतन हो रहे हैं जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव व्यक्ति के व्यवहार एवं आचरण में प्रतिबिम्बित है और प्रस्तुत विषय की प्रासंगिकता इसीलिए है क्योंकि यह व्यक्ति के इस बदले हुए रूप को परिवर्तित कर उसे मानवता एवं सामाजिकता के गुणों से परिपूर्ण करता है।

इकाई–7 : सामाजिक विज्ञानों में विद्यालयी पाठ्यक्रम की प्रमुख विशेषताएं

इकाई की संरचना

7.1 प्रस्तावना

7.2 इकाई के उद्देश्य

7.3 सामाजिक विज्ञान का एकीकृत स्वरूप

7.4 पाठ्यक्रम का अर्थ

7.5 वर्तमान समाज एवं सामाजिक विज्ञान

7.6 सामाजिक विज्ञान के विद्यालयी पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

7.6.1 इतिहास के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

7.6.2 भूगोल के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

7.6.3 नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

7.6.4 अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

7.6.5 समाजशास्त्र के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

7.6.6 मानवशास्त्र या मानव विज्ञान के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

7.6.7 मनोविज्ञान के पाठ्यकम की मुख्य विशेषताएं

7.6.8 दर्शन के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

7.7 सारांश

7.8 अभ्यास के कार्य

7.9 चर्चा के बिन्दु

7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें/संदर्भ

7.1 प्रस्तावना

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने आज के मानव समाज में महान परिवर्तन ला दिऐ हैं जिसके फलस्वरूप उसके स्वरूप आकार आदि में व्यापक परिवर्तन परिलक्षित हुए हैं। परन्तु इसके साथ–साथ मानवीय सम्बन्धों में भी जटिलताएं दृष्टिगोचर हुई हैं। समाज के परिवर्तित स्वरूप तथा मानवीय सम्बन्धों की जटिलताओं को समझने तथा उस नवीन समाज में व्यवस्थित होने के लिए सामाजिक विषय का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है जिससे यह समाज के अतीत को भली भाति समझते हुये आज के परिवर्तित समाज को जान सके तथा भविष्य के सन्दर्भ में उचित एवं सकारात्मक निर्णय ले सकें। चूंकि आज के बच्चे ही देश के भावी कर्णधार होंगे इसलिए उनमें सामाजिकता की भावना, लोकतान्त्रिक नागरिकता के गुण, नेतृत्व की क्षमता, कर्तव्य परायणता, सहयोगात्मक प्रवृत्ति, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सह अस्तित्व में विश्वास, स्वस्थ आदतों एवं उचित वृत्तियों का विकास, श्रम के प्रति आदर, सहिष्णुता आदि का विकास होना अत्यन्त आवश्यक है जिससे वे अपने राष्ट्र एवं समाज के प्रति संवेदनशील होकर उसकी प्रगति एवं उत्थान में अपना योगदान दे सकें। इन्ही बातों को दृष्टिगत रखते हुए विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक अध्ययन जैसे विषय को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है जिसका पाठ्यक्रम

छात्रों को न केवल समाज एवं राष्ट्र का सैद्धान्तिक ज्ञान देगा अपितु उस ज्ञान को अपने आचरण में उतारने की क्षमता एवं सामर्थ्य भी प्रदान करेगा। सामाजिक अध्ययन का पाठ्यकम उपर्युक्त समस्त विशेषताओं से ओत–प्रोत है जिनका अध्ययन आप प्रस्तुत इकाई में विस्तार से करेंगे।

7.2 इकाई के उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1) सामाजिक विज्ञान के एकीकृत स्वरूप का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।

2) पाठ्यक्रम के शाब्दिक अर्थ का प्रत्याभिज्ञान कर सकेंगे।

3) लोकतान्त्रिक नागरिकता के गुणों को सूचीबद्ध कर सकेंगे।

4) अनेकता में एकता के भाव का वर्णन कर सकेंगे।

5) मतदान की प्रक्रिया का विश्लेषण कर सकेंगे।

6) सामाजिक गुणों का वर्गीकरण कर सकेंगे।

7) विश्व के महान पुरुषों के व्यक्तित्व से प्रेरणा ले सकेंगे।

7.3 सामाजिक विज्ञान का एकीकृत स्वरूप

सामाजिक विज्ञान मानवीय सम्बन्धों तथा अन्तःसम्बन्धों का अध्ययन है जिसके माध्यम से छात्रों में उत्तम सामाजिकता को लाने पर बल दिया जाता है। इसमें उन्ही पाठ्य सामग्री को संजोया जाता है जो छात्रों के सामाजिक व्यवहार के लिए उपयोगी एवं लाभदायक हों। सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम किसी एक विषय विशेष तक ही सीमित नहीं है, वरन् इसमें इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र, समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान तथा मानव विज्ञान जैसे क्षेत्रों से पर्याप्त सामग्री लेकर उसे इस प्रकार एकीकृत स्वरूप प्रदान किया गया है, जिससे उसके अध्ययन के उपरान्त छात्र सफल ढंग से जीवन जीने का कला को आत्मसात कर सकें। उनमें विस्तृत, व्यापक तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हों सके और वे अपने समाज तथा राष्ट्र की विभिन्न समस्याओं का वैज्ञानिक ढंग से समाधान करते हुए सफल तथा सन्तुलित ढंग से जीवन यापन कर सकें। यदि छात्र भूगोल, इतिहास, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र, दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र, मानव विज्ञान, मनोविज्ञान जैसे विषयों को अलग–अलग पढ़ता है तो स्वाभाविक सी बात है कि उसका ज्ञानार्जन आंशिक ही होगा न कि दैनिक जीवन की सामाजिक समस्याओं का सम्पूर्ण ज्ञान। ऐसा आंशिक ज्ञान छात्र को सफल जीवन जीने का कला नही दे सकता। इसलिए 1952 के माध्यमिक शिक्षा आयोग, 1964 के शिक्षा आयोग ने उपरोक्त समस्त विषयों को एकीकृत कर उसे सामाजिक विज्ञान का नाम देने की अनुशंसा की। आयोग की सिफारिशों पर राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान परिषद दिल्ली ने 1975 में ''दस वर्षीय पाठ्यक्रम – एक ढांचा'' पाठ्यक्रम तैयार किया जिसमें सामाजिक विज्ञान के एकीकृत रूप को ''पर्यावरण'' नाम दिया गया जिसमें शिक्षण के समय मानव जीवन की सम्पूर्णता पर ही बल दिया गया परंतु कालांतर में पुनः इसे सामाजिक विज्ञान विषय के रूप में ही मान्यता प्रदान की गई। सामाजिक विज्ञान के एकीकृत स्वरूप को हम अग्राकिंत चित्र के माध्यम से भली भांति समझ सकते हैं–

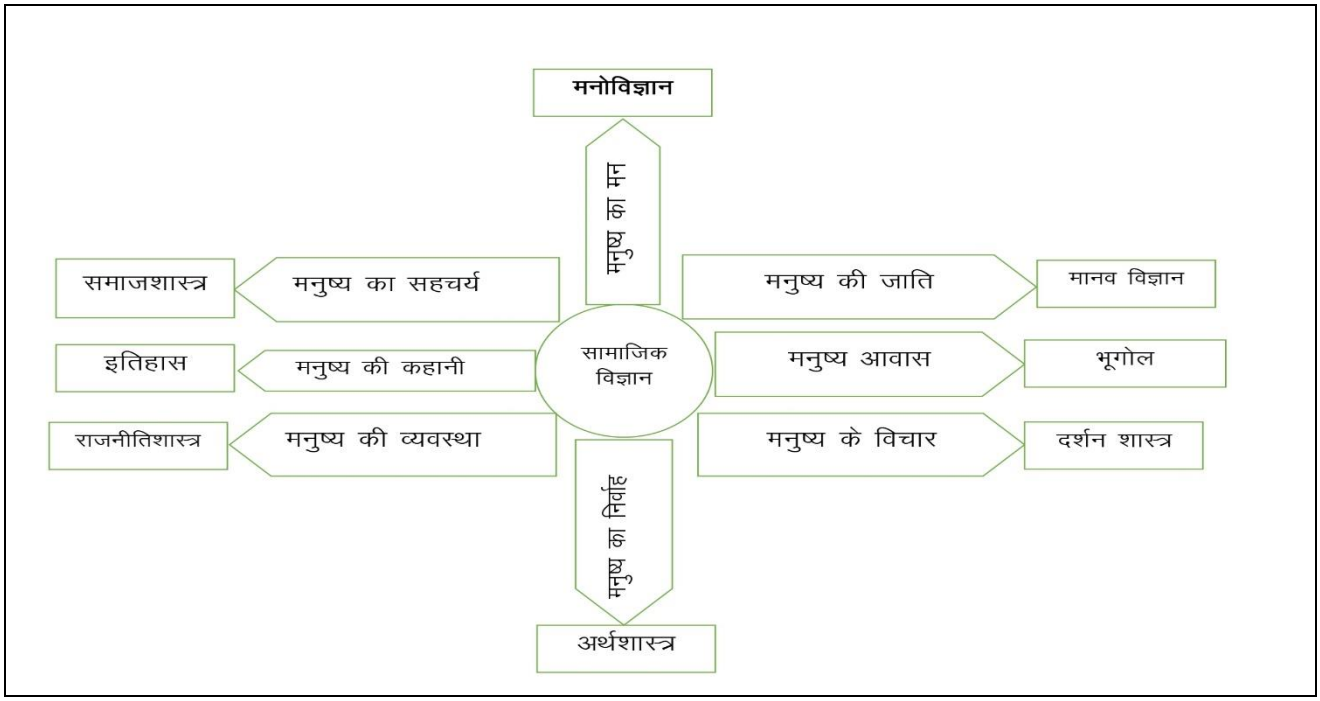

उपरोक्त रेखाचित्र से आप समझ सकते हैं कि सामाजिक विज्ञान रूपी समुद्र में उपरोक्त विषय रूपी नदियां मिलकर एकीकृत हो जाती हैं और संयुक्त रूप से छात्रों को जीवन के ऐतिहासिक, भौगोलिक, आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक तथा मानव के सन्दर्भ में समग्रता के साथ पाठ पढ़ाती हैं।

स्मरण रहे कि सामाजिक ज्ञान सदव्यवहार और सदविचार को छात्रों में विकसित करता है। वैसे तो ये गुण आप दूसरे विषयों के शिक्षण द्वारा भी छात्रों में उत्पन्न कर सकतें हैं। परन्तु भिन्न–भिन्न विषयों से पढ़ाए जाने पर भी वह सामाजिक ज्ञान की सीमा के अन्दर ही रहेगा। इसे और अधिक स्पष्ट आप इस उदाहरण के माध्यम से भी कर सकते हैं कि यदि इतिहास विषय में आप अशोक महान को पढाते हैं तो आप उनके माता पिता, जन्म, चरित्र, व्यक्तित्व, विजयें, साम्राज्य विस्तार आदि के बारें में पढ़ाऐंगे। परन्तु सामाजिक ज्ञान के दृष्टिकोण से जब आप शिक्षण करेंगे तो उसके धम्म (धर्म), सैन्य व्यवस्था में सुधार, उसकी आर्थिक स्थिति, राजनैतिक स्थिति, भौगोलिक स्थिति, भारत को एक राष्ट्र का रूप देने में उसका योगदान भी अपने शिक्षण में सम्मिलित करेंगे अर्थात आपने इतिहास के साथ–साथ अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र, मनोविज्ञान, भूगोल, दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र का भी शिक्षण समन्वित कर लिया। तो क्यों न हम इसे एकीकृत विषय के रूप में पढ़ायें। सामाजिक ज्ञान तो छात्रों के व्यवहार को समग्रता के साथ सुन्दर बनाता है। उन्हें जीवन के विविध पहलुओं के विशद् तथा व्यापक ज्ञान प्रदान करने के साथ–साथ उस ज्ञान को उचित रूप से व्यवहार में लाकर आचरण करना सामाजिक अध्ययन विषय ही सिखाता है।

7.4 पाठ्यक्रम का अर्थ

पाठ्यक्रम शब्द अंग्रेजी शब्द 'करीकुलम' (Curriculum) शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। करीकुलम शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा के 'क्यूरर'' (Currere) शब्द से हुई है जिसका अर्थ है ''दौड़ का मैदान'' (Race-Course)। इस प्रकार पाठ्यकम दौड़ का मैदान है जिस पर दौड़ कर छात्र लक्ष्य को प्राप्त करता है। शाब्दिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो पाठ्यक्रम दो शब्दों के योग से बना है पाठ्य तथा कम। पाठ्य अर्थात पढ़ने योग्य तथा कम अर्थात व्यवस्था। तो पाठ्यक्रम का अभिप्राय है पढ़ने योग्य विषय वस्तु की व्यवस्था। पाठ्यक्रम शब्द का प्रयोग लोग भ्रम वश सिलेबस के अर्थ में कर लेते है जबकि सिलेबस (पाठ्यवस्तु अथवा विवरण) का अभिप्राय कक्षा शिक्षण की दृष्टि से विषयवस्तु के व्यवस्थित स्वरूप से होता है। अर्थात विषय वस्तु, पाठ्यक्रम का एक अंश मात्र है। पाठ्यक्रम तो एक विस्तृत एवं व्यापक सम्प्रत्यय है जिसमें कक्षा में जो भी छात्र अनुभव प्राप्त

करते हैं, उसके साथ–साथ कक्षा के बाहर के अनुभव भी सम्मिलित है। समस्त बौद्धिक विषय, विविध कौशल, अनेकानेक कार्य, पढ़ना लिखना, शिल्प, खेलकूद आदि समस्त क्रियाकलाप पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आते हैं। इसे क्रिया या अनुभव के रूप में समझा जाता है न कि अर्जित ज्ञान या संग्रह किए जाने वाले तथ्यों के रूप में। कक्षा, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, कार्यशाला, क्रीड़ा क्षेत्र अर्थात विद्यालय के प्रांगण में प्राप्त किए जाने वाले समस्त अनुभवों को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाता है। इस प्रकार पाठ्यक्रम विद्यालयी पर्यावरण में होने वाली समस्त क्रियाओं का योग है। इसमें अनुभवों की सम्पूर्णता निहित होती है। दूसरे शब्दों में विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन ही पाठ्यकम है जो छात्रों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर उसके सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास में अपना योगदान देता है।

पाठ्यक्रम शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने का एक साधन है। शैक्षिक उद्देश्य ही पाठ्यक्रम के स्वरूप का निर्धारण करते हैं। सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम भी सामाजिक विज्ञान के उद्देश्यों को प्राप्त करने का एक साधन है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. सामाजिक विज्ञान के एकीकृत स्वरूप से आप क्या समझते हैं?

   .....

   .....

2. 'विषय वस्तु पाठ्यक्रम का एक अंग मात्र है।' इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

   .....

   .....

7.5 वर्तमान समाज एवं सामाजिक विज्ञान

आज व्यक्ति विज्ञान एवं तकनीकी की चकाचौंध में इतना गुम हो गया है कि वह अपनी अन्तःचेतना की आवाज भी नहीं सुन पा रहा है। दिन प्रतिदिन व्यक्ति स्वकेन्द्रित होता चला जा रहा है। उसकी मंशा मात्र सहज वित्त उपलब्धता की हो गई है कि कैसे कम समय में अधिक से अधिक धनोपार्जन कर ले और भौतिकता तथा आधुनिकता से सम्पन्न प्रत्येक सामग्री को जुटा कर आराम तलब जीवन यापन करे। और इसी चाह में वह दौड़ता और सिर्फ दौड़ता ही रहता है जिसमे उसकी मंजिल है सुख सुविधाओं से जुड़ी हुई प्रत्येक सामग्रियों का संग्रह। इस चाह में वह यह विस्मृत कर जाता है कि इन इच्छाओं का कोई अन्त नहीं है जिसके पीछे वह निरन्तर भाग रहा है। इन पंक्तियों को पढ़ने के पश्चात् शायद आपको गुलजार का एक महशहूर गीत याद आ रहा होगा कि 'इन उम्र से लम्बी सड़कों को, मंजिल पर पहुँचते देखा नहीं, बस दौड़ती फिरती रहती है, हमने तो ठहरते देखा नहीं''

परन्तु आज का व्यक्ति शायद सड़क की भी तरह नहीं है। क्योंकि सड़कें तो फिर भी मुसाफिरों को उसके मंजिल तक पहुंचाने में एक साधन के रूप में हैं। उनका अस्तित्व मुसाफिरों को उनके मंजिल तक पहुँचाने के लिए ही है। परन्तु मनुष्य तो इतना आत्मकेंद्रित हो गया है कि वह सिर्फ अपने लिए ही जी रहा है। उसके सारे प्रयास मात्र अपने जीवन को सुखमय बनाने तक आपने ही सीमित हैं। ऐसी परिस्थिति में भला उसे समय कहां कि वह राष्ट्र तथा समाज के कल्याण की बात सोंचे। आज व्यक्ति की भावनाएं बिखर कर समाप्त हो गई है। वह तो इस वैज्ञानिक युग का विवेकवान प्राणी होने का दम्भ भर रहा है। वह यह भूल चुका है कि

जिस स्वर्णिम प्रभात में वह आजादी का श्वाँसे ले रहा है वह असंख्य देश भक्तों द्वारा गुलामी की धुन्ध को काटने की राह में किये गये उनके प्राणों के उत्सर्ग का प्रतिफल है जिन्होंने हम सब को सुरक्षित भविष्य देने की चाह में अपने प्राणों को न्योछावर कर दिया। जिनका जीवन उनके स्वंय के लिए नहीं वरन दूसरों के लिए था। हमारे आज के बच्चें ही कल के नागरिक तथा देश के भावी कर्णधार होंगे। और यदि हमने यही सोंच तथा जीवन शैली इन्हें दी. तो आने वाले समय में देश तथा समाज का जो हश्र होगा, उसे मात्र सोच कर ही रूह काँप जाती है। इसलिए आज की महती आवश्यकता है इन बच्चों को ऐसी गलत मानसिकता से बचाएं तथा उनमें स्वस्थ जीवन जीने की आदत विकसित करें जिससे ये भावी कर्णधार के रूप में देश तथा समाज को प्रगति तथा उत्थान की बुलन्दियों तक ले जाएं तथा आदर्श सामाजिकता तथा नागरिकता के गुणों से सम्पन्न होकर वसुधैव कुटुम्बकम के आदर्श को पुनः स्थापित करें। भावनाओं तथा बुद्धि के मेल से युक्त सामाजिक व्यवस्था को स्थापित करना आज समय की सबसे बड़ी माँग है, इसीलिए एक ऐसे विषय की संकल्पना की गई जो बच्चों में राष्ट्रीय चेतना के भाव को मुखरित कर उन्हें समाज तथा राष्ट्र का एक उपयोगी तथा महत्वपूर्ण सदस्य बनाएं और उपयुक्त व्यवहार प्रतिमानों का प्रशिक्षण देकर उन्हें भविष्य के प्रति चौतन्य बनाए। चूंकि ऐसी समग्रता के साथ जीवन यापन करने की कला का विकास मात्र सामाजिक महत्वपूर्ण विज्ञान के पाठ्यकम से ही सम्भव है इसीलिए उसे विद्यालयी पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया। निम्नलिखित पंक्तियां भी सामाजिक विज्ञान के सम्प्रत्यय को पुनः समझने में सहायक होंगी–

''कालेजों तथा विश्वविद्यालय में छात्र सच्चाई तथा तथ्यों की खोज करने के उद्देश्य से सामाजिक विज्ञानों को पढते हैं जबकि विद्यालय स्तर पर सामाजिक अध्ययन पढ़ाने का मुख्य लक्ष्य छात्रों को एक प्रभावशाली नागरिकता के लिए प्रशिक्षित करना है। सामाजिक अध्ययन की विषयवस्तु वह आधार प्रदान करती है जिससे विद्यालय के छात्र आधुनिक विश्व को समझ सकें, उनमें कुछ विशेष कुशलताएं और आदतें प्रशिक्षित की जा सके तथा उनमें ऐसे दृष्टिकोण और आदर्श विकसित किए जा सके, जिससे वे प्रजातंत्रीय समाज में कुशल और प्रभावशाली सदस्यों के रूप में अपना स्थान बना सकें।''

इस विषय की अतिशय महत्ता तथा उपयोगिता के कारण ही आज न केवल भारत अपितु कई अन्य देशों में भी इस प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाया जा रहा है जबकि उच्च माध्यमिक स्तर (XI तथा XII) पर सामाजिक विज्ञान के विविध घटकों यथा इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र, समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान, मानव विज्ञान आदि का शिक्षण अलग–अलग किया जाता है और छात्र अपनी रूचि से उपरोक्त विषयों में से किसी एक का चयन करते हैं। इसके पश्चात् बी०ए० तथा एम०ए० में भी छात्र इनका चयन करके (बी०ए० में तीन तथा एम०ए० में एक) प्रस्तुत विषय का व्यापक, विशद् तथा गहन अध्ययन करते हैं ।

यहां एक बात आपको और स्पष्ट कर दें कि उच्च माध्यमिक स्तर के पश्चात् इन विषयों का चयन एवं अध्ययन छात्र की रूचि पर निर्भर करता है। वे इसे अनिवार्य रूप से पढ़ने के लिए बाध्य नहीं हैं क्योंकि आगे इनका चयन वैकल्पिक विषय के रूप में होता है।

7.6 सामाजिक विज्ञान के विद्यालयी पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

जैसा कि आप पूर्व में ही अध्ययन कर चुकें हैं कि इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र, दर्शन शास्त्र, मानव विज्ञान तथा मनोविज्ञान विषय मिलकर ही सामाजिक विज्ञान विषय का स्वरूप धारण करते हैं। इन सबका समन्वित रूप ही सामाजिक विज्ञान है जो मानव जीवन का समग्रता के साथ अध्ययन करते हैं। यह एक एकीकृत विज्ञान है जो मानवीय सम्बन्धों पर सर्वाधिक बल देता है। उपरोक्त घटक समन्वित रूप से सामाजिक विज्ञान के पाठ्यकम का निर्माण करते हैं जिनकी विशेषताओं का वर्णन आपके अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण से अग्राकिंत पंक्तियों में पृथक–पृथक किया जा रहा है–

7.6.1 इतिहास के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

इतिहास हमारे सम्पूर्ण भूतकाल का वैज्ञानिक अध्ययन तथा लेखा जोखा है। यह भूतकालीन घटनाओं का अभिलेख है। सभी समाज विज्ञान अपनी विषय सामग्री को प्रस्तुत करने के लिए ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को

अपनाते हैं। इसके पाठ्यक्रम के माध्यम से ही–

- छात्रों में यह अवबोध होता है कि परिवर्तन और विकास की प्रक्रियाओं के द्वारा ही मानव समाज विकसित होते हुए अपने विकास के वर्तमान स्तर तक पहुँचा है।
- मानव सभ्यताओं की समान जड़ों के बारे में समझ तथा मानव जाति की मूलभूत एकता के प्रति प्रशंसात्मक दृष्टिकोण विकसित होता है।
- छात्रों में मानव जाति की सम्पूर्ण धरोहरों को विभिन्न संस्कृतियों द्वारा दी गई देनों के प्रति प्रशंसात्मक तथा सहिष्णुता की भावना विकसित होती है।
- उन्हें यह ज्ञात होता है कि विविध संस्कृतियों की आपसी अंतः क्रिया मानव जाति की प्रगति में एक महत्वपूर्ण कारक रही है।
- उनमें खोज की भावना विकसित होती है।
- छात्रों में आलोचनात्मक तथा सृजनात्मक ढंग से चिन्तन करने की प्रवृत्ति का विकास होता है जिससे वे न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था में भाग लेने के योग्य हो जाते हैं।
- समय के आयाम के बारे में चेतना उत्पन्न होती है।
- ऐतिहासिक मानचित्रों तथा समय रेखा चित्रों को बनाने में वे कुशल हो जाते हैं।
- महापुरुषों, सन्तों, राजाओं आदि के जीवन जीने के ढंग तथा उपलब्धियों को जानकर स्वंय भी उनसे प्रेरित होते हैं जो उनके चरित्र तथा व्यक्तित्व विकास में सहायक होता है।
- बहुत से धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक विवादास्पद प्रश्नों और समस्याओं के समाधान हेतु वे वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना सीख जाते हैं क्योकि इतिहास के द्वारा छात्रों को विशेष प्रकार का मानसिक प्रशिक्षण दिया जाता है जो अन्य विद्यालयी विषयों में नहीं है।
- अतीत की घटनाओं का ज्ञान, उनके घटने के कारण तथा उनसे हुआ लाभ या हानि से सीख प्राप्त करके छात्र वर्तमान जीवन की समस्याओं के समाधान योग्य हो जाते हैं।
- समाज में रहने, कुशल ढंग से समायोजन करने तथा सफल जीवन व्यतीत करने के लिए वांछित सामाजिक योग्यता तथा क्षमता का विकास इसी के माध्यम से सम्भव है।
- आपसी फूट तथा स्वार्थान्धता के ही कारण भारत इतने अधिक दिनों तक अंग्रेजो का गुलाम रहा। और एक लम्बी अवधि तक संघर्ष करने के बाद ही हमे आजादी प्राप्त हुई। यदि हम अपने नागरिक कर्तव्य से पीछे हटे, तो हम पुनः गुलामी और पराधीनता की स्थिति में जा सकते हैं। इतिहास का पाठ्यक्रम छात्रों में यह समझ विकसित कर उन्हे योग्य तथा कर्मठ नागरिक बनाने में सहायक होता है।
- हमारी सभ्यता तथा संस्कृति अतीत की धरोहर है। अतः इनकी सुरक्षा, अतीत के प्रति प्रेम तथा उसके संरक्षण भाव पर ही निर्भर है। इतिहास छात्रों में यह समझ विकसित कर उनमें अतीत के प्रति प्रेम एवं सम्मान की भावना का विकास करता है।
- विभिन्न क्षेत्रों जैसे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों में प्रत्येक राष्ट्र की पारस्परिक निर्भरता के भाव का ज्ञान छात्रों में पारस्परिक सहयोग करने, संकीर्ण राष्ट्रीय मनोवृत्ति को त्यागने तथा विश्व संस्कृतियों के प्रति सम्मान पूर्ण दृष्टिकोण विकसित कर उनमें अन्तर्राष्ट्रीयता के भाव को विकसित करता है।

इस प्रकार इतिहास के पाठ्यक्रम में वे समस्त विशेषताएं निहित है जो छात्रों को एक कुशल नागरिक, आचरण में परिवर्तन लाने, अतीत के प्रति प्रेम करने, जीवन के प्रति उचित दृष्टिकोण का निर्माण करने, अनुशासन की भावना लाने तथा राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकास में अत्यन्त सहायक है। इसके पाठ्यक्रम की पाठ्य सामग्री छात्रों में वसुधैव कुटुम्बकम के भाव को विकसित करती है जिसके फलस्वरूप उनमें सम्पूर्ण वसुधा को एक परिवार तथा समस्त भारतवासी को उस परिवार के सदस्य के रूप में समझने की भावना बलवती हो जाती है। वे व्यक्तिगत हित की संकीर्ण परिधि से निकलकर राष्ट्रहित की बात सोचने लगते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. सामाजिक विज्ञान का सम्बन्ध छात्रों के सामाजिक जीवन से किस प्रकार है?

.....

.....

4. इतिहास की विषय वस्तु छात्रों के चरित्र निर्माण में किस प्रकार सहायक है?

.....

.....

7.6.2 भूगोल के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

भूगोल विश्व के विभिन्न भागों की भौगोलिक दशाओं तथा उनका मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करता है। इसके पाठ्यक्रम के माध्यम से–

- छात्रों में भूगोल की महत्वपूर्ण शाखाओं में आने वाली प्रमुख तकनीकी पदावली (Technology), विस्तृत सम्प्रत्ययों (Broad Concept), महत्वपूर्ण विचारों (Key ideas) मूलभूत सिद्धान्तों (Basic Principles) और पारस्परिक सम्बन्धों (Inter relation) के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है।
- उनमें भूगोल विषय की प्रकृति प्रमुख अध्ययन यंत्रो, तकनीकों व विधियों के प्रति प्रशंसात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में सहायक है।
- भौगोलिक मानचित्रों, ग्राफों, रेखाचित्रों, चार्टों, कार्टोग्रामों, तस्वीरों और ग्लोब में प्रस्तुत भौगोलिक तथ्य सामग्री को पढ़ने, अनुवादित करने, दर्शाने तथा उसकी व्याख्या करने की कुशलताएं और योग्यताएं विकसित करता है।
- छात्रों में संसार भर के लोगों तथा उनके विभिन्न पर्यावरणों व आर्थिक प्रौद्योगिकी विकास स्तर की दृष्टि से उनकी समस्याओं के बारे में तार्किक समझ उत्पन्न होती है।
- छात्रों में देश तथा विश्व के राष्ट्रों में विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों की स्वतन्त्रता के बारे में प्रशंसात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में सहायक है।
- छात्रों में बढ़ती हुई जनसंख्या, प्राकृतिक साधनों के उचित विकास की आवश्यकता तथा प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा के कारकों और परिणामों के प्रति एक गहरी समझ विकसित होती है और वे मनुष्य तथा प्रकृति व उसकी देनों के मध्य एक स्थायी सन्तुलन बनाने के योग्य हो जाते हैं।

- छात्रों में विभिन्न स्थानीय, प्रान्तीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय तथा विश्व के अनेक भागों की भौगोलिक दशाओं तथा वहां के जन–जीवन पर पड़ने वाले उसके प्रभावों की समझ विकसित होती है।
- प्राकृतिक शक्तियों पर मनुष्य की विजय तथा खिलाफ परिस्थितियों को भी मानव द्वारा अपने अनुकूल बनाने का प्रयास छात्र भूगोल के पाठ्यक्रम से ही जान पाते हैं और इसी के आधार पर वे मानव सभ्यता तथा संस्कृति के विकास को समझने के योग्य बनते हैं।
- देश के विभिन्न प्राकृतिक विभाग, लोगों की जीवन शैली, प्रत्येक राज्य की स्थिति, मुख्य नदियां, झीलें, जलवायु, वनस्पति, भोजन, वस्त्र, मकान, फसलें, पेशे, भाषा, त्योहार, वन सम्पदा एवं वन्य जीव, खनिज संसाधन, परिवहन व्यवस्था आदि के विषय में व्यापक एवं विशद् अध्ययन छात्रों में इसी के माध्यम से होता है।

7.6.3 नागरिक शास्त्र के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

नागरिक शास्त्र नागरिक को उसके कर्तव्यों तथा अधिकारों का ज्ञान कराता है। यह नागरिकता से सम्बन्धित विषयों तथा किया कलापों का अध्ययन करता है। इसके पाठ्यक्रम के माध्यम से–

- छात्रों में समाज तथा देश में घटित हो रही सामाजिक तथा राजनैतिक घटनाओं में उनकी जानकारी तथा उसके प्रति अभिरूचि विकसित करने में सहायक है।
- यह छात्रों में सक्रिय सामूहिक आयोजनों में भाग लेने को तत्पर कर, इसके लिए उनमें आवश्यक गुण विकसित करता है।
- उनसे तथा भारतीय समाज से सम्बन्धित सरल तथा महत्वपूर्ण नागरिक और राजनैतिक मामले के विषय में तर्क तथा निर्णय तक पहुंचने में छात्रों को मदद मिलती है।
- छात्रों में कानून के शासन तथा स्व–अनुशासित व्यवहार के प्रति आस्था और विश्वास विकसित होता है।
- सामाजिक गुणों जैसे– सहयोग, आपसी सहायता, सह अस्तित्व तथा समाज सेवा का भाव विकसित होता है।
- देश तथा समाज की समस्याओं के प्रजातान्त्रिक हल ढूंढने में विश्वास विकसित करने में सहायक है।
- भारत के लोगों के रहन सहन तथा पूजा करने के विभिन्न तरीकों के प्रति छात्रों में समझ तथा आदर का भाव विकसित होता है।
- छात्रों में सामाजिक एकता को भंग किए बिना सामाजिक परिवर्तन के प्रति एक चेतना तथा जिज्ञासा विकसित होती है।
- उनमें भारत के भविष्य तथा लोगों की शक्तियों में विश्वास उत्पन्न करने में सहायक है।
- विश्व की अन्य मानव जातियों के प्रति जानकारी तथा आदर और सहानुभूति के भाव को जागृत करने में सहायक है।
- नागरिक तथा राजनैतिक जीवन (विशेष रूप से स्थानीय क्षेत्र) सम्बन्धित विविध प्रकार के प्रोजेक्टों और पर्यावरण सम्बन्धी अध्ययनों की ओर उनका ध्यान आकर्षित होता है।
- छात्रों को यह अवबोध होता है कि कोई भी सरकार तबतक सफलतापूर्वक कार्य नही कर सकती, जबतक वह स्वंय को नवीन परिस्थितियों के अनुकूल नही बनाती।
- छात्रों को यह ज्ञात होता है कि आधुनिक विश्व के सभी राष्ट्र आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा

राजनीतिक जीवन की अन्तर्राष्ट्रीय अन्योन्याश्रित व्यवस्था के अंग है।

7.6.4 अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम में देश की उन आर्थिक समस्याओं तथा प्रकरणों पर बल दिया जाता है जिनका सामान्य जीवन से सीधा सम्बन्ध होता है, जैसे– भारत की आर्थिक स्थिति, पंचवर्षीय योजनाओं में आर्थिक विकास, मुद्रा तथा वित्तीय संस्थाएँ, महँगाई, निर्धनता, कृषि तथा उद्योगों की स्थिति, देश के प्राकृतिक तथा औद्योगिक संसाधन और इनसे होने वाले आर्थिक विकास, आदमी के जीवन पर आर्थिक प्रगति का प्रभाव आदि जिनका सामाजिक जीवन से सीधा सम्बन्ध होता है। इसका पाठ्यकम छात्रों में–

- अर्थशास्त्र के मूलभूत विचारों, नियमों और शब्दों की समझ पैदा करने में सहायक होता है।
- राष्ट्र के प्राकृतिक तथा मानवीय साधनों से परिचित होकर उनके उचित उपयोग की क्षमता उत्पन्न करता है।
- समकालीन आर्थिक समस्याओं के लिए व्यापक सामाजिक विवेक उत्पन्न करने में सहायक है।
- भारतीय अर्थ व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के सह सम्बन्धित होने की समझ उत्पन्न कर नियोजित ढंग से इनके विकास को प्रेरित करता है।
- साधारण सांख्यिकीय समकों के निरूपण की क्षमता विकसित करता है।
- राष्ट्रीय पुनर्निमाण के कार्य में प्रभावशाली ढंग से भाग लेने की भावना लाता है।
- जीवन की आर्थिक समस्याओं के प्रति वस्तुनिष्ठ तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की क्षमता उत्पन्न होती है।
- सहयोग, एकता, समानता, राष्ट्रीयता, सामाजिक न्याय, सामाजिक कुशलता जैसे गुणों का विकास होता है।
- यह छात्रों को मात्र ज्ञान ही प्रदान नही करता वरन उनके व्यवहार को भी सकारात्मक रूप प्रदान करता है।
- मनुष्य की आवश्यकताओं तथा उनकी पूर्ति के सम्बन्ध में विचार करने की क्षमता उत्पन्न करता है।
- यह समझ पैदा करता है कि मनुष्य की इच्छाएं असीमित होती है जबकि साधन सीमित है। अतएव उपलब्ध सभी साधन मनुष्य की समस्त इच्छाओं को पूरा करने में समर्थ नहीं हो पाते। अतएव राष्ट्र के द्वारा निम्नाकिंत समस्याओं के समाधान में अपना भी पूरा सहयोग देना चाहिए। जैसे–
  - ➢ किस वस्तु का उत्पादन किया जाए?
  - ➢ किस प्रकार उसका उत्पादन किया जाए?
  - ➢ कितनी मात्रा में उत्पादित किया जाए?
  - ➢ उसका वितरण किस प्रकार किया जाए?
- श्रम, प्राकृतिक साधन, पूँजी और ज्ञान (प्रौधोगिकी) उत्पादन के महत्वपूर्ण कारक है, इसका अवबोध अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम से ही होता है।
- जीवन के उच्च स्तर होने में उत्पादकता के महत्व की समझ विकसित होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. छात्रों में नेतृत्व के गुणों का विकास किस प्रकार होता है?

.....

.....

6. अर्थशास्त्र छात्रों को भौतिक संसाधनों की सुरक्षा हेतु किस प्रकार प्रेरित करता है?

.....

.....

7.6.5 समाजशास्त्र के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

समाजशास्त्र उस समाज का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करता है जिसमें मनुष्य रहता है और जो मनुष्य को उसकी पहचान देता है। इसके पाठ्यक्रम के माध्यम से–

- छात्र, व्यक्ति के विकास में विभिन्न संस्थाओं के स्थान को जान पाता है।
- विभिन्न सामाजिक समस्याओं के समाधान में समाजशास्त्र की भूमिका को समझ पाते हैं।
- मानव संस्कृति के उत्थान के कम की समझ विकसित होती है।
- अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान की प्रेरणा जागृत होती है।
- छात्रों को यह अवबोध होता है कि समाज का कार्य उन संगठित समूहों द्वारा संचालित किया जाता है जो सामान्य हितों की प्राप्ति के लिए संगठित किए जाते हैं।
- सामूहिक क्रिया और सांस्कृतिक उन्नति के लिए समूहो के सदस्यों तथा समूहों के बीच होने वाले आदान प्रदान की आवश्यकता को जान पाते हैं।
- उन्हें समाज के अस्तित्व के लिए सामाजिक नियन्त्रण की पद्धति की अनिवार्यता का बोध होता है।
- लक्ष्यों, विश्वासों, ज्ञान तथा मूल्यों के हस्तानान्तरण तथा परिवर्तन में परिवार, चर्च, विद्यालय, सरकार तथा व्यवसाय नामक संस्थाओं की भूमिका का अवबोध होता है।

7.6.6 मानवशास्त्र या मानव विज्ञान के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

मानव विज्ञान का भी सम्बन्ध मनुष्य से है जो समाज के सन्दर्भ में मनुष्य का अध्ययन करता है। इसके पाठ्यक्रम के माध्यम से छात्रों को यह अवबोध होता है कि–

- संस्कृति में मानवीय समूहों द्वारा विकसित ज्ञान, विश्वास तथा मूल्य निहित है।
- सामूहिक जीवन का प्रादुर्भाव परिवार से हुआ और वह सांस्कृतिक परिवर्तनों के फलस्वरूप जटिल हो गया।
- आदि कालीन लोगो के विश्वासों, परम्पराओं तथा रहन सहन के ढंगों को आज के तत्कालीन वातावरण की परिस्थितियों से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित किया जा सकता है।

- आधुनिक समाज विभिन्न कालों एवं स्थानों की संस्कृतियों का ऋणी है।
- व्यक्ति के जीवन पर उसी संस्कृति का प्रभाव पड़ता है जिसमें उसका पालन पोषण होता है।

7.6.7 मनोविज्ञान के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यवहार तथा उसके सम्बन्धों का अध्ययन है। यह वह शुद्ध विज्ञान है जो मानव तथा पशु के उस व्यवहार का अध्ययन करता है, जो व्यवहार उसके अन्तर्जगत के मनोभावों तथा विचारों की अभिव्यक्ति करता है जिसे हम मानसिक जगत कहते हैं। इसके पाठ्यक्रम के माध्यम से छात्रों को यह समझ विकसित होती है कि–

- आचरण विविध, जटिल तथा अन्तर्सम्बन्धित कारणों के फलस्वरूप होता है।
- मानवीय आचरण साभिप्राय प्रजनन तथा वातावरण सम्बन्धी कारकों का फल होता है।
- व्यक्ति एक दूसरे से वैयक्तिक मूल्यों, वृत्तियों, व्यक्तित्वों आदि में भिन्न 2 होता है।
- समूह के सदस्य कुछ सामान्य मूल्यों तथा विशेषताओं को रखते हैं।
- प्रत्येक समूह अपने सदस्य के आचरण को प्रभावित करता है।
- सामाजिक समूह व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति में साधन के रूप में कार्य करतें हैं।

7.6.8 दर्शन के पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताएं

दर्शन का मुख्य उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति है। यह ऐसी सबसे जटिल समस्याओं का कठिन, अनुशासित तथा सावधानी के साथ किया हुआ विश्लेषण है जिनका मानव ने कभी अनुभव किया हो। मनुष्य अपने जीवन दर्शन तथा संसार के विषय में अपनी अपनी धारणाओं के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं। यह बात अधिक से अधिक विचारहीन व्यक्तियों के विषय में भी सत्य है। वास्तव में बिना दर्शन के जीवन व्यतीत करना असम्भव है। इसके पाठ्यक्रम के माध्यम से छात्र यह जान पाते है कि–

- एक स्वतन्त्र समाज अपने हित के लिए स्वतन्त्र अन्वेषण के मार्ग को खुला रखता है और अपने नागरिकों की खोज करने की आदतों का निर्माण करता है।
- किसी भी समस्या का समाधान उसकी तहों में जाकर सूक्ष्म ढंग से चिन्तन, मनन तथा तर्क करने से ही सम्भव है।
- उस जीवन का उद्देश्य क्या ह है, जिसे वह जी रहा है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. समाजशास्त्र का ज्ञान छात्रों के लिए किस प्रकार उपयोगी है?

.....

.....

8. दर्शन शास्त्र की मानव जीवन में क्या उपयोगिता है?

.....

.....

7.7 सारांश

इस प्रकार प्रस्तुत इकाई में आपने सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम की प्रमुख विशेषताएं पढ़ी और देखा कि वास्तविक अर्थो में सामाजिक विज्ञान छात्रों को उसके देश और समाज के लिए तैयार कर उसे समाज का एक उपयोगी सदस्य बनाता है। यह पाठ्यकम जीवन की वास्तविकता से सम्बन्ध रखता है तथा छात्र को उस वास्तविकता से परिचित करा कर उसे इस योग्य बनाता है जिससे कि छात्र अपने समाज में भली भांति अनुकूलन करते हुए स्वस्थ जीवन जी सके तथा समाज और राष्ट्र की प्रगति एवं उत्थान में अपना योगदान दे सके।

7.8 अभ्यास के प्रश्न

1. पाठ्यक्रम को 'दौड़ का मैदान' किस लिए कहा गया है? अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।
2. प्रजातन्त्र को सफल बनाने में सामाजिक विज्ञान की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।
3. 'वसुधैव कुटुम्बकम' को अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।
4. सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम छात्रों को उसके समाज तथा राष्ट्र की प्रगति एवं उत्थान करने में किस प्रकार सहायक है।

7.9 चर्चा के बिन्दु

1. सामाजिक विज्ञान के विभिन्न घटक किस प्रकार इसे एक उपयोगी विषय बनाने में सहायक है? चर्चा कीजिए।
2. क्या सामाजिक विज्ञान छात्रों के मन में 'वसुधैव कुटुम्बकम' के भाव को विकसित करने में सहायक है? चर्चा कीजिए।

7.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सामाजिक विज्ञान के विभिन्न घटक यथा इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र, समाजशास्त्र तथा मानव विज्ञान आदि संयुक्त रूप से उसे एकीकृत स्वरूप प्रदान करते है जिससे सामाजिक विज्ञान छात्रों को जीवन के सन्दर्भ में समग्रता के साथ शिक्षा प्रदान करता है।

2. पाठ्यकम एक व्यापक सम्प्रत्यय है जबकि विषयवस्तु उसका एक भाग है। पाठ्यक्रम में शिक्षण तथा शिक्षणेत्तर कियाएं दोनों निहित है जबकि विषयवस्तु में मात्र अध्ययन सामग्री।

3. सामाजिक विज्ञान का सम्बन्ध छात्रों के सामाजिक जीवन से है जिसका वास्तविक ज्ञान कराते हुए यह विषय छात्रों को स्वंय के आचरण में सहयोग, सह अस्तित्व, सहिष्णुता, एक दूसरे के प्रति सम्मान, परहित, दया, प्रेम, क्षमा आदि को उतारने के लिए प्रेरित करता है।

4. चरित्र के निर्माण का आधार बालक का व्यवहार होता है। और इस व्यवहार का निर्माण उच्च सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा महान पुरुषों के प्रेरक व्यक्तित्व से होता है। इसी के आधार पर निर्मित व्यवहार ही बालक के चारित्रिक विकास में सहायक होता है। इस दृष्टिकोण से इतिहास अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय है।

5. कर्तव्य एवं अधिकारों का ज्ञान छात्रों में नेतृत्व के गुणों का विकास करता है। भारत एक लोकतान्त्रिक देश है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति में एक कुशल नागरिकता के गुणों का होना अनिवार्य है। नागरिक शास्त्र विषय छात्रों को इस दृष्टिकोण से प्रशिक्षित करता है।

6. अर्थशास्त्र छात्रों को हमारे उपलब्ध संसाधनों की सीमितता के विषय में ज्ञान कराता है। उनमें यह भाव विकसित करता है कि उपलब्ध संसाधनों से ही हमारी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। इन संसाधनों की तुलना में हमारी जनसंख्या बढ़ रही है। परन्तु संसाधन सीमित है। अतएव इनकी सुरक्षा और संरक्षा करनी चाहिए।

7. समाजशास्त्र छात्रों को उस समाज की संरचना, उसकी व्यवस्था तथा कार्य प्रणाली की जानकारी देता है जिसमें छात्र रहता है। इसके अध्ययन से छात्रों में अपने उस समाज के लिए कुछ करने का जज्बा उत्पन्न होता है जो समाज उसे उसकी पहचान देता है।

8. दर्शन शास्त्र की मानव जीवन में अतिशय उपयोगिता है। यह छात्रों को जीवन को देखने, सुनने, समझने, तथा उसे जीने के दृष्टिकोण से सम्बन्ध रखता है। यह छात्रों के उस अमूर्त विचारों को स्पष्ट करता है जिसके आधार पर वह जीवन जी रहा है। यह छात्रों में तार्किकता, चिंतन, मनन आदि गुणों का विकास कर उन्हे अमूर्त चिन्तन के योग्य बनाता है।

7.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें/संदर्भ

1. दूबे, सत्य नारायण, 'सामाजिक विज्ञान शिक्षण, इलाहाबाद : अनुभव पब्लिशिंग हाउस।
2. त्यागी, गुरूसरन दास, ''सामाजिक अध्ययन का शिक्षण, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर।
3. https://www.studyinternational.com>news
4. www.enotes.com

इकाई– 8 : सामाजिक विज्ञान की शिक्षण विधियाँ

इकाई की संरचना

8.1 प्रस्तावना

8.2 इकाई के उद्देश्य

8.3 शिक्षण विधि का सम्प्रत्यय

8.4 विधि एवं प्रविधि में अन्तर

8.5 उत्तम शिक्षण विधियों की विशेषताएं

8.6 शिक्षण विधियों की आवश्यकता

8.7 समाजिक अध्ययन की शिक्षण विधियाँ

8.8 सारांश

8.9 अभ्यास के प्रश्न

8.10 चर्चा के बिन्दु

8.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

सामाजिक अध्ययन दो शब्दों के मेल से बना है– सामाजिक अध्ययन अर्थात समाज का अध्ययन अथवा समाज से सम्बन्धित अध्ययन। वह समाज जिसमे हम और आप रहते है, उस समाज की समस्त गतिविधियों, सामाजिक सम्बन्धों एवं उन सम्बन्धों के प्रभावों का अध्ययन ही सामाजिक अध्ययन है। अब आपके मन में यह प्रश्न उठ रहा होगा कि यह अध्ययन कैसे और किसके माध्यम से किया जाता है? तो आपको यह स्पष्ट कर दें कि प्रत्येक बच्चे में जिज्ञासा का प्रवृत्ति जन्मजात होती है। वह कौन है, कहां से आया, उसके पूर्वज कौन थे, सभ्यता और संस्कृति का विकास किस प्रकार हुआ, घटनाएं तथा सम्बन्धों का जाल कैसे निर्मित हुआ आदि इसी प्रकार के तमाम प्रश्न है जिनके विषय में जानने के लिए ही वह विद्यालय जाता है जहां शिक्षक उसे विभिन्न विधियों और प्रविधियों के माध्यम से शिक्षण करते हुए उसे सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर देते हुए ज्ञान प्रदान करता है। सामाजिक अध्ययन में किन–किन शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाता है, उसका विस्तार से अध्ययन आप प्रस्तुत इकाई में करेंगे।

8.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. सामाजिक विज्ञान की शिक्षण विधि के सम्प्रत्यय का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
2. विधि एवं प्रविधि में विभेद कर सकेंगे।
3. शिक्षण विधि की विशेषताओं की सूची बना सकेंगे।
4. शिक्षण विधि की आवश्यकताओं को समझ सकेंगे।
5. इकाई विधि की समालोचना कर सकेंगे।
6. निरीक्षित अध्ययन विधि में अध्यापक की भूमिका को निर्दिष्ट कर सकेंगे।
7. खोज विधि तथा वाद–विवाद विधि के महत्व को उद्घाटित कर सकेंगे।

8. निरीक्षित अध्ययन विधि में अध्यापक की भूमिका को निर्दिष्ट कर सकेंगे।

9. आवश्यकतानुसार शिक्षण विधियों का प्रयोग कर सकेंगे।

8.3 शिक्षण विधि का सम्प्रत्यय

कक्षा शिक्षण की तैयारी करते समय शिक्षक के मस्तिष्क में प्रायः दो प्रश्न उठते है–

1. क्या पढ़ाया जाए?

2. कैसे पढ़ाया जाए?

ये दोनो प्रश्न ही अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि विगत वर्षों से शिक्षण प्रशिक्षण पर बहुत बल दिया जा रहा है जिससे अध्यापक अपनी विषय वस्तु को प्रभावशाली शिक्षण विधियों के माध्यम से अपने छात्रों तक सम्प्रेषित कर सके। शिक्षण विधियों का सम्बन्ध सीधा शिक्षण के उद्देश्य से होता है। यह शिक्षण की दिशा तथा गति को निर्धारित करती है। इसलिए अध्यापक के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि वह किन विधियों का प्रयोग करे। जिससे कि छात्रों के व्यवहार में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन होकर शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके। विधि एक व्यवस्थित तन्त्र है जिसके द्वारा अध्यापक अपने शैक्षिक साधनों का प्रयोग निश्चित परिवर्तन या परिणाम लाने के लिए करता है।

शिक्षण विधि अध्ययन एवं अध्यापन कला को सजीव एवं प्रभावोत्पादक बनाती है। सामाजिक अध्ययन में सामाजिक, नागरिक, आर्थिक, भौगोलिक तथा ऐतिहासिक तथ्यों का एवं वास्तविक परिस्थितियों का सजीव प्रस्तुतिकरण एक अध्यापक विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रयोग करते हुए करता है। दूसरे शब्दों में विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रयोग करते हुए सामाजिक अध्ययन के शिक्षण को सफल एवं सजीव बनाया जाता है। अब मापके मन में यह प्रश्न उठ रहा होगा कि विधियों एवं प्रविधियों में क्या अन्तर है? तो आपकी इस जिज्ञासा का समाधान निम्नलिखित पंक्तियों के माध्यम से हो जायेगा।

8.4 विधि एवं प्रविधि में अन्तर

शिक्षण विधि कार्य की वह सामान्य योजना है, जिसका निर्धारण किसी विशेष शैक्षिक परिणाम या उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किया जाता है। अतः शिक्षण विधियाँ शैक्षिक उद्देश्यों से सम्बन्धित होती है। शिक्षण विधि का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व होता है। इसके विपरीत शिक्षण प्रविधि "शिक्षक क्या करता है" को बताती है। शिक्षण प्रविधि का कोई सामान्य ढ़ांचा नही होता है। शिक्षण प्रविधि का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नही होता। इस प्रकार हम कह सकते है कि किसी भी मुख्य शिक्षण विधि के साथ सहायक के रूप में जो भी युक्तियां शिक्षण में प्रयुक्त की जाती है उन्हे रीति या प्रविधि कहते है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. शिक्षण विधि के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

2. विधि, प्रविधि से किस प्रकार भिन्न है?

.....

.....

8.5 उत्तम शिक्षण विधियों की विशेषताएं

उत्तम शिक्षण विधियॉ मनोवैज्ञानिकता तथा छात्रों के जीवन की गुणात्मकता को प्रोन्नत करती है। जबकि यदि विधि खराब है, तो वे इस गुणवत्ता को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है। इसलिए एक शिक्षक को विधियों के चयन एवं निर्धारण में बहुत सजग रहना चाहिए तथा शिक्षण के उद्देश्यों को हमेशा ध्याान में रखना चाहिए। अर्थात अध्यापक को छात्रों में किन अभिवृत्तियों एवं मूल्यों का चेतन अथवा अचेतन रूप से विकास करना है, इसे दृष्टिगत रखते हुए ही शिक्षण विधियों का चयन करना चाहिए। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित विशेषताएं भी है जो किसी भी शिक्षण विधि में अवश्य होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में उत्तम शिक्षण विधि की निम्नलिखित विशेषताएं होती हैः–

1. किसी विशिष्ट प्रकरण के लिए निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि हम छात्रों को अतीत का ज्ञान प्रदान कर रहें हैं तो प्रयोगशाला विधि, योजना विधि तथा ज्ञानेन्द्रियों पर आधारित (श्रव्य, दृश्य तथा गत्यामक) विधियों का प्रयोग करने पर छात्र न केवल अपने इतिहास के प्रति प्रेम एवं गौरव की भावना रखेंगे, वरन वे उसके अध्ययन में रूचि लेते हुए इस दिशा में सार्थक पहल भी करेंगे।
2. विधियां सुनिश्चित तथा उपयोगी होनी चाहिए।
3. एक उत्तम शिक्षण विधि कलात्मक होनी चाहिए जिसमे अध्यापक को प्रासंगिकता तथा अप्रासंगिकता का भली भाति बोध होना चाहिए।
4. विधियां एक उत्प्रेरक के रूप में हो जो छात्रों को अग्रिम अध्ययन के लिए प्रेरित कर सकें।
5. शिक्षण विधियाँ छात्र केन्द्रित हो अर्थात छात्रों की सहभागिता हो, ऐसी विधियां उत्तम होती है।
6. उत्तम शिक्षण विधि वो होती है जो छात्रों में स्व अध्ययन की भावना को विकसित करे।
7. यह छात्रों में तर्क तथा विश्लेषण की शक्ति जागृत करने वाली होनी चाहिए।
8. यह छात्रों की सृजनात्मकता को अभिव्यक्त करने वाली हो।
9. उत्तम शिक्षण विधि वह होती है जो छात्रों में अक्षरशः याद करने या कण्ठस्थ करने की आदत न विकसित करे वरन उन्हे उद्देश्यपरक, मूर्त तथा वास्तविक परिस्थितियों में अध्ययन एवं अधिगम हेतु प्रेरित करे।
10. शिक्षण विधि में कृत्रिमता के स्थान पर सजीवता, रोचकता तथा स्वाभाविकता होनी चाहिए।
11. एक उत्तम शिक्षण विधि वह होती है जो छात्रों में अधिगम के परिणाम स्वरूप वांछित व्यवहार परिवर्तन लाए।
12. वह विधि जो छात्रों को सामूहिक रूप से क्रिया करते हुए अधिगम हेतु प्रेरित करे, उत्तम मानी जाती है।
13. प्रत्येक व्यक्ति में व्यक्तिगत विभिन्नता होती है इसलिए उस विधि को उत्तम माना जाता है जो व्यक्तिगत विभिन्नता के अनुरूप हो।

8.6 शिक्षण विधियों की आवश्यकता

विधियों के अभाव में ज्ञान का सम्प्रेषण नहीं हो सकता। यह बात सभी के संज्ञान में है। आप स्वंय कल्पना करके देखिए कि यदि विधियाँ न हो तो आप अपने अध्यापक से ज्ञान कैसे प्राप्त कर सकेंगे? कहने का आशय है कि विधियां ही वो माध्यम है जिससे शिक्षण कार्य को जीवन्तता प्रदान की जा सकती है। इनकी आवश्यकताओं का अनुशीलन आप निम्नलिखित पंक्तियों में कर सकते हैः–

1. विषय के स्पष्टीकरण, व्याख्या तथा तथ्यों, आँकड़ो आदि पर आधारित सूचनाएं प्रदान करने के लिए।
2. सुनियोजित ढ़ंग से शिक्षण हेतु।
3. छात्रों को सक्रिय करने हेतु।
4. उनमें अधिगम के प्रति रूचि जागृत करने के लिए।

5. शुरू से लेकर कक्षा के अन्त तक छात्रों को एकाग्र करने के लिए।
6. विषयवस्तु को रोचक, प्रभावशाली तथा नवीन बनाने के लिए।
7. छात्रों की तर्क शक्ति, चिन्तन शक्ति, कल्पना शक्ति तथा सृजनात्मक शक्ति में वृद्धि हेतु।
8. छात्रों को सुसंगत तथा यर्थाथ ज्ञान प्रदान करने के लिए।
9. प्रयोजन परक शिक्षण हेतु, जिससे समय का अपव्यय न हो और पाठ्यक्रम को समय पर समाप्त किया जा सके।
10. छात्रों में अधिगम के प्रति नीरसता न आए तथा वे पूर्ण सक्रियता एवं क्रियाशीलता के साथ ज्ञान प्राप्त करें, इसलिए शिक्षण विधि की बहुत आवश्यकता है।
11. छात्रों की जिज्ञासाओं एवं उनके अनुत्तरित प्रश्नों का उत्तरित करने के लिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. एक शिक्षक के रूप में शिक्षण विधियों के चयन के दौरान आप किन प्रमुख बातों को ध्यान में रखेंगे?

.....

.....

4. एक शिक्षक को शिक्षण विधियों की क्यों आवश्यकता है?

.....

.....

8.7 सामाजिक अध्ययन की शिक्षण विधियां

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में प्रयोग में लाई जाने वाली विधियाँ निम्नलिखित हैः–

1. पाठ्यपुस्तक विधि
2. व्यांख्यान विधि
3. वाद विवाद विधि
4. योजना विधि
5. इकाई विधि
6. समस्या समाधान विधि
7. प्रयोगशाला विधि
8. समाजीकृत अभिव्यक्ति
9. सर्वेक्षण विधि
10. निरीक्षित अध्ययन विधि

11. स्रोत विधि
12. प्रसंग विधि
13. कहानी विधि
14. प्रश्न – उत्तर विधि
15. खोज विधि
16. पुनर्वीक्षण विधि
17. गृह कार्य विधि
18. सामूहिक क्रिया विधि
19. समवाय विधि
20. एकल विषय अध्ययन विधि
21. जीवनगाथा विधि
22. प्रस्तुतीकरण विधि
23. प्रादेशिक विधि
24. केन्द्रिक या तुलना विधि
25. स्थानीय भूगोल विधि

1. पाठ्य पुस्तक विधि

यह सर्वाधिक प्रचलित प्रविधि है। भाषा से लेकर सामाजिक विषयों के क्षेत्र में इस प्रविधि का व्यापक उपयोग है। यह प्रविधि पहले विधि के रूप में स्वीकार की जाती थी जिसमें अध्यापक पहले स्वंय पाठ को पढ़ता जाता है और साथ ही साथ आवश्यकतानुसार स्पष्टीकरण भी देता जाता है। पाठों को याद करने के लिए, प्रश्नों के उत्तर लिखने के लिए तथा स्वाध्याय के लिए पाठ्यपुस्तकें, उत्तम होती है। चूंकि ये स्वाध्याय का साधन होती है इसलिए शिक्षण के दौरान इनके प्रयोग के औचित्य को लेकर आगे यह तय किया गया कि भाषा तथा गणित जैसे विषयों को छोड़कर अन्य विषयों के लिए इसका प्रयोग अनावश्यक है इसलिए इसे विधि के स्थान पर प्रविधि के रूप में स्वीकार किया गया। परन्तु हम इसके महत्व को भी अस्वीकार नही कर सकते। इसलिए स्मरण रहे कि पाठ्यपुस्तकें प्रामाणिक तथा तथ्याधारित होनी चाहिए। उसमें शुद्ध शब्दावली हो, उचित चित्र, मानचित्र का समावेश हो। साथ–2 पाठ के अन्त में अभ्यास के लिए समुचित प्रश्न हो। पाठ्यपुस्तकें विद्वान एवं विषय के ज्ञाता द्वारा रचित होनी चाहिए तथा पुस्तकों के चयन में अध्यापक द्वारा अपने छात्रों को वांछित दिशा निर्देश मिलना चाहिए। शिक्षक द्वारा अपने छात्रों को पाठ्य पुस्तकों के साथ साथ अन्य सन्दर्भ ग्रन्थों तथा पत्र–पत्रिकाओं के अध्ययन के लिए भी प्रेंरित करना चाहिए।

2. व्याख्यान विधि

इस विधि में अध्यापक किसी भी प्रसंग को लेकर उस पर एक सारगर्भित भाषण देता है जिसे छात्र ध्यान से श्रवण करते है। शिक्षक अपने व्याख्यान में प्रकरण के सभी महत्वपूर्ण पक्षों तथा तत्वों को सम्मिलित कर छात्र को समग्र ज्ञान प्रदान करने का प्रयास करता है। हमारे शिक्षण संस्थाओं में (प्राथमिक विद्यालयों को छोड़कर) प्रायः इसी विधि को बहुतायत से प्रयोग किया जाता है। परन्तु इस विधि में शिक्षक सक्रिय एवं छात्र निष्क्रिय श्रोता के रूप में रहते हैं। व्याख्यान का बहुत कम अंश ही छात्र आत्मसात कर पाते है।

व्याख्यान विधि को हम एक उपयोगी शिक्षण विधि बना सकते है बशर्ते कुछ बातों को हम ध्यान में रखें जैसे अध्यापक अपने व्याख्यान के दौरान छात्रों से कुछ प्रश्न भी करता रहे जिससे वे पाठ से अलग न होने पाए और छात्रों की सक्रियता भी बनी रहें। व्याख्यान विधि का विस्तृत अध्ययन आप ईकाई 5 में भी कर चुके है और अधिक अनुशीलन हेतु आप पुनः उक्त इकाई का अध्ययन करें।

3. वाद विवाद विधि

वाद विवाद विधि का अध्ययन आप ईकाई संख्या 6 के अन्तर्गत कर चुकें है। तथापि पुनरावृत्ति हेतु पुनः संक्षिप्त परिचय आपको दें दें। इस विधि में कोई पाठ पढ़ाते समय शिक्षक अपने छात्रों से प्रश्न पूछ कर उनकी प्रतिक्रियाओं को आमन्त्रित करता है और इस प्रकार विषय वस्तु में आने वाली विभिन्न समस्याओं या बिन्दुओं पर कक्षा में खुलकर चर्चा की जाती है। इस विधि की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें शिक्षक के साथ–2 छात्र भी जवाब देने के लिए तथा अपनी बात को प्रस्तुत करने के लिए शुरू से अन्त तक सक्रिय रहते हैं। और दोनो के मध्य एक सक्रिय मौखिक अन्तःक्रिया विकसित होती है। इसमें छात्रों को विषय का बोध तो होता ही है साथ साथ उनकी चिन्तन तथा तर्क शक्ति का भी विकास होता है। चूंकि इस विधि में शिक्षक और छात्र मिलकर कार्य करते हैं इसलिए छात्रों में सहयोगात्मक दृष्टिकोण भी विकसित होता है।

4. योजना विधि

सामाजिक विज्ञान शिक्षण के सन्दर्भ में योजना विधि का भी विस्तृत अध्ययन आप ईकाई संख्या 10 में कर चुकें है। तथापि संक्षिप्त पुनरावलोकनार्थ आपके लिए हम पुनः यहां प्रस्तुत करेंगे।

योजना विधि एक ऐसी विधि है जिसमें कल्पना, सहयोग तथा शारीरिक नियन्त्रण (Motor Control) पर बल दिया जाता है।

प्रो0 बेलार्ड के शब्दों में "योजना यर्थाथ जीवन का ही एक भाग है जो पाठशाला को प्रदान किया गया है।" क्रिया द्वारा सीखने" की अपेक्षा "रहने के द्वारा सीखना" इस विधि का एक अधिक सुन्दर वर्णन है।"

निःसन्देह यह विधि अत्यन्त उपयोगी है क्योकि सक्रिय सामाजिक सहयोग से कार्य करते हुए सीखने से छात्र ज्ञानार्जन के साथ–साथ सामाजिक गुणों तथा कुशलताओं को भी आत्मसात करतें हैं। योजना विधि विषयवस्तु के विभिन्न तत्वों के समन्वय तथा प्रशिक्षण के हस्तान्तरण के विभिन्न महत्वपूर्ण अवसर प्रदान करती है। परन्तु इस विधि की सफलता मुख्य रूप से दो बातों पर निर्भर करती हैः–

1. शिक्षक परिश्रमी, निष्ठावान, प्रबुद्ध तथा प्रजातान्त्रिक भावना से ओतप्रोत हो।
2. छात्र अपने पाठशाला, विभिन्न संदर्भित समूहों तथा व्यक्तियों से पूर्ण सहयोग पाए जो योजना की पूर्णता के लिए आवश्यक है।

उदाहरण– ईसा मसीह का जन्म दिन मनाना, किसी भी त्योहार का आयोजन, किसी प्रसंग से सम्बन्धित प्रदर्शनी लगाना, किसी घटना को आयोजित करना आदि।

जैसा कि आपको उपर्युक्त उदाहरणों से ही स्पष्ट हो रहा है कि ये एक या दो कालांश में पूरे नही किये जा सकते। इन्हे करने के लिए पर्याप्त समय, अध्यापकों का मार्ग निर्देशन तथा सम्बन्धित समूहों का पूरा सहयोग प्राप्त होना आवश्यक है। साथ ही साथ इस विधि में छात्रों को पूर्ण स्वतन्त्रता भी प्रदान करना आवश्यक है।

5. इकाई विधि

ईकाई शब्द को आपने बहुत सुना होगा। आइए हम आज आपको इसके विषय में विस्तार से बताते है।

इकाई का सारतत्व "समग्रता" में निहित है। इसकी विशेषता हमे हरबार्ट के शैक्षिक विचारों में मिलती है। अर्थात सम्पूर्णता या समग्रता के साथ अध्ययन करने की बात हरबार्ट ने भी कही थी। इकाई किसी विषय का एक बड़ा उपविभाग होता है, जिसका कोई मूलभूत सिद्धान्त या प्रकरण होता है। छात्रों की क्रियाओं को इस सिद्धान्त या प्रकरण के अनुसार ऐसे ढ़ंग से नियोजित किया जाता है, जिससे कि उन्हे विषय के आवश्यक तत्वों का पूर्ण ज्ञान हो जाए।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषदः– इकाई एक निर्देशात्मक युक्ति है जो छात्रों को समवेत रूप में ज्ञान प्रदान करती है।

थॉमस एम0 रिस्कः– इकाई किसी समस्या या योजना या सम्बन्धित सीखने वाली क्रियाओं की समग्रता या एकता को प्रकट करती है।

व्हसेल तथा एडम्स (Wesley & Adams):– के अनुसार "छात्रों के द्वारा सीखने की प्रक्रिया को सुगम बनाने के लिए विषयवस्तु और क्रियाओं के संगठित समूह को एक इकाई कहते हैं।"

इस प्रकार एक इकाई वस्तु सामग्री का एक संगठन है, जो विस्तार में महत्वपूर्ण है, लेकिन इतना लघु होता है कि छात्र उसे पूर्ण मानते है। सामाजिक विज्ञान के शिक्षण के दौरान इकाई विधि का प्रयोग करते समय अध्यापक पाठ्यक्रम के किसी भी अंश या भाग को इकाइयों में बांट लेता है। एक इकाई ऐसी होती है जो एक कालांश में पढ़ाई जा सके। वह इकाई चयनित प्रकरण की प्रत्येक सूचनाओं तथा अपनी सम्पूर्णता के साथ होगी। इकाई में रखी जाने वाली तथ्य सामग्री (Factual Content) बहुत महत्वपूर्ण होती है क्योकि इसी से छात्र पाठ के उद्देश्यों तथा लक्ष्यों तक पहुँचते हैं।

इकाई विधि के शिक्षण पद

इकाई विधि के द्वारा शिक्षण हेतु विभिन्न विद्वानों ने अलग–अलग पद बताएं है जैसे– मॉरिसन ने पाँच पद, रिस्क ने तीन पद तथा वेस्ले और एडम्स ने आठ पद बताएं है। इनमे वेस्ले और एडम्स द्वारा एक इकाई की रचना की प्रक्रिया में प्रयुक्त पदों का अग्रिम पंक्तियों में वर्णन कर रहें हैं। क्योकि इसमे यह अधिक व्यापक तथा मॉरिसन और रिस्क के द्वारा संस्तुत पदों को भी अपने में समाहित किए हुए है।

1. पृष्ठभूमि (The Setting):– इसमें एक प्रारम्भिक कथन किया जाता है और जिसमें शिक्षण की सम्पूर्ण योजना, पिछली योजना तथा अग्रिम योजना के विषय में अत्यन्त संक्षेप में बताया जाता है।
2. उद्देश्य (Objectives):– कुछ वास्तविक उद्देश्यों को अंकित किया जाता है।
3. विषयवस्तु की उपयुक्त तथा सम्पूर्ण रूपरेखा (Activities for pupils, Closly integrated with the objectives and contents):– अर्थात् इकाई विधि द्वारा शिक्षण–अधिगम के समय छात्रों के द्वारा की जाने वाली क्रियाएं पाठ के उद्देश्यों तथा विषय वस्तु से पूरी तरह सम्बन्धित होनी चाहिए।
4. शिक्षक तथा छात्रों के लिए पुस्तक सूचियाँ (Bibliographies for teachers and taught):– अधिगम के दौरान प्रयुक्त सन्दर्भ ग्रन्थ तथा पुस्तक सूचियाँ शिक्षक और शिक्षार्थी के लिए उपलब्ध होना चाहिए।
5. श्रव्य तथा दृश्य सामग्रियाँ (Auditary and visual aids):– शिक्षण में जिन श्रव्य तथा दृश्य सामग्रियों का उपयोग किया जाना है उसकी स्पष्ट रूपरेखा होनी चाहिए।
6. परिणाम या उपलब्धि के साक्ष्य (Consequences or evidence of achievement):– प्रस्तुत इकाई शिक्षण का क्या परिणाम निकलेगा या उसकी क्या देन होगी, इसका उल्लेख करते हुए एक सारांश बनाना या एक कार्यक्रम का निर्माण करना।
7. परीक्षण (Evaluation):– उस परीक्षण, अभिलेख या अन्य प्रकार की परीक्षण सामग्री का उल्लेख, जिसकी सहायता से इकाई शिक्षण के द्वारा अध्यापक द्वारा अपने छात्रों का मूल्यांकन किया जाएगा।

इकाई योजना के प्रारम्भ में अध्यापक को स्वंय अपने ज्ञान और अपनी इच्छा व निर्णय के आधार पर इकाई बनानी चाहिए। परन्तु आगे की इकाईयों के निर्माण में उसे छात्रों का सहयोग लेना चाहिए। उनसे मिलकर विविध क्रिया कलापों का आयोजन आगे की इकाईयों में करवाना चाहिए, उनके द्वारा प्रदान किए गय अनुभवों, प्रश्नों और समस्याओं को आगे दिये जाने वाले ज्ञान से जोड़ना चाहिए और इकाई निर्माण के प्रत्येक चरणों में उनकी सक्रिय सहभागिता लेनी चाहिए।

इकाई विधि द्वारा शिक्षण के चरण

जब शिक्षण इकाई आयोजना के द्वारा पढाए जाने वाले पाठ को तैयार कर लेता है तो उसके पश्चात उसका कक्षा में शिक्षण करता है जिसके 6 चरण होते है:–

1. उपागम (Approach):– छात्रों की रूचि को नए पाठ से जोड़ना तथा उपयुक्त प्रश्नों (उनके पूर्व ज्ञान पर आधारित) को पूछते हुए रोचक विधि से शिक्षण आरम्भ करना।
2. योजना (Planning):– शिक्षक एवं शिक्षार्थी विविध समस्याओं को प्रस्तुत कर उनकी विवेचना तथा उन्हे हल करने की

योजना बनाते हैं।

3. आत्मसातीकरण (Assimilation):– इस चरण में छात्र बताए जाने वाले ज्ञान को आत्मसात करते हुए विभिन्न प्रकार की क्रियाएं करते हैं। छात्र ये सभी कार्य अपने अध्यापक के निर्देशन में ही करतें हैं।
4. प्रस्तुतीकरण (Presentation):– इसमें विभिन्न श्रृव्य–दृश्य सामग्री की सहायता से इकाई की विषय वस्तु को प्रस्तुत किया जाता है।
5. समापन (Culmination):– शिक्षण की सर्वोच्च उपलब्धि, परिणाम या सारांश लेखन या खेल के रूप में आएगी।
6. मूल्यांकन (Evaluation):– इकाई शिक्षण द्वारा छात्रों के अर्जित ज्ञान का मूल्यांकन किया जाएगा।

पाठ्यक्रम को किस प्रकार छोटी–छोटी इकाईयों में विभक्त किया जाए, वेस्ले तथा एडम्स द्वारा प्रस्तावित कक्षा पाँच के सामाजिक विज्ञान विषय की इकाईयों की सूची से स्पष्ट हो जायेगा और आप भी अपने विषय में इसी प्रकार से छोटी–छोटी इकाईयों को बनाकर इकाई विधि से शिक्षण कर सकेंगे।

विषय–सामाजिक विज्ञान

कक्षा–पाँच

उपइकाईयाँ–

1. हम जीवन और स्वास्थ्य की रक्षा कैसे करते हैं?
2. कृषक हमे क्या देता है?
3. नगरीय श्रमिक कृषक को क्या योगदान करते हैं?
4. मशीनों ने कार्य के तरीके कैसे बदल दिए है?
5. परिवहन एवं संचार साधन किस प्रकार उपयोगी है?
6. नगर एवं गाँव के जीवन की तुलना कैसे करेंगे?
7. खनिक, मद्देरे आदि श्रमिक, जो हमे अन्य कच्चा माल देते हैं।
8. अच्छा शासन क्यों आवश्यक है?
9. हमारे राष्ट्रीय संसाधनों का बुद्धिमतापूर्ण उपयोग सीखना।
10. हमारी सामाजिक संस्थाए कैसे विकसित हुई है?

इकाई विधि के लाभ

- यह विधि विविध प्रकार की क्रियाओं, अनुभवों तथा समस्याओं का आयोजन करके क्रियाशीलता के सिद्धान्त पर बल देती है।
- यह कक्षा कार्य को अधिक उद्देश्यपरक, रोचक तथा बोधगम्य बनाने में सहायक है।
- वैयक्तिक विभिन्नता की दृष्टि से यह विधि अत्यन्त लाभप्रद है जिसमें प्रत्येक बच्चा अपनी योग्यता, क्षमता, रूचि तथा आवश्यकतानुसार अधिगम में सक्रिय रूप से भाग लेता है।
- छात्रों में विभिन्न योजनाओं के निर्माण की कला उत्पन्न होती है।
- इस विधि से बालकों में विषय के प्रति रूचि जागृत होती है।
- इसके द्वारा छात्रों में स्वाध्ययन की आदत का विकास होता है।
- छात्रों में सहयोग विनम्रता, नेतृत्व, सहकारिता, धैर्य, सहनशीलता तथा एक दूसरे के प्रति सम्मान का भाव विकसित करने

के लिए यह विधि उत्यन्त उपयोगी है।

- छात्रों में उत्तरदायित्व को पूर्ण करने की भावना का विकास इस विधि द्वारा कुशलतापूर्वक किया जा सकता है।

इकाई विधि के दोष

- इस विधि के माध्यम से सभी विषयों का शिक्षण सम्भव नहीं है।
- यह विधि छात्रों में अनुभूति कराने में असफल है जिसके कारण उनमें सौन्दर्य भावना का विकास नहीं हो पाता।
- यह विधि प्रत्येक प्रकरण के ज्ञानार्जन के लिए उपयुक्त नहीं है।
- यह विधि समय, धन तथा श्रम साध्य होने के कारण विद्यालय की समय – सारणी तथा उसकी व्यवस्था के अनुसार बहुत उपयोगी नहीं है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. इकाई विधि "क्रियाशीलता के सिद्धान्त" पर किस प्रकार बल देती है ?

.....

.....

6. समस्या समाधान विधि

यह विधि योजना विधि से पर्याप्त समानता रखती है। अन्तर मात्र इतना है कि योजना विधि में प्रायोगिक कार्य को महत्व प्रदान किया जाता है और यह प्रायोगिक कार्य एक वास्तविक स्थिति में सम्पन्न किया जाता है। जबकि समस्या समाधान विधि में किसी विशेष समस्या को एक विशेष स्थिति में वैज्ञानिक ढंग से हल किया जाता है। योजना पद्धति में शारीरिक एवं मानसिक दोनो प्रकार की क्रियाएं निहित होती है जबकि समस्या समाधान विधि में केवल मानसिक क्रियाएं निहित होती है। सामाजिक विज्ञान के शिक्षण में समस्या समाधान विधि का महत्वपूर्ण स्थान है क्योकि इसका मुख्य ध्येय बालकों को जीवन की वास्तविक समस्याओं से अवगत कराना है। समस्या का चयन बालकों के सामाजिक जीवन से ही किया जाता है जैसे– "भारत में कृषि की हीन दशा, उपभोग, विनिमय, उत्पादन, वितरण व राजस्व से सम्बन्धित समस्याएं, "औरगंजेब एक राष्ट्रीय शासक" "मुहम्मद बिन तुगलक की योजनाए क्यों असफल रही"भारत में जनसंख्यातिरेक की समस्या" प्रजातन्त्र के लिए निरक्षरता एक बहुत बड़ी चुनौती तथा इसी प्रकार की अन्य समस्याएं। छात्र अपनी रूचि तथा मानसिक स्तर के अनुसार किसी भी समस्या का चयन करके उसका वैज्ञानिक ढ़ंग से समाधान निकालता है। इस विधि के द्वारा छात्रों में सोचने, निर्णय करने, तुलना करने तथा चयन करने की प्रवृत्ति तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है। कक्षा में छोटी–छोटी समस्याओं का हल ढूँढने के पश्चात उनका मनोबल ऊँचा होता है और वे आगे चलकर समाज तथा देश की समस्याओं को हल करने के लिए भी अभिप्रेरित होते हैं।

7. प्रयोगशाला विधि

शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने प्रत्येक विषय के लिए अपनी प्रयोगशाला स्थापित करने के लिए बाध्य कर दिया। जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों के लिए प्रयोगशाला की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार सामाजिक विषयों के लिए भी इसकी नितान्त आवश्यकता है। प्रत्येक विषय की पृथक प्रयोगशाला की स्थापना से न केवल छात्र अधिगम के लिए एक प्रेरक तथा आनन्द से भरपूर वातावरण पाएंगे अपितु वे सामाजिक विज्ञान की प्रत्येक वस्तु, सामग्री, पुस्तकें, सहायक पुस्तकें, सन्दर्भ ग्रन्थों, शब्दकोशों, चार्ट, मॉडल, चित्र, मानचित्र, रेखाकृति, पत्र – पत्रिकायें, फिल्म, स्लाइड्स, प्रोजेक्टर, स्क्रीन, रेडियों, टेलीविजन आदि को वे एक ही स्थान

पर पाएंगे। जिससे उन्हे उनका अध्ययन करने के लिए इधर–उधर भटकना नही पड़ेगा और समय का भी अपव्यय नही होगा। इससे बालकों के अधिगम के लिए एक उपयोगी स्थिति तथा वातावरण भी बना रहेगा। विभिन्न प्रकार के शोध यन्त्र जैसे अवलोकन, अनुसूची, साक्षात्कार आदि की एक ही जगह पर उपलब्धता ने केवल अध्यापक वरन छात्रों के लिए भी सुविधाजनक रहेगी। जैसे– सामाजिक अन्तर (Social distance) को यदि छात्र मापना चाहते हैं तो वोगार्डस के सोशियल डिस्टेंस स्केल का प्रयोग वे कर सकते हैं। व्यक्तित्व के मापन हेतु व्यक्तित्व मापनी का प्रयोग, रूचि के लिए रूचि मापनी, बुद्धि के लिए बुद्धि मापनी इसी प्रकार अन्य चरों के मापन हेतु वे विभिन्न मापनियों का प्रयोग कर सकते हैं। इसलिए आवश्यक है कि सामाजिक विज्ञान में उसकी अपनी प्रयोगशाला तथा उसकी अपनी विभिन्न सामग्रियाँ और सामाजिक शोध यन्त्र उपलब्ध होने चाहिए।

हमने यहां "चरों के मापन" जैसे शब्दों का प्रयोग किया है तो आपकी जानकारी के लिए बता दें कि चर का अर्थ उस गुण या विशेषता से होता है जिसका हमे मापन करना है।

8. सामाजीकृत अभिव्यक्ति विधि

सामाजिकृत अभिव्यक्ति एक आदर्श है जो शिक्षण में ऐसे प्रयोग की कल्पना करता है जिसमे कक्षा के समस्त छात्र सहयोग एवं सद्भावना के साथ ज्ञान अर्जित कर सकें। इस विधि में कक्षा के पर्यावरण की औपचारिकता को समाप्त कर उसके स्थान पर स्वाभाविकता उत्पन्न की जाती है जिससे छात्र अपनी प्रकृति, रूचि तथा सहयोग के साथ ज्ञानोपार्जन कर सकें। इस पद्धति का मूलभूत सिद्धान्त समाजीकरण है। छात्रों में समाजिकता की भावना उत्पन्न करना ही इस विधि का मुख्य ध्येय है। इसे और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम आपको यहां एक उदाहरण दे रहें हैः–

प्रकरण–"पारिवारिक बजट"

कक्षा–10

उक्त प्रकरण के लिए सामाजिकृत अभिव्यक्ति की विभिन्न पद्धतियों में से "औपचारिक वर्ग योजना" को अपना सकते है। इससे कक्षा में अनुशासन हीनता की समस्या भी नहीं आएगी। छात्र विभिन्न सभाओं तथा समितियों का संगठन एवं संचालन की प्रक्रिया का ज्ञान प्राप्त कर लेंगे। शिक्षक आर्थिक दृष्टि से समाज के परिवारों के आधार पर छात्रों को निम्नलिखित वर्गो में विभक्त करेगा–

1. निर्धन परिवारों से सम्बन्धित वर्ग
2. मध्यम श्रेणी के परिवारों से सम्बन्धित वर्ग
3. धनी परिवारों से सम्बन्धित वर्ग

उपरोक्त वर्गीकरण के उपरान्त तीनों वर्ग एक सभापति का निर्वाचन करेंगे। वह सभा की कार्यवाही का संचालन कराएगा और तीनो वर्ग अलग – 2 रूप से परिवारों की आय के अनुसार खर्च की मदें मालूम करेंगे। इसके आधार पर पारिवारिक बजट की रूपरेखा तैयार की जाएगी।

9. सर्वेक्षण विधि

डिक्शनरी ऑफ सोशियोलोजी के अनुसार "एक समुदाय के सम्पूर्ण जीवन या उसके किसी एक पक्ष के सम्बन्ध में व्यवस्थित और पूर्ण तथ्य विश्लेषण का नाम ही सर्वेक्षण है"।

विटनी के अनुसार "सामाजिक सर्वेक्षण एक व्यवस्थित प्रयास है जिससे कि एक सामाजिक संस्था, समूह या क्षेत्र की वर्तमान दशा का विश्लेषण, स्पष्टीकरण और विज्ञप्तीकरण किया जाता है"।

कैलोग ने इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए कहा कि "सामाजिक सर्वेक्षण प्रायः सहकारी प्रयास माने गये हैं, जो कि किसी ऐसी सामाजिक समस्याओं के अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धतियों का प्रयोग करते हैं जो इतनी गम्भीर है कि जनमत को उभार सकें तथा उनको हल करने की जनइच्छा को जागृत कर सकें"।

सर्वेक्षण के उद्देश्य

सामाजिक विज्ञान विषय में सर्वेक्षण विधि के प्रयोग के निम्नलिखित उद्देश्य हैः–

1. सामाजिक पक्षों के विषय में वास्तविक तथ्यों को एकत्र करना।
2. कारणों व प्रभाव के मध्य व्याप्त सम्बन्धों का पता लगाना।
3. संकलित तथ्यों के आधार पर समस्या विशेष को हल करने के लिए उपयुक्त सुझाव प्रस्तावित करना।

सर्वेक्षण की प्रक्रिया

सर्वेक्षण विधि द्वारा यदि अध्यापक शिक्षक कार्य कर रहा है तो वह निम्नलिखित चरणों से होकर गुजरता है:–

1. लक्ष्य या उद्देश्य को परिभाषित करना।
2. अध्ययन की जाने वाली समस्या की भली भॉति व्याख्या करना।
3. अध्ययन क्षेत्र का निर्धारण करना, जिससे कि भटकाव की स्थिति न आने पाए।
4. सर्वेक्षण यन्त्रों जैसे साक्षात्कार, अनुसूची या प्रश्नावली को तैयार करना।
5. समस्या से सम्बन्धित उपलब्ध सामग्री के सभी स्त्रोतों की जाँच करना।
6. सर्वेक्षण दलों का निर्माण कर उनके कार्यो का विभाजन करना।
7. जिन स्थानीय समुदायों में सर्वेक्षण करना है, उनसे सम्पर्क स्थापन।
8. सम्बन्धित क्षेत्र में साक्षात्कार अनुसूची या प्रश्नावली देकर तथ्यों का सग्रह करना अर्थात उक्त सर्वेक्षण यन्त्रों पर उनकी प्रतिक्रियाएं लेना।
9. संग्रहित सामग्री का वर्गीकरण, सारणीयन तथा विश्लेषण करना।
10. प्राप्त परिणामों की व्याख्या या स्पष्टीकरण करना।
11. प्राप्त परिणामों एवं तथ्यों का सर्वेक्षण समूह के साथ चर्चा करना।
12. अन्त में प्राप्त तथ्यों एवं परिणामों पर एक प्रतिवेदन का निर्माण करना।

यद्यपि विद्यालयी स्तर पर सामाजिक विज्ञान विषय के सन्दर्भ में इस विधि का प्रयोग करना थोड़ा कठिन जरूर होगा परन्तु इतने विस्तार से न करके छोटे स्तर पर यदि किया जाए तो इस विधि के माध्यम से छात्र अपने शिक्षक के नेतृत्व में न केवल वास्तविक तथ्यों का संग्रह करना सीखेंगे वरन उनमे सर्वेक्षण के सामूहिक कार्य करने से कई सामाजिक गुणों और कुशलताओ का विकास होगा। इसे हम आपको और अधिक एक उदाहरण के माध्यम से स्पष्ट करेंगे।

प्रकरण– किसी गाँव का सर्वेक्षण

उक्त प्रकरण पर सर्वेक्षण करने के लिए सर्वप्रथम किसी भी कक्षा को 5 या 6 (आवश्यकतानुसार) वर्गो में विभाजित कर लेंगे और प्रत्येक वर्ग को एक विषय का निरीक्षण करने का कार्य दे दिया जाएगा जैसे–

'क' वर्ग– ग्राम की भौगोलिक स्थिति का सर्वेक्षण करेगा।

'ख' वर्ग– उस ग्राम के उद्गम तथा उसके विकास के विषय में खोज करेगा।

'ग' वर्ग– ग्राम की जनसंख्या, व्यवसायों तथा आर्थिक दशाओं के विषय में सर्वेक्षण करेगा।

'घ' वर्ग– घरों तथा दुकानों की गणना करेगा।

'च' वर्ग– यातायात के साधनों तथा सुविधाओं का सर्वेक्षण करेगा।

'छ' वर्ग– शासन व्यवस्था तथा सामाजिक स्थितियों के विषय में ज्ञान प्राप्त करेगा।

जब सभी वर्ग अपने – अपने निर्धारित कार्यो का सर्वेक्षण कर लेंगे तो उन पर विचार विमर्श कर एक निष्कर्श निकालेंगे और उनको लेखबद्ध करेंगे। साथ ही साथ उक्त सर्वेक्षण के दौरान एकत्रित विभिन्न चित्रों, मानचित्रों तथा कला के नमूनों से अपने

सामाजिक विज्ञान के कक्ष को भी सुसज्जित करेंगे। अब आप स्वंय समझ सकते है कि उक्त विधि में क्रिया द्वारा जो ज्ञान अर्जित कर रहें है वे वास्तविक जीवन से ही सम्बन्धित है और इस पगकार प्राप्त ज्ञान अधिक स्थायी भी होता है। इसलिए यह विधि सामाजिक विज्ञान विशय के शिक्षण के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

10. निरीक्षित अध्ययन विधि

इस विधि का प्रयोग परम्परागत विधियों के दोषों को दूर करने के उद्देश्य से किया गया। इसमें अध्यापक द्वारा छात्रों को विषय से सम्बन्धित कोई कार्य दे दिया जाता है और छात्र पूरी तन्मयता के साथ प्रदत्त कार्य को पूरा करते हुये लक्ष्य की ओर बढते हैं। इस दौरान अध्यापक सतत रूप से छात्रों के कार्यो का निरीक्षण करते हुए उन्हे आवश्यकतानुसार निर्देशन भी देते रहते हैं। यह एक प्रकार से कक्षा कार्य का ही अपररूप है क्योकि इस विधि में कोई भी कार्य छात्रों को कक्षा, प्रयोगशाला या कार्यशाला में ही करने को दिया जाता है। छात्रों को दिए जाने वाला कार्य चित्र या मानचित्र अंकन करने का कार्य, किसी भौगोलिक उपकरण का आरेख बनाने का कार्य, लघु उत्तरीय प्रश्न लिखने का कार्य, एलबम में भौगोलिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक महत्व के चित्रों को किसी एक निर्दिष्ट क्रम से व्यवस्थित करने का कार्य, किसी वंश की वंशावली तैयार करना तथा इसी प्रकार के अन्य कार्य हो सकते हैं।

निरीक्षित अध्ययन विधि के प्रयोग की विधि

इसका प्रयोग कैसे किया जा सकता है, इसके लिए प्रो0 बाइनिंग तथा बाइनिंग ने निम्नलिखित योजनाएं प्रस्तुत कीः–

i. सम्मेलन योजना (Conference Plan)ः– इस योजना के द्वारा उन बालकों को शिक्षा दी जाती है जो अपनी व्यक्तिगत कठिनाईयों के कारण कक्षा के अन्य छात्रों के साथ नही चल पाते और पिछड़ जातें है। यह योजना एक प्रकार से "विशेष कक्षा" की ही भांति है जिसमें अध्यापक छात्रों की समस्त समस्याओं का समाधान करने का प्रयास करता है।

ii. विशिष्ट शिक्षक योजना (Special Teacher Plan)ः– यह योजना सम्मेलन योजना से ही सम्बन्धित है। इसमे विशिष्ट अध्यापक या अतिरिक्त शिक्षक नियुक्त करके छात्रों को अतिरिक्त अध्ययन तथा निर्देशन प्रदान किया जाता है।

iii. काल विभाजन योजना (Divided Period Plan)ः– इस योजना के अन्तर्गत छात्रों को अध्ययन हेतु जो कार्य दिया जाता है उसमें निर्देशन एक शिक्षक के द्वारा दिया जाता है जबकि निरीक्षण कार्य दूसरा शिक्षक करता है। दोनो शिक्षक अपने – 2 समय में छात्रों को अधिक से अधिक निर्देशित कर सकते हैं।

iv. द्विकाल योजना (Double Period Plan)ः– इसमे पाठ्यवस्तु द्वि–समय चक्रों के लिए प्रदान कर दी जाती है। प्रथम समय चक्र में छात्रों को निर्धारित कार्य से सम्बन्धित बातों का ज्ञान कराया जाता है तथा दूसरे में वे निरीक्षित या निर्देशित अध्ययन करतें है।

v. सामयिक योजना (Periodical Plan)ः– निरीक्षित अध्ययन की यह योजना क्रमिक रूप से प्रयुक्त न करके सामयिक रूप से प्रयोग में लाई जाती है। शिक्षक इसका प्रयोग महीने में एक या दो बार कर सकता है।

इस विधि को और अधिक स्पष्ट करने के लिए हम आपको एक उदाहरण देतें हैं जैसे निर्धारित कार्य "जाति प्रथा" है तो शिक्षक सर्वप्रथम छात्रों के समक्ष जाति प्रथा की सूक्ष्म विवेचना प्रस्तुत करेगा जैसे इसका प्राचीन रूप, विकास तथा वर्तमान स्थिति आदि। उसके उपरान्त छात्र अपने–2 निर्धारित कार्य में संलग्न हो जाएंगे और शिक्षक उनका निरीक्षण करेगा तथा आवश्यकतानुसार वैयक्तिक तथा सामूहिक रूप से उनकी कठिनाइयों का निराकरण भी करेगा।

निरीक्षित अध्ययन विधि के गुण

- इस विधि का प्रयोग वैयक्तिक भिन्नता को दृष्टि में रख कर किया जा सकता है।
- इस विधि के माध्यम से छात्रों में विभिन्न कुशलताओं, गुणों तथा सहयोगात्मक प्रवृत्ति से कार्य करने की आदत का विकास होता है।
- शिक्षक तथा छात्रों के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करने में यह विधि महत्वपूर्ण है।

- छात्रों में क्रियाशीलता तथा स्वाध्याय की प्रवृत्ति का विकास होता है।
- छात्रों में तर्क शक्ति तथा समस्या समाधान की प्रवृत्ति का विकास होता है।
- कक्षा में पिछड़े हुए बालकों के लिए यह विधि अत्यन्त उपयोगी है।

निरीक्षित अध्ययन विधि के दोष

- इस विधि में बहुत अधिक समय लगता है जिससे इसके द्वारा पाठ्यक्रम पूरा कर पाना मुश्किल ही प्रतीत होता है।
- कभी–2 छात्रों की आत्म निर्भरता तथा आत्म विश्वास की प्रवृत्ति को उस समय ठेस पहुँचता है जब अध्यापक उनके कार्यो पर अधिक टिप्पणी करते हैं।
- विषय वस्तु का प्रत्येक प्रकरण का शिक्षण इस विधि के द्वारा सम्भव नही हैं।
- इस विधि की सफलता अन्तः प्रेरणा से युक्त एक कुशल अध्यापक पर निर्भर करती है और प्रत्येक शिक्षक इस कसौटी पर खरा नही उतर पाता।
- विद्यालयों में उचित कक्षागत व्यवस्था न होने के कारण निरीक्षण कार्य सन्तोष जनक ढंग से नही हो पाता।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. निरीक्षित अध्ययन विधि की सफलता मूल रूप से किस पर निर्भर है?

.....

.....

11. स्रोत विधि

सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत इतिहास शिक्षण के लिए यह विधि अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जैसा कि आप जानते है कि इतिहास अतीत या भूतकालीन घटनाओं का लेखा जोखा है और उसे जानने के लिए हम अतीत में तो नही जा सकते। वरन उस समय के उपलब्ध स्त्रोतों के आधार पर ही हम उनके विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। सर्वप्रथम आपकों स्रोतों के प्रकारों के बारे में बता दें, जो मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं जिनका वर्णन निम्न हैः–

स्रोतों के प्रकार

1. साहित्यिक स्रोतः– इस स्रोत को हम तीन भागों में पुनः बाँट सकते हैंः–

i. धार्मिक साहित्य जिसके अन्तर्गत विभिन्न धर्मग्रन्थ जैसे वेद, रामायण, महाभारत, पुराण त्रिपिटक आदि आते है।

ii. लौकिक साहित्य लौकिक साहित्य को पुनः दो भागों में बाँट सकते हैः–

(क) निजी साहित्य जिसकी रचना कोई लेखक व्यक्तिगत रूप से करता है जैसे– कालिदास रचित अभिज्ञान शाकुन्तलम, विशाख दत्त रचित मुद्रा राक्षस, कौटिल्य रचित अर्थशास्त्र, बाबर का बाबरनामा, जहाँगीर की तुजुक–ए–जहाँगीरी आदि।

(ख) सार्वजनिक साहित्य जिसके अर्न्तगत राजकीय आदेश, सनद, फरमान, न्यायालयों के निर्णय आदि आतें हैं।

iii. विदेशियों के विवरण– इसके अन्तर्गत मेगस्थनीज, फाहियान,हवेनसाँग आदि विदेशी यात्रियों के विवरण आते हैं।

2. पुरातात्विक स्रोतः– पुरातात्विक स्रोतों को मुख्य रूप से तीन कोटियों में विभाजित किया गया है–

i. स्मारक सम्बन्धी स्रोत

ii. पुरालेख सम्बन्धी स्रोत

iii. मुद्रा विषयक स्रोत

3. मौखिक परम्पराएंः– पीढी से चलती आ रही परम्पराएं भी इतिहास और नामों की जानकारी में अत्यन्त सहायक है। जैसे – पाटलिपुत्र को विभिन्न युगों में पाटिलपुत्र, अजीमाबाद, बंकीपुर, पटना आदि नामों से जाना गया। जिसकी जानकारी मौखिक परम्पराओं से ही प्राप्त हुई।

उपरोक्त समस्त स्रोत भारतीय इतिहास की जानकारी के प्रमुख आधार रहे हैं जिनका प्रयोग इतिहासकार सत्य की कसौटी पर तथ्यों को कसकर ही किया।

इतिहास के साथ–साथ समाजशास्त्र, भूगोल जैसे विषयों में उत्तम तथा ठोस जानकारी प्राप्त करने के लिए सामाजिक विज्ञान के अध्यापक को अपने छात्रों को प्रेरित करना चाहिए जिससे वे तथ्यों की प्राप्ति के मूल स्रोत तक पहुँच कर वहॉ से नए एवं वास्तविक तथ्यों को स्वंय ढूंढकर लाए। इससे छात्रों को अधिगम में न केवल रूचि होगी बल्कि वे नए मूल तथ्यों की खोज करेंगें तथा विभिन्न कुशलताओं तथा मूल्यों को भी विकसित करेंगे।

12. प्रसंग विधि

चूंकि सामाजिक विज्ञान अपने आप में विस्तृत पाठ्यक्रम वाला विषय है इसलिए अध्यापक उन्हे विभिन्न प्रसंगों तथा उपप्रसंगों में बाँट देता है और उसके पश्चात क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित ढंग से छात्रों को अधिगम कराता है। परन्तु इस विधि की सफलता तभी सम्भव है जब अध्यापक पाठ्यक्रम को भलीभांति समझ कर उसकी विषय वस्तु का क्रमबद्ध तरीके से विश्लेषण करे। इस विधि के माध्यम से छात्र पूर्ण रूचि तथा लगन के साथ अधिगम करते है। उदाहरण के लिए अध्यापक को 'अकबर' नामक पाठ पढाना है तो वह इसे कई उपप्रसंग में बाँट कर शिक्षण करेगा।

प्रसंग– अकबर

उपप्रसंग– जीवन परिचय, राज्यरोहण, विजय, साम्राज्य विस्तार, पड़ोसी देशों के साथ उसके सम्बन्ध, शासन व्यवस्था, धर्म तथा प्रजाहित में किए गये कार्य, सैन्य व्यवस्था, जीवन का अन्तिम समय आदि।

13. कहानी विधि

बचपन में आपको याद होगा कि बड़ो से कही गई कहानियों को आप कितने चाव से सुनते थे और आप सारी बातें भलीभाति समझ जाते थे। पता है क्यों ? क्योकि कहानी सुनने में बच्चों की बहुत अधिक रूचि रहती है और इसके माध्यम से उनकी कल्पना, तर्क और चिन्तन शक्तियों का विकास होता है। सामाजिक अध्ययन की विषयवस्तु भी मानव जीवन की कहानी ही है जिसे यदि शिक्षक कहानी की तरह ही सुनाएगा तो छात्र विषय वस्तु को अधिक प्रभावशाली तरीके से समझ सकेंगे और स्वंय में उत्तम सामाजिक गुणों को विकसित करने हेतु तत्पर रहेंगे। क्योकि कहानियों से प्रेरणा प्राप्त करके छात्रों में नए ज्ञान के प्रति भी रूचि और जिज्ञासा उत्पन्न होती है। विविध प्रकरण जैसे कोलम्बस, वास्कोडिगामा, पृथ्वी की उत्पत्ति, पशु–पक्षी तथा मानव की जीवन गाथा रामायण, महाभारत, गौतमबुद्ध, महावीर स्वामी, सिकन्दर का आक्रमण जैसे कई प्रकरण है जिन्हे यदि अध्यापक कहानी के माध्यम से छात्रों को बताए तो बच्चे ज्यादा उत्साह एवं रूचि के साथ अधिगम करेंगे।

कहानी विधि द्वारा शिक्षण के समय अपेक्षित सावधानियाँ

कहानी के दौरान कालक्रम को ध्यान में रखते हुए मुख्य बातें श्यामपट्ट पर लिख देना चाहिए जिससे छात्र उसे अपनी कॉपी में लिख सके।

- कहानी छात्रों की अवस्था, रूचि स्तर के अनुसार कौतूहल, कल्पना और क्रियाशीलता से परिपूर्ण होनी चाहिए।
- कहानी सुनाते समय आवश्यक हाव भाव, स्वर में उतार चढाव तथा स्वाभाविकता होनी चाहिए।
- ऐतिहासिक कहानी सुनाते समय शिक्षक बीच–बीच में छात्रों से प्रश्न भी करे जिससे उनकी बोधगम्यता का पता चलता रहे और वे कक्षा में सक्रिय रहें।
- स्थान आदि को बोध कराने के लिए आवश्यकतानुसार यदि मानचित्र, चित्र, मॉडल या अन्य सहायक समग्रियों का भी प्रयोग किया जाए तो अर्जित ज्ञान स्थायी रहेगा और भूलने की सम्भावना कम रहेगी।
- अध्यापक पूर्ण रूचि, तन्मयता तथा उत्साह के साथ इस विधि का प्रयोग करते हुए छात्रों की कल्पना शक्ति का विकास करें।
- कहानी में छात्रों की रूचि बनी रहे इसलिए अध्यापक उनसे बीच में यह पूछता रहे कि "बच्चों ! इसके बाद पता है क्या हुआ?" और ऐसा कहने पर यदि बच्चे अनुमान से कुछ कहते है तो उसे सुनते हुए आगे बढना चाहिए।

14. प्रश्न–उत्तर विधि

इस विधि को 'सुकरात विधि' भी कहा जाता है क्योकि यूनानी दार्शनिक सुकरात जन सामान्य को पढाने के लिए उनसे प्रश्न पूँछ कर उनके उत्तरों पर पुनः प्रश्न बनाते हुए किसी भी प्रंसग की व्याख्या करते थे। एक प्रकार से आप कह सकते हैं कि इस विधि के जम्मदाता सुकरात ही थे। वास्तव में सामाजिक विज्ञान के शिक्षण के लिए यह विधि सर्वोत्तम विधि हो सकती है जिसमे शिक्षक कोई प्रकरण प्रस्तुत कर उस पर प्रश्न (विकासात्मक प्रश्न) करते हुए आगे पढाता चला जाए। इससे शिक्षक के साथ साथ छात्र भी सक्रिय रहेंगे और चूंकि छात्र स्वंय भाग ले रहे है तो इस प्रकार से प्राप्त ज्ञान स्थायी भी हो जाएगा। इस विधि का प्रयोग करते समय अध्यापक विभिन्न प्रकार के प्रश्नों के प्रकार का प्रयोग कर सकता है। जैसे प्रस्तावनात्मक प्रश्न अर्थात् छात्रों के पूर्व ज्ञान पर आधारित प्रश्न, विकासात्मक प्रश्न अर्थात् छात्रों द्वारा दिए गये उत्तर पर पुनः प्रश्न पूछना, विचारात्मक या विचारोत्पादक प्रश्न अर्थात् छात्रों की मानसिक क्रिया में चेतना उत्पन्न करने वाले प्रश्न, जिससे वे नए विचारों को सोचने के लिए प्रेरित हो, समस्या प्रस्तुति प्रश्न अर्थात छात्रों के समक्ष समस्या उत्पन्न करने वाले प्रश्न जो उन्हे क्रियात्मक ढंग से पाठ के विकास में सहायक होंगे, बोध प्रश्न अर्थात् पढ़ाये गये ज्ञानांश को छात्रों ने कितना समझा है, इसे जानने के लिए वह बोध प्रश्न पूछता है, पुनरावृत्ति प्रश्न अर्थात छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान को स्थायित्व प्रदान करने, विचारों को सुव्यवस्थित रूप देने तथा उद्देश्यों की प्राप्ति हुई अथवा नही, इसे जानने के लिए पुनरावृत्ति के प्रश्न अध्यापक अपने छात्रों से पूछता है।

प्रश्न पूछते समय ध्यान में रखी जाने वाली सावधानियाँ

1. प्रश्न छात्रों की मानसिक क्रियाओं को जागृत करने वाले होने चाहिए।
2. प्रश्न सरल, संक्षिप्त, सीधे तथा स्पष्ट भाषा में होने चाहिए।
3. लम्बे तथा जटिल प्रश्न नही वरन प्रश्न ऐसे हो जो छात्रों को समझ में आ सके और वे उनका उत्तर दे सके।
4. प्रश्न निश्चित अर्थ वाले हों अर्थात् एक प्रश्न का एक ही उत्तर आए।
5. प्रश्न आपस में एक दूसरे से सम्बन्धित होने चाहिए।
6. छात्रों की रूचि बनी रहे इसलिए एक ही प्रकार के प्रश्न नही वरन विविध प्रकार के होने चाहिए जैसे– वस्तुनिष्ठ प्रश्न, लघु उत्तरीय प्रश्न, समस्या प्रधान प्रश्न आदि।
7. प्रश्न छात्रों की आयु, योग्यता तथा ज्ञान के अनुरूप उन्हे चुनौती प्रदान करने वाले होने चाहिए।
8. प्रश्न हां या नही वाले नही होने चाहिए जैसे–"क्या भारतीय संस्कृति में लचीलापन है"?
9. सम्पूर्ण कक्षा में प्रश्न को बोलने के बाद किसी एक विद्यार्थी को उसका उत्तर देने के लिए कहना चाहिए।

10. प्रश्नों का वितरण कक्षा में समान रूप से होना चाहिए जिससे सभी छात्रों की सक्रियता बनी रहे।

11. सही उत्तर मिलने पर छात्रों को "शाबास", "अच्छा", "ठीक", "अच्छा प्रयास किया" जैसे धनात्मक शाब्दिक पुनर्बलन अवश्य देना चाहिए जिससे छात्र उत्साहित होकर अधिक से अधिक उत्तर दें।

12. गलत उत्तर मिलने पर छात्रों को डाँट कर निरूत्साहित करने के स्थान पर अन्य छात्रों से सही उत्तर निकलवाते हुए उस छात्र को सही उत्तर दोहराने के लिए कहना चाहिए।

15. खोज विधि

निः सन्देह यह शिक्षण विधि बहुत उपयोगी है परन्तु सामाजिक विज्ञान के हर प्रकरण के लिए इस विधि का प्रयोग नही किया जा सकता। प्रोफेसर आर्मस्ट्रोंग द्वारा प्रस्तावित हयूरिस्टिक विधि या खोज विधि छात्रों को स्वं से तथ्यों तथा सत्य की खोज करने को प्रेरित करती है जिसमें वे खुद से उन तथ्यों, सम्बन्धों तथा नियमों की खोज करते हैं जो उनके प्रकरण से सम्बन्धित रहता है और अध्यापक एक मार्ग निर्देशक के रूप में होते है। परन्तु इस विधि में पर्याप्त समय, धन तथा सुविधाओं की आवश्यकता होती है जो वर्तमान विद्यालयों की समय–सारणी तथा उनकी मदद से परे है। इस विधि के प्रयोग के सन्दर्भ में डा0 सीताराम जायसवाल का सुझाव सराहनीय है। उनके अनुसार "इस विधि को स्वीकार कर लेने पर कक्षा में बालकों के सम्मुख कार्य करने के लिए एक समस्या रख दी जाए और हर बालक को स्वतन्त्र रूप से तर्क वितर्क करने के लिए प्रेरित किया जाए। वाद–विवाद और प्रश्न करने की छूट कक्षा और प्रयोगशाला दोनो में ही देना लाभप्रद है। अधिक से अधिक प्रश्न पूछने का अवसर प्रदान किया जाए और उत्तर भी छात्र स्वंय ढूँढ़े। अध्यापकों को कुछ ऐसे प्रश्न पूछना चाहिए जो छात्रों में उत्सुकता जागृत करें और उनकी बुद्धि को सक्रिय करें। प्रश्न ऐसे हो कि छात्रों में विषय के प्रति रूचि जागृत करें"।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. खोज विधि में वाद–विवाद का क्या महत्व है ?

.....

.....

16. पुनर्वीक्षण विधि

पुनर्वीक्षण का आशय है पाठ को दोहराना या उसकी पुर्नरावृत्ति जिसे प्रश्नों के द्वारा, किसी अपूर्ण वाक्य को छात्रों से पूर्ण करवा कर, रिक्त स्थान की पूर्ति द्वारा, किसी शैक्षिक खेल द्वारा, किसी चित्र या मानचित्र को बनाने के अभ्यास द्वारा, अभ्यास कार्य द्वारा किया जा सकता है। इससे एक तरफ छात्रों द्वारा पढ़े गये पाठ की पुनरावृत्ति होती है तो दूसरी तरफ छात्र उत्साहित होकर अभ्यास कार्य में भाग लेते है। छात्रों को नीरसता के स्थान पर रूचि का अनुभव होता है। परन्तु इस विधि का प्रयोग पाठ के पूर्ण हो जाने के पश्चात ही किया जा सकता है।

17. गृह कार्य विधि

गृह कार्य देने का उद्देश्य छात्रों को कक्षा में पढ़ाए गये पाठ अथवा प्रकरण को पुनः घर में भली भॉति याद करके उसका अभ्यास करना है जिससे अर्जित ज्ञान स्थायी रूप से मस्तिष्क में बैठ जाए। परन्तु स्मरण रहे यह बहुत कठिन न हो अन्यथा छात्र उसे कॉपी से उतार सकते हैं। इसलिए गृहकार्य रोचक, चुनौतीपूर्ण तथा छोटा होना चाहिए, जिससे वे अपनी बुद्धि का प्रयोग करते हुए उसे कर सके और वो उबाऊ भी न लगे। यह लिखित ही नही अपितु कोई चित्र, रेखाचित्र, मानचित्र, मॉडल को बनाने से

सम्बन्धित हो सकता है। छात्रों को साक्षात्कार या अवलोकन करके भी कोई तथ्य सामग्री लाने को कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त प्राथमिक स्रोतों, सन्दर्भ ग्रन्थों, एटलसों या विश्वकोशों से किसी भी प्रकरण पर जानकारी एकत्र करने का गृहकार्य दिया जा सकता है। उसके पश्चात अध्यापक द्वारा इसकी भली भांति जाँच भी करनी चाहिए तथा उस पर अंक या ग्रेड प्रदान करना चाहिए। आवश्यकतानुसार छात्रों को उनकी कमी का भी बोध कराना चाहिए, जिससे इसे निरन्तर करने की उन्हे प्रेरणा मिलती रहे।

18. सामूहिक क्रिया विधि

एक कुशल अध्यापक वही होता है जो छात्रों से सामूहिक ढंग से गतिविधियों को कराए, भाग लेने को प्रेरित करे तथा मिलजुल कर क्रियाएं करवाए। सुप्रसिद्ध शिक्षा तथा समाजशास्त्री कार्ल मैनहीम ने इन क्रियाओं को करवाने पर विशेष बल दिया है जैसे योजना बना कर कार्य करना, सर्वेक्षण करना, किसी भी सामाजिक समस्या पर अपने–अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कोई हल निकालना आदि। एक प्रजातन्त्रीय व्यक्तित्व का शिक्षक अपनी कक्षा में विविध प्रकार की सामूहिक क्रियाओं को करवाते हुए शिक्षण कार्य करता है तथा छात्रों को आपस में विचार विमर्श करते हुए ज्ञानार्जन के अवसर प्रदान करता है जिससे उनमें सामाजिक कुशलताओ तथा सामाजिक गुणों का यथोचित विकास होता है।

19. समवाय विधि

जब दो या दो से अधिक विषयों को इतनी घनिष्ठता से मिलाकर पढाया जाता है कि यह स्पष्ट नही हो पाता कि कौन सा विषय मुख्य और कौन सा विषय गौण है तथा एक समग्रता के साथ उसका शिक्षण किया जाता है तो उस विधि को समवाय या सहसम्बन्धित विधि कहते हैं। यह विधि अध्ययन के एकीकरण पर बल देती है। इस विधि के महत्व को सर्वप्रथम प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री हरबार्ट ने बताया। उनके अनुसार "यदि छात्रों की चेतना की एकता को बनाए रखना है, तो विभिन्न विषयों को पाठयक्रम में इस प्रकार रखना चाहिए कि वे स्वीकृत हो जाए और एक समवायी पूर्णता बन जाए। यह स्थिति समवाय अर्थात अध्ययनों के एकीकरण पर बल देती है"। महात्मा गांधी की बुनियादी शिक्षा में समवाय शिक्षण को ही प्रमुख अध्ययन पद्धति के रूप में स्वीकार किया गया था।

समवाय विधि की अपेक्षित सावधानियाँ

इस विधि का प्रयोग करते समय शिक्षक को निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिएः–

- समवाय किये जा रहे ज्ञान का जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध होना चाहिए।
- समवाय सरल तथा प्राकृतिक ढ़ंग से होना चाहिए न कि खीचतान और जबरन।
- समवायी ज्ञान में तारतम्य और क्रमबद्धता होनी चाहिए।
- उसका प्रस्तुतीकरण सरल ढ़ंग से तथा कक्षा के छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल होना चाहिए।
- समवाय द्वारा किऐ जाने वाला ज्ञान बालकों की रूचि और प्रेरणा को जागृत करने वाला होना चाहिए।
- समवाय विधि द्वारा किया जाने वाला शिक्षण बालकों के लिए भार स्वरूप नही बल्कि उन्हे आनन्द और हर्ष प्रदान करने वाला होना चाहिए।
- समवाय छात्रों के पूर्व अर्जित ज्ञान की कमी को पूरा करने वाला होना चाहिए।
- समवाय शिक्षण की सफलता तभी सम्भव है जब अध्यापक क्रियाशील, स्फूर्तिवान तथा विषय का गहन ज्ञान रखता हो।
- सामाजिक विज्ञान में इस विधि के द्वारा शिक्षण शिक्षा के प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर विशेष रूप से उपयोगी तथा लाभप्रद होता है।

20. एकल विषय अध्ययन विधि

इस विधि को "सामाजिक खुर्दबीन (Social Microscope)" भी कहा जाता है, क्योकि इस विधि के माध्यम से किसी एक विषय का बहुत व्यापक, विषद् तथा सूक्ष्म अध्ययन किया जाता है। समाजशास्त्री पी0वी0 यंग के अनुसार "एकल विषय अध्ययन किसी सामाजिक इकाई जैसे व्यक्ति, परिवार, संस्था, सांस्कृतिक वर्ग अथवा समस्त समुदाय आदि के जीवन की खोज और विवेचना

करने की पद्धति को कहते है। इसका उद्देश्य उन तत्वों का निर्धारण करना होता है, जो ईकाइयों के जटिल व्यवहार या समूह की व्यवहार विधि या इकाई के अपने आस–पास के समूहो के सम्बन्धों को स्पष्ट करते हैं।" सरल शब्दों में हम कह सकते है कि इस विधि में किसी भी एक सामाजिक इकाई का गहन अध्ययन हेतु सभी सम्भव स्रोतों एवं पद्धतियों से जानकारी प्राप्त कर विभिन्न कारकों के परस्पर अर्न्तसम्बन्धों को जानने का प्रयास किया जाता है। शिक्षकों को इस विधि का प्रयोग आवश्यकतानुसार अवश्य करना चाहिए। क्योकि यह विधि एक ओर छात्रों में विषय के प्रति रूचि उत्पन्न करती है, तो दूसरी ओर छात्रों को सामाजिक शोधकर्ता तथा प्रबुद्ध नागरिक बनने की प्रेरणा देती है।

एकल विषय अध्ययन विधि प्रमुख सोपान

इस एकल विषय अध्ययन या केस स्ट्डी बनाने की प्रक्रिया में निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण किया जाता हैः–

1) समस्या का संक्षिप्त उल्लेख
   - (i) एकल विषयों का चुनाव
   - (ii) इकाइयों के प्रकारों का उल्लेख
   - (iii) एकल विषयों की संख्या
   - (iv) विश्लेषण का क्षेत्र
2) घटनाओं के क्रम को बतलाना
3) निर्धारक अथवा प्रेरक कारक
4) कारकों का विश्लेषण और निष्कर्श

उपरोक्त सोपानों का अनुसरण करते हुए किसी भी नेता, अपराधी, सुधारक, विशिष्ट व्यक्तित्व, किसी सामाजिक घटना, किसी सामाजिक–सांस्कृतिक संस्था अथवा समुदाय की केस स्ट्डी छात्रों से तैयार करवाई जा सकती है।

21. जीवन गाथा विधि

यह विधि एकल विषय अध्ययन विधि की ही भांति है जिसमें किसी महापुरूष के जीवन से सम्बन्धित विभिन्न घटनाओं का वर्णन किया जाता है। इस विधि के द्वारा किसी भी महान व्यक्ति की जीवन गाथा बताते समय उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि, उसकी संस्कृति तथा उसके आन्तरिक जीवन की समस्त घटनाओं का गहराई से वर्णन किया जाता है। परन्तु स्मरण रहे कि महानपुरूषों का चयन सोच समझ कर निष्पक्षता के साथ करना चाहिए तथा उनके जीवन के सभी पक्षों को इसमें सम्मिलित करना चाहिए। इस विधि का प्रयोग प्रारम्भिक कक्षाओं के लिए अधिक उपयोगी होता है। इस विधि के माध्यम से छात्रों को जहाँ एक ओर उस व्यक्ति के जीवन के विषय में व्यापक जानकारी प्राप्त होती है, वहीं दूसरी ओर छात्र सामाजिक तथ्यों की खोज करने तथा उनकी जीवन गाथा लेखन को भी कुशलता से सीख जातें हैं।

22. प्रस्तुतीकरण विधि

यूँ तो इतिहास अतीत का विषय है इसलिए उसमें यह विधि बहुत कम प्रयोग में लाई जाती है तथापि सामाजिक विज्ञान के अन्य घटकों के शिक्षण में आवश्यकतानुसार इसका प्रयोग किया जा सकता है। प्रस्तुतीकरण का तात्पर्य पढाई जाने वाली विषयवस्तु से सम्बन्धित यदि कोई सामग्री उपलब्ध है तो उसे छात्रों को दिखाकर समझाना है। पर स्मरण रहे कि यदि इस विधि का प्रयोग किया जा रहा है तो उसे इस ढ़ंग से प्रयोग किया जाए कि प्रदर्शित की जाने वाली वस्तु को कक्षा का प्रत्येक विद्यार्थी भली भाति देख सके। जैसे यदि सिक्कों की उपलब्धता हो तो इसे प्रत्येक विद्यार्थी को छूने का अवसर प्रदान करना चाहिए।

23. प्रादेशिक विधि

जैसा कि आप नाम से ही समझ गए होंगे कि यह विधि भूगोल शिक्षण के दौरान ही प्रयोग की जाती होगी। जैसा की आप जानते भी है कि भूगोल के अन्तर्गत समस्त संसार की भौगोलिक परिस्थितियाँ तथा जलवायु का विस्तार से अध्ययन किया जाता है। और इतना व्यापक ज्ञान हम छात्रों को एक साथ तो दे नहीं सकते। इसलिए इस शिक्षण विधि के अन्तर्गत "खण्ड से पूर्ण" मनोविज्ञान पर आधारित शिक्षण सूत्र का प्रयोग करते है। उदाहरण के लिए यदि छात्रों को "जलवायु" प्रकरण पढाना है, तो इसमें

संसार को प्रमुख बड़े–बड़े क्षेत्रों (Natural Regions) में बाँट लिया जाता है। तत्पश्चात प्रत्येक बड़े क्षेत्र को छोटे–छोटे क्षेत्रों में बाँट कर एक के बाद एक करके उनका अध्ययन छात्रों को करवाया जाता है। यह विधि उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के लिए उपयुक्त होती है।

परन्तु इस विधि का एक बहुत बड़ी सीमा यह है कि विभिन्न क्षेत्रों के मध्य कोई निश्चित सीमाएं एवं अन्तर न होने से छात्रों के समक्ष विभिन्न प्रकार की कठिनाईयाँ भी उत्पन्न होती है। इसलिए पूर्ण सावधानी एवं सजगता के साथ इस विधि का प्रयोग करना चाहिए।

24. केन्द्रिक या तुलना विधि

"ज्ञात से अज्ञात" शिक्षण सूत्र पर आधारित यह शिक्षण विधि भूगोल शिक्षण के समय अधिक लाभप्रद होती है। इसमें छात्रों के पूर्व ज्ञान के आधार पर नया ज्ञान प्रदान किया जाता है और छात्र दोनों की तुलना करते हुए अपने ज्ञान के भण्डार में वृद्धि करते हैं। इसे और अधिक स्पष्ट करने के लिए आपको एक उदाहरण देते हैं। जैसे आपको अपने छात्रों को अपने गाँव की भौगोलिक परिस्थितियों का ज्ञान कराना है तो इसके विषय में छात्रों को थोडी बहुत तो जानकारी होगी। शेष जानकारी आप देंगे। उसके पश्चात आप उन्हे जिले के भूगोल के विषय में बताएंगे। चूंकि छात्रों को गॉव के भूगोल की जानकारी है तो जिले के भूगोल की जानकारी करते समय वे इसे तुलनात्मक रूप से सीखेंगे। और फिर इसी क्रम में आप प्रान्त, क्षेत्र, देश, महाद्वीप और संसार के भूगोल के विषय में उन्हे जानकारी देंगे और छात्र पूर्व अर्जित ज्ञान से इसकी तुलना करते हुए आगे बढेंगे। इस विधि को आप निम्नलिखित रेखाचित्र के माध्यम से भी समझ सकते हैं।

केन्द्रिक विधि आरेख

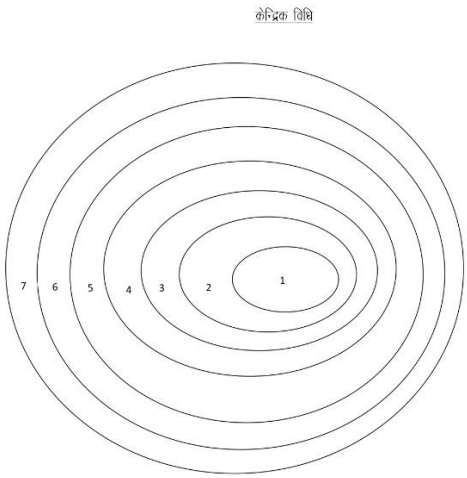

1. गाँव का भूगोल
2. जिले का भूगोल
3. प्रदेश का भूगोल
4. क्षेत्र का भूगोल
5. देश का भूगोल
6. महाद्वीप का भूगोल
7. संसार का भूगोल

25 स्थानीय भूगोल विधि

चूंकि छोटे बच्चों में एकाग्रता का अभाव होता है और स्वभावतः वे चंचल होते है इसलिए उनके लिए यह विधि अत्यन्त रोचक, सजीव तथा लाभप्रद होती है। प्रारम्भिक कक्षाओं में सामाजिक विज्ञान का एक घटक भूगोल का शिक्षण करते समय यदि अध्यापक बच्चों को उनके गाँव/घर के समीप स्थित कुएं, नदी, तालाब, खेत, चारागाह, डाकखाना, पंचायत घर, पशु, विभिन्न व्यवसाय, विभिन्न धार्मिक स्थलों, जनसंख्या, विभिन्न दिशाओं तथा विभिन्न भौगोलिक परिस्थितियों के अवलोकन के पश्चात ही उनकी चर्चा–परिचर्चा कक्षा में करें, तो इससे एक ओर उनकी निरीक्षण शक्ति का विकास होगा तो दूसरी तरफ उनके ज्ञान में ज्यादा वृद्धि होगी। जैसा कि प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री टी0 रेमोन्ट (T. Raymont) ने कहा भी है– "Geography like charity

should begin from home"

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8. उस शिक्षण विधि का संक्षिप्त परिचय दीजिए जो छात्रों को तुलनात्मक रूप से ज्ञान प्रदान करती है।

.....

.....

8.8 सारांश

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि शिक्षण विधि, शिक्षण का एक साधन है जिसके अवलम्बन से शिक्षक अपने शिक्षण को अधिगम की दृष्टि से रोचक एवं प्रभावशाली बनाता है। आपको एक बात हम और स्पष्ट कर दें कि शिक्षण विधि कोई यान्त्रिक युक्ति नहीं है जिसके द्वारा छात्रों तक लक्ष्य और आँकड़ो को पहुँचाया जाता है। वरन एक अध्यापक इन विधियों के प्रयोग के माध्यम से छात्रों को इस योग्य बनाता है कि वह अर्जित ज्ञान का व्यावहारिक रूप से प्रयोग कर सके, जिससे छात्र की सृजनात्मक तथा चिन्तन शक्ति पूर्ण रूप से विकसित हो सके। शिक्षण विधि छात्रों के मस्तिष्क पर ही प्रभाव नही डालती वरन उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करती है। इस प्रकार शिक्षण विधि एक अध्यापक के द्वारा संचालित वह क्रिया है जिससे छात्रों को ज्ञान प्राप्त होने के साथ–साथ उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है।

चूंकि सामाजिक विज्ञान विपुल, व्यापक तथा विस्तृत ज्ञान भण्डार का विषय है इसलिए इसकी शिक्षण विधियाँ भी अनेक है जिनका प्रयोग शिक्षक विषय वस्तु की प्रकृति के अनुसार करता है।

8.9 अभ्यास के प्रश्न

1. पुस्तक विधि को सर्वप्रचलित एवं सर्वमान्य विधि के रूप में क्यों स्वीकार किया जाता है?
2. इकाई विधि द्वारा शिक्षण के विभिन्न चरणों का उल्लेख कीजिए।
3. उन शिक्षण विधियों की सूची बनाइए जो छात्रों में सामाजिकता की भावना का मुख्य रूप से विकास करती है।
4. निरीक्षित अध्ययन विधि के प्रयोग हेतु प्रो0 बाइनिंग तथा बाइनिंग ने क्या योजनाएं प्रस्तुत की?
5. छात्रों के दृष्टिकोण से कहानी विधि किस प्रकार रूचिकर है?

8.10 चर्चा के बिन्दु

1. समस्या समाधान विधि छात्रों के लिए किस प्रकार उपयोगी है? चर्चा कीजिए।
2. यदि आपको अपने छात्रों को अबुल कलाम आजाद के विषय में पढाना है तो आप किस विधि का चयन करेंगे और क्यों? चर्चा किजिए।

8.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. शिक्षण विधि एक अध्यापक के द्वारा संचालित वह क्रिया है जिससे छात्रों को ज्ञान प्राप्त होने के साथ उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है। शिक्षण विधि, शिक्षण का वह साधन है जिसके द्वारा एक अध्यापक अपने शिक्षण को छात्रों के लिए रूचिकर, प्रभावशाली तथा बोधगम्य बनाता है।

2. विधि में ही प्रविधियाँ निहित होती है। वास्तव में इन प्रविधियों को प्रयोग में लाने का तरीका ही विधि है अतः प्रविधियाँ विधि में ही होती है। बिना प्रविधियों के विधि अधूरी है।

3. एक शिक्षक द्वारा शिक्षण विधियों के चयन के दौरान ध्यान में रखने वाली सबसे महत्वपूर्ण बात है कि जिसके लिए विधियों का प्रयोग करना है वह उनके मानसिक स्तर के अनुकूल, रोचक, बोधगम्य तथा छात्रों को अभिप्रेरित करने वाली होनी चाहिए।

4. छात्रों को सुसंगत, यथार्थ, रोचक, प्रभावशाली ढ़ंग से ज्ञान प्रदान करने और छात्रों के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास हेतु शिक्षण विधियों की आवश्यकता होती है। ये शिक्षण विधियाँ ही हैं जो शिक्षण और अधिगम की दिशा तथा दशा दोनो सुनिश्चित करती है।

5. इकाई विधि में छात्रों को प्रदत्त योजनाओं/कार्य को स्वतः पूर्ण करना होता है। वे प्रदत्त कार्य को पूर्व करने की दिशा में तब तक क्रियाशील रहते है जबतक कार्य पूरा न हो जाए।

6. छात्रों में इतनी मानसिक परिपक्वता नही होती कि वे बिना किसी बड़े के निर्देशन के कोई कार्य त्रुटि रहित ढ़ंग से कर लें। निरीक्षित अध्ययन विधि की बहुत कुछ सफलता अध्यापकों पर ही निर्भर है। उनके कुशल निर्देशन एवं सक्रिय निरीक्षण में ही छात्र अपना अधिगम कुशलतापूर्वक कर सकतें हैं।

7. प्रदत्त प्रकरण से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के तथ्य एवं सामग्री छात्र जब इक्ट्ठा कर लेतें हैं तो उन्हे विषय वस्तु की अच्छी जानकारी हो जाती है क्योकि चिन्तन और मनन करते रहने से उनका सम्बन्धित ज्ञान बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है और वे अपनी बात को उचित ढ़ंग से रखने के लिए तत्पर रहतें हैं और आवश्यकतानुसार अपने तर्क के साथ वाद–विवाद भी करते हैं। इस प्रकार खोज विधि छात्रों को अप्रत्यक्ष रूप से वाद–विवाद के लिए तैयार करती है।

8. केन्द्रिक या तुलना विधि छात्रों को तुलनात्मक रूप से ज्ञान प्रदान करती है। इसमें छात्र पूर्व अर्जित ज्ञान की तुलना नए ज्ञान से करते हुए अधिगम करते हैं।

8.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. Bining; A.C., (1952), Teaching of social studies in secondary schools, New York, Mcgraw Hill.

2. Buch, M.B., (1969), Improving Instruction in Civics, New Delhi, NCERT.

3. Ghate, V.D., (1956), Teaching of History (English and Hindi), Bombay, Oxford University Press.

4. Kanwar, B.S., (1973), Teaching of Economics, Ludhiana, Prakash Brothers.

5. Kochar, S.K., (1972), The Teaching of History, Delhi, Sterling Publishers.

6. Money D.C., Basic Geography, 1972, London University Tutorial Press.

7. जायसवाल, सीताराम, (1980)"शिक्षण कला" लखनऊ प्रकाशन केन्द्र।

8. त्यागी, गुरसरन दास, (2017), "अर्थशास्त्र शिक्षण" श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2

9. भट्टाचार्य, जी0सी0, (2016), "भूगोल अध्यापन" श्री विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा–2

10. रूहेला, सत्यपाल व अन्य, (1957), "बुनियादी शिक्षा में सामान्य तथा विशिष्ट शिक्षण विधियाँ" जयपुर, राजस्थान प्रकाशन

11. रूहेला, सत्यपाल, (1962), "बुनियादी शिक्षा में समवाय शिक्षण" दिल्ली, अत्तर चंद कपूर एण्ड संस।

12. "सामाजिक विज्ञान का शिक्षण" कोटा, मुक्त विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान।

इकाई– 9 : विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक विज्ञानों की प्रासंगिकता

इकाई की संरचना

9.1 प्रस्तावना

9.2 इकाई के उद्देश्य

9.3 सामाजिक विज्ञान : संक्षिप्त पुनरावलोकन

9.3.1 विषय क्षेत्र

9.3.2 अवधारणा

9.3.3 सामाजिक विज्ञान की प्रकृति

9.4 विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक विज्ञान प्रासंगिकता

9.5 सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में कुछ विचारणीय बिन्दु

9.6 अपेक्षित सुझाव

9.7 सारांश

9.8 अभ्यास के प्रश्न

9.9 चर्चा के बिन्दु

9.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें एवं संदर्भ

9.1 प्रस्तावना

मानव ने संसार में एक महान भौतिक सभ्यता का निर्माण कर लिया है परन्तु वह वर्तमान औद्योगिक युग की जटिलताओं को सुलझाने में असमर्थ हो रहा है। उसने भौतिक सुविधाओं में विशेष वृद्धि करके जीवन के स्तर को उच्च तथा महान तो बना लिया, अणु शक्ति का अविष्कार कर लिया, चन्द्रलोक तक पहुँच कर वहाँ बस्तियाँ बनाने का भी स्वप्न देख डाला परन्तु कही न कहीं अनजाने में उसने सामाजिकता तथा मानवता को खतरे में डाल कर स्वयं तक खुद को केन्द्रित कर लिया। विकास की अन्धी दौड़ में वह खुद की जड़ से ही कटता जा रहा था। परन्तु विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक विज्ञान विषय के प्रवेश ने देश के भावी कर्णधार के रूप में पढ़ रहे बच्चों के दृष्टिकोण में व्यापक एवं उदार परिवर्तन किये। उनमें सामाजिकता के गुणों को रोपित किया, लोकतान्त्रिक कुशलताओं का विकास किया जिससे वे भावी नागरिक के रूप में प्रजातन्त्र की रक्षा करने में समर्थ हो सकें। उन्हें मानवता की शिक्षा दी। सहअस्तित्व पर विश्वास करना सिखाया। और सबसे बड़ी बात 'वसुधैव कुटुम्बकम' के भावों को विकसित कर भावी युद्धों की सम्भावनाओं को कम करने में प्रभावशाली भूमिका का निर्वहन किया। यही कारण है कि सामाजिक विज्ञान को विद्यालयी पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया क्योकि यह विषय शान्ति से जीवन जीने का पाठ पढ़ाता है। विभिन्न सामाजिक समस्याओं के प्रति छात्रों को संवेदनशील बनाकर उसके वैज्ञानिक ढंग से समाधान हेतु उन्हे प्रेरित करता है। इसीलिये इसकी अतिशय प्रासंगिकता को सर्वसम्मति के साथ स्वीकार किया गया है जिसका अध्ययन आप प्रस्तुत इकाई में करेंगे।

9.2 इकाई के उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. सामाजिक विज्ञान के एकीकृत स्वरूप का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।

2. सामाजिक गुणों का प्रत्याभिज्ञान कर सकेंगे।
3. कुशल नेता में होने वाले गुणों को सूचीबद्ध कर सकेंगे।
4. 'हमारे सामाजिक विज्ञान में एक स्वतन्त्र राष्ट्रीय व्यक्तित्व की कमी है, इसका कारण बता सकेंगे।
5. सामाजिक विज्ञान के भविष्योन्मुखी बनाए जाने के कारण का विश्लेषण कर सकेंगे।
6. सामाजिक विज्ञान में शोध का चयन करते समय दृष्टिगत रखने वाली प्राथमिकताओं की सूची बना सकेंगे।
7. सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम में शीघ्र परिवर्तन लाने समाज वैज्ञानिकों तथा भविष्य शास्त्रियों के नाम को लिख सकेंगे।

9.3 सामाजिक विज्ञान : संक्षिप्त पुनरावलोकन

सामाजिक विज्ञान की प्रासंगिकता के अध्ययन से पूर्व सामाजिक विज्ञान की अवधारणा तथा प्रकृति के सन्दर्भ में पूर्व में किये गये अध्ययन की संक्षिप्त पुनरावृत्ति आपके लिये आवश्यक है। मूलतः ज्ञान को हम तीन भागों में बाँटते है–

i. प्राकृतिक विज्ञान
ii. मानविकी
iii. सामाजिक विज्ञान

9.3.1 विषय क्षेत्र

सामाजिक विज्ञान के विषय क्षेत्र में वे समस्त विषय आते हैं जिनका सम्बन्ध मनुष्य से प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से है। इसमें वे समस्त विषय आते हैं जो मानवीय जीवन को किसी न किसी रूप में प्रभावित करते हैं। आज के इस वैज्ञानिक युग में ज्ञान की असीम सम्भावनाओं के कारण नए–नए विषय बन रहे हैं और इन विषयों में जिन–जिन विषयों का सम्बन्ध मनुष्य के क्रियाकलाप तथा गतिविधियों से है, वे सभी विषय सामाजिक विज्ञान के ही अन्तर्गत आते हैं।

9.3.2 अवधारणा

सामाजिक विज्ञान की विषयवस्तु द्वारा एक ऐसा आधार प्रस्तुत किया जाता है जिसके द्वारा हम अपने छात्रों के समक्ष आज के विषय को स्पष्ट एवं सरल बना सकें। इसके द्वारा छात्रों के समक्ष ऐसी वृत्तियों एवं आदर्शों को विकसित किया जाता है जो छात्रों को लोकतन्त्रीय समाज में प्रभावकारी सदस्यों के रूप में उचित स्थान ग्रहण करने के योग्य बनाता है। इसके अन्तर्गत मानव जीवन का ही अध्ययन किया जाता है कि मनुष्य ने अतीत तथा वर्तमान में अपने वातावरण से किस प्रकार संघर्ष किया, उसने अपनी शक्तियों का सदुपयोग या दुरूपयोग किस प्रकार किया, उसने अपने संसाधनों का विकास तथा सभ्यता की आवश्यक एकता को किस प्रकार प्राप्त किया ? यह सामाजिक तथा भौतिक वातावरण के प्रति उनकी पारस्परिक क्रिया से सम्बन्धित है।

इस प्रकार सामाजिक विज्ञाान वह विज्ञान है जो मानव जीवन के रहन सहन के दंगों, मूलभूत आवश्यकताओं, क्रियाओं, जिनमें मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये संलग्न रहता है तथा संस्थाओं, जिसका उसने विकास किया है, का ज्ञान प्रदान करता है।

9.3.3 सामाजिक विज्ञान की प्रकृति

सामाजिक विज्ञान एक परम्परागत विषय न होकर विभिन्न विषयों की सामग्री का समन्वित अथवा एकीकृ त स्वरूप है। जैसा कि आप पूर्व में भी पढ़ चुके हैं कि सामाजिक विज्ञान मानव जीवन का अध्ययन करता है। उसके जीवन के अध्ययन में अन्य विषय अथवा घटक किस प्रकार समन्वित है इसे आप अग्राकिंत उदाहरण से समझ सकते हैं–

- मनुष्य की शारीरिक संरचना – मानव विज्ञान एवं विकास
- मनुष्य की कहानी– इतिहास
- उसकी आवासीय व्यवस्था– भूगोल
- उसका नागरिक जीवन, कर्तव्य एवं अधिकार–नागरिकशास्त्र
- जीवन निर्वहन के लिये चयनित व्यवसाय तथा जीवन की अन्य सेवाएं– अर्थशास्त्र
- मनुष्य का उसके वातावरण में समायोजन तथा साहचर्य – समाजशास्त्र
- उसकी मनः स्थिति एवं दशा– मनोविज्ञान
- उसकी तर्क, चिन्तन एवं प्रत्यक्षीकरण की योग्यता–दर्शनशास्त्र

कुल मिलाकर उपरोक्त विषय सामाजिक विज्ञान के घटक के रूप में एकीकृत होकर मनुष्य के जीवन का अध्ययन करते हैं। उपरोक्त सभी विषय अथवा घटक समन्वित एवं एकीकृत होकर सामाजिक विज्ञान विषय में अपने स्वरूप को व्यक्त करतें हैं। प्रस्तुत इकाई में सामाजिक विज्ञान की प्रासंगिकता में भी उसके प्रत्येक घटक का सम्मिलित रूप से योगदान है न कि पृथक होकर होकर, जिनका अध्ययन आप अगले शीर्षक के अन्तर्गत समन्वित रूप से करेंगे।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. सामाजिक विज्ञान के एकीकृत स्वरूप से आप क्या समझते है?

.....

.....

9.4 विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक विज्ञान की प्रासंगिकता

मानव का अस्तित्व इस पृथ्वी पर उतना ही प्राचीन है जितनी कि ये धरा। उसका जीवन एक कहानी है जो निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर है। उसके जीवन की इस प्रगति एवं विकास के साथ–साथ उस समाज का भी कायाकल्प हुआ, जिसका वह अभिन्न अंग है और जिससे उसकी पहचान है। वास्तव में इतिहास साक्षी है कि मनुष्य और समाज का बहुत पुराना सम्बन्ध है। समाज मनुष्य का पालन–पोषण कर उसे कुछ करने के योग्य बनाता है। उसे उसकी पहचान कराता है। और वही मनुष्य भी बड़ा होकर अपने समाज की प्रगति एवं उत्थान में अपना योगदान देता है। इस प्रकार दोनों के विकास एवं प्रगति के लिए एक दूसरे की आवश्यकता है। आज जो हम वैज्ञानिक उन्नति देख रहे हैं, वह सभी सभ्यताओं, संस्कृतियों, विज्ञान और तकनीकी के आदान–प्रदान का ही परिणाम है जिसके विकास के सफर से छात्रों को परिचित होना आवश्यक है। हमे आज ऐसे समाज तथा राष्ट्र का निर्माण करना है, जहां एक ओर भारत की परम्पराएं सुरक्षित रहे और दूसरी ओर नए युग की चुनौतियों तथा आवश्यकताओं के अनुसार समाज को विकसित करने की शक्ति का विकास किया जा सके। देश को एक सफल लोकतन्त्र बनाने के लिए हर व्यक्ति में लोकतान्त्रिक दृष्टि तथा नागरिकता के गुणों को विकसित करना आवश्यक है। देश की एकता एवं अखण्डता की रक्षा हेतु इसके धार्मिक तथा सामाजिक विशेषताओं से परिचित होना भी आवश्यक है। मानवता तथा धर्म निरपेक्षता के भावों का विकास भी आवश्यक है जिससे समाज का प्रत्येक व्यक्ति समरसता से परिपूर्ण स्वस्थ्य जीवन जी सके। और ऐसे समस्त लक्ष्यों की पूर्ति मात्र सामाजिक विज्ञान के अध्ययन से ही हो सकती है। क्योकि यह विषय बच्चों को उसकी जड़ों से परिचित कराता है। उसके

वर्तमान को संवारने में मदद करता है तथा उसके भविष्य के विकास की संभावनाओं को तलाशने में मदद करता है। इसलिए विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम को सम्मिलित किया गया।

इसके अध्ययन की प्रासंगिकता अग्राकिंत पंक्तियों के माध्यम से श्यमेव सिद्ध हो जाती है–

- सामाजिक विज्ञान का अध्ययन व्यक्ति को ऐसी अर्न्तदृष्टि प्रदान करता है जो हमारे जीवन के प्रति समझ को और अधिक समुन्नत तथा प्रभावपूर्ण बनाता है। इसका अध्ययन व्यक्ति को विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों यथा बच्चों का लालन–पालन, सौहार्द पूर्ण सम्बन्ध, पारिवारिक सम्बन्ध, कार्यस्थल पर सम्बन्ध, मित्रता, अजनबियों के साथ सम्बन्ध तथा सम्बन्ध सांस्कृतिक विभिन्नता आदि को समझने में अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं कारगर सिद्ध होता है। इसके अध्ययन से प्रदत्त अर्न्तदृष्टि व्यक्ति को पारिवारिक कलह एवं फूट के दुष्परिणाम से जहां सचेत करती है वहीं विद्यालय के शैक्षिक पर्यावरण को कैसे गुणात्मक एवं प्रभावशाली बनाया जाए, इसके लिये महत्वपूर्ण निर्णय लेने के योग्य बनाती है। विभिन्न शैक्षिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा भौगोलिक समस्याओं के समाधान हेतु व्यक्ति को अनोखी सूझ तथा अर्न्तदृष्टि सामाजिक विज्ञान के अध्ययन से ही प्राप्त होती है।

- सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम छात्रों को प्रजातन्त्रीय ढंग से निर्णय लेने अपने कर्तव्यों तथा अधिकारों को भली भांति समझते हुए छात्रों को अपने उत्तरदायित्वों के निर्वहन के योग्य बनाता है।

- इसके पाठ्यक्रम की अन्य विशेषता यह है कि इसके अध्ययन के माध्यम से छात्रों में लोकतान्त्रिक नागरिकता के गुणों का विकास होता है, उनमें नेतृत्व की क्षमता का विकास होता है जिससे वे अपने समाज तथा राष्ट्र की सुरक्षा एवं अखण्डता को बनाये रखने के लिए सजग होकर अपने राष्ट्र की अखण्डता को कायम रखने के लिए सदैव जागरूक रहते हैं।

- यह छात्रों में सामाजिक नागरिकता का विकास करने में सहायक होता है। उनमें इस बात का बोध होता है कि वे समाज का एक अभिन्न अंग है अतएव उसकी प्रगति एवं विकास का दायित्व उन्ही पर है और यह विश्वास उन्हे अपने समाज की विभिन्न समस्याओं का वैज्ञानिक ढंग से समाधान के लिए प्रेरित करता है। भारतीयता की भावना से प्रेरित होकर उनमें विभिन्न समसामयिक समस्याओं के समाधान के साथ–साथ आतंकवाद, विध्वंसवाद, भ्रष्टाचार, विभिन्न सामाजिक कुरीतियों तथा बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंकने का जज्बा आता है।
- सामाजिक अध्ययन का पाठ्यक्रम छात्रों को अपने देश तथा विश्व के अनेक भागों में पाई जाने वाली रहन–सहन, रीति–रिवाज, रंग–रूप, धर्म, जाति, भाषा आदि सम्बन्धी विभिन्नताओं से परिचित कराकर उनमें अनेकता में एकता के भाव से परिचित कराकर सम्मान और मानवीय घरातल पर सहिष्णुता के भाव को विकसित करती है।
- यह पाठ्यक्रम छात्रों में उत्पादन, श्रम के प्रति आदर का भाव विकसित कर जातीय, राष्ट्रीय, आर्थिक, सामाजिक आदि भेदभाव से रहित होकर उन्हें हर मनुष्य की योग्यता और महत्ता का सम्मान करने योग्य बनाता है।
- यह छात्रों में इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र और अर्थशास्त्र सम्बन्धी ज्ञान के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न कर उन्हे नए ज्ञान की प्राप्ति के लिये तत्पर करता है।
- विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के इस युग में STEM (Science Technology, Engineering–Maths) के अध्ययन की उपयोगिता एवं महत्व को शिक्षा के मंच पर सभी ने स्वीकार किया है। परन्तु एक वास्तविकता हमे और स्वीकार करनी है और वह हैं सामाजिक विज्ञान की आज की परिस्थितियों में प्रासंगिकता की। क्योंकि यह STEM की तुलना में व्यक्ति को ऐसी अर्न्तदृष्टि प्रदान करता है जिससे व्यक्ति विज्ञान एवं विभिन्न नवाचारों

की कार्य प्रणाली समझने के योग्य बनता है। क्योंकि सामाजिक विज्ञान, विज्ञानों का विज्ञान है। इसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपकरण विश्लेषण तथा संवाद शैली है। आज सामाजिक वैज्ञानिक विश्व की बड़ी–बड़ी समस्याएं जैसे Violent, Crime, Alternative Anergy तथा Cyber Security के समाधान में लगे हैं जो विज्ञान की ही देन है। जिनका समाज पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। आज समाज को STEM के साथ–साथ सामाजिक विज्ञान में भी प्रशिक्षित होने की आवश्यकता है। यह एक ऐसा विषय है जो सभी को अपने में समाहित कर लेता है। यह Engineering, Medical, Computing biology तथा Maths में अन्तर्विषयी एकीकरण की भूमिका का निर्वहन कर रहा है।

- छात्रों में सामाजिक सम्बन्धों का विकास कर उनमें परिस्थितियों के प्रति समायोजन की क्षमता के विकास में सहायक है।
- सामाजिक विज्ञान के पाठ्यकम की अन्य महत्वपूर्ण विशेषता छात्रों में तर्क संगत ढंग से विचार करने की योग्यता, तथ्य एवं विचार में भेद करने की योग्यता, समाचार की विश्वसनीयता का मूल्यांकन करने की योग्यता, समाचार के पारस्परिक महत्व निर्धारित करने की योग्यता, निष्कर्ष निकालने तथा विश्वसनीय तथ्यों से सामान्य अनुमान को निश्चित करने की योग्यता का विकास करना है।
- सामाजिक विज्ञान से सम्बन्धित विभिन्न उपकरणों जैसे– मानचित्र, ग्लोब, ग्राफ, सांख्यिकी सामग्री तथा राजकीय रिपोर्ट को काम में लेने की दक्षता तथा उनके सम्बन्ध में प्राप्ति स्थान का ज्ञान इस विषय के माध्यम से सम्भव है। जैसे आपको कही घूमने जाना है तो उस स्थान की स्थिति, उसकी दूरी, जलवायु, खान–पान, रहन–सहन के सन्दर्भ में आप बहुत कुछ सामाजिक विज्ञान के अध्ययन के माध्यम से जान सकते हैं।
- जन नीति के निर्माण में इसका अध्ययन मील का पत्थर साबित हो रहा है।
- मतदान प्रक्रिया की समझ और बुद्धिमता एवं सही ढंग से मतदान कराने में सहायता कर सकने के साथ ही साथ प्रजातन्त्रीय पद्धति का ज्ञान और किसी समुदाय के कार्य संचालन हेतु आवश्यक पदों को निभा सकने की योग्यता का विकास भी इसी पाठ्यक्रम के माध्यम से ही सम्भव है। जैसे आप इसे एक छोटे से उदाहरण से समझ सकते है कि यदि आपको किसी उम्मीदवार को वोट देना है तो उसमे कौन–कौन सी योग्यता होनी चाहिए, यह ज्ञान आपको राजनीति विज्ञान से ही मिलेगा। यदि आपको किसी पद पर मनोनीत किया जाता है तो आप लोगो की उम्मीद पर कैसे खरे उतरेंगे, यह भी ज्ञान आप इसी विषय के माध्यम से प्राप्त कर सकते है।
- यह छात्रों में स्वदेश प्रेम के साथ–साथ विश्व बन्धुत्व की भावना को भी विकसित करने में सहायक है, जिससे छात्र लोक कल्याण के बारे में चिन्तन–मनन कर सके।
- भारत बहु भाषी, बहुजाति, बहुधर्मी तथा विभिन्न संस्कृतियों वाला देश है। इसे समृद्ध बनाने में विभिन्न धाराओं तथा विचारों ने योगदान दिया है जिसे समझने के लिए यहां की विविधताओं को समझना आवश्यक है तभी बच्चे भारत की असली आत्मा को समझ सकेंगे और यह समझ छात्रों में इसी विषय के माध्यम से सम्भव है। इसी के माध्यम से छात्रों में विभिन्न जातियों, धर्मो, भाषाओं तथा संस्कृतियों के प्रति आदर, सम्मान और आस्था पैदा होती है और उनमें प्रशंसात्मक दृष्टिकोण का निर्माण होता है।
- विश्व की सभ्यताएं देखने में पृथक पृथक है परन्तु उनमें बुनियादी एकता मौजूद है। इसी बुनियादी एकता के आधार पर विश्व संस्कृति या वसुधैव कुटुम्बकम का आदर्श निर्मित हुआ। इसका बोध छात्रों में यह विषय ही कराता है।

- जीवन प्रक्रिया का शाश्वत नियम परिवर्तन हैं। आदि काल से परिवर्तित होता मानव आज किस स्थिति में है, इस परिवर्तन में छात्रों को भी आगे योगदान देना चाहिए जिससे मानवता और ऊँची उठ सके, इसका ज्ञान एवं प्रेरणा छात्रों को सामाजिक विज्ञान ही देता है। इस प्रकार यह छात्रों को उनके वातावरण का ज्ञान प्रदान कर उसे और अधिक समुन्नत बनाने के लिए उनमें उत्साह तथा इच्छा उत्पन्न करता है।

- सामाजिक विज्ञान का ज्ञान किसी भी समाज को विकासात्मक एवं प्रगतिमूलक दिशा प्रदान करने में अत्यन्त सहायक है। किसी समाज का किस प्रकार निर्माण हुआ, किन विचारों ने उसे अस्तित्व प्रदान किया, उसका स्वरूप समय के अनुरूप है अथवा नही, कौन सी नीतियां एवं कार्यक्रम उसे सकारात्मक अथवा नकारात्मक स्वरूप प्रदान कर रहे हैं आदि, ऐसे तमाम प्रश्नों का उत्तर एवं उनका वांछित समाधान हम इसी विषय के माध्यम से पा सकते हैं । उदाहरण के लिये सामाजिक विज्ञान का एक क्षेत्र समाजशास्त्र भी है। किसी भी सरकारी कार्यक्रम अथवा नीतियों के मूल्याकंन हेतु एक समाजशास्त्री यह देखता है कि अमुक कार्यकम अथवा नीतियों का उन लोगों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है जो उसमें भाग ले रहे है। यदि उसे यह प्रभाव नकारात्मक दिखाई पड़ता है तो पुनः नवीन कार्यक्रम अथवा नीतियों का निर्माण कर उसके प्रभाव का मूल्याकंन करता है। और यह काम तब तक चलता रहता है जब तक कि उसका सकारात्मक प्रभाव सामने न आए। इस प्रकार सामाजिक विज्ञान वे समस्त सूचनाएं प्रदान करता है जो एक बेहतर समाज के सृजन में सहायक होती हैं।

- छात्रों में प्रेम, सहयोग, भाईचारा, समता, समानता, सहिष्णुता, सह अस्तित्व में विश्वास, विभिन्न सामाजिक तथा नागरिकता के गुणों का विकास सामाजिक विज्ञान के विभिन्न दृष्टान्तों तथा घटनाओं के माध्यम से होता है।

- सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम में ऐसी घटनाओं एवं दृष्टान्तों का समावेश है जिसका अध्ययन करने के उपरान्त उनमें अर्न्तराष्ट्रीय सद्भावना का विकास होता है जिससे बच्चे इस वैज्ञानिक युग में अपने देश तथा राष्ट्र से ऊपर उठकर दूसरों के बारे में भी सोचते हैं। उनमें ये समझ विकसित होती है कि विश्व के सभी देश आज एक दूसरे पर निर्भर है और इसी के आधार पर विश्व संस्कृति की कल्पना की गई जिसमे संसार के महापुरुषों का बहुत योगदान रहा है। इस भावना के फलस्वरूप उनमें मानवता की भावना विकसित होती है।

- हमारे सामाजिक तथा राजनैतिक वैज्ञानिक हमे यह बताने में मदद करते हैं कि किस प्रकार प्रजातन्त्र को स्थिर रखा जाये, भविष्य में संभावित युद्धों को कैसे रोका जाए, भारत की विदेश नीति को कैसे सफल एवं प्रभावशाली बनाया जाए। ऐसे ही अन्य प्रश्न, जो कि हम सभी के जीवन को सुरक्षित रख सकते हैं, उनके उत्तर हमे इसी विषय के माध्यम से मिल सकते हैं।

- सामाजिक विज्ञान जीवन के विविध भौतिक पक्षों का अवलोकन कर जीवन में उसकी उपयोगिता एवं महत्ता को सिद्ध करने के लिये छात्रों की मानसिक शक्तियों को प्रशिक्षित करता है तथा उनमें आलोचनात्मक चिन्तन का विकास करता है।

- सामाजिक अध्ययन का पाठ्यक्रम छात्रों को विभिन्न भौतिक संसाधनो जैसे धरती, मिट्टी, पानी, पहाड़, वनस्पति, खनिज पदार्थ आदि का मानव जीवन में अतिशय महत्ता का बोध कराते हैं जिससे उनमें इन संसाधनों के संरक्षण का भाव विकसित होता है।

- छोटी से बड़ी प्रशासनिक संस्थाओं जैसे– गाँव, जिला, राज्य, देश आदि की संरचना एवं उनकी कार्य प्रणाली को बोध छात्रों को मात्र इसी विषय द्वारा होता है।

- भारतीय तथा विश्व के महान पुरुषों जैसे– महात्मा बुद्ध, महावीर स्वामी, सुकरात, लिंकन, अशोक महान, महात्मा गाँधी, लेनिन, टॉल्सटाय, कोलम्बस, वास्कोडिगामा, गैलीलियो, न्यूटन, जगदीश बसु जैसे अन्य महान विभूतियों की गौरव गाथा सामाजिक विज्ञान का ही विषय रहा है जिसके अध्ययनोपरान्त छात्र उनके व्यक्तिगत जीवन तथा उपलब्धियों से प्रेरणा लेते हैं।

- विभिन्न राष्ट्रीय प्रतीकों का हमारे जीवन में क्या महत्व है, इसका बोध छात्रों को इसी विषय के माध्यम से होता है।

- सामाजिक विज्ञान का पाठ्यक्रम छात्रों के समक्ष ऐसे आदर्श प्रस्तुत करता है जिसका अनुसरण करके छात्र अपने जीवन को आदर्श बनाता है। वह मानव जाति के अनुभवों को आत्मसात करता है। इसके पाठ्यक्रम में सभ्यता के निर्माण की प्रक्रिया का व्यवस्थापन है। इसका अध्ययन छात्रों को मानवीय आदर्शों तथा विचारों से अवगत कराता है।

- सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम की अन्य महत्वपूर्ण विशेषता उपयोगिता के सिद्धान्तों का सर्वाधिक महत्व देना है। यह पाठ्यक्रम सामाजिक जीवन की प्रमुख धाराओं का संकलन है जिसके अध्ययन के फलस्वरूप छात्रों की शक्ति, योग्यता तथा क्षमता बढ़ती है और छात्र उस ज्ञान को अपने व्यवहार में उतारता है।

- इसके अध्ययन से छात्र बहुत से सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक विवादास्पद प्रश्नों तथा समस्याओं के विषय में अपना विचार प्रस्तुत कर उस पर तर्क, चिन्तन, मनन कर उसे सुलझाने के योग्य बनता है। इस प्रकार यह पाठ्यक्रम छात्रों की मानसिक शक्तियों के विकास का आधार प्रस्तुत करता है।

- सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम में ऐसे तत्वों का समावेश है जो छात्रों को अतीत का ज्ञान प्रदान कर वर्तमान सामाजिक जीवन के भिन्न–भिन्न स्वरूपों और शक्तियों का स्पष्टीकरण कर उसे भविष्य के विषय में सोचने को तैयार करता है। जैसे मान लीजिए कि कोई नीति, योजना या परम्परा जिसका अतीत में गलत परिणाम निकला, उसकी पुनरावृत्ति छात्र भविष्य में नही करेंगे। इस प्रकार सामाजिक अध्ययन का पाठ्यकम छात्रों को अपने अतीत के अनुभवों से लाभ उठाने की योग्यता विकसित करने में सहायक होता है।

- इसका पाठ्यकम छात्रों में मानवता के विकास में सहायक है। जैसे सामाजिक अध्ययन के महत्वपूर्ण घटक भूगोल के माध्यम से छात्र विभिन्न देशों के निवासियों के रहन–सहन, खान–पान, वेश भूषा तथा सभ्यता आदि के बारे में अध्ययन कर वे यह जान पाते है कि टुंड्रा प्रदेश, भूमध्य रेखीय प्रदेश और पहाड़ी प्रदेशों में निवास करने वाले लोग किन भंयकर परिस्थितियों में अपना जीवन यापन करते हैं। किसी देश में भूकम्प आने पर, ज्वालामुखी के विस्फोट हो जाने पर अथवा जल प्लावन की स्थिति में वहां के लोगों की जो जन–धन की हानि होती है इससे उनका हृदय द्रवित हो जाता है। और उनके लिये बच्चों के मन में सहानुभूति तथा सहयोग का भाव उमड़ता है। फलस्वरूप वे उनकी सहायता के लिए तत्पर हो जाते है।

- इसके पाठ्यक्रम में ऐसे तत्वों का समावेश है जो छात्रों में राजनैतिक जागृति लाने में सहायक होते हैं। उनमे कर्तव्य तथा अधिकारों का बोध हो जाता है। वे अपने कर्तव्यों का पालन कर राष्ट्रीय लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु सजग रहते हैं।

उपरोक्त विशेषताएं ही सामाजिक विज्ञान को मानव जीवन को समग्रता के साथ जीना सिखाने वाले विषय के रूप में सिद्ध करती है। इसी कारण इसे विद्यालयी पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। वास्तव में सामाजिक विज्ञान की अतिशय महत्ता ही उसकी प्रासंगिकता को सिद्ध करती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

2. सामाजिक विज्ञान छात्रों में सामाजिक गुणों का विकास किस प्रकार करता है?

.....

.....

3. अपने नेता में आप किन–किन गुणों के होने की आशा करतें है, एक सूची बनाइए।

.....

.....

9.5 सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में कुछ विचारणीय बिन्दु

इसमें तनिक भी सन्देह नही है कि सामाजिक विज्ञान विषय की विद्यालयी पाठ्यक्रम में बहुत अधिक प्रासंगिकता है परन्तु इसके पाठ्यक्रम के कुछ पहलू ऐसे भी जिस ओर ध्यान देना नितान्त आवश्यक है यथा–

i. जैसा कि हम सभी जानते है कि सामाजिक विज्ञान मानव जीवन की सम्पूर्णता का पाठ पढ़ाता है इसके विविध घटक यथा मनोविज्ञान यदि मनुष्य के मन का अध्ययन कराता है तो दर्शन शास्त्र उसके विचारों की उथल–पुथल तथा उसकी अभिव्यक्ति और जीवन को समझने के पहलुओं को दर्शाता है। इतिहास यदि मनुष्य की कहानी सुनाता है तो समाजशास्त्र मनुष्य का उसके समाज से साहचर्य को उद्घाटित करता है। मानव विज्ञान यदि उसकी जाति का विशद् अध्ययन कराता है तो राजनीतिशास्त्र उसकी व्यवस्था के ढंग को दर्शाता है। भूगोल से यदि उसके आवासीय प्रकृति को हम समझते है तो अर्थशास्त्र मनुष्य के जीवन निर्वाह की कला और ढंग को बताता है। कुल मिलाकर यह मनुष्य के जीवन के चतुर्दिक हो रही विभिन्न घटनाओं एवं क्रियाकलापों की गाथा सुनाता है। और इन समस्त ज्ञान को प्रदान करने के पश्चात छात्रों में उसे अपने व्यवहार में उतारने की प्रेरणा प्रदान करता है। परन्तु विशेषीकरण की प्रवृत्ति के कारण लोग अपने–अपने विषय में ही लीन रहना चाहते हैं। वे उसी का ज्ञानार्जन एवं विशेषज्ञता प्राप्त कर सामाजिक विज्ञान के विषयों में कोई जानकारी प्राप्त करना नही चाहते और न ही उनकी विधियों और उपागमों को प्रयुक्त करना चाहते हैं। वे सभी सामाजिक विज्ञान के आपसी सम्बन्ध को तोड़ कर किसी एक पर स्वंय को केन्द्रित कर लेते है इससे सामाजिक समस्याओं को भली भांति सभी दृष्टिकोणों से समझने में बाधा उत्पन्न होती है। भारत के सुप्रसिद्ध सामाजिक वैज्ञानिक प्रो० राधा कमल मुखर्जी ने इसकी आलोचना करते हुए कहा कि ''विशेषीकरण और ज्ञान के अलग–अलग भागों में विभाजन के आधुनिक आंदोलन ने मानव विचार धारा में एक मतिभ्रम तथा मूल्याकंन में अव्यवस्था उत्पन्न की है। मानव एक बहुआयामी विश्व में रहता है और उसकी सामाजिक साहसी यात्रा को एक पृथक विज्ञान में नहीं बांटा और अलग रखा जा सकता है। उसका मुख्य कार्य है मानव मूल्यों समाज के विरोधी स्तरों या आयामों में सामन्जस्य लाना तथा उनको एकीकृत करना।''

ii. हमारे देश में पढ़ाए जाने वाले समाजशस्त्र, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि में अमेरिकन तथा ब्रिटिश प्रभाव ही दिखाई पड़ते है। क्योकि अधिकांश भारतीय सामाजिक वैज्ञानिक विदेशी पाठ्यक्रमों, तथ्यों, विधियों, शिक्षण विचारों, पुस्तकों और सम्प्रत्ययों को येन–केन प्रकारेण भारतीय सामाजिक परिस्थितियों में लागू करने का प्रयास करते हैं' और भारत की वास्तविकताओं के सन्दर्भ में मौलिक संकल्पनाओं, सम्प्रत्ययों, विधियों तथा तथ्यों को पाने का प्रयास नहीं करते। फलस्वरूप हमारे छात्र भारतीय यथार्थता से पूर्ण रूपेण भिज्ञ

नहीं हो पाते।

iii. प्रो० योगेन्द्र सिंह के अनुसार 'पश्चिमी समाज के अध्ययन के लिए विकसित किए गये संप्रत्ययों, यंत्रों और विधियों का हमारे द्वारा बिना आलोच्य परीक्षण के स्वीकारने से एक प्रकार की विधि सम्बन्धी वैयक्तिकता और सामाजिक व्यवस्था सम्बन्धी आदर्श विचार धारा हमारे शोधों में घुस आई है, जो कि हमारे समाज के लिए झूठी और अनुपयुक्त हो सकती है।'' प्रो० सिंह का यह कथन इस बात की ओर संकेत करता है कि हमारे अधिकांश सामाजिक वैज्ञानिकों द्वारा भारतीय सन्दर्भ में अध्ययन के लिए विदेशी उपागमों, यन्त्रों तथा विधियों का प्रयोग किया जा रहा है जबकि भारतीय तथा विदेशी दोनो की पृष्ठभूमि अलग अलग है। इससे अध्ययन तथा शोध का परिणाम निःसन्देह प्रभावित होगा और हम यर्थाथ तथा स्वाभविक स्थितियों से अलग हो सकते हैं।

iv. प्रसिद्ध भारतीय समाजशास्त्री प्रो० योगेन्द्र सिंह के अनुसार हमारे सामाजिक विज्ञान में एक स्वतन्त्र राष्ट्रीय व्यक्तित्व (Sel Image) का भी अभाव है क्योंकि वे राष्ट्रीय चेतना की प्रमुख धारा से अलग–थलग रहे हैं।

v. सामाजिक विज्ञान भूत तथा वर्तमान की समस्याओं तक ही सीमित और सम्बन्धित रहते हैं। भविष्य की ओर न ही उनका झुकाव है और न ही उसके प्रति कोई चिन्ता या सजगता दिखाई पड़ती है। ऐसी स्थिति में सामाजिक विज्ञान के महत्वपूर्ण उद्देश्य 'छात्रों में भविष्य के प्रति चेतना का विकास' की प्राप्ति हम कैसे कर सकते है, यह विचारणीय प्रश्न है।

vi. परिवर्तन सृष्टि का शाश्वत नियम है। परिवर्तन की इस बयार का प्रभाव हमारे समाज में भी दृष्टिगोचर हो रहा है जिसके कारण भविष्य में अप्रत्याशित परिवर्तनों के फलस्वरूप विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक झटकें (Cultural Shocks) लगने की संभावनाएं तीव्र हो रही हैं। यही कारण है कि सुप्रसिद्ध भविष्य शास्त्रियों जैसे बैले, सेठ, टीफलर आदि ने इस सन्दर्भ में सामाजिक विज्ञानों के पाठ्यक्रमों, दृष्टिकोणों, विधियों, सम्प्रत्ययों में यथा शीघ्र गम्भीर परिवर्तन लाने की आवश्यकता पर बल दिया है। प्रख्यात समाज शास्त्री तथा भविष्य शास्त्री अलविन टौफलर (Alvin Toffler) की पुस्तक "Learning for Tomorrow' (1974) में भविष्य के लिए आवश्यक सामाजिक विज्ञान पर Social Science The future a missing link लेख की अग्राकिंत पंक्तियां समस्त सामाजिक वैज्ञानिकों के लिए अत्यन्त विचारणीय है–

''समाज वैज्ञानिक अपने विद्यार्थियों को तथा कथित मानव दशाओं के बारे में बहुत पढ़ा चुकें है। उन्होंने उसकी तुलना में मानव शक्ति अथवा संभावनाओं के बारे में बहुत कम पढ़ाया है।''

''विद्यार्थियों में परिवर्तन की धाराओं, वैकल्पिक भविष्यों की संभावनाओं, संभव भविष्य के एक क्रम, सामन्जस्य के एक तरीकों और सुधारात्मक तथा नवाचारों के कदमों के बारे में संवेदनशील बनाना होगा। उन्हे प्रोत्साहित करना होगा, ताकि वे अपने पिछले अनुभवों को लांघ सकें, सृजनात्मक ढंग से भविष्य की खोज कर सकें और नीतियों को लागू करने के ठोस साधनों को परिभाषित कर सकें। किस तरीके से उन विकल्पों को प्रकट किया जाए और विरोधी स्वार्थो के सन्दर्भ में, जिनमें वे चुने जाएं, इसको कक्षा में अर्थ प्रदान करना होगा।''

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. 'हमारे सामाजिक विज्ञान में एक स्वतन्त्र 'राष्ट्रीय व्यक्तित्व' का अभाव है। इस कथन को स्पष्ट करें।

.....

.....

5. समाज शास्त्रियों तथा भविष्य शास्त्रियों ने सामाजिक विज्ञान को भविष्योन्मुख बनाने पर बल क्यों दिया?

.....

.....

9.6 अपेक्षित सुझाव

वास्तव में यदि हमे इस विषय की उपयोगिता, महत्व तथा प्रासंगिकता को कायम रखना है तथा अपनी भावी पीढ़ियों को सामाजिकता तथा लोकतन्त्र का पाठ पढ़ाना है तो यह आवश्यक है कि सामाजशास्त्रियों तथा भविष्यशास्त्रियों द्वारा इंगित किए गये तथ्यों की ओर सामाजिक वैज्ञानिक गम्भीरता से ध्यान दें, उन बिन्दुओं पर अमल कर सामाजिक विज्ञान को और अधिक उपयोगी विषय बनाएं, जो संभावित सुधार के रूप में उनके द्वारा संस्तुत किए गये है' यथा–

1) सामाजिक विज्ञान समग्रता के साथ मानव जीवन का सार है। इसीलिए वह छात्रों को जीवन की समग्रता का पाठ पढ़ाता है। अतएव सामाजिक विज्ञान के विविध घटकों को पृथक–पृथक करके पढाना सर्वथा अनुचित है। हमे यह स्मरण रखना है कि समस्त घटक आपस में जुड़े हैं और समग्रता के साथ मानव जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिए किसी एक अथवा दो घटकों की शिक्षा देने का आशय है मानव जीवन की आंशिक शिक्षा प्रदान करना। किसी एक घटक अथवा दो में विशेषज्ञता प्राप्त करने का अभिप्राय शेष ज्ञान से अनिभिज्ञ रहना है। यूँ तो हमारे यहां 3 (बी०ए०) तथा 2 (एम०ए०) में छात्र किसी एक पर ही शोध और अध्ययन करके विशेषज्ञता हासिल करने का प्रावधान है। इसलिए 10 (दसवीं कक्षा तक) तक तो इसका ज्ञान सम्पूर्णता तथा एकीकृत रूप में देना ही सर्वोत्तम है। यद्यपि हमारे यहाँ तो सामान्य रूप से इसका एकीकृत स्वरूप का ही शिक्षण किया जाता है परन्तु देश के कुछ अंचलो में इस सन्दर्भ में अनुरूपता का आभाव है जिसमें यथाशीघ्र समरूपता लाना आवश्यक है।

2) भारतीय समाज के अध्ययन हेतु सामाजिक वैज्ञानिकों द्वारा भारतीय सन्दर्भ में विकसित किए गये सम्प्रत्ययों, यंत्रों, विधियों तथा उपागमों का प्रयोग किया जाए। और यदि पश्चिमी समाजों के अध्ययन के लिए विकसित किये गये संप्रत्ययों, यंत्रो, विधियों तथा उपागमों का प्रयोग भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा किया जाता है तो उसका भारतीय सन्दर्भ में आलोच्य परीक्षण अवश्य किया जाए।

3) प्रत्येक सामाजिक विज्ञान के कल्पित मूल्यों (Value Suppositions) का गहन परीक्षण किया जाए, फिर वह चाहे अपना हो या विदेशों से लिया गया हो।

4) सामाजिक विज्ञान को राष्ट्रीय चेतना की प्रमुख धारा से जोड़ते हुए उसे एक स्वतन्त्र राष्ट्रीय व्यक्तित्व की अमिट छवि प्रदान की जाए।

5) भूत तथा वर्तमान के साथ–साथ सामाजिक विज्ञान को भविष्योन्मुखी भी बनाया जाए जिससे छात्रों में भविष्य के प्रति चेतना का विकास हो सके तथा वे अतीत के अनुभवों के आधार पर भविष्य के सन्दर्भ में उपयोगी तथा प्रभावपूर्ण निर्णय ले सकें।

6) सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम के निर्माण में लचीलेपन तथा सम–सामयिक सिद्धान्त का अनिवार्यता के साथ पालन किया जाए जिससे समाज में होने वाले परिवर्तन की दिशा के अनुरूप सामाजिक विज्ञानों के उद्देश्यों, दृष्टिकोणों, संरचनाओं, विषयवस्तु, विधियों, में वाछित परिवर्तन एवं बदलाव किए जा सकें।

7) हमारे समाज की विविध समस्याओं को समझने के लिए इतिहास की सामग्री को और अधिक उपयोग में लाया जाए।

8) राष्ट्र निर्माण और सामाजिक परिवर्तन की हमारी अपनी समस्याओं के आधार पर ही अपने सामाजिक शोध की प्राथमिकताओं को परिभाषित तथा निर्मित करना चाहिए।

अन्ततः हम कह सकते हैं कि भविष्यशास्त्रियों तथा समाजशास्त्रियों द्वारा बताए गये उपर्युक्त सुझावों पर

अमल करके हम सामाजिक विज्ञान की प्रासंगिकता को और अधिक कारगार सिद्ध कर सकते हैं। साथ ही साथ यह भी अति आवश्यक है कि इसका शिक्षण करते समय विद्यालय के अध्यापक भी इन महत्वपूर्ण विचारों को दृ ष्टिगत रखें। तभी वे अपने शिक्षण के प्रति न्याय करते हुए अपने छात्रों को उत्तम प्रकार का ज्ञान प्रदान कर प्रस्तुत विषय को छात्रों के लिए सामाजिक, आर्थिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, भौगोलिक, दार्शनिक तथा मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में संजीवनी बूटी बना सकते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. सामाजिक विज्ञान में शोध का चयन करते समय हमारी क्या प्राथमिकता होनी चाहिए।

.....

.....

7. किन समाज वैज्ञानिकों तथा भविष्य शास्त्रियों ने सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम में शीघ्र परिवर्तन लाने की आवश्यकता पर बल दिया?

.....

.....

9.7 सारांश

सारांशतः हम कह सकते हैं है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के कारण मानव समाज में बहुत अधिक परिवर्तन हुए हैं। इस परिवर्तन के प्रभाव स्वरूप सामाजिक सम्बन्धों में जटिलताएं परिलक्षित हुई। इन जटिलताओं को दूर कर छात्रों में कुशल सामाजिकता, नागरिकता तथा लोकतन्त्रीय गुणों के विकास हेतु पाठ् यक्रम में सामाजिक विज्ञान विषय को रखा गया। और आशा के अनुरूप इस विषय के अध्ययन के फलस्वरूप छात्रों में विभिन्न सामाजिक गुणों यथा सहयोग का भावना, सहकारिता की भावना, निष्पक्षता तथा सहिष्णुता की भावना आदि, लोकतान्त्रिक गुणों तथा सर्वोपरि मानवता के गुणों का विकास हो रहा है। उनमें सामाजिक समस्याओं के समाधान की वैज्ञानिक क्षमता विकसित हो रही है। सह–अस्तित्व में विश्वास करते हुए आज वे विश्व–शान्ति स्थापना की दिशा में प्रयासरत है। ऐसे तमाम सकारात्मक परिवर्तन सामाजिक अध्ययन विषय की प्रासंगिकता को स्वमेव सिद्ध कर देते हैं।

9.8 अभ्यास के प्रश्न

1. विशेषीकरण की प्रवृत्ति से आप क्या समझते है?
2. हमारे छात्र भारतीय यर्थाथता से पूर्ण भिज्ञ क्यों नहीं है?
3. अलविन टौफलर ने अपने लेख में सामाजिक वैज्ञानिकों को क्या सुझाव दिया है।

9.9 चर्चा के बिन्दु

1. मतदान के प्रयोग के सन्दर्भ में सामाजिक विज्ञान किस प्रकार सहायक है?
2. सामाजिक विज्ञान में किए जाने वाले शोध का परिणाम हमारे भारतीय समाज के लिए किन परिस्थितियों में झूठा तथा अनुपयुक्त हो सकता है?

9.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र, समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, मानव विज्ञान तथा मनोविज्ञान आदि विषयों की महत्वपूर्ण विषय वस्तु का समन्वित रूप ही सामाजिक विज्ञान है। यही विषय मिलकर सामाजिक विज्ञान को एकीकृत स्वरूप प्रदान करते हैं।
2. सामाजिक विज्ञान विभिन्न सामाजिक क्रियाओं में छात्रों को सामूहिक रूप से भाग लेने को प्रेरित करता है। क्योंकि सामाजिक क्रियाओं को करने का उत्तरदायित्व सभी का होता है। इससे उनमें विभिन्न सामाजिक गुणों का विकास होता है।
3. एक आदर्श नेता वही है जो जनहित के लिए कार्य करें। उसमें कुशल नेतृत्व की क्षमता कर्तव्यनिष्ठता, ईमानदारी, पारदर्शिता जैसे गुणों का होना अनिवार्य है।
4. सामाजिक विज्ञान को राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ कर उसे राष्ट्रीय व्यक्तित्व प्रदान कर सकते हैं।
5. जिससे छात्र अतीत के अनुभवों से लाभ उठाते हुए अपने वर्तमान को संवार कर भविष्य को सुरक्षित कर सकें। भविष्य के प्रति चेतना युक्त होकर भावी नीतियों का निर्माण कर सकें।
6. सामाजिक विज्ञान में शोध का चयन करते समय भारतीय पृष्ठभूमि को ही वरीयता दी जानी चाहिए जिससे छात्र भारतीय सन्दर्भ का यर्थाथ ज्ञान प्राप्त कर सके।
7. बैले, सेठ तथा अलविन टौफलर जैसे समाज वैज्ञानिकों तथा भविष्यशास्त्रियों ने समय की मुख्य धारा के अनुरूप सामाजिक विज्ञान के पाठ्यक्रम में परिवर्तन लाने पर बल दिया है।

9.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें एवं सन्दर्भ

1. blog.oureducation.in>advantage
2. https://en.wikipedia.org/wiki/academic-term.
3. Murthy, I.V.Radhakrishanan and Jeeintha, B. Mary-Method of teaching social studies - Neelkamal Publication Pvt. Ltd. New Delhi, Hyderabad.
4. सामाजिक विज्ञान का शिक्षण, कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)।

खण्ड– 04 : विज्ञानों में विद्यालयी पाठ्यक्रम का विश्लेषण

खण्ड–परिचय

प्रस्तुत खण्ड में अनुशासन (शाखा) और विषय की समझ पर चर्चा करेंगे। इस खण्ड के अंतर्गत विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की विशेषताएं, विज्ञान शिक्षण की विधियाँ, विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान की उपादेयता प्रकरणों पर विचार करेंगे, क्योंकि विज्ञान विषय के प्रशिक्षणार्थियों के लिए उपरोक्त प्रकरणों की जानकारी अत्यन्त आवश्यक है। विज्ञान विषय से सम्बन्धित उपरोक्त प्रकरणों की चर्चा तीन इकाईयों में विभाजित कर करेंगे, जिनका विवरण निम्नवत् है–

इकाई– 10 में विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताओं के विषय में बताया गया है। इस इकाई में विद्यालयी पाठ्यक्रम की परिभाषा, पाठ्यक्रम की आवश्यकता, पाठ्यक्रम एवं पाठ्य विवरण एवं विभिन्न स्तर पर पाठ्यक्रमों की विशेषताओं का उल्लेख किया गया है।

इकाई– 11 में विज्ञान शिक्षण विधियों का उल्लेख किया गया है। इस इकाई में विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों की चर्चा की गयी है। इसमें शिक्षक केन्द्रित विधियों में व्याख्यान विधि एवं प्रयोग–प्रदर्शन विधि, बाल केन्द्रित विधि में प्रयोजन विधि, प्रयोगशाला विधि, ह्यूरिस्टिक विधि का विस्तार से वर्णन किया गया है।

इकाई– 12 में विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान की उपादेयता के विषय में विस्तार से बताया गया है। इस इकाई में विज्ञान की अवधारणा, विज्ञान की परिभाषा, विज्ञान की विशेषता, दैनिक जीवन में विज्ञान की उपयोगिता एवं महत्व का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसमें विभिन्न शिक्षा नीतियों की सिफारिशों का उल्लेख भी उपादेयता के संदर्भ में किया गया है।

इकाई– 10 : विज्ञानों में विद्यालयी पाठ्यक्रम की प्रमुख विशेषताएं

इकाई की संरचना

10.1 प्रस्तावना

10.2 इकाई के उद्देश्य

10.3 विद्यालयी पाठ्यक्रम

10.3.1 पाठ्यक्रम का अर्थ

10.3.2 परिभाषाएं

10.4 विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की आवश्यकता एवं महत्व

10.5 पाठ्यक्रम और पाठ्य विवरण

10.6 विज्ञान पाठ्यक्रम की विशेषाताएं

10.7 नेशनल करीकुलम फ्रेमवर्क 2000, 2005 में प्रस्तावित विभिन्न स्तरों के अनुसार विज्ञान पाठ्यक्रम

10.7.1 प्राथमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम

10.7.2 उच्च प्राथमिक या पूर्व माध्यमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम

10.7.3 माध्यमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम

10.8 सारांश

10.9 अभ्यास के प्रश्न

10.10 चर्चा के बिन्दु

10.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

विज्ञान विषय, वर्तमान विद्यालयी विषयों में अपना एक अलग स्थान रखता है। विज्ञान विषय, जीवन को जानने और सही ढंग से जीवन जीने के लिए अनिवार्य विषय बन गया है। किसी कक्षा में विज्ञान विषय को पढ़ाने के लिए उस स्तर के अनुकूल निर्मित पाठ्यक्रम का सहारा लेना पड़ता है।

विज्ञान विषय के पाठ्यक्रम की आवश्यकता क्यों है? एवं इसका महत्व क्या है? पाठ्यक्रम किन आधारों पर निर्मित किया जाता है? पाठ्यक्रम और पाठ्य विवरण के क्या अर्थ है? उपरोक्त सभी प्रकरणों को विज्ञान पाठ्यक्रम की विशेषताओं के अन्तर्गत विवेचित किया गया है।

यह अनुशासन (शाखा) एवं विषय की समझ की 10वीं इकाई हैं। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपको विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताओं को समझने में सुविधा होगी।

10.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की अवधारणा को जान सकेंगे।
2. विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की आवश्यकता एवं महत्व को समझ सकेंगे।

3. विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की आवश्यकता एवं महत्व का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

4. विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की विभिन्न मुख्य विशेषताओं को विभिन्न स्तरों के अनुसार समझ सकेंगे।

5. विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताओं का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

6. नेशनल करीकूलम फ्रेमवर्क 2005 में पाठ्यक्रम को समझ सकेंगे।

10.3 विद्यालयी पाठ्यक्रम

विद्यालय में जो पाठ्यक्रम चलते हैं अथवा विद्यालय जिनके आधार पर संचालित होते हैं उन्हें विद्यालयी पाठ्यक्रम कहते हैं।

विद्यालयी पाठ्यक्रम दो शब्दों से मिलकर बना है–

(i) विद्यालय (ii) पाठ्यक्रम।

इसको विद्यालय का पाठ्यक्रम या विद्यालय का आधार कहा जाता है। विद्यालय एक ऐसा स्थान है जो बच्चों को एक सभ्य नागरिक के रूप में ढालने का प्रयास करता है, यहाँ जो भी विषय पढ़ाये जाते हैं उन सभी विषयों का आधार विद्यार्थियों में नागरिकता एवं वैज्ञानिकता के गुण विकसित करना होता है।

विद्यालय के संदर्भ में यदि हम इसके अंग्रेजी शब्द SCHOOL के अर्थ को विश्लेषित करें तो पायेंगे कि–

S- Social	सामाजिक
C- Cultural	सांस्कृतिक
H- Humanistic	मानवतावादी
O- Organisation	संगठन
O- Of	का
L- Learning	अधिगम

अर्थात् विद्यालय सामाजिक, सांस्कृतिक, मानवतावादी अधिगम कराने का संगठन/संस्था है। पाठ्यक्रम में सामाजिक, सांस्कृतिक, मानवतावादी गुणों को विकसित करने वाले तत्त्वों को स्थान दिया जाता है।

10.3.1 पाठ्यक्रम का अर्थ

सामान्यतः पाठ्यक्रम अंग्रेजी भाषा के Curriculum शब्द का रूपांतर है। Curriculum शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द 'Currere' (क्यूरेरे) से हुई है। जिसका अर्थ है– 'दौड़ का मैदान' इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि पाठ्यक्रम के सहारे विद्यार्थी एक निश्चित परिधि में दौड़कर उनके विशिष्ट स्तर के निर्धारित उद्देश्यों को शिक्षक की मदद से प्राप्त करता है/करने का प्रयास करता है।

पाठ्यक्रम एक व्यापक शब्द है इसमें पाठ्य विवरण (Syllabus) के अलावा पाठ्य सहगामी क्रियायें, विद्यालयी अनुभव इत्यादि भी समाहित होते है, जो विद्यार्थी के चहुमुखी विकास के लिए अत्यन्त प्रभावकारी सिद्ध होते हैं। एक बोर्ड से संचालित होने वाले विभिन्न विद्यालयों के पाठ्य विवरण एक होते हैं/हो सकते हैं, परन्तु उनके यहाँ आयोजित होने वाले खेलकूद, अन्य कार्यक्रम (शिक्षक–अभिभावक–आमेलन, वार्षिकोत्सव, प्रत्येक दिन की प्रार्थना सभा और उसके साथ आयोजित होने वाले अन्य कार्यक्रम इत्यादि) शिक्षकों एवं कर्मचारियों का व्यवहार, विद्यालयी संसाधनों का प्रभाव, विद्यालयी वातावरण इत्यादि अलग–अलग होते हैं। इसलिए कह सकते हैं कि प्रत्येक विद्यालय का अपना अलग–अलग पाठ्यक्रम होता है। इसे गणित के सहारे आसानी से समझ सकते है। पाठ्यक्रम = पाठ्य विवरण + पाठ्य सहगामी क्रियायें + विद्यालयी अनुभव, इत्यादि।

10.3.2 परिभाषाएँ

कनिंघम (Cunningham) के अनुसार, "पाठ्यक्रम कलाकार (शिक्षक) के हाथ में वह साधन हैं, जिससे वह अपनी चित्रशाला (विद्यालय) में अपनी सामग्री (विद्यार्थी) को अपने आदर्शों (उद्देश्यों) के अनुसार ढालता है।

"Curriculum is a tool in the hands of the artist (teacher) to mould his/her material (pupils) according to his ideals (aims & objectives) in his workshop (school)". - Cunningham

क्रो एवं क्रो के अनुसार, "पाठ्यक्रम में सीखने वाले (विद्यार्थी) के वे सभी अनुभव सम्मिलित हैं, जिन्हें वह विद्यालय के अन्दर या बाहर प्राप्त करता है तथा जिन्हें उसके मानसिक शारीरिक, सामाजिक, भावात्मक, आध्यात्मिक एवं नैतिक विकास के लिए बनाए गये कार्यक्रम में शामिल किया गया है।

"Curriculum includes all the learner's experiences in or out-side school that are included in a programme which has been devised to help him develop mentally, Physically, Socially, emotionally, spiritually and morally." -Crow and Crow.

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. विद्यालयी पाठ्यक्रम से क्या तात्पर्य है?

   .....

   .....

2. पाठ्यक्रम की उत्पत्ति लैटिन भाषा के किस शब्द से हुई?

   .....

   .....

3. कनिंघम के शब्दों में पाठ्यक्रम को परिभाषित कीजिए।

   .....

   .....

10.4 विज्ञान विषय के पाठ्यक्रम की आवश्यकता एवं महत्व

विद्यालय समाज का दर्पण है, विद्यालय में समाज की आवश्यकता की पूर्ति हेतु ही सारे नियोजन किये जाते हैं। राष्ट्र के निर्माण में विद्यालय की महती भूमिका होती है। प्रत्येक राष्ट्र एवं समुदाय की अपनी मान्यताएं, आवश्यकताएं एवं मूल्य होते हैं, ये ही पाठ्यक्रम निर्धारण में अपनी मुख्य भूमिका अदा करते हैं। किसी भी देश की शिक्षा की योजना वहाँ के आवश्यकतानुसार (स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय, अर्न्तराष्ट्रीय) ही निर्धारित होती है। शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए पाठ्यक्रम ही पूर्ण रूप से सहायक होते है। वर्तमान समय में सभी विषयों के साथ विज्ञान विषय का भी विद्यालयी पाठ्यक्रम में एक महत्वपूर्ण स्थान है। विज्ञान विषय वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करता है। साथ ही साथ विज्ञान विषय विद्यार्थियों में निम्नलिखित मूल्यों को स्थापित करने में मददगार साबित होते हैं–

1. तार्किक / बौद्धिक मूल्य (Logical/Intellectual Value)
2. अनुशासन संबंधी मूल्य (Disciplinary Value)

3. वैश्विक मूल्य (Global Value)

4. व्यवसायिक मूल्य (Vocational Value)

5. सौन्दर्यात्मक मूल्य (Aesthetic Value) इत्यादि।

विज्ञान विषय इन मूल्यों को विकसित करने में एक सार्थक भूमिका निभाता है इसीलिए विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान विषय की महत्ता अपने आप आवश्यक प्रतीत होती है, क्योंकि विज्ञान ही एक ऐसा विषय है जो व्यक्ति में तार्किक/वैज्ञानिक सोच उत्पन्न करता है। विज्ञान ही व्यक्ति में विश्लेषण–संश्लेषण उपागम को विकसित करता है, इसी के आधार पर एक छोटा बच्चा भी प्रश्न पूछने के लिए उत्सुक रहता है, जैसे–

यह क्या है?

यह कैसे बना?

इसकी क्या आवश्यकता है?

ये प्रश्न ही नई खोज के लिए आधार बनते हैं।

विज्ञान पाठ्यक्रम, अग्रलिखित मूल्यो को विकसित करने के लिए अति आवश्यक है। विज्ञान ही एक ऐसा विषय है जो सभी जगहों पर एक जैसी अवधारणा के आधार पर स्वीकार है, यह कारण–प्रभाव, नियंत्रित परिस्थितियों के आधार पर ही सार्वत्रिक एक जैसे परिणाम और उसकी सत्यता की जांच को प्रमाणित करता है। विज्ञान विषय का पाठ्यक्रम अन्य विषयों के पाठ्यक्रम की तरह ही निम्न कार्यों के लिए अति आवश्यक है–

1. विशिष्ट स्तर पर विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए।
2. पाठ्य पुस्तकों के निर्माण के मार्ग दर्शन हेतु।
3. मूल्यांकन हेतु।
4. शिक्षण विधियों के चयन हेतु।
5. समय का सदुपयोग करना सिखाने हेतु।
6. मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु।

विज्ञान विषय का पाठ्यक्रम भी इन आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

1. विशिष्ट स्तर पर विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आवश्यक

शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर शिक्षा के उद्देश्य भिन्न–भिन्न होते हैं– जैसे प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च स्तर पर शिक्षा के उद्देश्य भिन्न–भिन्न हैं, एवं इनके अनुसार पाठ्यक्रम निर्धारित कर इन उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। पाठ्यक्रम की सहायता से ही पता चलता है प्राथमिक स्तर पर विज्ञान का पाठ्यक्रम बच्चों को क्या सिखाना चाहता है/क्या व्यवहारिक परिवर्तन चाहता है। इनसे यह भी कह सकते हैं कि प्रत्येक कक्षा का अपना अलग–अलग पाठ्यक्रम होता है और यह पाठ्यक्रम एक निश्चित लक्ष्य/उद्देश्यों को इंगित करता है, इससे स्पष्ट है कि पाठ्यक्रम विशिष्ट स्तर पर विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक है।

2. पाठ्य पुस्तकों के निर्माण के मार्गदर्शन हेतु आवश्यक

पुस्तकों को लिखना अथवा उनका निर्माण पाठ्यक्रम के आधार पर ही होता है, कोई भी पुस्तक उस स्तर के पाठ्यक्रम पर ही आधारित होती है। कक्षा–1 प्रारंभिक कक्षा मानी जाती है, इस स्तर पर विद्यार्थियों को अक्षर ज्ञान, मात्रा ज्ञान और सरल शब्दों को लिखना एवं पढ़ना, सिखाना ही उद्देश्य होता है इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर इस स्तर का पाठ्यक्रम निर्मित होता है, और इन्हीं उद्देश्यों एवं पाठ्यक्रम के आधार पर पुस्तकों

का निर्माण होता है।

3. मूल्यांकन हेतु आवश्यक

उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु पाठ्यक्रम आवश्यक होता है, पाठ्यक्रम के आधार पर ही मूल्यांकन कर उद्देश्यों की प्राप्ति के विषय में पता किया जाता है। किसी विशिष्ट कक्षा के लिए कैसा पाठ्यक्रम निश्चित किया गया था, कक्षा एक के बच्चे का मूल्यांकन, कक्षा 1 के पाठ्यक्रम के आधार पर किया जाता है न कि अन्य कक्षा के पाठ्यक्रम के आधार पर। इससे यह स्पष्ट है कि पाठ्यक्रम ही मूल्यांकन का आधार है।

4. शिक्षण विधियों के चयन हेतु आवश्यक

पाठ्यक्रम के आधार पर शिक्षण विधियों का चयन शिक्षक करता है, यदि कृषि विषय में जोताई–बुवाई इत्यादि को विद्यार्थियों को समझना है तो उसे क्षेत्र अध्ययन विधि अधिक उपयोगी होगा, जबकि भौतिक–रसायन–जीव विज्ञान के पाठ्यक्रम के लिए प्रयोगशाला विधि एवं भाषा विषय के लिए व्याख्यान विधि प्रयोग में लाया जायेगा। विषय के अंतर्गत प्रकरण के आधार पर भी विधियों का चयन किया जाता है।

5. समय का सदुपयोग करना सिखाने हेतु आवश्यक

पाठ्यक्रम, शैक्षणिक एवं सह शैक्षणिक गतिविधियों का समन्वय है। शैक्षणिक गतिविधियों के अंतर्गत बच्चों को गृहकार्य देकर उनके समय का सही सदुपयोग कराने का प्रयास किया जाता है। सह शैक्षणिक गतिविधियों (पाठ्य सहगामी क्रियाओं) में खेल–कूद, नाटक, गीत संगीत, पर्यटन, NCC, SUPW, WWC, स्काउट, रोवर्स–रेंजर्स इत्यादि के द्वारा भी बच्चों को समय का सदुपयोग करना सिखाया जाता है, साथ ही बच्चों को SUPW के अंतर्गत घर में पड़ी बेकार वस्तुओं से सजावट एवं उपयोगी वस्तुओं का निर्माण सिखाकर उनके समय को उस तरफ प्रयोग करने के लिए उन्मुख किया जाता है। ये सभी पाठ्यक्रम के अंग है, अर्थात् पाठ्यक्रम समय का सदुपयोग करना सिखाने के लिए आवश्यक है।

6. मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक

विद्यालय, पाठ्यक्रम के आधार पर ही संचालित होता है। विद्यालय विद्यार्थियों के विकास के लिए ही बनाया गया है, अर्थात् विद्यालय में संचालित होने वाले पाठ्यक्रम विद्यार्थियों के मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सहायक होते हैं। विद्यार्थी के सीखने की जिज्ञासा को विद्यालय ही बढ़ाता है और उसे नया ज्ञान सीखने में मदद करता है, सह शैक्षणिक गतिविधियां भी इसके मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक होते हैं। प्रत्येक विद्यार्थी की अपनी–अपनी रूचियां और छिपी प्रतिभाएं होती हैं, विद्यालय में आयोजित होने वाले विभिन्न शैक्षणिक एवं सह–शैक्षणिक कार्यक्रम विद्यार्थियों के मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक होते हैं, और यह संभव होता है, पाठ्यक्रम में नियोजित विभिन्न शैक्षणिक एवं सह–शैक्षणिक गतिविधियों के आधार पर।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि विद्यालय का संचालन पाठ्यक्रम के बिना संभव नहीं है, पाठ्यक्रम के सहारे ही शिक्षक–विद्यार्थी आपस में जुड़ते हैं, अर्थात् पाठ्यक्रम दोनों के मध्य पुल (bridge) का कार्य करता है। पाठ्यक्रम विद्यार्थी एवं शिक्षक दोनों के लिए आवश्यक है, पाठ्यक्रम शिक्षक को भी मार्गदर्शन प्रदान करता है कि क्या पढ़ाना है, एवं साथ ही इसी के आधार पर शिक्षक अपनी युक्ति, विधि, तकनीकी इत्यादि तैयार करता है कि किस तरह पढ़ाना है, विद्यार्थी का मूल्यांकन कैसे करना है इत्यादि।

पाठ्यक्रम, विद्यार्थी को भी दिशा प्रदान करता है, शिक्षक की अनुपस्थिति में विद्यार्थी स्व–अध्ययन कर सकता है, और अपने दायरे को जानता है, उसे किसी विशिष्ट वर्ष में क्या–क्या करना है और कैसे करना है। यह सब संभव है तो केवल पाठ्यक्रम के सहायता से ही।

10.5 पाठ्यक्रम और पाठ्य विवरण

सामान्यतः पाठ्यक्रम और पाठ्यविवरण (पाठ्यचर्या) को अधिकांशतः लोग एक ही अर्थ में प्रयोग करते हैं,

जबकि ये दोनों शब्द अपने अर्थों में भिन्नता रखते हैं, परन्तु ये दोनों शब्द एक दूसरे पर अन्योन्याश्रित है, इनको एक सिक्के के दो पहलू भी कहा जा सकता है।

1. पाठ्यक्रम विज्ञान के संदर्भ में

पाठ्यक्रम एक विस्तृत/व्यापक शब्द है जिसमें पाठ्य विवरण, पाठ्य सहगामी क्रियाओं का विवरण तथा विद्यालय वातावरण एवं उससे संबंधित अन्य अनुभवों का समावेश होता है। विज्ञान के पाठ्यक्रम को यदि विश्लेषित करे तो पायेंगे कि इसमें विभिन्न क्रियायें भी समाहित होती है जो पाठ्य विवरण के अतिरिक्त होती है। जैसे–कक्षा–9 का विज्ञान विषय का पाठ्यक्रम

2. पाठ्य विवरण

पाठ्य विवरण

(i) भौतिक विज्ञान

बल, ऊर्जा, कार्य इत्यादि।

(ii) रसायन विज्ञान

धातु–अधातु, परमाणु एवं इसकी संरचना, रासायनिक अभिक्रियायें इत्यादि।

(iii) जीव विज्ञान

भोजन, कोशिका, ऊतक, जैव विविधिता, प्राकृतिक संसाधन इत्यादि।

उपरोक्त प्रकरणों से संबंधित प्रयोगशाला कार्य–

भौतिक विज्ञान

(i) बल संबंधी प्रयोग (ii) कार्य संबंधी प्रयोग (iii) ऊर्जा संबंधी प्रयोग

रसायन विज्ञान

(i) धातु–अधातु की पहचान करना।

(ii) रासायनिक अभिक्रिया संपादित करना।

जीव विज्ञान

(i) कोशिका की पहचान करना।

(ii) ऊतक की पहचान करना।

(iii) जैव विविधता की अवधारणा का प्रत्यक्षीकरण।

3. पाठ्य सहगामी क्रियायें

(i) विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन।

(ii) विद्यार्थियों द्वारा विभिन्न विज्ञान अवधारणाओं पर क्रिया–आधारित मॉडल को तैयार कराना।

(iii) विभिन्न औद्योगिक इकाइयों, चिड़ियाघरों एवं क्षेत्रों का भ्रमण कराना।

(iv) जल संरक्षण, वन संरक्षण, ऊर्जा संरक्षण, वन्य–जीव संरक्षण ऊर्जा–संरक्षण इत्यादि संबंधी फिल्मों को

दिखाना एवं उपरोक्त प्रकरण पर लघु नाटिका का आयोजन कर इनके प्रति जागरूकता उत्पन्न कराना।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. पाठ्यक्रम और पाठ्य विवरण एक दूसरे से कैसे संबंधित है?

.....

5. विज्ञान से संबंधित एक पाठ्य सहगामी क्रिया का नाम लिखिए।

.....

10.6 विज्ञान पाठ्यक्रम की विशेषताएं

1. विज्ञान पाठ्यक्रम में ऐसे तथ्य/प्रत्यय रखें जो व्यक्ति में विश्लेषणात्मक एवं संश्लेषणात्मक गुण विकसित कर सकें तथा व्यक्ति को अनुसंधानकर्ता/खोजकर्ता बना सके अर्थात् व्यक्ति को मूल्यांकनकर्ता बना सके।
2. पाठ्यक्रम में ऐसे तथ्य/प्रत्यय रखें जाय जो वैज्ञानिकता पर बल प्रदान करें, निरीक्षण/प्रेक्षण की योग्यता को बढ़ाये और वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करें।
3. पाठ्यक्रम में ऐसे तथ्य/प्रत्यय रखें जो जीवन के व्यवहारिक पहलू से जुड़े हुए हो जिससे विद्यार्थियों में उसको जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हो सके और वे उसकी गतिविधियों को जानने में तत्परता दिखायें।
4. पाठ्यक्रम के विषय–वस्तु सृजनात्मकता दृष्टिकोण को विकसित करने में सफल हो सके।
5. पाठ्यक्रम के विषय–वस्तु में विद्यार्थियों के क्रियाशीलता के लिए भी स्थान हो, अर्थात् विद्यार्थी स्वयं करके सीख सकें।
6. पाठ्यक्रम में मूल्यांकन के लिए प्रयोगात्मक पक्ष पर अधिक बल दिया गया हो।
7. पाठ्यक्रम में सैद्धांतिक ज्ञान के साथ–साथ अनुभवों की संपूर्णता पर भी बल दिया गया हो जिससे विद्यार्थियों को प्रत्यय समझने में आसानी हो।

10.7 नेशनल करीकुलम फ्रेमवर्क 2000, 2005 में प्रस्तावित विभिन्न स्तरों के अनुसार विज्ञान पाठ्यक्रम

नेशनल करीकुलम फ्रेमवर्क 2000, 2005 में विभिन्न स्तरों पर पाठ्यक्रम में विज्ञान विषय वस्तु में जिनको प्राथमिकता दी गई है, उसके कुछ आवश्यक बिन्दुओं को स्तरों के अनुसार यहाँ विवेचित किया जा रहा है जिनको विभिन्न स्तर के पाठ्यक्रमों में समाहित करना अतिआवश्यक है क्योंकि NCF 2000, 2005 में प्रस्तावित बिन्दु वर्तमान की विज्ञान विषय–वस्तु की मांग को भलीभांति पूर्ण करते हैं। इन्हीं को आधार बनाकर विभिन्न स्तर के पाठ्यक्रम बनाये भी जा रहे हैं।

10.7.1 प्राथमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम

प्राथमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम के विषय–वस्तु में निम्नलिखित पक्षों को समाहित करने पर बल

दिया गया है–

1. प्राथमिक स्तर पर बच्चों की संवेदनाओं को तीव्र करने वाली विषय–वस्तु को पाठ्यक्रम में समाहित किया जाय, जैसे–चीजों को छूकर उनके आकार, अवस्थाओं, सुगंध इत्यादि के विषय में जान सके।
2. विद्यार्थियों में प्रारंभ से ही अन्वेषणकर्ता के गुणों का विकास करने का प्रयास किया जाय जिससे उनके अंदर जिज्ञासा जागृत हो और वे खोजने, अवलोकन, निरीक्षण करने में आनंद का अनुभव महसूस करें।
3. प्राथमिक स्तर पर ही अंतिम तीन वर्ष (कक्षा–3, 4, 5) में उनके अनुभवों एवं गतिविधियों को धीरे–धीरे एक प्रारूप प्रदान किया जाना चाहिए अर्थात् उनको निश्चित प्रक्रिया का अवलोकन कराके विज्ञान के उद्देश्य की तरफ अग्रसर कराने का प्रयास कराने चाहिए।
4. अंतिम तीन वर्षों में पर्यावरण अध्ययन से संबंधित विषय–वस्तु को विज्ञान के पाठ्यक्रम में समाहित कर देना चाहिए, जिससे विद्यार्थी प्राकृतिक वस्तुओं के समीप आकर उनकी कार्यशैली को जान सकें।
5. इसके साथ ही पदार्थों में होने वाले भौतिक एवं रसायनिक परिवर्तनों से भी वो थोड़ा बहुत परिचित हो सकें। जैसे–रबर की गेंद को दबाने के बाद छोड़ देने पर वह अपनी अवस्था में आ जायेगी एक परिवर्तन है, इसे भौतिक परिवर्तन कहते हैं। कागज को जलाने पर वह राख बन जाता है यह रासायनिक परिवर्तन है।
6. इस स्तर पर विद्यार्थियों को विभिन्न सूचनाएं एकत्र करना एवं उन्हें वर्गीकृत करना सिखाना, जिससे उनमें विश्लेषणात्मक शक्ति का विकास हो सके।
7. विद्यार्थियों के सम्मुख छोटी–छोटी समस्याएं उत्पन्न कर उनमें व्यक्तिगत तथा सामूहिक समस्या–समाधान की योग्यता विकसित करें, जिसमें उनमें विश्लेषण के साथ–साथ संश्लेषणात्मक शक्ति का विकास हो और उनमें समस्या समाधान की योग्यता का विकास शुरू हो सकें।

10.7.2 उच्च प्राथमिक या पूर्व माध्यमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम

इस स्तर पर विद्यार्थी मूर्त/स्थूल अवस्था में होता है, और उसकी प्रत्यक्षीकरण की क्षमता बढ़ जाती है इसलिए इस स्तर पर पदार्थ एवं जीव की संरचना एवं उनके कार्यों, गुणों तथा अन्य के साथ संबंधों की जांच–परख करना प्रारंभ कर देते हैं तथा कोई घटना क्यों घट रही है उसके कारणों को भी ढूंढ़ना प्रारंभ कर देते हैं साथ ही यदि इसको इसके साथ मिलाया जाय तो क्या होगा, जैसे ताप बढ़ाया जायेगा तो ज्यादा गर्मी होगी, ऐसे तथ्यों का अवलोकन करना प्रारंभ कर देता है, इन्हीं को आधार बनाकर NCF 2000, 2005 में इस स्तर पर निम्न बिन्दुओं को विज्ञान पाठ्यक्रम में समाहित करने का प्रस्ताव किया गया है–

1. विद्यार्थियों को अपने आस–पास के वातावरण में घटित होने वाले परिवर्तनों को समझने के प्रयास का अवसर प्रदान करना चाहिए।
2. प्राकृतिक संसाधनों के विषय में समझ उत्पन्न करना चाहिए जिससे उनका संरक्षण करने योग्य हो सकें।
3. पर्यावरणीय विज्ञान के अन्तर्गत स्वास्थ्य, स्वच्छता, पोषण रोग के कारण एवं निदान, जीवन की प्रक्रियाओं, कृषि कार्यों इत्यादि की समझ विकसित करने वाले प्रकरणों को समाहित करें।
4. विद्यार्थियों को सरल उपकरणों को स्वयं बनाने तथा वैज्ञानिक प्रत्ययों को समझने के लिए स्थानीय संसाधनों द्वारा प्रयोगों के प्रारूप तैयार करने के लिए प्रेरित करने वाले प्रत्यय पाठ्यक्रम में समाहित किये जाय।
5. जिज्ञासा उत्पन्न करने वाले कार्यों को भी पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाय जैसे औद्योगिक इकाई, अस्पताल, खेत, जंगल इत्यादि का भ्रमण।

10.7.3 माध्यमिक स्तर पर विज्ञान पाठ्यक्रम

माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी पूर्ण तरीके से तकनीकी यंत्रों को संभालने के योग्य हो जाता है, एवं वह गहराई से वस्तुओं एवं घटनाओं का निरीक्षण करने लग जाता है इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखकर में NCF 2000, 2005 में माध्यमिक स्तर पर निम्नलिखित बिन्दुओं को विज्ञान पाठ्यक्रम में समाहित करने का प्रस्ताव किया गया है–

1. द्रव्य, ऊर्जा, बल, मशीन, प्रकाश, विभिन्न भौतिक एवं रासायनिक प्रक्रियाओं से संबंधित अनुप्रयोगों एवं इनसे संबंधित प्रत्ययों की समझ को विकसित करने वाले प्रकरणों को समाहित किया जाय।
2. तकनीकी प्रयोगों को अवधारणाओं से जोड़ते हुए नए अवधारणाओं को विकसित करने के लिए अवसर प्रदान करने वाले प्रकरणों को पाठ्यक्रम में समाहित किया जाय।
3. सृजनात्मक एवं उत्पादक प्रयोगात्मक कार्यों से संबंधित प्रकरण इस स्तर के पाठ्यक्रम में समाहित किये जाय।
4. माध्यमिक स्तर पर विज्ञान, तकनीकी, समाज एवं पर्यावरण को एक साथ संगठित करते हुए विद्यार्थी के सम्मुख प्रस्तुत किया जाय जिससे वह विज्ञान–तकनीकी को समाज एवं पर्यावरण के पर्याय मान सकें।
5. उपस्थित वैज्ञानिक उपकरणों के आधार पर स्वरचित/आशुरचित उपकरणों को निर्मित करने के लिए प्रेरित किया जाय।
6. वैज्ञानिक अवधारणा को आधार बनाते हुए वैज्ञानिक पर्यटन को भी पाठ्यक्रम में स्थान मिलना चाहिए जिससे विद्यार्थियों की सोच, अनुसंधान की तरफ अग्रसर हो सके। फैक्ट्री, मेडिकल संकाय, रसायनिक अनुसंधान केंद्र इत्यादि का भ्रमण करके इस उद्देश्य की प्राप्ति की जा सकती है।

विज्ञान विषय अति महत्वपूर्ण विषय है, यह व्यवहारिक जीवन के विषय में अत्यंत आवश्यक ज्ञान प्रदान करता है। विज्ञान के जानकारी के बिना हम सबका जीवन अत्यंत दुरूह हो जायेगा। अति प्राचीन काल की भयावह परिस्थितियां विज्ञान के अभाव में ही हुई थी, महामारी, अकालमृत्यु, अनेको बीमारियों का होना जो आज नियंत्रित अवस्था में है, यदि विज्ञान की जानकारी समाज को न दी गयी तो एक बार फिर यह मानव समाज अंधकार युग में प्रवेश कर जायेगा।

इसलिए ही विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान विषय को जो पाठ्यक्रम रखा गया है वह सामान्य जीवन से जोड़कर रखा गया है, यह "स्वच्छ जीवन–स्वस्थ जीवन" की अवधारणा के विकास को आधार बनाकर रखा गया है। यह पाठ्यक्रम वैज्ञानिक सोच को विकसित कर अंधविश्वास के युग से बाहर निकालने में सार्थक है।

विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान विषय के पाठ्यक्रम का व्यवहारिक जीवन से जुड़ाव ही सभी शिक्षा समितियों की सिफारिश रही हैं।

विद्यालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम में यदि पीछे विवेचित किये गये उद्देश्यों को प्रमुखता से स्थान मिलेगा तभी भारत देश विकासशील देश की श्रेणी में आ पायेगा। विज्ञान ही एक ऐसा विषय है जो प्रौद्योगिकी विकास का आधार है, इसलिए विद्यालय स्तर पर ही कुछ प्रायोजना कार्यों की रूप–रेखा प्रस्तुत किये जाय जो विद्यार्थियों की कल्पना क्षमता, जिज्ञासु प्रवृत्ति का विकास कर सकें एवं अधिक से अधिक विद्यार्थियों में वैज्ञानिक ढंग से सोचने–समझने एवं कार्य करने की शैली विकसित कर सकें।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. NCF शब्द से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

7. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रूपरेखा में प्राथमिक स्तर पर किस प्रवृत्ति को विकसित करने को कहा है?

.....

.....

8. राष्ट्रीय पाठयक्रम रूपरेखा में माध्यमिक स्तर पर किस प्रवृत्ति को विकसित करने को कहा है?

.....

.....

10.8 सारांश

विद्यालयी पाठ्यक्रमों में सामाजिक, सांस्कृतिक, मानवीय गुणों एवं वैज्ञानिक/तार्किक दृष्टिकोण विकसित करने वाले तत्वों को स्थानदिया जाता है। विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम विद्यार्थियों के मन में जिज्ञासा (यह क्या है, यह कैसे बना है?, इसकी क्या आवश्यकता है इत्यादि।) उत्पन्न करते हैं तथा उसके आधार पर ही उनमें तर्क–चिन्तन विकसित करते हैं। जिज्ञासा ही नई खोज के लिए आधार बनते हैं। विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम विद्यार्थियों में विश्लेषणात्मक एवं संश्लेषणात्मक गुण विकसित करते हैं, निरीक्षण की योग्यता बढ़ाते हैं, सृजनात्मक क्षमता का विकस करते है एवं साथ ही मानव जीवन को समझने का दृष्टिकोण विकसित करते हैं।

विज्ञान विषय क विद्यालयी पाठ्यक्रम विद्यार्थियों में पदार्थ विज्ञान, जीव–वनस्पति विज्ञान के प्रति जिज्ञासु बनाते है। यह पाठ्यक्रम विद्यार्थियों में समस्या समाधान की योग्यता को विकसित करने में मद करता है एवं साथ ही वातावरण में घटित होने वाले भौतिक, रासायनिक एवं जैविक परिवर्तनों को समझने में मदद करता है यह पाठ्यक्रम तकनीकी ज्ञान प्रदान करते हुए 'स्वच्छ जीवन–स्वस्थ जीवन' की अवधारणा को विकसित करने में मदद करता है।

10.9 अभ्यास के प्रश्न

1. विद्यालयी पाठ्यक्रम की अवधारणा का वर्णन कीजिए।
2. विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की आवश्यकता एवं महत्व को विवेचित कीजिए।
3. विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताओं को लिखिए।
4. विज्ञान विषय के पाठ्य विवरण और पाठ्य सहगामी क्रियाओं को कक्षा 9 के संदर्भ में विवेचित कीजिए।
5. पाठ्यक्रम और पाठ्य विवरण में अंतर लिखिए।
6. प्राथमिक स्तर के विज्ञान पाठ्यक्रम का वर्णन कीजिए।

7. माध्यमिक स्तर के विज्ञान पाठ्यक्रम का वर्णन कीजिए।

10.10 चर्चा के बिन्दु

1. विज्ञान विषय के पाठ्यक्रम की आवश्यकता एवं महत्व पर चर्चा कीजिए।
2. विज्ञान विषय के विद्यालयी पाठ्यक्रम की मुख्य विशेषताओं पर चर्चा कीजिए।
3. नेशनल करीकुलम फ्रेमवर्क 2000, 2005 के अनुसार प्रस्तावित विज्ञान पाठ्यक्रमों (विभिन्न स्तरों के अनुसार) पर चर्चा कीजिए।

10.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. विद्यालय में जो पाठ्यक्रम चलते हैं अर्थात विद्यालय जिन आधारों पर संचालित होते हैं उन्हें विद्यालयी पाठ्यक्रम कहते है।
2. पाठ्यक्रम की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द 'क्यूरेरे' (Currere) से हुई है।
3. कनिंघम के अनुसार ''पाठ्यक्रम कलाकार (शिक्षक) के हाथ में वह साधन है जिससे वह अपनी चित्रशाला (विद्यालय) में अपनी सामग्री (विद्यार्थी) को अपने आदर्शो (उददे्श्यों) के अनुसार ढालता है।''
4. एक सिक्के के दो पहलू के रूप में संबंधित है।
5. विज्ञान प्रदर्शनी का आयोजन।
6. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रूपरेखा।
7. जिज्ञासु प्रवृत्ति को विकसित करना।
8. समस्या समाधान की योग्यता को।

10.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कुलश्रेष्ठ, ए0के0, कुलश्रेष्ठ, एन0के0 (2011). विज्ञान शिक्षण. मेरठः आर0 लाल0 बुक डिपो.
2. विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली.
3. सूद, जे0के0 (2003). *जैविक विज्ञान शिक्षण.* जयपुरः राजस्थान. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी.
4. सूद, जे0के0 (2015).*भौतिक विज्ञान शिक्षण. आगराः अग्रवाल पब्लिकेशन्स.*
5. Das, R.C.(1990). *Science Teaching In Schools.:* New Delhi: Sterling Publications.
6. Gupta, S.K.(1989). Teaching Physical Science In Secondary School . New Delhi: Sterling Publications.
7. Kulshresth, S.P. (1999).*Teaching Pysical Science In Indian School*. Merrut: R.Lal Book Depot.
8. Mishra, K.S. (1992). *Perpective In Science Education*. Agra: Vinod Pustak Mandir.
9. NCERT: *National Curriculum Frame Work for School Education*. New Delhi 2000.
10. Smith, B.O. & Standly, W.O. Shores, J.H. (1957). *Fundamental of Curriculum Development*. New Yark: Harcant, Brace and World.
11. Sood, J.K. (1987). *Teaching Life Sciences: A Book of Methods*. Chandigarh: Kohli Publisher.
12. Vidya, N. (1971). *Impact Of Science Teaching*. Delhi: on ford & I.B.H.

इकाई– 11 : विज्ञान की विधियाँ

इकाई की संरचना

11.1 प्रस्तावना

11.2 इकाई के उद्देश्य

11.3 विज्ञान की अवधारणा

11.4 विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य

- 11.4.1 सामान्य उद्देश्य
- 11.4.2 विशिष्ट उद्देश्य
- 11.4.3 प्राथमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य
- 11.4.4 माध्यमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य

11.5 शिक्षण विधि

- 11.5.1 कुछ प्रमुख दर्शनों के अनुसार शिक्षण विधियाँ

11.6 विज्ञान शिक्षण की विधियाँ

- 11.6.1 व्याख्यान विधि
- 11.6.2 प्रयोग–प्रदर्शन विधि
- 11.6.3 प्रायोजना विधि
- 11.6.4 प्रयोगशाला विधि
- 11.6.5 ह्यूरिस्टिक विधि
- 11.6.6 विचार–विमर्श विधि
- 11.6.7 पर्यटन विधि

11.7 सारांश

11.8 अभ्यास के प्रश्न

11.9 चर्चा के बिन्दु

11.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.11 कुछ उयपयोगी पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

विज्ञान विषय को विद्यालयी स्तर पर प्रभावी रूप से लागू करने में, विज्ञान विषय का शिक्षण की महती भूमिका है। विज्ञान विषय के शिक्षण को प्रभावी बनाने में शिक्षण विधियों का योगदान अतिमहत्वपूर्ण है। विज्ञान शिक्षण विधियाँ विषय को स्पष्ट रूप से विद्यार्थियों के समझ प्रस्तुत कर उसे ग्राह्य बनाती है।

शिक्षण विधियों पर विभिन्न दर्शनों का प्रभाव है, दर्शनों के प्रभावनुसार विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रार्दुभाव हुआ है। इस इकाई में विज्ञान शिक्षण की प्रमुख विधियों को सविस्तार विवेचित किया गया है। साथ ही साथ इसमें शिक्षण के विभिन्न स्तरों के अनुसार उद्देश्यों का उल्लेख किया गया है, शिक्षण उद्देश्य ही शिक्षण

विधियों के चयन में सहायक होते हैं।

यह अनुशासन (शाखा) एवं विषय की समक्ष की 11वीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपको विज्ञान विषय के विभिन्न प्रमुख शिक्षण विधियों को समझने में सुविधा होगी।

11.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. विज्ञान विषय के शिक्षण उद्देश्यों को जान सकेंगे।
2. विज्ञान विषय के सामान्य उद्देश्यों एवं विशिष्ट उद्देश्य में विभेद कर सकेंगे।
3. विज्ञान विषय के विभिन्न शिक्षण विधियों के विषय में जान सकेंगे।
4. विज्ञान विषय के शिक्षक केन्द्रित विधियों का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
5. विज्ञान विषय के शिक्षण में आवश्यकतानुसार शिक्षण विधियों के प्रयोग करने की अवधारणा को समझ सकेंगे।

11.3 विज्ञान की अवधारणा

विज्ञान मानव की विभिन्न समस्याओं और कठिनाइयों के निवारण हेतु एक विश्वस्त साधन के रुप में उसके सामने उपस्थित हुआ है। विज्ञान के द्वारा अपनी समस्याओं के समाधान तथा पर्यावरण शक्तियों को अपने अनुकूल बनाने के लिए जो ज्ञान का भण्डार व्यक्ति को प्राप्त हुआ है, उसे विज्ञान के अर्न्तगत ही समाविष्ट किया जाता है। इस प्रकार सत्य और ज्ञान की खोज करते–करते आज हमारे पास विज्ञान के नाम से प्रसिद्ध एक ऐसा सुव्यवस्थित और संगठित ज्ञान का भण्डार इकट्ठा हो चुका है जिसके माध्यम से हमें अपने आपको तथा अपने वातावरण को ठीक प्रकार से समझने में सहायता मिल सकती है।

विज्ञान केवल मात्र ज्ञान का भण्डार नहीं है बल्कि वह इस ज्ञान–भण्डार के अस्तित्व का कारण भी है और अगर सोचा जाय तो विज्ञान अपने मूल रुप में प्रक्रिया का परिणाम नहीं है। जो कुछ है तथा जो हो रहा है उसके रहस्य तथा कारण विशेष की जानकारी पाने के लिए सत्य की खोज का जो मार्ग अपनाया जाता है उसे ही विज्ञान कहा जाना चाहिए। ज्ञान अपने आप में महत्वपूर्ण तो होता ही है लेकिन उससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण बात उस ज्ञान तक पहुँचने का मार्ग है। हमारे लिए ज्ञान प्राप्त करना उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि ज्ञान प्राप्ति का ढंग सीखना। विज्ञान हमें यह ढंग सिखाकर ज्ञान तक पहुँचने का मार्ग दिखलाता है। यह बतलाता है कि किस तरह कार्य–कारण सम्बन्धों की खोज की जाती है।

उपर्युक्त बातों से स्पष्ट होता है कि विज्ञान एक प्रक्रिया भी है और उस प्रक्रिया का परिणाम भी है। अपने प्रक्रिया रुप में जहाँ यह सत्य की खोज करने का मार्ग दिखलाता है वहीं परिणाम रुप में हमारे सामने यह सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित ज्ञान का भण्डार भी प्रस्तुत करता है। विज्ञान विषय के अर्न्तगत इसी प्रकार तथा इसके परिणाम अर्थात् 'ज्ञान के भण्डार' को विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है।

शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है और इस उद्देश्य की प्राप्ति सुव्यवस्थित तथा सुसंगठित ढंग से शिक्षण के परिणाम स्वरुप की प्राप्त किया जा सकता है। इसी प्रकार हर विषय के भी कुछ निश्चित उद्देश्य होते है। कुछ उद्देश्य तात्कालिक होते है और कुछ उद्देश्य दीर्घकालिक होते हैं। इन उद्देश्यों की प्राप्ति शिक्षक अपने शिक्षण के उपरान्त प्राप्त करना चाहता है। यदि शिक्षक शिक्षण के दौरान उपयुक्त शिक्षण–विधि व कौशल का प्रयोग करता है तो वह अपने उद्देश्यों को आसानी से प्राप्त कर पाता है और यदि वह बिना किसी विधि व योजना के शिक्षण करता है तो वह अपने उद्देश्यों से भटक जाता है और असफल हो जाता है।

विज्ञान विषय के भी कुछ निश्चित उद्देश्य होते हैं तथा इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कुछ विधियों का विकास किया गया है जिसकी सहायता से शिक्षक विज्ञान विषय के उद्देश्यों को प्राप्त कर सकता है।

11.4 विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य

शिक्षण का अन्तिम लक्ष्य छात्र के व्यवहार में परिवर्तन लाना है। व्यवहार परिवर्तन करने से छात्र में निहित क्षमताओं और योग्यताओं का विकास होता है। विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन करने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक पढ़ाने से पहले कुछ उद्देश्य निर्धारित कर ले और उन्हीं उद्देश्यों के आधार पर विद्यार्थियों को ज्ञान दें।

''विज्ञान की शिक्षा के उद्देश्य विस्तृत है। इन्हें उन्नत अनुभवों से पूर्ण कार्यक्रम की आवश्यकता होती है जो युवा व्यक्तियों को बौद्धिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक विकास की ओर प्रेरित करते हो।''

– थर्बर और कौलेट

थर्बर और कौलेट के कथन से स्पष्ट है कि विज्ञान विषय के अर्न्तगत ज्ञान, सूझाबूझ, व्यवहारिक प्रयोग, कौशल, रुचि, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, योग्यतायें, अवकाश के समय के लिए कार्य तथा व्यवसाय प्रदान करना आदि प्रमुख उद्देश्य समाहित है। इन सभी उद्देश्यों को मुख्यतः दो वर्गों में रखा जा सकता है –

1. सामान्य उद्देश्य
2. विशिष्ट उद्देश्य

11.4.1 सामान्य उद्देश्य

इसके अन्तर्गत उन उद्देश्यों को रखा जाता है जिन्हें कई वर्षों के अध्ययन के पश्चात् प्राप्त किया जाता है। जैसे वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना। अतः स्पष्ट है कि ये उद्देश्य दीर्घकालिक होते हैं इन्हें तुरन्त नहीं प्राप्त किया जा सकता है। विज्ञान का सम्पूर्ण पाठ्यक्रम इन उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होता है।

11.4.2 विशिष्ट उद्देश्य

ये उद्देश्य तात्कालिक होते हैं अर्थात् इसके अन्तर्गत उन उद्देश्यों को रखा जाता है जिसे शिक्षक कक्षा में ही शिक्षण के उपरान्त तत्काल प्राप्त करना चाहता है। प्रमुख रूप से इन उद्देश्यों को निम्नलिखित चार भागों में विभाजित किया जाता है –

1- ज्ञानात्मक (Knowledge)

2- अवबोधात्मक (Understanding)

3- क्रियात्मक (Application)

4. सृजनात्मक (Creative)

11.4.3 प्राथमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य

प्राथमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए–

1. बालकों में प्राकृतिक, भौतिक और सामाजिक पर्यावरण के प्रति अध्ययन की रुचि उत्पन्न करना प्रकृति के प्रति प्रेम उत्पन्न करना और प्राकृतिक साधनों को सुरक्षित रखने की आदत का विकास करना।
2. निरीक्षण, ज्ञान वृद्धि, वर्गीकरण व विधिवत् चिन्तन की आदत को विकसित करना।
3. बालकों की गणनात्मक, रचनात्मक और गवेषणात्मक शक्तियों को विकसित करना।
4. बालकों में स्वच्छ और क्रमबद्ध रीति से कार्य करने की आदत का विकास करना।
5. बालकों में स्वच्छ जीवन के लिए उपयुक्त आदतों का विकास करना।

11.4.4 माध्यमिक स्तर पर विज्ञान शिक्षण के उद्देश्य

इस स्तर पर विज्ञान शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य हैं –

1. विद्यार्थियों को वैज्ञानिक प्रणाली से परिचित कराना और उनमें वैज्ञानिक व्यवहार पर विज्ञान को अपनाने की क्षमता का विकास करना।
2. मानव जीवन पर विज्ञान के प्रभाव को समझना और वैज्ञानिक अभिरूचियों को विकसित करना।
3. छात्रों को विज्ञान के विकास के इतिहास से परिचित कराना जिसमें वे विज्ञान की प्रगति व विकास को समझ सकें।
4. उच्च स्तर की विज्ञान शिक्षा के लिए तैयार करना।
5. विज्ञान के महान आविष्कारों को पढ़ने के लिए छात्रों को प्रेरित करना।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. विज्ञान शिक्षण का सामान्य उद्देश्य क्या है?

   .....

   .....

2. विज्ञान शिक्षण के विशिष्ट उद्देश्यों को कितने भागों में विभाजित किया गया है?

   .....

   .....

3. विद्यार्थियों में स्वच्छ जीवन के लिए उपयुक्त आदतों का विकास करना किस स्तर के शिक्षा के उद्देश्यों से संबंधित है?

   .....

   .....

11.5 शिक्षण विधि

शिक्षण उद्देश्यों को प्रेरित करना शिक्षण विधियों के द्वारा ही संभव है। किसी भी विषय का अध्यापन करने के लिए उस विषय की प्रभावी शिक्षण विधियों को जानना आवश्यक है क्योंकि अध्ययन करना तथा अध्यापन करना दो अलग–अलग बाते हैं जो व्यक्ति विद्वान है वह अच्छा अध्यापक भी हो यह आवश्यक नहीं है। विद्यार्थियों के मानसिक स्तर को समझकर उसके अनुसार शिक्षण व्यूह बनाना (विधियों तथा प्राविधियों का चयन करना) और उनके मस्तिष्क तक विषय वस्तु को सम्प्रेषित करने के लिए उपयुक्त शिक्षण विधियों का चयन करना अति महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि विद्यार्थी के मस्तिष्क तक विषय वस्तु को सम्प्रेषित करने में विधियाँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। विशेषकर विज्ञान शिक्षण में यदि सावधानीपूर्वक विधियों का चयन नहीं किया जाता तो शिक्षण उद्देश्य को पूरा करना कठिन हो जाता है।

विधि शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा से हुई है जिसका अर्थ है 'तरीका' अथवा 'रास्ता या मार्ग' इस प्रकार विधि से तात्पर्य ''वैज्ञानिक तरीका जिससे विद्यार्थियों तक ज्ञान को पूर्ण रुप से प्रेषित करना''। विज्ञान शिक्षण विधि से तात्पर्य है कि विज्ञान को कैसे पढ़ाना है। शिक्षण विधियाँ कैसे पढ़ाना है से सम्बन्धित है।

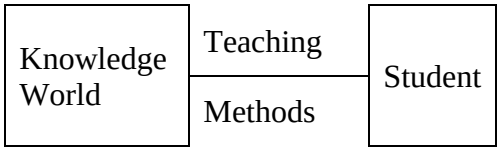

11.5.1 कुछ प्रमुख दर्शनों के अनुसार शिक्षण विधियाँ

आर्दशवाद एवं शिक्षण विधियाँ – इसमें वाद–विवाद, प्रश्नोत्तर, व्याख्यान इत्यादि विधियों को प्रमुखतः प्रयोग में लाया जाता है।

प्रकृतिवाद एवं शिक्षण विधियाँ– इसमें करके सीखना (Learning by doing), अनुभवों द्वारा सीखना (Learning by Experience), खेल के द्वारा सीखना (Learning by Playing), खोज विधि (Heuristic) इत्यादि विधियों पर बल दिया गया है।

प्रयोजनवाद एवं शिक्षण विधियाँ (Pragmatism–Teaching Methods) – इसमें भी प्रकृतिवाद की विधियों को मुख्य स्थान दिया गया है एवं प्रयोजना विधि को विकसित किया गया है।

यथार्थवाद एवं शिक्षण विधियाँ (Realism & Teaching Methods)– इसमें प्रकृतिवाद की प्रयोजनवाद विधियों को समाहित करते हुए प्रयोग (Experiment) विधि पर अधिक बल दिया गया है साथ ही साथ स्व अध्ययन (Self Study) पर भी बल दिया गया है।

शिक्षण विधियों के आधार भूत सहायक सिद्धांत –

1. सरल से कठिन की ओर
2. ज्ञात से अज्ञात की ओर
3. निश्चित से अनिश्चित की ओर
4. मूर्त से अमूर्त की ओर
5. प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर
6. प्रयोग सिद्ध से विचार–युक्त की ओर
7. स्वअधिगम पर बल

बोध प्रश्न
टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।
(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. शिक्षण विधियों का ज्ञान अध्यापक के लिए क्यों आवश्यक है?

.....

.....

5. विज्ञान शिक्षण विधि से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

6. प्रकृतिवादी शिक्षण विधियों का मुख्य आधार क्या है?

.....

.....

11.6 विज्ञान शिक्षण की विधियाँ

किसी विषय के शिक्षण के कुछ निश्चित उद्देश्य होते है और इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि शिक्षक उस विषय को उपयुक्त विधि की सहायता से पढ़ाये। इसलिए किसी विषय के शिक्षण में विधि का महत्वपूर्ण स्थान है। विज्ञान विषय के लिए भी यह कथन सत्य है। विज्ञान शिक्षण की अनेक विधियाँ है। वैसे तो प्रत्येक अध्यापक की अपनी स्वयं की विधि होती है। कोई अध्यापक दूसरे अध्यापक की विधि के अनुसार नहीं पढ़ा सकता है। फिर भी विज्ञान शिक्षण में कुछ सुविख्यात विधियों का सहारा लेना होता है। विज्ञान शिक्षण की समस्त विधियों को 2 प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जा सकता है –

1. शिक्षक केन्द्रित विधियाँ
2. बाल केन्द्रित विधियाँ

शिक्षक केन्द्रित विधियों के अन्तर्गत व्याख्यान विधि, प्रयोग प्रदर्शन विधि, पाठ्य पुस्तक विधि, ऐतिहासिक विधि, सामूहिक अध्यापन विधि आते है। जबकि बाल केन्द्रित विधि के अन्तर्गत योजना विधि, प्रयोगशाला विधि, खोज विधि, विचार–विमर्श विधि, पर्यटन विधि, अधिन्यास विधि, अभिक्रमित अनुदेशन विधि आते है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. विज्ञान शिक्षण विधियों को कितने वर्गो में विभाजित किया जा सकता है?

.....

.....

8. शिक्षक केन्द्रित विधि से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

9. विद्यार्थी केन्द्रित विधि से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

11.6.1 व्याख्यान विधि

व्याख्यान के द्वारा शिक्षक छात्रों के समक्ष विषयवस्तु से सम्बन्धित तथ्यों, सिद्धान्तों, नियमों, प्रक्रियाओं आदि को मौखिक रुप से स्पष्ट करता है। व्याख्यान देने में शिक्षक युक्तिसंगत विधि व तर्कपूर्ण शैली का प्रयोग करता है। इस विधि में शिक्षक वक्ता एवं विद्यार्थी श्रोता होते हैं। अध्यापक अपने ढंग से विषय का प्रतिपादन करता है और विद्यार्थी शान्ति–पूर्वक पूर्ण मनोयोग से अध्यापक की बात सुनते और समझते हैं। इस विधि में व्यक्तिगत विभिन्नताओं को कोई स्थान नहीं है। सभी छात्रों को एक समान मानकर शिक्षण प्रक्रिया चलती है।

व्याख्यान विधि अन्य सभी विधियों की अपेक्षा पुरानी है। वैदिक कालीन शिक्षा, बौद्ध–शिक्षा, मुस्लिम–शिक्षा में इसी विधि का प्रयोग किया जाता था। तत्कालीन समय में इसकी उपयोगिता पर शंका नहीं किया जा सकता क्योकि उस समय मुद्रण यन्त्रों का अविष्कार नहीं हुआ था और पुस्तकें दुर्लभ थी। जब से मनोवैज्ञानिको ने शिक्षकों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया है कि बालक को केन्द्र मानकर पढ़ाना चाहिए तब

से व्याख्यान विधि का महत्व कम हो गया है परन्तु कालेज के स्तर पर यह विधि आज भी सबसे अधिक प्रचलित है। माध्यमिक विद्यालयों में भी कुछ विशेष परिस्थितियों में इसका प्रयोग किया जाता है।

व्याख्यान को अधिक अर्थपूर्ण एवं प्रभावशाली बनाने के उपाय

व्याख्यान विधि को अधिक उपयोगी एवं प्रभावशाली बनाने के लिए शिक्षक को निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए –

1. विज्ञान के प्रकरणों को मनोवैज्ञानिक एवं तार्किक सिद्धांत के आधार पर छोटे–छोटे अंशो में क्रमबद्ध तरीके से प्रस्तुत करना चाहिए।
2. व्याख्यान को रुचिकर बनाने के लिए अधिक से अधिक व्यवहारिक उदाहरणों को कक्षा में प्रस्तुत करने चाहिए।
3. विज्ञान की विषय वस्तु को रुचिकर ढंग से पढ़ाने से विद्यार्थी को ग्रहण कराने के लिए सहायक सामग्रियों (चित्र, मॉडल, तालिका इत्यादि) का प्रयोग करना चाहिए।
4. व्याख्यान को विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान से जोड़कर प्रस्तुत करना चाहिए तथा उनके स्तर के अनुसार व्याख्यान की गति को नियोजित करना चाहिए।
5. व्याख्यान देते समय अपने आवाज में स्पष्टता एवं आरोह–अवरोह क्रम तथा आवाज की गति को आवश्यकतानुसार तेज या धीमा भी करना चाहिए जिससे विद्यार्थियों का ध्यानाकर्षण बना रहे।
6. व्याख्यान के अंत में पूरे व्याख्यान का सारांश अवश्य प्रस्तुत करना चाहिए जिससे विद्यार्थी छूटे हुए तथ्यों को पुनः स्मरित कर सके।

लाभ –

1. कम समय में एक साथ बड़े समूह में विद्यार्थियों को अधिक से अधिक ज्ञान दिया जा सकता है।
2. समय और श्रम की बचत होती है।
3. इस विधि विज्ञान से सम्बन्धित ऐतिहासिक घटनाओं के शिक्षण हेतु उपयुक्त है।
4. पढ़ाई गई विषयवस्तु को दोहराने के लिए यह विधि उपयुक्त है।

दोष –

1. इस विधि की सहायता से छात्रों को एक ही स्तर की शिक्षा दी जाती है। इसमें वैयक्तिक भिन्नताओं पर ध्यान नहीं दिया जाता है।
2. इसमें छात्र निष्क्रिय रुप से अध्यापक की बातों को सुनता है उसे तर्क व चिन्तन करने का अवसर नहीं मिलता है।
3. सभी अध्यापक अच्छे वक्ता नहीं होते हैं। आकर्षक व्यक्तित्व, वाणी की मधुरता, उच्चारण की स्पष्टता आदि के अभाव में पाठ अरुचिकर हो जाता है।
4. अध्यापक विद्यार्थियों की रुचि तथा विषयवस्तु की समझ को नहीं जान पाते हैं।
5. व्याख्यान विधि में तर्क और निरीक्षण का अभाव रहता है।
6. यह मनोवैज्ञानिक विधि नहीं है क्योंकि यह ''करके सीखने के सिद्धान्त'' के विपरीत है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10. व्याख्यान विधि में कौन सक्रिय रहता है?

.....

.....

11. सबसे प्राचीन शिक्षण विधि कौन सी है?

.....

.....

12. व्याख्यान को रूचिकर बनाने के लिए अधिक से अधिक मौखिक रूप से किसका सहारा लेना चाहिए।

.....

.....

11.6.2 प्रयोग–प्रदर्शन विधि

विज्ञान विषय को प्रयोग के माध्यम से पढ़ाने से विद्यार्थी विषयवस्तु को आसानी से समझ लेते है क्योंकि वे जो कुछ कान से सुनते है उसे आँखों से देखते भी जाते हैं। जैसे– पेड़ के विभिन्न अंगो के नाम लेने से छात्र पेड़ के विभिन्न भागों की प्रत्यक्ष कल्पना नहीं कर सकते लेकिन कुछ पौधों को कक्षा में प्रदर्शित करके उनके विभिन्न भागों के नाम लेने से छात्र उनके विषय में सही व स्पष्ट ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। तथ्यों, सिद्धान्तों तथा प्रत्ययों का सही ज्ञान देने के लिए व्याख्यान के साथ–साथ प्रयोग प्रदर्शन भी किया जाना चाहिए जिससे छात्र ज्ञान के अमूर्त रुप को समझ सकें।

अतः स्पष्ट है कि प्रयोग प्रदर्शन विधि में व्याख्यान के साथ–साथ विषयवस्तु को प्रयोग के माध्यम से प्रदर्शित भी किया जाता है। जैसे–जो भी प्रयोग करे उसे सफल होना चाहिए यदि अध्यापक कक्षा में प्रयोग करता है और वांछित परिणाम न आने पर कहता है कि इसे ऐसा होना चाहिए था लेकिन यहाँ ऐसा नही हो पाया तो विद्यार्थी उसमे विश्वास करना छोड़ देंगे। अध्यापक को कक्षा में जाने से पूर्व प्रयोग का अभ्यास कर लेना चाहिए।

प्रयोग–प्रदर्शन को प्रभावी बनाने के उपाय

1. अध्यापक को कक्षा में प्रयोग–प्रदर्शन करने से पूर्व उसका स्वयं पूर्वाभ्यास करके देख लेना चाहिए।
2. रसायन विज्ञान के अत्यन्त छोटे प्रयोगों को ही कक्षा में प्रदर्शित करना चाहिए जिससे उसका प्रदर्शन सही ढंग से हो सके।
3. प्रयोग–प्रदर्शन के समय विद्यार्थियों का पर्याप्त सहयोग लेना चाहिए।
4. प्रयोग होने वाले सभी उपकरणों से विद्यार्थियों को भलीभाँति परिचित करा देना चाहिए या कराते रहना चाहिए।
5. प्रदर्शन के साथ विद्यार्थियों की शंकाओं का समाधान भी अध्यापक को करते रहना चाहिए।
6. प्रदर्शन के दौरान श्यामपट्ट का प्रयोग, अभिक्रिया, सूत्र लिखने तथा रेखाचित्र एवं चित्र बनाने के लिए करना चाहिए इससे प्रत्यय विद्यार्थी आसानी से ग्रहण कर लेते हैं।

7. प्रयोग–प्रदर्शन एक बड़ी मेज पर किया जाना चाहिए, जिससे आवश्यक वस्तुओं को आसानी से एक साथ रखा जा सके एवं साथ ही कक्षा के प्रत्येक विद्यार्थी आसानी से देख सकें।
8. प्रयोग–प्रदर्शन के उपरान्त पूरे प्रयोग तथा विभिन्न क्रियाओं से सम्बन्धित सार संक्षेप में अवश्य प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

गुण –

1. विद्यार्थियों में निरीक्षण करने की क्षमता का विकास होता है।
2. कक्षा को रुचिकर बनाया जा सकता है।
3. एक ही उपकरण से सभी छात्रों को एक साथ प्रयोग करके दिखाया जाता है अतः यह विधि अधिक मितव्ययी व सरल है।
4. निम्न स्तर के कक्षाओं के लिए यह विधि अधिक उपयोगी है।
5. इस विधि के द्वारा शिक्षण करने पर विद्यार्थियों की दृष्य एवं श्रव्य दोनों इन्द्रियॉ सक्रिय रहती हैं।

दोश –

1. इसमें शिक्षक ही अधिक सक्रिय रहता है।
2. कभी–कभी प्रयोग असफल हो जाने का भय रहता है।
3. विद्यार्थियों को व्यक्तिगत रुप से प्रयोग करने का अवसर नहीं मिलता है अर्थात् स्वयं करके सीखने का अवसर सभी विद्यार्थियों को नही मिल पाता है।
4. इस विधि द्वारा विद्यार्थियों को अप्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त होते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

13. प्रयोग प्रदर्शन विधि में विद्यार्थियों की सक्रियता कैसे बढ़ जाती है?

.....

.....

14. प्रयोग प्रदर्शन के समय शिक्षक को क्या सावधानी बरतनी चाहिए?

.....

.....

15. प्रयोग प्रदर्शन विधि की सबसे बड़ी कमी क्या है?

.....

.....

11.6.3 प्रायोजन विधि

योजना विधि के जन्मदाता डब्लू. एच. किलपैट्रिक (W.H. Kilpatrik) हैं। किलपैट्रिक जान डीवी के शिष्य है और इन्होंने प्रयोजनवाद के सिद्धान्तों के आधार पर ही योजना पद्धति को जन्म दिया। किलपैट्रिक ने सन् 1918 मे 'दी प्रोजेक्ट मेथड' नामक शोध पत्र प्रकाशित किया जिसमें इन्होंने अर्थ पूर्ण क्रिया करते समय विद्यार्थियों की रुचि एवं आवश्यकता, समस्या–समाधान, अधिगम और व्यवहार पर विशेष बल दिया। योजना/प्रायोजना (परियोजना) को परिभाषित करते हुए किलपैट्रिक ने लिखा है – *''प्रायोजना वह सहृदय उद्देश्यपूर्ण कार्य होता है, जो पूर्ण संलग्नता के साथ सामाजिक वातावरण में किया जाता है।''* विज्ञान विषय के शिक्षण में योजना विधि को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

प्रायोजना विधि के अन्तर्गत अनेक समस्याएं होती है जिनका समाधान सामने जो समस्या प्रस्तुत की जाती है, उसे पूरा करने का एक उद्देश्य होता है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए बालक सक्रिय रहता है और मन लगाकर उसे पूरा करने का प्रयोजनशीलता, क्रियाशीलता, रोचकता, यथार्थता, सामाजिकता, स्वतन्त्रता तथा उपयोगिता विद्यमान है।

प्रायोजना पद्धति का विकास इसलिए हुआ ताकि विद्यार्थियों को वास्तविक शिक्षा मिल सके वे सक्रिय होकर विषय ज्ञान प्राप्त कर सकें, उन्हें चिन्तन तथा तर्क करने का अवसर मिल सके, उनका पाठ्यक्रम उनकी रुचियों, सामाजिक दृष्टिकोण के आधार पर शिक्षा दी जा सके।

प्रायोजना की विशेषताएँ

1. प्रत्येक योजना का सुनिश्चित उद्देश्य होता है।
2. प्रत्येक योजना में क्रिया को प्रधानता दी जाती है।
3. योजना में दिये जाने वाले कार्य वास्तविक परिस्थितियों में होते है।
4. योजना/विधि के कार्य विद्यार्थियों के वैवाहिक एवं मनोवैज्ञानिक पक्ष के लिए उपयोगी होते हैं।
5. योजना विधि के अंतर्गत विद्यार्थियों को कार्य चुनने की स्वतंत्रता दी जाती है।
6. अध्यापक इस विधि में मार्गदर्शक के रुप में कार्य करता है।

प्रायोजना के प्रकार

किलपैट्रिक महोदय के अनुसार प्रायोजनाएं चार प्रकार की होती है –

1. सृजनात्मक या रचनात्मक प्रायोजना
2. कलात्मक प्रायोजना
3. समस्यात्मक प्रायोजना
4. अभ्यास प्रायोजना

प्रायोजना/योजना विधि के पद

प्रायोजना विधि के निम्नलिखित पद हैं–

1. परिस्थिति निर्मित करना
2. प्रायोजना का चुनाव
3. प्रायोजना के लिए नियोजन करना
4. प्रायोजना का क्रियान्वयन

5. प्रायोजना का मूल्यांकन

6. प्रायोजना की रिपोर्ट तैयार करना

1. **परिस्थिति निर्मित करना (Creating the Situation)**– इस चरण में अध्यापक विद्यार्थियों के समझ वार्तालाप के माध्यम से ऐसी परिस्थिति निर्मित करता है जिससे कि विद्यार्थियों के मन में कुछ जानने एवं करने की जिज्ञासा उत्पन्न होती है। विद्यार्थियों के रुचियों एवं जिज्ञासाओं के आधार पर ही शिक्षक उन्हें प्रोजेक्ट कार्य करने के लिए तैयार करते है।

2. **प्रायोजना का चुनाव (Selection of Project)**– अध्यापक के परिस्थिति उत्पन्न करने के उपरांत विद्यार्थी मानसिक रुप से प्रोजेक्ट कार्य करने के लिए तैयार हो जाते है एवं वे अपनी रुचि के अनुसार अध्यापक को विभिन्न प्रायोजनाएं बताते है। अध्यापक विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत प्रायोजनाओं पर उनके गुण एवं दोषो के आधार पर विचार विमर्ष करते है और अंततः जिस प्रायोजना को विद्यार्थी पूर्ण कर सकते हैं, शिक्षक उस प्रायोजना को एक सामान्य शीर्षक में निरुपित करते हुए प्रायोजना का चुनाव करा देते हैं।

3. **प्रायोजना के लिए नियोजन करना (Planning for the Project)**– प्रायोजना के चुनाव के उपरांत वह किस तरह से पूर्ण की जायेगी इसके लिए नियोजन (Planning) रुप रेखा तैयार की जाती है। नियोजन करते समय यह ध्यान में रखा जाता है। प्रत्येक विद्यार्थी को उसकी योग्यता एवं रुचि के अनुसार कार्य मिले एवं साथ ही किसी पे कार्य का भार कम या अधिक ना हो। नियोजन करते समय विद्यार्थियों के विचारों को पूर्ण रुप से सुना जाना चाहिए एवं उसे महत्व भी दिया जाना चाहिए क्योंकि प्रायोजना को पूर्ण करने की जिम्मेदारी विद्यार्थियों की होती है शिक्षक इसमें केवल मार्ग दर्शक की भूमिका में होते है।

4. **प्रायोजना क्रियान्वयन (Execution of the Project)**– प्रायोजना पर कार्य करते समय विद्यार्थियों को विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है इस दौरान शिक्षकों को उनके समस्याओं का समाधान मार्गदर्शक के रुप में करना होता है परन्तु कार्य विद्यार्थियों को ही करने देना चाहिए। अध्यापक को प्रायोजना की पूर्ण गति–विधियों का अवलोकन करते रहना चाहिए एवं आवश्यकता अनुसार विद्यार्थियों को निर्देशित करते रहना चाहिए। इससे सभी को समान रुप से कार्य करने एवं सीखने का अवसर मिलेगा साथ ही कुछ विद्यार्थी इस पर अपना अधिपत्य नहीं जमा पायेंगे और प्रायोजना सही दिशा में अग्रसर होगी।

5. **प्रायोजना का मूल्यांकन (Project Evaluation)**– प्रायोजना पूर्ण हो जाने के उपरांत उसका निर्धारित उद्देश्यों के आधार पर मूल्यांकन होता है। यह मूल्यांकन शिक्षक और विद्यार्थियों के द्वारा मिलकर होता है जो कमियां रह जाती है उन्हें मिलकर दूर करने का प्रयास किया जाता है।

6. **प्रायोजना की रिपोर्ट तैयार करना (Preparing the Project Report)**– प्रायोजना की रिपोर्ट तैयार करना अति आवश्यक होता है क्योंकि इससे ही पता चलता है कि क्या करना था ? कैसे हुआ? क्या हुआ ? रिपोर्ट तैयार करते समय निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए –

    1. योजना का उद्देश्य क्या था ?

    2. प्रायोजना की तैयारी कैसे की गयी ? कार्य का विवरण।

    3. क्रियान्वयन कैसे हुआ?

    4. मूल्याकंन कैसे हुआ?

    5. क्या परिणाम प्राप्त हुए?

6. प्रायोजना के दौरान किन–किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा?

गुण :–

1. यह विधि 'करके सीखने' के सिद्धान्त पर आधारित होता है।
2. यह विधि छात्रों में अनुशासन तथा उत्तरदायित्व उत्पन्न करती है।
3. इसमें विद्यार्थी अपनी रूचि तथा क्षमता के आधार के अनुसार कार्य करता है।
4. इस पद्धति के अनुसार विषयवस्तु का छात्र के जीवन से सम्बन्ध स्थापित होता है साथ ही श्रम की महत्ता को भी वे समझ पाते है।
5. इसमे छात्र सक्रिय होकर अपने अनुभव के आधार सीखता है। फलस्वरुप उन्हें स्वतंत्र रुप से सोचने तथा विचारों का अवसर प्राप्त होता है।

दोष :–

1. इसमे धन की अधिक आवश्यकता होती है।
2. जहाँ विद्यार्थियों की संख्या अधिक हो इस पद्धति का प्रयोग नही किया जा सकता है क्योंकि इस पद्धति को छोटे–छोटे समूहों में ही अपनाया जा सकता है।
3. पाठ्यक्रम को समय पर पूरा करने में दिक्कते आती है।
4. योजना कार्य को चलाने के लिए विद्यालय के समय सारणी में बहुत कुछ परिवर्तन करना पड़ता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

16. प्रायोजना विधि के जन्मदाता कौन हैं?

.....

.....

17. किलपैट्रिक महोदय के अनुसार प्रायोजनाएं कितनी प्रकार की होती हैं?

.....

.....

18. प्रायोजना विधि किस सिद्धान्त पर आधारित है?

.....

.....

11.6.4 प्रयोगशाला विधि

प्रयोगशाला विधि से तात्पर्य पद्धति से है जिसमे विद्यार्थी स्वयं प्रयोग तथा निरीक्षण कर विषय वस्तु को सीखता है। यह विधि 'करके सीखने' (Learning by doing), अवलोकन द्वारा सीखने (Learning by observation), आगमन–निगमन विधि (Inductive-Deductive Method) आदि शिक्षण सूत्रों (Teaching Maxims) पर आधारित है। यह ज्ञान प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन है इसमें प्रयोग एवं निरीक्षण द्वारा विद्यार्थी सत्य को स्वयं परखते हैं। शिक्षक केवल आवश्यकता पड़ने पर विद्यार्थियों का पथ प्रदर्षन करते है। इसमें विद्यार्थी की क्रियाओं का सम्बन्ध कार्यानुभव से होता है इसमें विद्यार्थी स्वयं प्रयोग द्वारा समस्याओं का हल करके आनन्द प्राप्त करते है। इससे उनमें उत्साह व कार्य के प्रति रुचि जाग्रत होती है।

कार्य–विधि

1. **प्रकरण का चयन**– इसमें विद्यार्थी सर्वप्रथम निर्धारित प्रयोगात्मक कार्य (Selection of Topic) में से किसी एक प्रकरण को चुनते हैं जिसपर वो कार्य करते हैं।
2. **उपकारणों को एलॉट कराना**– प्रकरण के चयन के उपरान्त विद्यार्थी लैब में उपकरणों को एलॉट कराते हैं, भौतिक विज्ञान में उपकरण (वर्नियर, कैलीपर्स, स्क्रूगेज इत्यादि) रसायन विज्ञान में (ब्यूरेट, पीपेट, परखनली, बीकर, फ्लास्क, लवण) जीव विज्ञान में (सूक्ष्मदर्शी, स्लाइड, मेढ़क, तिलचट्टा, विभिन्न औजार, रीजेन्ट इत्यादि)
3. **प्रयोग करना**– लैब मैनुअल/प्रयोगात्मक पुस्तक में दिये गये निर्देशों के अनुसार विद्यार्थी प्रयोगात्मक कार्य को पूर्ण करने के लिए विभिन्न सोपानों को अपनाकर ऑकड़ों को अवलोकन के आधार पर एकत्रित करते हैं।
4. **निष्कर्श निकालना**– अवलोकन से प्राप्त ऑकड़ों के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

गुण : –

1. इस विधि द्वारा विज्ञान को अधिक व्यवहारिक विषय के रुप में प्रस्तुत किया जा सकता है।
2. इस विधि द्वारा विद्यार्थी विज्ञान का ज्ञान स्थूल तथ्यों के आधार पर प्राप्त करते हैं।
3. प्रयोगशाला विधि द्वारा समस्या–समाधान योग्यता का विकास होता है।

दोश :–

1. यह छोटी कक्षाओं के लिए उपयुक्त नहीं है, क्योंकि उनका बौद्धिक तथा मानसिक स्तर इतना विकसित नहीं होता है कि वे स्वयं प्रयोग करके सूत्र अथवा नियमों का सत्यापन कर सकें।
2. इस विधि द्वारा विज्ञान के विस्तृत पाठ्यक्रम को सीमित अवधि में पूरा नहीं किया जा सकता।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

19. प्रयोगशाला विधि में विद्यार्थी कैसे सीखता है?

.....

.....

20. प्रयोगशाला विधि में विद्यार्थी की क्रियाओं का संबंध किससे होता है?

.....

.....

21. प्रयोगशाला विधि किस कक्षाओं के लिए अधिक उपयोगी है?

.....

.....

11.6.5 ह्यूरिस्टिक विधि

अंग्रेजी शब्द **'Heuristic'** का जन्म ग्रीक शब्द Heuristico से हुआ है, जिसका अर्थ है– "मैं खोजता हूँ"। ह्यूरिस्टिक विधि से सीखने में विद्यार्थियों में खोज की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। इसमें बालकों के सामने ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दी जाती है कि वह स्वयं अन्वेषण के लिए उत्सुक हो जाता है। इस प्रणाली में बालक पर ज्ञान थोपा नहीं जाता है बल्कि उन्हें सत्य की खोज के लिए प्रेरित किया जाता है।

ह्यूरिस्टिक विधि की खोज एच0ई0 आर्मस्ट्रांग ने किया था। आर्मस्ट्रांग ने इस विधि की परिभाषा इस प्रकार दी है–

"अन्वेषण प्रणाली वह है जो छात्रों को यथासम्भव एक अन्वेषण की स्थिति में ला देती है। उन प्रणालियों में जिनमें केवल वस्तुओं के विषय में कहे जाने के बजाय उनकी खोज को आवश्यक माना गया है, से यह प्रणाली श्रेष्ठ है।"

ह्यूरिस्टिक विधि में बालकों को कम से कम बताया जाता है और अधिक से अधिक जितना सम्भव हो उन्हें खोजने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। यह विधि विज्ञान विषय को पढ़ाने के लिए विशेष रुप से लाभदायक होती है।

ह्यूरिस्टिक विधि का मुख्य उद्देश्य बालक को एक अन्वेषक बनाना है। इस प्रणाली में शिक्षक द्वारा कोई समस्या छात्रों के सामने प्रस्तुत कर दी जाती है और कक्षा का प्रत्येक छात्र अपने–अपने ढंग से समस्या का हल प्राप्त करने का प्रयास करता है अध्यापक केवल उन्हें प्रोत्साहित करता है।

इस विधि का प्रयोग केवल कुछ ही प्रकारणों के लिए किया जाना चाहिए, सभी प्रकरणों को इस विधि से नहीं पढ़ाया जा सकता। कृषि विज्ञान, वनस्पति विज्ञान एवं जीव विज्ञान के कुछ प्रकरणों को पढ़ाने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जा सकता है। पौधों की प्रजातियों, फसलों के अध्ययन एवं विभिन्न जीवों के विषय में अध्ययन जिसमें विद्यार्थी स्वयं खोज करके सीखें तथा विद्यार्थी सत्य को जानने के लिए उत्सुक रहे तथा तथ्यों को समझने का स्वयं प्रयास करे तो ये विधियाँ भी अनुसन्धान विधि का रुप ले सकती हैं।

गुणः–

1. ह्यूरिस्टिक विधि बालाकों के दृष्टिकोंण को वैज्ञानिक बनाती हैं उनमें निरीक्षण और जिज्ञासा की भावना उत्पन्न करती हैं।
2. यह छात्रों को क्रियाशील बनाती है।
3. छात्रों में आत्मनिर्भरता की भावना का विकास होता है।
4. यह प्रणाली पूर्णतया मनोवैज्ञानिक है।
5. इस विधि में गृह कार्य की समस्या नहीं होती है क्योंकि छात्र अपना सारा कार्य कक्षा में ही पूर्ण कर लेता है।
6. चूँकि छात्र अपने अनुभव से सीखता है इसलिए प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है।

दोश –

1. प्राथमिक कक्षा के छात्रों के लिए पूर्णतया व्यर्थ है। केवल उच्च कक्षाओं में ही सफलता पूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।
2. सबकुछ बालक पर छोड़ देने से हानि होने की सम्भावना अधिक रहती है।
3. इसमें अधिक समय की आवश्यकता होती है।
4. यह केवल वहीं प्रयोग की जा सकती है, जहाँ छात्रों की संख्या कम हो।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

22. ह्यूरिस्टिक विधि की खोज किसके द्वारा हुई?

.....

.....

23. ह्यूरिस्टिक विधि का मुख्य उद्देश्य क्या है?

.....

.....

24. ह्यूरिस्टिक विधि किन कक्षाओं के लिए उपयोगी नहीं है?

.....

.....

11.6.6 विचार–विमर्श विधि

विज्ञान के अनेक प्रकरणों का शिक्षण इस विधि से सफलतापूर्वक किया जा सकता है। इस प्रणाली में छात्रों के सामने कोई प्रकरण या समस्या रख दी जाती है तथा छात्रों के कई समूह बना दिये जाते हैं और उन्हें अध्ययन हेतु किताबों की सूची भी दे दी जाती है। छात्रों को अध्ययन हेतु पर्याप्त समय प्रदान किया जाता है तथा निश्चित समय पर सभी छात्र शिक्षक के निर्देशन में समस्या के विभिन्न पक्षों का हल प्राप्त करते हैं। अतः विचार–विमर्श से तात्पर्य किसी समस्या के विभिन्न पहलुओं पर किए गए विचारों के परस्पर आदान–प्रदान की प्रक्रिया से है।

गुण :–

1. इस विधि द्वारा छात्रों में स्वाध्याय की आदत का विकास किया जा सकता है।
2. छात्रों में आत्म–अभिव्यक्ति का विकास होता है।
3. आलोचनात्मक चिंतन, तर्क आदि शक्तियों का विकास किया जा सकता है।

दोश :–

1. कभी–कभी यह विचार–विमर्श केवल कुछ ही छात्रों के बीच हो पाता है तथा अन्य छात्र श्रोता मात्र रह जाते हैं।

2. इस विधि में अनुशासन की समस्या आती है।

3. कभी–कभी विचार–विमर्श अपने उद्देश्य से भटक जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

25. विचार–विमर्श से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

26. विचार–विमर्श द्वारा विद्यार्थियों के किस आदत का विकास होता है?

.....

.....

27. विचार–विमर्श विधि का मुख्य आधार क्या है?

.....

.....

11.6.7 पर्यटन विधि

शिक्षा के क्षेत्र में पर्यटन का प्रयोग प्राचीन काल से ही किया जाता रहा है। पर्यटन को विज्ञान विषय की शिक्षा का महत्वपूर्ण साधन माना गया है। कक्षा में अनेक ऐसी बातें बतायी जाती है जिन्हें मूर्त रुप से देखे बिना नहीं समझा जा सकता है। ऐसी विषयवस्तु को पर्यटन के माध्यम से छात्रों को पढ़ाने से उन्हें विषयवस्तु का स्पष्ट बोध होता है। जैसे– बिजली घर, पेड़–पौधों तथा पानी की सफाई आदि से सम्बन्धित ज्ञान, उन्हें बिजली घर दिखाकर, बाग–बगीचों में घुमाकर उन्हें आसानी से ज्ञान दिया जा सकता है। इससे छात्रों को स्वयं वस्तुओं तथा क्रियाओं का निरीक्षण करने का अवसर मिलता है। इस विधि से पढ़ाने से छात्र अपने वैज्ञानिक वातावरण से परिचित होता है और वस्तुओं को स्वभाविक रुप में देखता है। यह केवल मनोरंजन के लिए नहीं होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

28. पर्यटन विधि का मुख्य उद्देश्य क्या है?

.....

.....

29. पर्यटन विधि विज्ञान–विषय के लिए क्यों लाभकारी है?

.....

.....

11.7 सारांश

शिक्षण विधियाँ वह साधन है जिनके द्वारा शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त किया जाता है। विज्ञान विषय का अध्यापन करने के लिए विज्ञान विषय की प्रभावी शिक्षण विधियों को जानना अति आवश्यक है। अध्ययन तथा अध्यापन दो अलग–अलग बातें हैं, विद्वान व्यक्ति अच्छा अध्यापक हो यह आवश्यक नहीं है प्रभावी अध्यापक होने के लिए विषय के प्रभावी विधियों को जानना अति आवश्यक है।

विद्यार्थियों के मानसिक स्तर को समझकर उसके अनुसार शिक्षण कानून आव्यूह बनाना और उनके मास्तिष्क तक विषय वस्तु को संप्रेषित करने के लिए उपयुक्त शिक्षण विधियों का चयन करना अति महत्वपूर्ण होता है। विशेषकर विज्ञान शिक्षण में यदि सावधानीपूर्वक विधियों का चयन न किया जाय तो शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त करना कठिन हो जाता है। विज्ञान शिक्षण की विधियों को मुख्यतः दो आधारों पर वर्गीकृत किया गया है– (1) शिक्षक केन्द्रित (2) विद्यार्थी केन्द्रित

शिक्षक केन्द्रित विधि में विज्ञान विषय की मुख्य शिक्षण विधियाँ, व्याख्यान विधि एवं प्रयोग प्रदर्शन विधि है। विद्यार्थी केन्द्रित विधि में विज्ञान–शिक्षण की मुख्य विधियाँ योजना विधि, प्रयोगशाला विधि, ह्यूरिस्टिक विधि, विचार–विमर्श विधि इत्यादि हैं।

11.8 अभ्यास के प्रश्न

1. विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।
2. शिक्षण विधियों पर दर्शन के प्रभाव की व्याख्या कीजिए।
3. विद्यार्थी केन्द्रित और शिक्षक केन्द्रित विधियों में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
4. व्याख्यान विधि को प्रभावी बनाने के उपायों को लिखिए।
5. प्रयोग–प्रदर्शन विधि का विस्तार से वर्णन कीजिए।
6. प्रायोजन विधि का विस्तार से वर्णन कीजिए।
7. प्रयोगशाला विधि की कार्यप्रणाली को लिखिए।
8. ह्यूरिस्टिक विधि को विवेचित कीजिए।

11.9 चर्चा के बिन्दु

1. शिक्षण विधियों पर दर्शन के प्रभाव की चर्चा कीजिए।
2. विज्ञान विषय में प्रयुक्त शिक्षक केन्द्रित एवं विद्यार्थी केन्द्रित विभिन्न विधियों पर चर्चा कीजिए।

11.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना।
2. चार भागों में 1. ज्ञानात्मक 2. अवबोधात्मक 3. क्रियात्मक 4. सृजनात्मक
3. प्राथमिक स्तर

4. विद्यार्थियों के मानसिक स्तर पर ज्ञान को प्रेषित करने के लिए शिक्षण विधियों का ज्ञान आवश्यक है।
5. विज्ञान को पढ़ाने की वे विधयाँ जिससे विद्यार्थियों तक ज्ञान को पूर्ण रूप से प्रेषित किया जा सके।
6. करके सीखना।
7. दो वर्गों में 1. शिक्षक केन्द्रित विधियाँ 2. विद्यार्थी केन्द्रित विधियां
8. शिक्षक केन्द्रित विधि में, शिक्षक के दौरान शिक्षक पूरी तरह से सक्रिय रहता है इसके विद्यार्थी निष्क्रिय रहकर शिक्षक के द्वारा दिये गये आदर्शों का अनुपालन करता है। व्याख्यान विधि एवं प्रयोग प्रदर्शन विधि शिक्षक केन्द्रित विधियों के उदाहरण हैं।
9. विद्यार्थी केन्द्रित विधि में शिक्षण के दौरान शिक्षक सहायक के रूप में होता है तथा विद्यार्थी सक्रिय रहकर स्वयं सीखने का प्रयास करता है। जैसे– प्रयोजना विधि, प्रयोगशाला विधि इत्यादि।
10. शिक्षक
11. व्याख्यान विधि।
12. व्यवहारिक उदाहरण।
13. विद्यार्थी सुनने के साथ–साथ देखते भी हैं, इसलिए उनकी सक्रियता बढ़ जाती है।
14. प्रयोग प्रदर्शन के समय सावधानी पूर्वक कार्य करे, जिससे वांछित परिणाम प्राप्त हो जाय इसके लिए पूर्व में प्रयोग को करके देख लेना चाहिए।
15. प्रयोग असफल होने का भय बना रहता है।
16. डब्लू0 एच0 किलपैट्रिक
17. चार 1. सृजनात्मक 2. कलात्मक 3. समस्यात्मक 4. अभ्यास प्रायोजना
18. करके सीखने के सिद्धान्त पर आधारित है।
19. प्रयोगशाला विधि में विद्यार्थी स्वयं प्रयोग तथा निरीक्षण करके विषय–वस्तु को सीखता है।
20. कार्यानुभव से।
21. उच्च कक्षाओं के लिए अधिक उपयोगी है।
22. एच0ई0 आर्मस्ट्रांग के द्वारा।
23. विद्यार्थी के अन्वेषक बनाना।
24. प्राथमिक स्तर की कक्षाओं के लिए उपयोगी नही है।
25. विचार –विमर्श से तात्पर्य किसी समस्या के विभिन्न पहलुओं पर किये गये विचारों के परस्पर आदान–प्रदान की प्रक्रिया से है।
26. स्व–अध्ययन।
27. चिन्तन।
28. प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा ज्ञान प्रदान करना।
29. पर्यटन विधि के द्वारा विद्यार्थी स्वयं निरीक्षण कर ज्ञान प्रतिपादित करते हैं, जो विज्ञान के लिए अति आवश्यक है।

11.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कुलश्रेष्ठ, ए0के0, कुलश्रेष्ठ, एन0के0 (2011), विज्ञान शिक्षण. मेरठः आर0 लाल0 बुक डिपो।
2. विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली।
3. सूद, जे0के0 (2003), जैविक विज्ञान शिक्षण, जयपुरः राजस्थान. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
4. सूद, जे0के0 (2015), भौतिक विज्ञान शिक्षण, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
5. Das, R.C.(1990). *Science Teaching In Schools. :* New Delhi: Sterling Publications.
6. Gupta, S.K.(1989). Teaching Physical Science In Secondary School. New Delhi: Sterling Publications.
7. Kulshresth, S.P. (1999).*Teaching Pysical Science In Indian School*. Merrut: R.Lal Book Depot.
8. Mishra, K.S. (1992). *Perpective In Science Education*. Agra: Vinod Pustak Mandir.
9. NCERT: *National Curriculum Frame Work for School Education*. New Delhi 2000.
10. Smith, B.O. & Standly, W.O. Shores, J.H. (1957). *Fundamental of Curriculum Development*. New Yark: Harcant, Brace and World.
11. Sood, J.K. (1987). *Teaching Life Sciences: A Book of Methods*. Chandigarh: Kohli Publisher.
12. Vidya, N. (1971). *Impact Of Science Teaching*. Delhi: on ford & I.B.H.

इकाई– 12 : विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान की प्रासंगिकता

इकाई की संरचना

12.1 प्रस्तावना

12.2 इकाई के उद्देश्य

12.3 विज्ञान की अवधारणा

12.4 विज्ञान की परिभाषाएं

12.5 विज्ञान विषय की विशेषताएं

12.6 विज्ञान के प्रमुख वर्गीकरण

12.7 दैनिक जीवन में विज्ञान की उपयोगिता एवं महत्व

12.8 विद्यालयी पाठ्यक्रम

12.9 विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान विषय को आवश्यक रूप से समाहित करने के विभिन्न आयोगों की सिफारिशें

12.10 सारांश

12.11 अभ्यास के प्रश्न

12.12 चर्चा के बिन्दु

12.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

विज्ञान एक ऐसा विषय है जो जीवन के सबसे नजदीक है। इस विषय के समझ के बिना जीवन एवं वातावरण को सही ढंग से समझना संभव नहीं है। विज्ञान विषय विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करने में सहायक है जो व्यवहारिक जीवन को सही ढंग से जीने के लिए अति आवश्यक है। विज्ञान विषय, किसी भी घटना अथवा वस्तु के सही रूप को समझने में मदद करता है, यही एक ऐसा विषय है जो कारण–प्रभाव की बात करता है और किसी भी तथ्य को तर्क की कसौटी पर कसने के उपरान्त स्वीकार तथा अस्वीकार करने की बात करता है। इसलिए ही विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञाान विषय की उपादेयता प्रारम्भ से ही बनी रही है। प्रारम्भिक स्तर पर यह हमारा–पर्यावरण नाम से पढ़ाया जाता है, जिसमें 'जीवन और पर्यावरण' के अस्तित्व को बड़े ही रोचक ढंग से जोड़ा जाता है। इसके बाद विज्ञान के माध्यम से ही जीवन की जटिलताओं को समझाया जाता है।

इस विषय की उपादेयता को देखते हुए ही विभिन्न आयोगों की सिफारिशों को भी इस इकाई में विवेचित किया गया है साथ ही विज्ञान की विशेषताओं, दैनिक जीवन में विज्ञान की उपयोगिता एवं महत्व को विवेचित किया गया है, ये प्रकरण आपको, विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान की उपादेयता की समझ विकसित करने में सहायक सिद्ध होंगे।

12.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के उपरांत आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. विज्ञान विषय की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।

2. दैनिक जीवन में विज्ञान की उपयोगिता एवं महत्व की व्याख्या कर सकेंगे।
3. विद्यालयी पाठ्यक्रम की अवधारणा को समझ सकेंगे।
4. विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान विषय को आवश्यक रूप से समाहित करने के पीछे विभिन्न आयोगों की सिफारिशों के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
5. विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान की उपादेयता का सविस्तार वर्णन कर सकेंगे।

12.3 विज्ञान की अवधारणा

विज्ञान = विशिष्ट ज्ञान

एक ऐसा ज्ञान जो विशिष्ट हो, जिसका परीक्षण किया जा सके।

"प्रकृति के क्रमबद्ध अध्ययन से अर्जित एवं प्रयोगों द्वारा प्रमाणित वर्गीकृत ज्ञान को विज्ञान कहते हैं।"

विज्ञान अंग्रेजी शब्द Science का हिन्दी रूपांतर है। Science शब्द के वर्णों को विश्लेषित करने पर निम्न रूप में इस शब्द को देखा जा सकता है।

S = Systematic

C = Curious

I = Inquiry

E = to exhume

N = New

C = Concept

E = on the basic of Experiment/Evaluation/Examination

अर्थात् विज्ञान एक व्यवस्थित जिज्ञासु परिप्रेच्छा है जो नये प्रत्यय को प्रयोग/मूल्यांकन के आधार पर ढूँढ़कर बाहर निकालता है, और जिसका परीक्षण कर उसकी सत्यता की जांच भी की जा सकती है, जिसके लिए नियंत्रित दशाओं का होना अति आवश्यक है।

विज्ञान शब्द खोज से जुड़ा है और यह सदैव कारण–प्रभाव पर बल देता है।

Science शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'Scientia' शब्द तथा लैटिन क्रिया 'Scire' से हुई है। यहाँ पर Scientia शब्द का अर्थ है ज्ञान (Knowledge) तथा Scire का अर्थ है 'To Know' (जानना)। इन कथनों से स्पष्ट है कि 'ज्ञान को उत्पन्न करने की प्रक्रिया' का नाम ही विज्ञान है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. विज्ञान किसे कहते हैं?

.....

.....

2. विज्ञान में किस दिशा का होना आवश्यक है?

.....

.....

3. विज्ञान किस अवधारणा पर बल देता है?

.....

.....

12.4 विज्ञान की परिभाषाएं

वुडबर्न एवं ओबार्न के अनुसार–"विज्ञान वह मानवीय व्यवहार है, जो घटनाओं की एवं उन परिस्थितियों की जो प्राकृतिक वातावरण में उपस्थित हो, पूर्ण शुद्धता से व्याख्या करने का प्रयास करें।"

डेम्पीयर के अनुसार–"विज्ञान प्राकृतिक विषय का व्यवस्थित ज्ञान एवं धारणाओं के मध्य संबंधों का तार्किक अध्ययन है, जिनमें ये विषय व्यक्त होते हैं।"

पंडित जवाहर लाल नेहरू के अनुसार–"विज्ञान का अर्थ केवल मात्र परखनली तथा कुछ बड़ा या छोटा बनाने के लिए इसको और उसको मिलाना ही नहीं है अपितु वैज्ञानिक विधि के अनुसार हमारे मस्तिष्क को प्रशिक्षण देना ही विज्ञान है।"

12.5 विज्ञान विषय की विशेषताएं

अग्रलिखित परिभाषाओं और अवधारणाओं को सही से विवेचित किया जाय तो पाया जायेगा कि विज्ञान केवल प्रयोगशाला की विषय वस्तु नहीं है बल्कि यह पूर्णतः व्यवहारिक विषय है। विज्ञान विषय केवल पढ़ा ही नहीं जाता है बल्कि यह व्यक्ति के व्यवहार में उतर जाता है।

विज्ञान पढ़े हुए व्यक्ति में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न हो जाता है जो किसी भी वस्तु, घटना क्रिया को तार्किक रूप से देखने का प्रयास करता है। विज्ञान ही एक ऐसा विषय है जो व्यक्ति को अंधविश्वास और समाज में व्यक्त गलत रूढ़ियों से बाहर निकालता है। इसलिए कहा जाता है कि विज्ञान ही व्यक्ति को सत्यता/वास्तविकता से परिचित कराता है। समाज में भूत–पिशाच का भय, लड़की पैदा होने के लिए महिला को ही जिम्मेदार मानना, विभिन्न बीमारियों (एड्स, लेप्रोसी, चेचक इत्यादि) के प्रति लोगों की मिथ्या भ्रम को केवल विज्ञान विषय ही तोड़ने में सफल हुआ है, जबकि अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों एवं अशिक्षित लोगों के बीच भ्रांतिया बनी हुई हैं। इसलिए विज्ञान विषय समाज के लिए अति उपयोगी है।

विज्ञान विषय की कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएं निम्नवत् हैं–

1. विज्ञान व्यक्तियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न कर तार्किक ढंग से सोचने–समझने की क्षमता विकसित करता है।
2. विज्ञान समाज में व्याप्त मिथ्या भ्रांतियों को तोड़ता है।
3. विज्ञान जीवन को जीने का स्वच्छ और स्वस्थ तरीके सिखाता है।
4. विज्ञान प्राकृतिक संसाधनों को उचित दर से प्रयोग करने एवं उनके संरक्षण के तरीके बताता है।
5. विज्ञान विषय गणित एवं ज्यामिती कला इत्यादि विषयों में रूचि उत्पन्न करता है।
6. विज्ञान पूरी तरह वस्तुनिष्ठ है, अर्थात् इसके प्रत्ययो का परीक्षण किया जा सकता है। यह वैश्विक स्तर पर स्वीकार्य होता है।

7. विज्ञान के सभी अनुसंधान समाज को ही ध्यान में रखकर किये जाते है।
8. विज्ञान प्रश्न पूछने की कौशल का विकास करता है।
9. यह किसी भी घटना अथवा वस्तु का क्रमबद्ध वर्णन करता है।
10. विज्ञान विषय पूर्वकथन करने की क्षमता रखता है।
11. यह अपने आप में शुद्धता, यथार्थता, विश्वसनीयता, वस्तुनिष्ठता वैधता को समाहित रखता है।
12. विज्ञान पर्यावरण को समझने की दृष्टिकोण विकसित करता है जिससे व्यक्ति सजीव–निर्जीव, पदार्थ, तत्व, यौगिक, मिश्रण घटने वाली क्रियाओं को समझने का प्रयास करता है।
13. विज्ञान दूसरों की भावनाओं को समझने–सुनने की अभिवृत्ति विकसित करता है, क्योंकि विज्ञान व्यक्तिगत के साथ–साथ सामूहिक प्रयोग करने को प्रेरित करता है।
14. विज्ञान काल्पनिक सोच (परिकल्पना) विकसित करने एवं उसके पुष्टिकरण (प्रयोग) पर बल देता है, यह एक ऐसी मनोवृत्ति विकसित करता है कि किसी तथ्य को बिना परीक्षण के न स्वीकारें।
15. यह यांत्रिक प्रयोग पर बल देता है और बताता है कि कैसे कम से कम प्रयास में अधिकतम परिणाम प्राप्त कर सकते है।
16. विज्ञान, करके सीखने पर बल देता है।
17. विज्ञान सामाजिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में सन्निहित है।
18. यह एक ऐसा विषय है जो सजीव तथा निर्जीव दोनों विषय वस्तु का विश्लेषण कर उसकी पद्धति की विवेचना करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. विज्ञान पढ़ने वाले व्यक्ति में कैसा दृष्टिकोण विकसित होता है?

.....

.....

5. विज्ञान में अंतनिर्हित गुणों को लिखें।

.....

.....

6. विज्ञान सीखने के किस प्रक्रिया पर अधिक बल देता है?

.....

.....

12.6 विज्ञान के प्रमुख वर्गीकरण

अग्रांकित आरेख के अनुसार विज्ञान के प्रमुख वर्गीकरण को प्रस्तुत किया गया है–

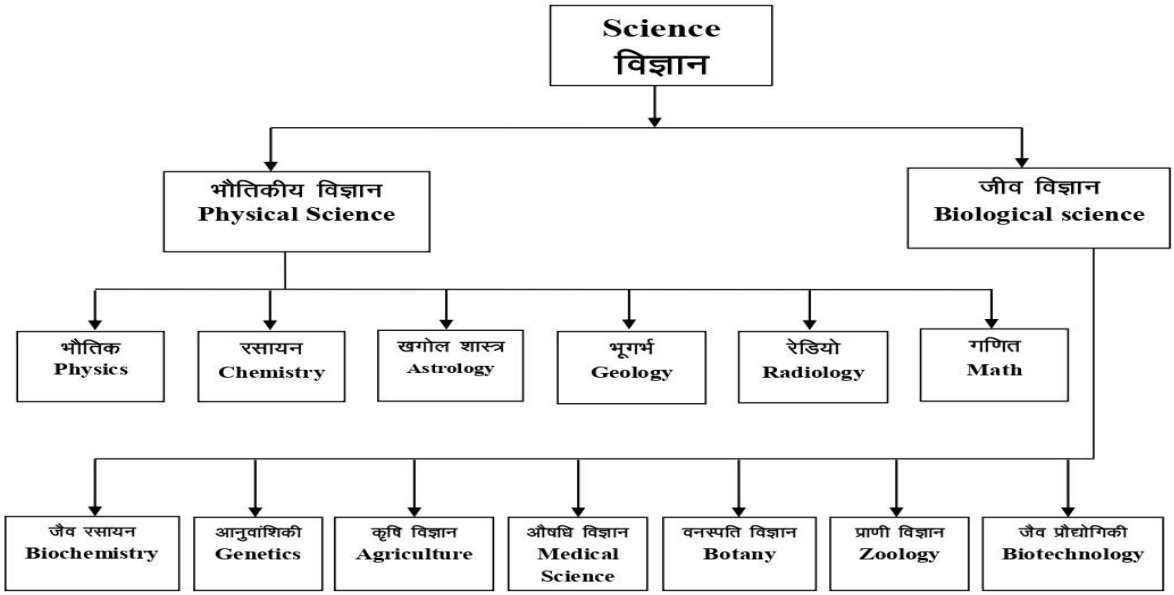

12.7 दैनिक जीवन में विज्ञान की उपयोगिता एवं महत्व

यदि कहा जाय कि विज्ञान के बिना हमारा विकास सम्भव नहीं था तो यह अतिश्योक्ति नहीं होगी क्योंकि शुरू में मनुष्य जंगलों में जानवरों के समान रहता था परन्तु अपनी जिज्ञासा, प्रश्न पूछने की कौशल और प्रयोग करने के कौशल को वे उपयोग में लाकर जानवर से अलग हो गया। पेड़ों और गुफाओं में रहने वाला मनुष्य आज विज्ञान के सहारे ही समुद्र के अंतर और अंतरिक्ष में जीवन की तलाश कर रहा है। प्रश्न पूछने की शक्ति और जिज्ञासा ने व्यक्ति के जीवन को भौतिक संसाधनों से परिपूर्ण कर दिया है और जीवन को एकदम सुगम बना दिया है। मानव जीवन के दिनचर्या को विज्ञान के विभिन्न शाखाओं के अनुप्रयोग, युक्तियों, तकनीकियों ने अपने प्रभाव में जकड़ लिया है। आज मानव जीवन परोक्ष या अपरोक्ष रूप से पूर्ण रूप से विज्ञान पर निर्भर हो गया है। वर्तमान में विभिन्न क्षेत्रों में विज्ञान की महत्ता एवं उपयोगिता निम्न प्रकार है–

1. कृषि के क्षेत्र में

खाद/उर्वरक, कीटनाशक दवायें, सिंचाई के साधन इत्यादि विज्ञान की उपयोगिता को कृषि के क्षेत्र में सिद्ध कर रहे हैं। विज्ञान की सहायता के बिना उन्नति खेती, उन्नतिशील बीज और अधिक पैदावार की कल्पना संभव नहीं है। विज्ञान की सहायता से ही हम बढ़ती आबादी की खाद्यान्न आवश्यकता की पूर्ति कर सके हैं इस क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो पाये हैं।

2. स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में

विज्ञान ने स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने में चिकित्सा के क्षेत्र में अद्भुत योगदान किया है। आज मृत्यु दर हर अवस्था पर काफी नियंत्रण में है। ऐलोपैथ, होम्योपैथ, आयुर्वेद आदि पद्धति द्वारा वर्तमान में विभिन्न गंभीर बीमारियों पर नियंत्रण पा लिया है। विज्ञान की अनुसंधान के द्वारा ही आज चिकित्सा ने चरम प्रगति कर व्यक्ति

की औसत आयु को बढ़ा दिया है।

3. औद्योगिक क्षेत्र में

विज्ञान के खोज से ही औद्योगिक क्षेत्र में क्रांति आ गई है। आज औद्योगिक क्षेत्र लघु उद्योग और बड़े उद्योगों में बंटा हुआ है, विज्ञान ने बड़े उद्योगों के साथ–साथ लघुउद्योगों को भी बढ़ाने में पूर्ण योगदान दिया है। मोमबत्ती, अचार, मुरब्बा इत्यादि बनाना सीख कर महिलाए भी औद्योगिक क्षेत्र में शीर्ष पर है।

4. यातायात के क्षेत्र में

विज्ञान की तकनीकी एवं विकास ने यातायात के क्षेत्र में अत्यंत उपलब्धियां हासिल की है। सायकिल, मोटर साइकिल, कार, बस, ट्रेन हवाई जहाज ये सभी साधन विज्ञान की ही देन है, इन सबकी सहायता से अब दूरी–दूरी नही लगती।

5. संचार के क्षेत्र में

'कर लो दुनिया मुट्ठी में' की संकल्पना को विज्ञान ने पूर्ण करके दिखाया है। यातायात और संचार के क्षेत्र में हो रहे शोधों ने दूरियों को एकदम से कम कर दिया है। आज हम वैश्विक गांव की अवधारणा को पूर्ण होते देख रहे हैं जिसका आधार केवल विज्ञान ही है। अपने स्थान पर बैठे हुए हम विश्व के किसी कोने में संपर्क साध सकते है। संदेशों को मौखिक अथवा प्रिंट के रूप में आदान–प्रदान कर सकते हैं।

6. मनोरंजन के क्षेत्र में

केवल मौखिक गीतों एवं अभिनय (ड्रामा) की दुनिया से निकालकर डिजिटल दुनिया में प्रवेश कराने वाला विज्ञान ही है, आज हम 3जी, 4जी, 3डी, एलईडी टी0वी0, प्लास्मा टी0वी0 की बात कर रहे हैं। जिसकी एक आम आदमी कल्पना नही कर सकता, वह उसे सम्मुख भी जीवंत दिखायी देता है और मनोरंजन के क्षेत्र में अजीबो–गरीब कारनामें देखने को मिलते हैं। जंगली खतरनाक जानवरों को कैमरे में कैद कर लेना, उनकी पूरी दिनचर्या, दूसरे जानवरों से लड़ाई इत्यादि को देखकर हम एकदम रोमांचित हो जाते है, इसके पीछे कम्प्यूटर, कैमरा, इंटरनेट, डीवीडी, सीडी, उन्नतिशील टी0वी0 आदि उत्पाद विज्ञान की ही देन हैं।

7. खाद्य के क्षेत्र में

बढ़ती हुई जनसंख्या को भोजन उपलब्ध कराना एक दुरूह कार्य है, लेकिन विज्ञान ने खाद्यान्न वस्तुओं की उपलब्धता सुलभ करायी है। इस क्षेत्र में रसायन विज्ञान एवं जीव विज्ञान ने अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाकर खाद्यान्न आपूर्ति को बढ़ाया है।

इनके अलावा युद्ध सामग्री निर्माण, अंतरिक्ष, पेट्रोलियम उत्पाद, वस्त्र उद्योग, प्लास्टिक, सीमेंट, इस्पात, भवन निर्माण, विद्युत, परमाणु, सौर ऊर्जा, न्यूक्लियर इत्यादि क्षेत्रों में विज्ञान ने अद्वितीय योगदान कर सभी क्षेत्रों में अपार संभावनाएं खोज निकाली है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. कर लो दुनिया मुठ्ठी में अवधारणा विज्ञान के किस क्षेत्र से संबंधित है।

.....

.....

8. मृत्यु–दर को नियंत्रित करने में किस विषय का योगदान है?

.....

.....

9. वर्तमान में मानव जीवन को परोक्ष या अपरोक्ष रूप से सबसे अधिक किस विषय ने प्रभावित किया है।

.....

.....

12.8 विद्यालयी पाठ्यक्रम

विद्यालय में जो पाठ्यक्रम चलते हैं अथवा विद्यालय जिनके आधार पर संचालित होते हैं उन्हें विद्यालयी पाठ्यक्रम कहते हैं।

विद्यालयी पाठ्यक्रम दो शब्दों से मिलकर बना है–

(i) विद्यालय (ii) पाठ्यक्रम।

इसको विद्यालय का पाठ्यक्रम या विद्यालय का आधार कहा जाता है। विद्यालय एक ऐसा स्थान है जो बच्चों को एक सभ्य नागरिक के रूप में ढालने का प्रयास करता है, यहाँ जो भी विषय पढ़ाये जाते हैं उन सभी विषयों का आधार विद्यार्थियों में नागरिकता एवं वैज्ञानिकता के गुण विकसित करना होता है।

विद्यालय के संदर्भ में यदि हम इसके अंग्रेजी शब्द SCHOOL के अर्थ को विश्लेषित करें तो पायेंगे कि–

S - Social	सामाजिक
C - Cultural	सांस्कृतिक
H - Humanistic	मानवतावादी
O - Organisation	संगठन
O - Of	का
L - Learning	अधिगम

अर्थात् विद्यालय सामाजिक, सांस्कृतिक, मानवतावादी अधिगम कराने का संगठन संस्था है, पाठ्यक्रम सामाजिक, सांस्कृतिक, मानवतावादी गुणों को विकसित करने वाले तत्त्वों को स्थान दिया जाता है।

12.9 विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान विषय को आवश्यक रूप से समाहित करने के लिए विभिन्न आयोगों की सिफारिशें

विज्ञान एक ऐसा विषय है जो सामान्य बोलचाल भाषा के अतिरिक्त सबसे आवश्यक है जो व्यक्ति के वातावरण को जानने और स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने में सबसे अहम भूमिका निभाता है। आज विज्ञान ने ही व्यक्ति की जीवित रहने की औसत आयु वृद्धि में कर दी है एवं मृत्युदर में कमी भी। 'स्वच्छ जीवन एवं स्वस्थ जीवन' की अवधारणा विज्ञान के ज्ञान के बिना संभव नहीं है।

विज्ञान में अर्न्तनिहित मूल्यों की व्याख्या से स्पष्ट हो गया है कि विज्ञान हमारे दैनिक जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। प्राकृतिक घटनाओं को समझने, उनकी व्याख्या करने तथा कृषि, उद्योग, तकनीकी, अनुसंधान क्षेत्र में विज्ञान विशेष रूप से सहायक है। इसलिए विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान को एक विषय के

रूप में सम्मिलित करना अति आवश्यक है।

कुछ शिक्षा आयोगों ने विज्ञान को विद्यालयी पाठ्यक्रम में समाहित करने के लिए सिफारिशें की, जिनके शब्द निम्नवत् हैं–

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53)

"प्राकृतिक एवम् पदार्थ विज्ञान के मूल सिद्धान्तों का अवबोध एवं अनुभूति आज के युग में प्रभावपूर्ण जीवन के लिए आवश्यक है।" माध्यमिक शिक्षा आयोग ने सामान्य विज्ञान को उच्च तथा उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में एक अनिवार्य विषय के रूप में शिक्षण की सिफारिश की।

2. भारतीय शिक्षा आयोग/कोठारी आयोग (1964–66)

भारतीय शिक्षा आयोग/कोठारी आयोग ने विज्ञान शिक्षण के द्वारा विद्यार्थी के मस्तिष्क को इस प्रकार अनुशासित करने की अपेक्षा की थी कि वह जीवन के सभी पक्षों पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से चिंतन करने लगे।

3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968)

इस नीति में पूरे देश में शिक्षा की सामान्य संरचना तथा सभी राज्यों द्वारा 10+2+3 पद्धति लागू करने की सिफारिश की गयी साथ ही गणित एवं विज्ञान को विद्यालयी पाठ्यक्रम में अनिवार्य रूप से लागू करने को कहा गया।

4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986)

इस शिक्षा नीति में विज्ञान शिक्षण पर बल दिया गया है इसके अनुसार "विज्ञान को सुदृढ़ किया जायेगा ताकि विद्यार्थियों मे जिज्ञासा, सृजनात्मकता, वस्तुनिष्ठता, प्रश्न पूछने का साहस, सौंदर्य बोध जैसी योग्यताएँ व मूल्य विकसित हो सके। विज्ञान शिक्षा के कार्यक्रम इस प्रकार बनाये जायेंगे कि विद्यार्थियों में समस्या समाधान की योग्यता और निर्णय लेने की योग्यता विकसित हो सके और वे स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग तथा जीवन के अन्य पक्षों के साथ विज्ञान के संबंध को समझ सकें। जो लोग औपचारिक शिक्षा की सीमा से परे हैं उन तक विज्ञान शिक्षा को पहुँचाने का हर संभव प्रयत्न किया जायेगा।

5. संशोधित नई शिक्षा नीति (1992)

इस शिक्षा नीति की कुछ मुख्य सिफारिशें निम्न हैं–

1. विद्यालय– शिक्षा के प्रथम दस वर्षों में विज्ञान और गणित मुख्य विषय के रूप में बने रहेंगे।
2. विज्ञान और गणित के शिक्षण अधिगम का प्रयोजन ऐसा हो जो विद्यार्थियों को मूल अधिकार का लाभ दे सके। प्राथमिक स्तर पर विज्ञान तथा गणित की शिक्षा–योजना ऐसी बना दी जाय कि बच्चे इनकी विषय वस्तु को बोझ न समझ कर इनके अध्ययन में आनंद प्राप्त कर सकें।
3. दसवीं कक्षा तक विज्ञान को एक विषय के रूप में पाठ्यक्रम में रखा जाय। हमारे पर्यावरण में घटित विज्ञान के नियमों एवम् सिद्धान्तों का उपयोग शिक्षण–अधिगम में इच्छित स्थितियों के निर्माण में होना चाहिये। विज्ञान सीखने–सिखाने के लिए प्रदर्शनात्मक गतिविधियों को विशेष महत्व देना चाहिए।

6. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रूपरेखा (NCF 2005)

विज्ञान शिक्षण को इस प्रकार नियोजित किया जाय कि विद्यार्थी तथ्य, विज्ञान के सिद्धांत, अनुप्रयोग के सहारे अपने संज्ञानात्मक पक्ष का विकास उचित ढंग से हो सके। वैध वैज्ञानिक ज्ञान को विकसित करने की कौशल, विधियों और प्रक्रियाओं को जान सकें। विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं समाज को स्थानीय एवं वैश्विक मुद्दों के साथ जोड़ सकें।

वैज्ञानिकों के द्वारा किये गये शोधों एवं उनके जीवन के प्रति आदर व्यक्त कर सकें। विद्यार्थियों में

वास्तविक जिज्ञासा, सौंदर्यभाव, सृजनात्मकता, वातावरण संरक्षण की भावना और तार्किक चिंतन उत्पन्न हो सके तथा अंधविश्वास दूर हो सकें।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10. प्राकृतिक एवम् पदार्थ विज्ञान के मूल सिद्धातों का अवबोध एवं अनुभूति आज के युग में प्रभावपूर्ण जीवन के लिए आवश्यक है। यह किस आयोग का कथन है?

.....

.....

11. भारतीय शिक्षा आयोग ने विज्ञान शिक्षण के द्वारा विद्यार्थी के मस्तिष्क से क्या अपेक्षा की थी?

.....

.....

12.10 सारांश

विज्ञान विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय है, यह व्यवहारिक जीवन के विषय में अत्यंत महत्वपूर्ण ज्ञान प्रदान करता है। विज्ञान, तार्किक एवं वैज्ञानिक चिन्तक को विकसित करता है तथा सभी ज्ञानों को कसौटी पर परखने के उपरांत ही मानने को कहता है। अति प्राचीन काल की भयावह परिस्थितियां विज्ञान के अभाव में ही हुई थी, महामारी, अकाल मृत्यु एवं अनेकों बीमारियों का होना जो वर्तमान में अधिकांशतः निमंत्रित अवस्था में हैं, यदि विज्ञान की जानकारी वर्तमान समाज को न दी गयी तो पुनः यह मानव समाज अंधकार युग में प्रवेश कर जायेगा। इसलिए विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान की उपादेयता स्वयं ही स्वीकार होती है, और विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान विषय अति उपयोगी है। यह विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करता है। यह जीवन जीने का स्वच्छ और स्वस्थ तरीके सिखाता है। प्राकृतिक संसाधनों के उचित दर से प्रयोग करने एवं उनके संरक्षण के तरीके बताता है। यह समाज में व्याप्त मिथ्या भ्रांतियों को तोड़ता है। यह शुद्धता, यथार्थता, विश्वसनीयता, वस्तुनिष्ठता, वैदता की अवधारणा को बताता है। विज्ञान पर्यावरण के समझने का दृष्टिकोण विकसित करता है, जिससे व्यक्ति, सजीव–निर्जीव पदार्थ, तत्व, यौगिक में अधिकतम परिणाम प्राप्त करना सिखाता है। विज्ञान सजीवों के जीवन पद्धति एवं उनकी कार्य–प्रणाली की विवेचना करता है। दैनिक जीवन में विज्ञान ने स्वास्थ्य एवं चिकित्सा, औद्योगिक, यातायात, संचार, मनोरंजन, उत्पादन, विद्युत, सौर ऊर्जा, परमाणु, न्यूक्लियर इत्यादि क्षेत्रों में अपना अद्वितीय योगदान दिया है। इसीलिए शिक्षा के लिए बने सभी आयोंगो ने एवं विभिन्न राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखाओं में विज्ञान की महत्ता को स्पष्ट रूप स्वीकार किया है और विद्यालयी पाठ्यक्रम में प्रारंभिक स्तर से ही समाहित करने को प्रस्तावित किया है।

12.11 अभ्यास के प्रश्न

1. विज्ञान विषय की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
2. विज्ञान विषय की विशेषताओं को लिखिए।
3. दैनिक जीवन में विज्ञान की उपयोगिता को विवेचित कीजिए।
4. विद्यालयी पाठ्यक्रम में विज्ञान विषय को आवश्यक रूप से समाहित करने के कारणों को लिखिए।
5. विभिन्न आयोगों के विज्ञान विषय संबंधी सिफारिशों को लिखिए।

6. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम रूप–रेखा 2000, 2005 में विज्ञान विषय पर की गयी टिप्पणियों को लिखिए।

12.12 चर्चा के बिन्दु

1. विज्ञान विषय की अवधारणा, विशेषताओं एवं महत्व पर चर्चा कीजिए।
2. दैनिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में विज्ञान की उपयोगिता पर चर्चा कीजिए।

12.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. प्रकृति के क्रमबद्ध अध्ययन से अर्जित एवं प्रयोगों द्वारा प्रमाणित वर्गीकृत ज्ञान को विज्ञान कहते हैं।
2. विज्ञान में नियंत्रित दशा का होना आवश्यक है।
3. विज्ञान 'कारण–प्रभाव' अवधारणा पर बल देता है।
4. वैज्ञानिक दृष्टिकोण
5. शुद्धता, यथार्थता, विश्वसनीयता, वस्तुनिष्ठता, वैद्यता विज्ञान में अंतनिर्हित गुण है।
6. करके सीखने की प्रक्रिया पर अधिक बल देता है।
7. संचार के क्षेत्र से।
8. विज्ञान विषय का।
9. विज्ञान ने।
10. माध्यमिक शिक्षा आयोग का कथन है।
11. विद्यार्थी का मस्तिष्क सभी पक्षों पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से चिंतन करने लगे।

12.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कुलश्रेष्ठ, ए0के0, कुलश्रेष्ठ, एन0के0(2011), विज्ञान शिक्षण, मेरठः आर0 लाल0 बुक डिपो।
2. विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली।
3. सूद, जे0के0 (2003), जैविक विज्ञान शिक्षण, जयपुर : राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
4. सूद, जे0के0 (2015), भौतिक विज्ञान शिक्षण, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
5. Das, R.C. (1990). *Science Teaching In Schools.:* New Delhi: Sterling Publications.
6. Gupta, S.K.(1989). Teaching Physical Science In Secondary School. New Delhi: Sterling Publications.
7. Kulshresth, S.P. (1999).*Teaching Physicl Science In Indian School*. Merrut: R.Lal Book Depot.
8. Mishra, K.S. (1992). *Perpective in Science Education*. Agra: Vinod Pustak Mandir.
9. NCERT: *National Curriculum Frame Work for School Education*. New Delhi 2000.
10. Smith, B.O. & Standly, W.O. Shores, J.H. (1957). *Fundamental of Curriculum Development*. New Yark: Harcant, Brace and World.
11. Sood, J.K. (1987). *Teaching Life Sciences: A Book of Methods*. Chandigarh: Kohli Publisher.
12. Vidya, N. (1971). *Impact Of Science Teaching*. Delhi: on ford & I.B.H.

खण्ड– 05 : गणित में विद्यालयी पाठ्यक्रम का विश्लेषण

खण्ड परिचय

खंड 5 गणित में विद्यालय पाठ्यक्रम का विश्लेषण है। इस खण्ड को तीन इकाइयों में विभाजित किया गया है। जो इस प्रकार है–

इकाई 13 गणित में विद्यालय पाठ्यचर्या की प्रमुख विशेषताएं

इकाई 14 गणित की विधियां

इकाई 15 विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित की प्रासंगिकता

इकाई इकाई 13 जो कि गणित की विद्यालय पाठ्यचर्या की प्रमुख विशेषताएं हैं। इसके अंतर्गत गणित की पाठ्यचर्या की आवश्यकता क्या है? गणित की पाठ्यचर्या के मुख्य उद्देश्य क्या है? इसका विस्तृत वर्णन दिया गया है। गणित की पाठ्यचर्या के विकास के सिद्धांत, पाठ्यवस्तु के चयन के आधार, पाठ्यचर्या के संगठन अथवा आयोजन तथा गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन के उपागम के विषय में भी उदाहरण सहित समझाया गया है। आप इस इकाई में देखेंगे कि विद्यालय स्तर की गणित की पाठ्यचर्या की क्या विशेषताएं हैं तथा उसमें क्या सुधार की आवश्यकता है इस पर विस्तृत वर्णन दिया गया है। इकाई के अंत में गणित की पाठ्यचर्या में सुधार के लिए कोठारी आयोग ने क्या सुझाव दिए हैं इसका भी विस्तृत वर्णन दिया गया है।

इकाई 14 जो गणित की विधियां हैं, इस इकाई में गणित शिक्षण की प्रमुख विधियों के विषय में बताते हुए कहा गया है कि इसके अनेक प्रकार हैं जैसे– आगमन निगमन विधि, संश्लेषण एवं विश्लेषण विधि, प्रयोगशाला विधि, अनुसंधान विधि, परियोजना विधि तथा समस्या समाधान विधि, इन सब के विषय में विस्तार पूर्वक समझाया गया है। गणित शिक्षण की प्रमुख विधियों के अतिरिक्त गणित शिक्षण की मुख्य प्रविधियां क्या–क्या है इस विषय में भी विस्तार से समझाने का प्रयास किया गया है। जिसमें मौखिक एवं लिखित कार्य, अभ्यास एवं पुनरावृत्ति कार्य तथा अभ्यास कार्य एवं गृह कार्य में क्या अंतर है इसको भी विस्तृत रूप में समझाने का प्रयास किया गया है।

इस खंड की अंतिम इकाई 15 है जो विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित की प्रासंगिकता से संबंधित है। जिसमें गणित की प्रकृति तथा उसके क्षेत्र के विषय में विस्तार पूर्वक समझाया गया है। इसमें गणित का क्या संप्रत्यय है, उसकी क्या प्रकृति है तथा उसकी क्या प्रणाली है और गणित का संबंध किन–किन विषयों से है इस विषय में विस्तार पूर्वक बताया गया है। विद्यालय पाठ्यचर्या में गणित की सार्थकता के अंतर्गत गणित शिक्षण की आवश्यकता एवं महत्व विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित का क्या स्थान होना चाहिए या क्या स्थान है तथा गणित शिक्षण के कौन–कौन से मूल्य हैं इस विषय में भी उदाहरण सहित समझाया गया है। गणित की वर्तमान प्रवृत्तियां क्या है? तथा प्रमुख गणितज्ञों का जीवन परिचय एवं गणित विषय में उनके योगदान को भी रेखांकित किया गया है।

इकाई– 13 : गणित की विद्यालयी पाठ्यचर्या की प्रमुख विशेषताएँ

इकाई की संरचना

13.1 प्रस्तावना

13.2 इकाई के उद्देश्य

13.3 गणित की पाठ्यचर्या की आवश्यकता

13.4 गणित की पाठ्यचर्या के मुख्य उद्देश्य

13.5 गणित की पाठ्यचर्या का विकास

13.5.1 गणित की पाठ्यचर्या निर्माण के सिद्धान्त

13.5.2 गणित की पाठ्यचर्या के लिए पाठ्यवस्तु के चयन का आधार

13.5.3 गणित की पाठ्यचर्या का संगठन अथवा आयोजन

13.5.4 गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन के उपागम

13.6 विद्यालयी स्तर के गणित की पाठ्यचर्या की विशेषताएँ

13.7 विद्यालयी स्तर के गणित की पाठ्यचर्या में सुधार

13.7.1 विद्यालयी स्तर की गणित की पाठ्यचर्या में सुधार हेतु कोठारी आयोग के सुझाव

13.8 सारांश

13.9 अभ्यास के प्रश्न

13.10 चर्चा के बिन्दु

13.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

विगत कुछ वर्षों से पाठ्यचर्या को विद्यालयी निर्देशन में विद्यार्थियों को प्रदान की जाने वाली सुनियोजित क्रियाकलापों तथा अनुभवों को माना जाने लगा है। ज्ञान को विद्यार्थियों तक सहज रूप में पहुँचाने के लिए इसे विषयों के रूप में वर्गीकृत किया गया है तथा उन सभी विषयों में विद्यालयी स्तर पर गणित तथा गणित की पाठ्यचर्या, विद्यालयी पाठ्यचर्या का एक अभिन्न अंग है। औद्योगिक एवं वैज्ञानिक क्रान्ति के इस युग में सूचना विज्ञान, प्रमाणीकरण तथा स्वचालित क्रियाओं की दृष्टि से विद्यालयी स्तर पर गणित की पाठ्यचर्या और भी महत्त्वपूर्ण हो गयी है। गणित की विद्यालयी पाठ्यचर्या में विद्यार्थियों द्वारा शिक्षकों की देखरेख में कक्षा तथा कक्षा के बाहर किये जाने वाले क्रियाकलापों चाहे वे वैयक्तिक हो या सामूहिक हो, का सुनियोजित संगठन किया जाना चाहिए जिससे कि विद्यालयी स्तर पर गणित शिक्षण तथा अधिगम के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके।

13.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. गणित की पाठ्यचर्या की आवश्यकता को स्पष्ट कर सकेंगे।
2. गणित की पाठ्यचर्या के मुख्य उद्देश्यों को दर्शा सकेंगे।

3. गणित की पाठ्यचर्या निर्माण के सिद्धान्तों का वर्णन कर सकेंगे।
4. गणित की पाठ्यचर्या के लिए पाठ्यवस्तु के चयन के आधारों को समझ सकेंगे।
5. गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन के विभिन्न उपागमों को स्पष्ट कर सकेंगे।
6. गणित की पाठ्यचर्या की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।
7. गणित की पाठ्यचर्या का आलोचनात्मक मूल्यांकन कर सकेंगे।
8. गणित की पाठ्यक्रम में सुधार हेतु सुझावों से अवगत हो सकेंगे।

13.3 गणित की पाठ्यचर्या की आवश्यकता

प्रत्येक विषय के शिक्षण के अपने उद्देश्य होते हैं जो अन्ततोगत्वा शिक्षा के अन्तिम उद्देश्य को प्राप्त करने में सहायक होते हैं और उन्हीं उद्देश्यों के अनुसार ही उस विषय की पाठ्यचर्या का निर्धारण किया जाता है। गणित की पाठ्यचर्या के लिए भी जब हम इस बात पर विचार करते हैं तो हमें निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने होते हैं–

- गणित शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु कौन–कौन से अधिगम अनुभव विद्यार्थियों को प्रदान किये जाये?
- गणित शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कौन–सी विषय वस्तु विद्यार्थियों को पढ़ायी जायें?
- हमारे नवीन, वैज्ञानिक एवं तकनीकी रूप से उभरते समाज में जीवन यापन के लिए कौन–कौन सी गणितीय कौशलों को विद्यार्थियों में विकसित किया जाय?
- कक्षा–कक्ष में निर्धारित विषय वस्तु तथा अधिगम अनुभवों को स्थानान्तरित करने हेतु किन प्रकार के संसाधनों की आवश्यकता होगी?
- दैनिक जीवन के लिए उपयोगी कौन से गणितीय ज्ञान प्रदान किये जाए?
- गणित का कौन–कौन सा ज्ञान गणित के उच्च अध्ययन तथा अन्य विषयों के अध्ययन के लिए आवश्यक होगा?
- किसी व्यवसाय को पाने के लिए किस प्रकार के गणित के ज्ञान को प्रदान किया जाना चाहिए?
- गणित के शिक्षण तथा मूल्यांकन की विधियाँ क्या होगी?

इस प्रकार हम देखते हैं कि गणित की पाठ्यचर्या सम्पूर्ण गणित की शिक्षा को आधार प्रदान करता है। गणित की पाठ्यचर्या को केन्द्र में रखकर ही गणित के अधिगम से सम्बन्धित शिक्षण अधिगम क्रियाओं का आयोजन होता है। गणित का पाठ्यचर्या शिक्षकों को गणितीय अधिगम के क्रिया–कलापों, शिक्षण विधियों, अधिगम संसाधनों तथा मूल्यांकन तकनीकों के चयन हेतु आवश्यक सूझ प्रदान करता है। गणित का पाठ्यचर्या विद्यार्थियों को उनके वैयक्तिक एवं सामाजिक विकास हेतु आवश्यक कौशलों के प्रशिक्षण को प्राप्त करने के लिए सहायक होता है। अतः विद्यालयी स्तर की गणित की पाठ्यचर्या निम्नांकित तीन बातों को समाहित करती है–

- सुनियोजित शिक्षण अधिगम की क्रियाएँ
- अध्यापक निर्देशन के तत्त्व

- लक्ष्य आधारित विषय वस्तु

13.4 गणित को पाठ्यचर्या के मुख्य उद्देश्य

विद्यालयी स्तर पर गणित का पाठ्यक्रम गणित शिक्षण के जिन उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक होते हैं। ये निम्नांकित हो सकते हैं–

- मौलिक गणितीय कौशल में प्रवीणता लाना।
- मूलभूत गणितीय प्रत्ययों की समझ/बोध विकसित करना।
- वांछित अभिवृत्ति का विकास करना।
- गणितीय ज्ञान के अनुप्रयोग की दक्षता विकसित करना।
- स्वतंत्र तथा बौद्धिक निर्वचन करने का आत्म विश्वास विकसित करना।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. विद्यालयी स्तर पर गणित की पाठ्यचर्या की क्या आवश्यकता है?

   .....

   .....

2. गणित पाठ्यचर्या के प्रमुख उद्देश्य क्या हैं?

   .....

   .....

13.5 गणित की पाठ्यचर्या का विकास

यद्यपि की पाठ्यचर्या की आवश्यकता, उद्देश्य तथा परिभाषाएँ बदलते सामाजिक परिवेश तथा समाज की आवश्यकता के अनुसार बदलते रहे हैं परन्तु पाठ्यचर्या के विकास की मौलिक प्रक्रिया में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। पाठ्यचर्या विकास की प्रक्रिया चक्रीय होती है, जिसके अन्तर्गत, (1) शैक्षिक लक्ष्यों का विश्लेषण (2) इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए शैक्षिक अनुभवों का निर्धारण अथवा अभिकल्पन (3) प्रभावपूर्ण ढंग से शैक्षिक अनुभवों का संगठन तथा क्रियान्वयन (4) इस बात का मूल्यांकन कि शैक्षिक अनुभवों ने शैक्षिक लक्ष्यों को प्राप्त किया या नहीं। यह मूलभूत चक्रीय प्रक्रिया जिसमें विश्लेषण, अभिकल्पन, क्रियान्वयन तथा मूल्यांकन शामिल होते है ये पाठ्यचर्या के उन्नयन की प्रक्रिया तथा नियोजन को दिशा प्रदर्शित करते हैं। पाठ्यचर्या के नियोजन के दौरान तीन बातों का निर्धारण महत्त्वपूर्ण होता है– (1) विषयवस्तु का निर्धारण, (2) कक्षा–कक्ष में दिया जाने वाला अनुभव अथवा शिक्षण की शैली (3) मूल्यांकन अथवा आकलन की तकनीकें। पाठ्यचर्या नियोजन को दो प्रमुख अवस्थाएँ हो सकती हैं–

i. पाठ्यचर्या निर्माण

ii. पाठ्यचर्या संगठन

13.5.1 गणित की पाठ्यचर्या निर्माण के सिद्धान्त

पाठ्यचर्या नियोजन के कुछ मौलिक सिद्धान्त है जिन्हें विद्यालयी स्तर पर गणित की पाठ्यचर्या के निर्माण हेतु आधार बनाया जाना चाहिए–

- गणित की पाठ्यचर्या बच्चों की वर्तमान आवश्यकताओं तथा उनकी क्षमताओं पर आधारित होनी चाहिए अर्थात् पाठ्यचर्या बच्चों की शारीरिक, बौद्धिक, सांवेगिक तथा सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होनी चाहिए।
- गणित की पाठ्यचर्या अनुभवों को पूर्णरूप से प्रदान करने वाली होनी चाहिए तथा वो वर्तमान एवं भावी जीवन की परिवर्तनशील आवश्यकताओं के अनुरूप होनी चाहिए।
- गणित की पाठ्यचर्या स्थिर न होकर गतिशील एवं लचीली होनी चाहिए अर्थात् पाठ्यचर्या में गणित, विज्ञान तथा सूचना प्रौद्योगिकी के अद्यतन बातों को सम्मिलित करते रहना चाहिए।
- गणित की पाठ्यचर्या में शामिल समस्याएँ वास्तविक होनी चाहिए तथा बालकों के दैनिक जीवन की समस्याओं के समाधान में सहायक होनी चाहिए।
- पाठ्यचर्या में बालकों को स्वावलम्बी बनाने हेतु जीविकोपार्जन के उचित अवसर के पक्ष को शामिल किया जाना चाहिए तथा इसके लिए ''सामाजिक रूप से उपयोगी तथा उत्पादक कार्य जैसे क्रियाकलापों को शामिल किया जाना चाहिए। गणित की विद्यालयी पाठ्यचर्या विद्यार्थियों को उचित व्यवसायिक जीवन हेतु भी तैयार करने वाली होनी चाहिए।
- गणित की पाठ्यचर्या वास्तविक तथा तार्किक होनी चाहिए जिससे कि बालकों में स्वतंत्र एवं मौलिक चिन्तन विकसित हो सके।
- विद्यालयी गणित की पाठ्यचर्या में ऐसी विषयवस्तु अथवा सूचनाएँ या अनुभव शामिल किये जाने चाहिए जिसे विद्यार्थी आत्मसात् कर सकें तथा अपने वास्तविक जीवन की परिस्थितियों में उतार सकें।
- गणित की पाठ्यचर्या हमारे सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण, संचारण तथा उन्नयन करने वाली होनी चाहिए।
- गणित की पाठ्यचर्या में विभिन्नकरण का पुट होना चाहिए जिसमें कि वो विभिन्न समुदायों, क्षेत्रों, सामाजार्थिक स्तरों के विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को पूरा कर सके।
- गणित की पाठ्यचर्या का अन्य विषयों के साथ तालमेल होना चाहिए जिससे कि गणित का अधिगम अन्य विषयों के अधिगम में पूर्ण रूप से सहायक हो सके।
- गणित की पाठ्यचर्या में अभिवृत्ति निर्माण की अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए न कि ज्ञान प्राप्ति की।

13.5.2 गणित की पाठ्यचर्या के लिए पाठ्यवस्तु के चयन का आधार

गणित की पाठ्यचर्या हेतु पाठ्यवस्तु का चयन करना पाठ्यचर्या विकास का महत्त्वपूर्ण कार्य है क्योंकि विद्यार्थियों को दिये जाने वाले शैक्षिक अनुभवों को पाठ्यवस्तु के माध्यम से ही प्रदान करना होता है। गणित की पाठ्यचर्या हेतु पाठ्यवस्तु के चयन हेतु निम्नांकित आधार हो सकते हैं–

सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य– गणित की पाठ्यचर्या में कुछ ऐसे विचार शामिल किये जाने चाहिए जो विद्यार्थियों को

उनके परिवेश व संस्कृति को समझने तथा उसे महसूस करने में सक्षम बनाए जैसे कि–

- उपकरण की सहायता से परोक्ष मापन
- लेखाचित्र का अर्थ और समीकरण
- क्यों तथा कैसे, सूत्र और समीकरण का विकास हुआ
- मौलिक संक्रियाएँ क्या हैं।

तकनीकी तथा औद्योगिक सभ्यता में सहभागिता– गणित की पाठ्यचर्या में ऐसे गणितीय कौशलों को भी शामिल किया जाना चाहिए जो व्यक्ति को तकनीकी तथा औद्योगिक सभ्यता वाले समाज में सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु सक्षम बनाता हो।

सार्थकता तथा उपयोगिता आधारित मूल्य– गणित की पाठ्यचर्या के निर्धारण के दौरान प्रकरण चयन हेतु उसकी सार्थकता तथा उपयोगिता सार्वधिक महत्त्वपूर्ण आधार होते हैं। गणित के पाठ्यचर्या की विषयवस्तु का चयन–

- प्रकृति के नियमों की समझ में सहायक होना चाहिए।
- विद्यार्थियों के भविष्य की आवश्यकता को पूरा करने के लिए गणितीय प्रक्रियाओं के वास्तविक निष्पादन का पर्याप्त कौशल विकसित करने वाला होना चाहिए।
- गणितीय विचार को प्रदर्शित करने की योग्यता विकसित करने वाला होना चाहिए
- सामाजिक प्राणी तथा नवीन मानवीय जीवन की क्रियाओं के मध्य गणितीय सम्बन्धों की स्थापना करने वाला होना चाहिए।

13.5.3 गणित के पाठ्यचर्या का संगठन अथवा आयोजन

यह तय करने के बाद कि गणित के पाठ्यचर्या में किस प्रकार की अध्ययन सामग्री और प्रकरणों को शामिल किया जाय अगली अवस्था में चयनित अध्ययन सामग्री और प्रकरणों के संगठन अथवा आयोजन करना होता है। अध्ययन सामग्री तथा प्रकरणों का आयोजन हेतु विद्यार्थियों की गणितीय अवधारणाओं तथा प्रत्ययों को किसी निश्चित आयु स्तर पर समझने तथा ग्रहण करने की योग्यता को आधार बनाया जाना चाहिए तथा मुख्य ध्यान बालक तथा उसकी योग्यता पर दिया जाना चाहिए ना कि उसके समक्ष प्रस्तुत की जाने वाली सूचना की मात्रा पर। पाठ्चर्या का आयोजन मूर्त से अमूर्त की तथा विशिष्ट से सामान्य की ओर होना चाहिए। गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन के दौरान निम्नांकित सिद्धान्तों को ध्यान में रखा जा सकता है।

सहसम्बन्ध का सिद्धान्त– गणित की पाठ्यचर्या का आयोजन करते समय समवाय के सिद्धान्तों का अनुसरण किया जाना चाहिए। गणित की पाठ्यचर्या का आयोजन करते समय निम्नांकित चार प्रकार के सहसम्बन्धों को ध्यान में रखा जा सकता है–

- जीवन के साथ सहसम्बन्ध।
- अन्य विद्यालयीय विषयों के साथ सहसम्बन्ध।
- गणित के विभिन्न शाखाओं के मध्य सहसम्बन्ध।
- गणित की किसी एक शाखा के विभिन्न प्रकरणों के बीच सहसम्बन्ध।

तार्किक एवं मनोवैज्ञानिक क्रम का सिद्धान्त– मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त में विषय को कोई महत्त्व नहीं दिया जाता है। विद्यार्थी के लिए विषय की उपयोगिता तथा उसके मानसिक विकास एवं रुचियों को ही पाठ्यचर्या आयोजन का आधार माना जाता है, अर्थात् जिस स्तर पर बालक जिस वस्तु को पढ़ने की आवश्यकता महसूस

करता है, वह उसे उसी समय पढ़ाई जाती है। इसके विपरीत तार्किक क्रम के सिद्धान्त में विषय को ही केन्द्र मानकर पाठ्यचर्या का आयोजन किया जाता है। यहाँ सुव्यवस्थित एवं क्रमबद्ध ज्ञान पर विशेष बल दिया जाता है। अतः गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन के समय मनोवैज्ञानिक एवं तार्किक दोनों प्रकार के सिद्धान्तों के मध्य समन्वय बनाकर एक समाकलित उपागम को अपनाया जाना चाहिए।

क्रियाशीलता का सिद्धान्त– बालक स्वभाव से ही क्रियाशील होते हैं। छोटी कक्षाओं में तो बालक खेलकूद करने तथा क्रियात्मक कार्य करने में अधिक रुचि लेते हैं, अतः गणित के अधिगम को अर्थपूर्ण बनाने के लिए 'कर के सीखना' को आधार बनाया जा सकता है। गणित की पाठ्यचर्या का आयोजन करते समय अधिगम को प्रभावशाली बनाने के लिए किये जाने वाले क्रिया–कलापों को ध्यान में रखा जाना चाहिए। उन क्रियाओं की पहचान गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन के दौरान अलग से की जानी चाहिए, जो अमूर्त गणितीय प्रत्ययों को मूर्त वस्तुओं से सम्बन्धित कर सकती हों, जिससे कि विद्यार्थियों में उत्साह एवं रूचि को बढ़ाया जा सकें। गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन के समय निम्नलिखित प्रकार के क्रिया–कलाप शामिल किए जा सकते हैं।

- सामाजिक, नागरिकता एवं सामुदायिकता के क्रियाकलाप।
- राष्ट्रीयता से सम्बन्धित क्रियाकलाप।
- मनोरंजनात्मक क्रियाकलाप।
- वैयक्तिक क्रियाकलाप।

लम्बवत् समवाय का सिद्धान्त– किसी कक्षा विशेष की पाठ्यवस्तु का संगठन पिछली कक्षा में उससे सम्बन्धित शामिल किए गये पाठ्यवस्तु पर आधारित होना चाहिए। इस तरह की पाठ्यचर्या के आयोजन को उर्ध्वाधर लम्बवत् समवाय के सिद्धान्त पर आधारित पाठ्यचर्या कहा जा सता है। किसी भी कक्षा के लिए गणित के विषयवस्तु का क्रम लम्बवत् सहसम्बन्ध को आधार बनाकर सरल से लटिल की ओर होना चाहिए तथा पाठ्यचर्या में विषयवस्तु कठिनाई स्तर के बढ़ते क्रम में होना चाहिए, तथा विषयवस्तु के कठिनाई स्तर का निर्धारण विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से होना चाहिये जो उनके मानसिक विकास तथा क्षमताओं पर आधारित हो।

वैयक्तिक भिन्नता का सिद्धान्त– गणित की पाठ्यचर्या का आयोजन करते समय विद्यार्थियों की वैयक्तिक भिन्नता को भी ध्यान में रखा जाना चाहिये अर्थात् पाठ्यचर्या में विषयवस्तु को शामिल करते समय विभिन्न वर्ग के विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जा सकता है। किसी कक्षा विशेष के लिए कुछ ऐसी विषयवस्तु को शामिल किया जा सकता है जो गणितीय रूप से प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के लिए चुनौतीपूर्ण हो, साथ ही साथ ऐसे प्रकरण को भी शामिल किया जाना चाहिए जो सामान्य एवं धीमी गति से सीखने वाले गणित के विद्यार्थियों के लिए भी उपयुक्त हो। इसी प्रकार ग्रामीण तथा शहरी और विभिन्न समुदायों के विद्यार्थियों को ध्यान में रखकर गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन के दौरान विषयवस्तु का संगठन किया जा सकता है।

13.5.4 गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन के उपागम

गणित पाठ्यचर्या के आयोजन के अनेक उपागम हो सकते हैं इनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण उपागम निम्नांकित हैं।

- प्रकरण उपागम
- सर्पिलाकार उपागम
- इकाई उपागम
- समाकलित उपागम

प्रकरण उपागम– प्रकरण उपागम में पाठ्यचर्या में शामिल करने योग्य सभी विषय सामग्री को प्रकरणों में वर्गीकृत कर दिया जाता है, तथा फिर इन प्रकरणों को भिन्न–भिन्न कक्षा–वर्गों के लिए निश्चित कर दिया जाता है। इस उपागम के तहत किसी एक प्रकरण से सम्बन्धित सरल तथा कठिन सभी अंशों को किसी एक कक्षा वर्ग में पूरी तरह से पढ़ा दिया जाता है, और समाप्त भी कर दिया जाता है। इस तरह से उस प्रकरण को

किसी अन्य कक्षा–वर्ग में नहीं पढ़ाया जाता। उदाहरण के लिए यदि कक्षा दो में जोड़ने और घटाने के प्रकरण को शामिल करना हो तो सभी प्रकार के जोड़ने एवं घटाने के कार्य जैसे कि अंक, रुपया–पैसा, मीटर–किलोमीटर, ग्राम–किलोग्राम, लीटर–मिलीलीटर इत्यादि कक्षा दो में ही पूर तरह से पढ़ाये जायेंगे, तथा इस प्रकार के जोड़ने और घटाने के कार्य किसी अन्य कक्षा–वर्ग के पाठ्यवस्तु में शामिल नहीं किए जायेंगे। इस उपागम की निम्नांकित कमियाँ हो सकती हैं–

- यह उपागम मनोवैज्ञानिक रूप से उचित नहीं होता है, क्योंकि इसमें विद्यार्थियों को किसी निश्चित कक्षा वर्ग में बहत सी ऐसी बातों को सीखना पड़ता है, जिनकी तात्कालिक रूप से न तो उनको आवश्यकता होती है, और ना ही वो प्रासंगिक होते हैं। उदाहरण के लिए यदि समुच्चय सिद्धान्त को आठवीं कक्षा वर्ग में प्रारम्भ किया जाता है तो समुच्चय सिद्धान्त के सम्पूर्ण इकाई को इसी कक्षा वर्ग में पढ़ाया जायेगा, तथा ऐसे में विद्यार्थियों में विकसित सीखनें की योग्यता पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है।
- इस उपागम में विद्यार्थियों के मानसिक विकास को ध्यान में नहीं रखा जाता है।
- इस उपागम के तहत एक बार पढ़ाये गये प्रकरण को बाद की कक्षाओं में नहीं पढ़ाया जाता जिसके कारण प्रकरण के भूलने की सम्भावना बनी रहती है।
- इस उपागम के तहत पढ़ाये गये प्रकरणों का गणित की अन्य शाखाओं के साथ सहसम्बन्ध विकसित कर पाना कठिन हो जाता है।
- किसी निश्चित आयु–वर्ग/कक्षा–वर्ग के लिए किसी प्रकरण की कुछ इकाईयाँ विद्यार्थियों के लिए जटिल एवं कठिन हो सकती है।
- किसी एक ही प्रकरण को लम्बे समय तक पढ़ाये जाने से अधिगम नीरस, अरुचिकर तथा थकाऊ हो सकता है।

किसी प्रकरण के सम्पूर्ण भाग को किसी एक ही कक्षा–वर्ग में पूरी तरह से पढ़ाया जाना उचित नहीं होता है, बजाय इसके, प्रकरण को वर्गीकृत करके उसको कठिनाई स्तर के बढ़ते क्रम में क्रमबद्ध किया जाना चाहिए तथा विद्यार्थियों के अधिगम की आवश्यकताओं, बौद्धिक विकास तथा समझ की क्षमता के अनुसार अलग–अलग कक्षा वर्ग में पढ़ाया जाना चाहिए।

सर्पीलाकार उपागम– प्रकरण उपागम के विपरीत सर्पीलाकार उपागम में सम्पूर्ण प्रकरण को छोटी, स्वतंत्र एवं अर्थपूर्ण इकाइयों में उनके कठिनाई स्तर तथा विद्यार्थियों की मानसिक क्षमता के अनुरूप वर्गीकृत कर दिया जाता है। इसका मूलभूत सिद्धान्त यह है कि किसी एक अवस्था पर किसी प्रकरण को सम्पूर्णरूप से समाप्त नहीं किया जा सकता है। प्रारम्भ में प्रकरण से सम्बन्धित मौलिक प्रत्ययों को शुरूआती कक्षा–वर्ग में शामिल किया जाता है तथा बाद की कठिन इकाईयों को क्रमशः बड़े कक्षावर्गों में विद्यार्थियों के ज्ञान को ग्रहण करने की क्षमता के अनुरूप शामिल करते जाते हैं। उदाहरण के लिए समुच्चय सिद्धान्त को विभिन्न उपइकाइयों में बाँटकर उनके बढ़ते कठिनाई स्तर के अनुरूप क्रमबद्ध किया जा सकता है। समुच्चय सिद्धान्त के प्रारम्भिक प्रत्ययों जैसे कि समुच्चय की परिभाषा तथा समुच्चय की संक्रियाएँ को 'आठवें' कक्षा–वर्ग में शामिल किया जा सकता है तथा समुच्चय संक्रियाओं के जटिल गुणों जैसे कि विवरण नियम, साहचर्य नियम तथा संवरक नियम इत्यादि को कक्षा–वर्ग 'नौ' में और समुच्चय सिद्धान्त से सम्बन्धित इससे भी अधिक जटिल प्रत्ययों को दसवें कक्षावर्ग एवं आगे की कक्षाओं में क्रमशः विद्यार्थियों के मानसिक एवं बौद्धिक क्षमता के अनुरूप शामिल किया जा सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सर्पीलाकार उपागम में सम्पूर्ण इकाई को धीरे–धीरे क्रमबद्ध ढंग से उनके बढ़ते कठिनाई स्तर के अनुरूप विभिन्न कक्षा–वर्गों में शामिल किया जाता है। पाठ्यक्रम के सर्पीलाकार आयोजन के निम्नांकित लाभ हो सकते हैं–

- यह विद्यार्थियों के मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को पूरा करता है।

- इस उपागम में विषयवस्तु को उनके बढ़ते कठिनाई स्तर के क्रम में विद्यार्थियों की योग्यता एवं क्षमताओं के अनुरूप शामिल किया जाता है।
- यह उपागम पुनरावृत्ति के अवसर प्रदान करता है।
- यह उपागम विद्यार्थियों में सीखने की पर्याप्त प्रेरणा उत्पन्न करता है।
- इस उपागम में प्रकरण का गणित के अन्य शाखाओं तथा अन्य विषयों के साथ सम्बन्ध के अवसर उपलब्ध होते हैं।

इकाई उपागम– विद्यार्थी वर्तमान समय में गणित को इसकी विभिन्न शाखाओं तथा प्रकरणों के माध्यम से एक–दूसरे से अलग करके स्वतंत्र रूप में सीखाया जाता है लेकिन पिछले कुछ दशक से गणित के शिक्षकों ने कुछ ऐसे मूलभूत सिद्धान्तों को खोजने का प्रयास किया है जिसे गणित की पाठ्यचर्या के 'केन्द्रीय भाग' (कोर) के रूप में विकसित किया जा सके। उदाहरण के लिए अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित तथा गणित की सभी शाखाओं का मूलभूत कोर विषय 'फलन' होता है, यदि गणित के इन मूलभूत सिद्धान्तों को पाठ्यचर्या आयोजन का आधार बनाया जाय तो गणित की पाठ्यचर्या बहुत सुधार लाया जा सकता है। जैसे कि यदि विद्यार्थियों में फलन $y = a \times b$ की सम्पूर्ण समझ विकसित करना हो तो किसी कक्षा वर्ग के बीजगणित पाठ्यक्रम में फलन $y = ax+b$ प्रकरण को पढ़ाया जायेगा तथा अन्य प्रकरण के प्रत्यय को भी फलन $y = ax+b$ के माध्यम से ही विकसित किया जायेगा क्योंकि फलन $y = ax+b$ की पूरी समझ तथा अवाप्ति बहुत से अनुभवों तथा अभ्यास पर निर्भर है। गणित की पाठ्यचर्या का इस प्रकार का आयोजन विद्यार्थियों को गणित के विभिन्न तथ्यों, प्रक्रियाओं तथा सिद्धान्तों के मध्य सम्बन्धों के देखने व समझने के योग्य बनाता है।

किसी इकाई के आयोजन में, समय तथा इकाई के आकार को शामिल नहीं किया जाना चाहिए फिर भी हाईस्कूल स्तर के विद्यार्थियों के लिए एक इकाई को पूरी तरह समझने तथा ग्रहण करने में एक महीने तक का समय लग सकता है। चार से पाँच सप्ताह में अध्ययन की जाने वाली इकाई को, आकार के दृष्टि से उपयुक्त माना जा सकता है। यदि किसी एक इकाई का शिक्षण नियत समय में ना हो पाये तो इसे दो छोटी उप–इकाइयों में विभाजित किया जा सकता है अथवा उसे सरल करके अगली इकाई में समायोजित किया जा सकता है।

इकाई उपागम द्वारा पाठ्यचर्या आयोजन के सोपान– इकाई उपागम द्वारा पाठ्यचर्या आयोजन के महत्त्वपूर्ण सोपान निम्नलिखित हैं–

- **उद्देश्य निर्धारण**– किसी भी इकाई के आयोजन में लक्ष्य अथवा उद्देश्य का निर्धारण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होता है। उद्देश्य व्यवहारिक रूप से मापनीय तथा अवलोकन हो सकने योग्य होने चाहिए। उद्देश्य सुस्पष्ट, विशिष्ट तथा अन्तिम अधिगम व्यवहार को इंगित करने वाले होने चाहिए।
- **इकाई का पूर्व अवलोकन**– किसी इकाई की पाठ्यचर्या का आयोजन करते समय उस इकाई का पूर्वावलोकन दूसरा महत्त्वपूर्ण सोपान होता है। पूर्वावलोकन का उद्देश्य विद्यार्थियों को इकाई के अध्ययन से पूर्व सम्पूर्ण इकाई की जानकारी देना होता है जिससे कि वो इकाई में शामिल विभिन्न तथ्यों तथा सिद्धान्तों के मध्य सम्बन्धों पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकें।
- **इकाई की रूपरेखा का अध्ययन**– पाठ्यचर्या आयोजन के समय किसी इकाई की रूपरेखा प्रस्तुत करने का उद्देश्य विद्यार्थियों को इकाई के अध्ययन के पूर्व यह अवगत करना होता है कि क्या पढ़ना है? तथा इसे सर्वाधिक प्रभावशाली ढंग से कैसे पढ़ा जा सकता हैं?

पाठ्यचर्या के इकाई आयोजन के लाभ–

- इसके अन्तर्गत तथ्यों, सिद्धान्तों तथा प्रक्रियाओं को एक दूसरे के साथ नजदीकी रूप से सम्बन्धित

करके संगठित किया जाता है तथा इनका इस प्रकार का आयोजन पाठ्यवस्तु के महत्त्वपूर्ण पक्ष की समझ उत्पन्न करता है।

- इसके अन्तर्गत सिद्धान्तों तथा प्रक्रियाओं की रूपरेखा को सामूहिक रूप से तथा एक ऐसे निश्चित तरीके से विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है कि वे विस्तृत अध्ययन से पूर्व ही प्रत्यय को ग्रहण कर सकें।
- इस उपागम के अन्तर्गत अध्ययन के अधिगम परिणामों को इतना सुनिश्चित कर लेते हैं कि वे शिक्षक ही नहीं बल्कि विद्यार्थियों को भी पूर्ण स्पष्ट होते हैं।

पाठ्यचर्या का इकाई आयोजन शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया को बौद्धिक एवं उद्देश्यपूर्ण बनाता है, चूँकि इस प्रकार की पाठ्यचर्या के आयोजन में अनुदेशनात्मक सामग्री एक–दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होती हैं अतः वो आसानी से विद्यार्थियों द्वारा ग्रहण कर ली जाती हैं, परिणामस्वरूप समय, श्रम और प्रयासों में कमी आती है।

समाकलित उपागम– शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति तथा अन्य विषयों के अध्ययन में ज्ञान का स्थानान्तरण है जिससे कि दैनिक जीवन में आने वाली समस्याओं का सफलतापूर्वक समाधान किया जा सके। पाठ्यचर्या में शामिल प्रत्येक विषय इन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति अलग–अलग माध्यमों तथा साधनों से करते हैं यद्यपि कि इन अलग–अलग विषयों के अलग–अलग अध्ययन तथा इन्हें आपस में सम्बन्धित न करके एवं वास्तविक जीवन की समस्याओं से अलग रखते हुए प्राप्त किया गया ज्ञान एवं कौशल अर्थहीन होता है।

प्रत्येक विषय का अध्ययन ज्ञान की पूर्णता को प्रस्तुत करने वाला होना चाहिए जिससे कि किसी भी विषय के शिक्षण के दौरान शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत किये जाने वाले दृष्टान्त और उदाहरण, ज्ञान को एक इकाई के रूप में ग्रहण करने में सहायक हों तथा गणित, भौतिक विज्ञान, जीव विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, भाषा, कला तथा अन्य विषयों के माध्यम से प्राप्त ज्ञान उसकी पूर्णता को निर्मित कर सके। इस प्रकार कई विषयों के शिक्षण–अधिगम द्वारा ज्ञान को एक इकाई के रूप में प्रस्तुत करना पाठ्यचर्या का समाकलित उपागम कहलाता है।

पाठ्यचर्या के समाकलित उपागम के लाभ–

- समाकलन विद्यार्थियों को ज्ञान को पूर्ण इकाई के रूप में देखने एवं प्राप्त करने में सहायक होता है।
- समाकलन अधिगम को अधिक प्रभावशाली बनाता है क्योंकि इसके द्वारा एक ही प्रकरण को भिन्न–भिन्न परिस्थितियों तथा भिन्न–भिन्न दृष्टिकोणों से देखा और समझा जाता है।
- समाकलन विद्यार्थियों के मानसिक स्तर को वृहद करने में सहायक होता है।
- समाकलन द्वारा विद्यार्थियों को अन्य विषयों की सार्थकता एवं सुन्दरता को समझने में सहायता मिलती है और यह उनमें विस्तृत दृष्टिकोण विकसित करने में सहायक होता है।
- समाकलन द्वारा विद्यार्थी सहजता एवं सुगमता के साथ अधिगम को स्थानान्तरित कर पाता है।
- समाकलन उपागम प्रयास एवं समय की दृष्टि से मितव्ययी हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. माध्यमिक विद्यालय की गणित की पाठ्यचर्या निर्माण के दौरान आप किन सिद्धान्तों का पालन करेंगे?

.....

.....

4. गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन के दौरान वैयक्तिक भिन्नता को क्यों ध्यान में रखा जाना चाहिए?

.....

.....

5. गणित पाठ्यचर्या के प्रकरण आयोजन की प्रमुख कमियाँ क्या है?

.....

.....

6. इकाई उपागम द्वारा गणित की पाठ्यचर्या आयोजन के प्रमुख सोपान क्या है?

.....

.....

13.6 विद्यालयी स्तर क गणित की पाठ्यचर्या की विशेषताएँ

विद्यालयी स्तर की नवीन गणितीय पाठ्यचर्या में निम्नांकित अपेक्षित विशेषताएँ होने चाहिए–

- गणित पाठ्यचर्या में शामिल विषयवस्तु विद्यार्थियों को उच्च कक्षाओं में गणित विषय के अध्ययन के लिए तैयार करने वाली होनी चाहिए।
- गणित पाठ्यचर्या में विद्यार्थियों के लिए उपयोगी नवीन प्रत्ययों तथा विभिन्न दृष्टिकोणों को स्थान दिया जाना चाहिए।
- विद्यार्थियों की वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए गणित की पाठ्यचर्या में समय–समय पर बदलाव होते रहना चाहिए।
- गणित की पाठ्यचर्या द्वारा भावी परिवर्तन तथा विकास की समझ उत्पन्न होनी चाहिए।
- गणित की पाठ्यचर्या द्वारा विद्यार्थियों को गणितीय संरचनाओं, आव्यूह तथा ज्यामिति के गैर आव्यूह सम्बन्धों के अनुप्रयोग का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।
- गणित की पाठ्यचर्या में बीजगणित की संरचना पर अधिक बल प्रदान कर विद्यार्थियों में गणित की स्पष्ट समझ विकसित करनी चाहिये।
- गणित की पाठ्यचर्या में शामिल विषयवस्तु विद्यार्थियों में अमूर्त प्रत्ययों की प्रशंसा, परिभाषाओं की भूमिका, प्रयोग तथा निष्पत्ति इत्यादि से परिपूर्ण अधिगम अनुभवों को विकसित करने वाली होनी चाहिए।
- गणित की पाठ्यचर्या विद्यार्थियों को संख्याओं के व्यवहार का अन्वेषण तथा नयी परिस्थितियों की व्याख्या के लिए नवीन संख्याओं की खोज का अनुभव प्रदान करने वाली होनी चाहिए।
- गणित की पाठ्यचर्या तथा विद्यार्थियों के घर–परिवार एवं विद्यालय के बाहर के सांस्कृतिक अनुभवों के मध्य समरसता होनी चाहिए।

13.7 विद्यालयी स्तर क गणित की पाठ्यचर्या में सुधार

किसी भी राष्ट्र अथवा समाज की प्रगति एवं विकास में शिक्षा का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान होता है तथा औपचारिक शिक्षा प्रदान करने के लिए शिक्षा की पाठ्यचर्या का होना आवश्यक हो जाता है। गणित जैसे

महत्त्वपूर्ण विषय के सन्दर्भ में पाठ्यचर्या का महत्त्व और भी है। विद्यालयी स्तर की गणित की पाठ्यचर्या में अनेक गुणों एवं विशेषताओं के साथ–साथ कमियाँ भी है। यदि इन कमियों में सुधार कर लिया जाय तो गणित की उपयोगिता निश्चित ही बढ़ जायेगी। माध्यमिक स्तर पर गणित की पाठ्यचर्या का आलोचनात्मक मूल्यांकन करने पर हमें ज्ञात होता है कि गणित की प्रचलित पाठ्यचर्या में निम्नांकित दोष हैं–

- गणित शिक्षण के उद्देश्यों तथा सीखने के अनुभवों का विस्तृत वर्णन नहीं किया गया है।
- पाठ्यचर्या निर्माण की प्रक्रिया प्रयोगवादी नहीं है और यह विषय केन्द्रित है।
- पाठ्यचर्या में शामिल नियम, सिद्धान्त तथा समस्याओं का दैनिक जीवन से सम्बन्ध दिखायी नहीं पड़ता है।
- गणित की विभिन्न उप–शाखाओं के आपसी सम्बन्ध को अस्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है।
- लचीलेपन का आभाव है तथा यह परीक्षा केन्द्रित है।
- अंकगणित पर अधिक बल दिया गया है।
- लघुतम समापवर्त्य, महत्तम समापर्वतक, वर्गमूल, गुणनखण्ड, सर्वसम्मिका इत्यादि पर अधिक बल दिया गया है।
- त्रिकोणमिति को पृथक् विषय के रूप में पढ़ाया जाता है।
- ज्यामिति के अन्तर्गत प्रमेयों तथा उसकी उत्पत्ति को याद करने पर अधिक बल है।
- पाठ्यचर्या में सृजनात्मक विकास के कम अवसर उपलब्ध है।
- गणित की वर्तमान पाठ्यचर्या व्यवसायिक एवं तकनीकी प्रशिक्षण पर बल नहीं देती तथा उचित रोजगार के अवसर नहीं उपलब्ध करा पाती है।
- इसमें प्रायोगिक कार्य को कम महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है।
- गणित के स्वयं सिद्ध स्वरूप को पाठ्यचर्या में उचित स्थान नहीं प्राप्त है।

13.7.1 विद्यालयी स्तर की गणित की पाठ्यचर्या में सुधार हेतु कोठारी आयोग के सुझाव

कोठारी आयोग 1964–66 ने प्राथमिक तथा जूनियर हाईस्कूल की कक्षाओं के लिये अनिवार्य गणित के पाठ्यक्रम की सिफारिश की है तथा यह बताया है कि उच्च माध्यमिक कक्षाओं के पश्चात् अर्थात् कक्षा 10 के बाद गणित को ऐच्छिक विषय के रूप में शामिल किया जाना चाहिये। जिससे कि केवल वे विद्यार्थी जो आगे की कक्षाओं में गणित पढ़ना चाहते हैं अथवा गणित से सम्बन्धित व्यवसाय का चयन करना चाहते है, इसका अध्ययन कर सकें।

वर्तमान गणित की पाठ्यचर्या के सन्दर्भ में कोठारी आयोग का प्रतिवेदन कहता है कि प्रारम्भिक स्तर पर गणित को प्रायः अंकगणित, बीजगणित और रेखागणित में विभाजित करके पढ़ाया जाता है जिसके कारण संख्या पद्धति की मूलभूत क्रियाओं की व्यर्थ पुनरावृत्ति होती है, इसलिए यह आवश्यक है कि अंकगणित और बीजगणित सम्बन्धी विषयवस्तु को एक–दूसरे से सम्बन्धित कर पढ़ाया जाय, साथ ही साथ तर्कपूर्ण एवं क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने पर बल दिया जाय। इस स्तर की पाठ्यचर्या में संख्या प्रणाली के विकास, समीकरण, लेखाचित्र और उपयोगी समस्याओं का समावेश होना चाहिये। इसी प्रकार रेखागणित की पाठ्यवस्तु को भी पुनर्गठित करना आवश्यक है।

माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तर की गणित पाठ्यचर्या के सन्दर्भ में आयोग का मानना है कि गणित की सम्पूर्ण विषय वस्तु को परम्परागत ढंग से अंकगणित, बीजगणित, ज्यामिति, त्रिकोणमिति, सांख्यिकी, कलन एवं निर्देशांक ज्यामिति आदि भागों में विभाजित करके पढ़ाया जाता रहा है, इस दृष्टिकोण में परिवर्तन की

आवश्यकता है। अंकगणित सम्बन्धी समस्त ज्ञान एवं बीजगणित का आधारभूत ज्ञान प्रारम्भिक कक्षाओं में प्रदान किया जाना चाहिये। वर्तमान पाठ्यचर्या से कुछ अर्थहीन प्रकरणों जैसे कि गुणनखण्ड, सरलीकरण, लघुत्तम समापवर्त्य तथा महत्तम समापवर्तक इत्यादि को हटा देना चाहिये। त्रिकोणमिति को एक अलग विषय न मानकर बीजगणित से सम्बन्धित करके पढ़ाया जाना चाहिये। सर्वसमिकायें, त्रिभुजों के हल, ऊँचाई और दूरी इत्यादि प्रकरणों में से अनावश्यक सामग्री हटा देनी चाहिए। ज्यामिति के प्रमेयों और अभ्यासों को याद करने पर अधिक बल नहीं दिया जाना चाहिये। ज्यामिति के अध्ययन में अभिगृहीतिय उपागम के दृष्टिकोण को शामिल करने की महती आवश्यकता है। संख्या सम्बन्धी आधारभूत क्रियाओं तथा ज्यामिति सम्बन्धी आधारभूत तथ्यों का ज्ञान, समुच्चय की भाषा के माध्यम से प्रदान किये जाने की आवश्यकता है।

13.8 सारांश

विगत् कुछ वर्षों से पाठ्यचर्या को विद्यालयी निर्देशन में विद्यार्थियों को प्रदान किए जाने वाली सुनियोजित क्रिया–कलापों तथा अनुभवों का संगठन माना जाने लगा है। गणित की पाठ्यचर्या के लिए जब हम इस बात पर विचार करते हैं तो हमें पता चलता है कि पाठ्यचर्या की आवश्यकता के अन्तर्गत विद्यालयी स्तर पर सुनियोजित शिक्षण अधिगम की क्रियाएँ, अध्यापक निर्देशन के तत्त्व तथा लक्ष्य आधारित विषयवस्तु शामिल होती है। विद्यालयी स्तर पर गणित की पाठ्यचर्या के नियोजन की दो प्रमुख अवस्थाएँ– पाठ्यचर्या निर्माण तथा पाठ्यचर्या का आयोजन है। गणित की पाठ्यचर्या के निर्माण के दौरान कुछ सिद्धान्त जैसे कि आवश्यकता का सिद्धान्त, गतिशीलता का सिद्धान्त, अनुभवों की पूर्णता का सिद्धान्त, स्वावलम्बी तथा जीविकोपार्जन का सिद्धान्त, वास्तविकता एवं तार्किकता का सिद्धान्त, गतिशीलता एवं लचीलेपन का सिद्धान्त इत्यादि आधार का कार्य करते हैं। गणित की पाठ्यचर्या के लिए विषयवस्तु के चयन हेतु सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य, तकनीकी तथा औद्योगिक सभ्यता में सहभागिता एवं सार्थकता तथा उपयोगिता आधारित मूल्य भी आधार का कार्य करते हैं। गणित की पाठ्यचर्या का आयोजन करते समय ध्यान में रखे जाने वाले प्रमुख सिद्धान्तों में सहसम्बन्ध का सिद्धान्त, तार्किक एवं मनोवैज्ञानिक क्रम का सिद्धान्त, क्रियाशीलता का सिद्धान्त, लम्बवत् समवाय का सिद्धान्त तथा वैयक्तिक भिन्नता का सिद्धान्त प्रमुख है।

गणित की पाठ्यचर्या के आयोजन हेतु प्रमुख उपागमों में प्रकरण उपागम, सर्पिलाकार उपागम, इकाई उपागम तथा समाकलित उपागम को शामिल किया जा सकता है। वर्तमान समय में गणित की प्रचलित पाठ्यचर्या में अनेक गुणों व विशेषताओं के साथ–साथ बहुत सी त्रुटियाँ भी हैं, जैसे कि सीखने के अनुभवों का विस्तृत वर्णन नहीं किया गया है, पाठ्यचर्या निर्माण की प्रक्रिया प्रयोगवादी नहीं है तथा विषय एवं परीक्षा केन्द्रित है। पाठ्यचर्या में शामिल नियम, सिद्धान्त तथा समस्याएँ दिन–प्रतिदिन की क्रियाओं से सम्बन्धित नहीं है। गणित की वर्तमान पाठ्यचर्या व्यवसायिक प्रशिक्षण पर बल नहीं देती है तथा इसमें रोजगार के उचित अवसर नहीं है। गणित की पाठ्यचर्या में सुधार हेतु कोठारी आयोग द्वारा प्रतिवेदित सुझावों को लागू कर इसे वर्तमान संदर्भ में और अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है।

13.9 अभ्यास के प्रश्न

1. पाठ्यचर्या निर्माण के विभिन्न सिद्धान्त क्या है?
2. गणित पाठ्यचर्य के सर्पिलाकार आयोजन के क्या लाभ हैं?
3. गणित पाठ्यचर्या के आयोजन के समाकलित उपागम की क्या विशेषताएँ हैं?
4. गणित पाठ्यचर्या में सुधार हेतु कोठारी आयोग ने क्या सुझाव दिए हैं?

13.10 चर्चा के बिन्दु

1. गणित पाठ्यचर्या के आयोजन के प्रमुख उपागम क्या हैं? चर्चा कीजिए।
2. गणित की पाठ्यचर्या के लिए विषयवस्तु का चयन करते समय कौन–सी बातों को ध्यान में रखना चाहिए? चर्चा कीजिए।

13.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. विद्यालयी स्तर पर गणित की पाठ्यचर्या आवश्यक है क्योंकि यह– सुनियोजित शिक्षण अधिगम की क्रियाओं, अध्यापक निर्देशन के तत्त्व तथा लक्ष्य आधारित विषयवस्तु को स्पष्ट करती है।
2. गणित की पाठ्यचर्या के मुख्य उद्देश्य – मौलिक गणितीय कौशल में प्रवीणता, मूलभूत गणितीय प्रत्ययों की समझ, वांछित अभिवृत्ति का विकास, गणितीय ज्ञान के अनुप्रयोग की दक्षता एवं स्वतंत्र एवं बौद्धिक निर्वचन करने का आत्मविश्वास विकसित करना है।
3. माध्यमिक विद्यालय की गणित की पाठ्यचर्या निर्माण के दौरान पालन किए जाने वाले सिद्धान्तों में प्रमुखतः– आवश्यकता का सिद्धान्त, अनुभवों की पूर्णता का सिद्धान्त, गतिशीलता का सिद्धान्त, लचीलेपन का सिद्धान्त, दैनिक जीवन की क्रियाओं से सहसम्बन्ध का सिद्धान्त, स्वावलम्बी तथा जीविकोपार्जन का सिद्धान्त तथा वास्तविकता एवं तार्किकता का सिद्धान्त शामिल हैं।
4. गणित की पाठ्यचर्या का आयोजन करते समय वैयक्तिक भिन्नता के सिद्धान्त को इसलिए ध्यान में रखा जाना चाहिए क्योंकि किसी एक ही कक्षावर्ग में विभिन्न प्रकार की विशेषताओं जैसे कि गणितीय रूप से प्रतिभाशाली, सामान्य एवं धीमी गति से सीखने वाले, ग्रामीण, शहरी एवं विभिन्न समुदाय के विद्यार्थी हो सकते हैं।
5. गणित पाठ्यचर्या के आयोजन के प्रकरण उपागम की प्रमुख कमियाँ निम्नांकित हैं–
    - विद्यार्थियों के मानसिक विकास की उपेक्षा
    - प्रकरणों का गणित की अन्य शाखाओं के साथ सम्बन्ध न विकसित कर पाना।
    - वैयक्तिक भिन्नता की उपेक्षा अधिगम में नीरसता, अरुचि तथा थकान का होना।
    - विस्मरण की संभावना का बने रहना।
6. गणित पाठ्यचर्या के आयोजन के इकाई उपागम के प्रमुख सोपानों में– उद्देश्यों का निर्धारण, इकाई का पूर्व अवलोकन तथा इकाई की रूपरेखा का अध्ययन शामिल हैं।

13.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. भटनागर, ए0बी0 (2012), गणित शिक्षण, मेरठ : आर0लाल पब्लिकेशन।
2. मंगल, एस0के0 (2005), गणित शिक्षण, नई दिल्ली : आर्य बुक पब्लिकेशन।
3. जेम्स, ए0 एवं बालसुब्रमण्यम्, पी0एस0 (2010), टीचिंग ऑफ मैथेमेटिक्स, नई दिल्ली : नीलकमल पब्लिकेशन्स।
4. बाजपेई, पी0के0 (2009), गणित शिक्षण, लखनऊ : आलोक प्रकाशन।

इकाई– 14 : गणित की विधियाँ

इकाई की संरचना

14.1 प्रस्तावना

14.2 इकाई के उद्देश्य

14.3 विद्यालयी स्तर पर गणित शिक्षण

14.3.1 शिक्षण प्रवधियाँ

14.3.2 शिक्षण विधियों को प्रभावित करने वाले कारक

14.3.3 गणित की शिक्षण विधियों के चयन में सावधानियाँ

14.4 गणित शिक्षण की प्रमुख विधियाँ

14.4.1 आगमन–निगमन विधि

14.4.2 संश्लेषण एवं विश्लेषण विधि

14.4.3 प्रयोगशाला विधि

14.4.4 अनुसंधान विधि

14.4.5 परियोजना विधि

14.4.6 समस्या समाधान विधि

14.5 गणित शिक्षण की मुख्य प्रविधियाँ

14.5.1 मौखिक एवं लिखित कार्य

14.5.2 अभ्यास एवं पुनरावृत्ति

14.5.3 अभ्यास कार्य तथा गृह कार्य

14.6 सारांश

14.7 अभ्यास के प्रश्न

14.8 चर्चा के बिन्दु

14.9 बोध प्रश्नोत्तर

14.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

गणित की पाठ्यचर्या को निश्चित करने के पश्चात् हमारे समक्ष यह प्रश्न उठता है कि पाठ्यचर्या में निश्चित किए गए उद्देश्यों, अधिगम अनुभवों को प्राप्त करने के लिए जो विषयवस्तु तय की गई है उन्हें विद्यार्थियों के समक्ष किस प्रकार प्रस्तुत किया जाए। अधिगम अनुभवों के संदर्भ में यह प्रश्न भी शिक्षक के समक्ष आता है कि विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार के अधिगम अनुभव कैसे प्राप्त कराये जाए। इन बातों को ध्यान में रखते हुए शिक्षक गणित की विषयवस्तु को प्रस्तुत करने के लिए तथा विद्यार्थियों को सैद्धान्तिक और व्यावहारिक अनुभव प्रदान करने के लिए भिन्न–भिन्न प्रकार के तरीकों को अपनाता है। इन्हें ही गणित की विधियाँ या शिक्षण विधियाँ कहा जाता है। जैसा कि हम जानते है कि गणित विषय अन्य विषयों की तुलना में अमूर्त होता है तथा विद्यार्थियों को नीरस व अरुचिकर लगता है अतः ऐसे विषय को रुचिकर एवं सरस बनाने के लिए

शिक्षण विधियों का चयन बहुत सावधानी पूर्वक किया जाना चाहिए।

शिक्षण में सफलता मुख्यतः दो बातों पर निर्भर होती है। पहला– शिक्षक का विषय पर अधिकार और दूसरा– विद्यार्थियों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन करने की शिक्षक की कुशलता। विषय ज्ञान का अधिकार तो शिक्षक विषय का अध्ययन करके प्राप्त कर सकता है परन्तु छात्रों में व्यवहार परिवर्तन लाने के कौशल के लिए विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है जिससे कि शिक्षक को उन समस्त विधियों एवं उपयोगी बातों का पता लग सके तथा वह अपने विषय के शिक्षण को सार्थक बना सके। शिक्षाशास्त्रियों तथा विषय के अनुभवी अध्यापकों ने विभिन्न समय में आवश्यकतानुसार विभिन्न विधियों को जन्म दिया है। गणित के शिक्षक को भी इन विषयों की जानकारी होना आवश्यक है ताकि वह आवश्यकता एवं परिस्थिति के अनुसार उपयुक्त विधि का चयन एवं प्रयोग कर सके। प्रस्तुत इकाई में गणित से सम्बन्धित कुछ प्रचलित एवं उपयोगी शिक्षण विधियों तथा उनकी विशेषताओं एवं कमियों के विषय में चर्चा की गई है।

14.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. गणित शिक्षण की विधियों तथा प्रविधियों में अन्तर कर सकेंगे।
2. गणित शिक्षण की विधियों को प्रभावित करने वाले कारकों का उल्लेख कर सकेंगे।
3. सावधानीपूर्वक गणित शिक्षण की विधियों का चयन कर सकेंगे।
4. आगमन तथा निगमन विधि में अन्तर कर सकेंगे।
5. संश्लेषण तथा विश्लेषण विधि के गुणों और दोषों की चर्चा कर सकेंगे।
6. प्रयोगशाला विधि से पढ़ाये जा सकने वाले गणित के प्रकरणों का चयन कर सकेंगे।
7. अनुसंधान विधि के महत्त्व पर प्रकाश डाल सकेंगे।
8. परियोजना तथा समस्या समाधान विधि के विभिन्न सोपानों की विस्तार से चर्चा कर पायेंगे।
9. गणित शिक्षण की मुख्य प्रविधियों को समझ सकेंगे।
10. गणित के अधिगम में अभ्यास तथा गृहकार्य के महत्त्व को स्पष्ट कर सकेंगे।

14.3 विद्यालयी स्तर पर गणित शिक्षण

विद्यालयी पाठ्यक्रम में गणित हमेशा से महत्त्वपूर्ण रहा है और इसी कारण गणित का शिक्षण एवं अधिगम भी महत्त्वपूर्ण बन जाता है। प्राचीन गणित शिक्षण की पद्धति वर्तमान परिवेश में विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को पूरा करने में संतोषजनक नहीं मानी जा सकती है। विगत् कुछ वर्षों में गणित सीखने–सिखाने की कला को कल्पनाशील, क्रियाशील व रुचिकर बनाने की माँग बढ़ी है। अर्थात् गणित शिक्षण की विधियाँ ऐसी होनी चाहिए जो बालकों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं तथा मानसिक योग्यताओं के अनुरूप हों तथा विद्यार्थियों की सृजनात्मकता, तार्किक चिन्तन एवं कल्पनाशीलता को बढ़ाने में सक्षम हों। शिक्षण विधि की आधारभूत पहचान यह है कि वह अपने में पूर्ण होती है और शिक्षण में उसका प्रयोग स्वतंत्र होता है। गणित शिक्षण में कभी–कभी एक से अधिक विधियों का भी प्रयोग किया जाता है तथा कभी–कभी शिक्षक को समस्या के समाधान तथा शिक्षण के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए शिक्षण विधियों के साथ–साथ अनेक शिक्षण प्रविधियों का सहारा भी लेना पड़ता है। शिक्षण विधि के प्रयोग व उसके सफलतापूर्वक अनुपालन में शिक्षण प्रविधि महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। अतः शिक्षण विधियों का विस्तार से अध्ययन करने से पूर्व शिक्षण प्रविधियों को जानना तथा शिक्षण विधि से उसके अन्तर को समझना आवश्यक हो जाता है।

14.3.1 शिक्षण प्रवधियाँ

शिक्षण प्रविधि का सम्बन्ध विषयवस्तु से अप्रत्यक्ष रूप से होता है। किसी एक शिक्षण विधि के अन्तर्गत एक या एक से अधिक शिक्षण प्रविधियाँ हो सकती हैं। किसी भी शिक्षण विधि की सफलता उसमें प्रयोग की जाने वाली प्रविधियों पर निर्भर करती है। शिक्षण विधि एवं शिक्षण प्रविधि के अन्तर को निम्नलिखित ढंग से समझा जा सकता है–

- शिक्षण विधि 'कैसे' पर बल देती है जबकि शिक्षण प्रविधि 'किसके साथ' पर बल देती है।
- शिक्षण विधि के अन्तर्गत शिक्षण की गति और दिशा का निर्धारण किया जाता है जबकि प्रविधि, शिक्षण विधि पर निर्भर रहती है।
- शिक्षण विधियों में तार्किक एवं मनोवैज्ञानिक पहलुओं के साथ–साथ उसके सामाजिक, दार्शनिक तथा आर्थिक पक्ष को भी आधार माना जाता है जबकि शिक्षण प्रविधि में केवल तार्किक तथा मनोवैज्ञानिक पक्ष पर ही बल दिया जाता है।
- शिक्षण विधि के सरलीकरण व उनके प्रयोग में शिक्षण प्रविधियाँ जैसे कि– प्रश्न प्रविधि, व्याख्या प्रविधि, उदाहरण प्रविधि इत्यादि महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

14.3.2 शिक्षण विधियों को प्रभावित करने वाले कारक

जैसा कि हम जानते है कि शिक्षण के उद्देश्य के निर्धारण तथा पाठ्यचर्या के निश्चित हो जाने के पश्चात् उनको प्राप्त करने के लिए शिक्षण विधियाँ महत्त्वपूर्ण साधन है। शिक्षण विधियों के चयन से पूर्व उन बिन्दुओं को समझना आवश्यक हो जाता है जो शिक्षण विधियों को प्रभावित करते हैं। आइए हम लोग शिक्षण विधियों को प्रभावित करने वाले कुछ प्रमुख कारकों पर विचार करें।

- **उद्देश्य से सम्बन्धित कारक**– शिक्षण विधि के चयन में शिक्षण के उद्देश्यों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है तथा शिक्षण के उद्देश्य विद्यार्थियों के बौद्धिक स्तर, विषय के प्रति उनकी रुचि एवं दृष्टिकोण के अनुरूप होते हैं अतः शिक्षण विधियों के चयन पर भी इनका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है और यदि शिक्षण विधियों का चयन उद्देश्यों के अनुरूप नहीं किया गया तो शिक्षण की प्रक्रिया अरुचिकर बोझिल तथा नीरस हो जायेगी।
- **विषयवस्तु से सम्बन्धित कारक**– विषयवस्तु ही वह आधार है जिसके अनुसार शिक्षण विधि का निर्माण व चयन किया जाता है। इसलिए विषयवस्तु की प्रकृति, क्षेत्र व उसका स्तर, शिक्षण विधि के चयन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है।
- **शिक्षक से सम्बन्धित कारक**– शिक्षक की सम्प्रेक्षण क्षमता, प्रशिक्षण, सुविधाएँ तथा योग्यता किसी भी शिक्षण विधि को प्रभावित करती है क्योंकि शिक्षण विधि चाहे कितनी ही अच्छी क्यों न हो, यदि शिक्षक के पास उसे प्रयोग करने की योग्यता एवम् प्रशिक्षण नहीं है तो वह विद्यार्थियों के लिए उपयोगी साबित नहीं हो पाती है।

14.3.3 गणित की शिक्षण विधियों के चयन में सावधानियाँ

गणित विषय के लिए शिक्षण–विधियों के चयन करते समय शिक्षकों को कुछ विशेष प्रकार की सावधानियाँ बरतनी चाहिए जिससे कि उसके द्वारा चयनित शिक्षण–विधि विद्यार्थियों के लिए उपयोगी एवं रुचिकर हो। शिक्षण विधियों के चयन के समय ध्यान रखने वाली प्रमुख बातें निम्नांकित हो सकती हैं–

- गणित विषय के लिए शिक्षण विधि का चयन करते समय पढ़ाये जाने वाले प्रकरण को ध्यान में रखा जाना चाहिए।
- गणित की शिक्षण विधि का उद्देश्य अधिक से अधिक ज्ञान देना ही नहीं बल्कि विद्यार्थियों में

स्वप्रयास से सीखने की योग्यता का विकास करना होना चाहिए।

- गणित की शिक्षण विधियाँ ऐसी होनी चाहिए जो विद्यार्थियों में तर्क, कल्पना तथा अमूर्त चिन्तन की योग्यता विकसित कर सकें।
- गणित की शिक्षण विधियों, विद्यार्थियों में सामान्यीकरण की योग्यता को विकसित करने वाली होनी चाहिए।
- ऐसी शिक्षण विधि का चयन करना चाहिए जिससे विद्यार्थियों द्वारा अर्जित किये गये ज्ञान को उपयोग में लाने के लिए उचित अवसर मिल सकें।
- शिक्षण विधि द्वारा बालकों में ईमानदारी, आत्मनिर्भरता तथा आत्मविश्वास का गुण विकसित हो सकें।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. गणित शिक्षण की विधियों एवं प्रविधियों में क्या अन्तर है?

   .....

   .....

2. गणित शिक्षण की विधियों को कौन–कौन से कारक प्रभावित करते हैं?

   .....

   .....

14.4 गणित शिक्षण की प्रमुख विधियाँ

गणित अध्यापन की अनेक विधियाँ एवं प्रविधियाँ प्रचलित है। उनमें से कुछ विधियाँ विद्यार्थियों के समूह को पढ़ाने के लिए उपयुक्त है तो कुछ विधियाँ विद्यार्थियों को वयैक्तिक ढंग पढ़ाने के लिए उपयुक्त हैं। शिक्षक द्वारा निर्धारित शिक्षण के उद्देश्य, स्वयं का प्रशिक्षण, छात्रों का मानसिक स्तर, उनकी रुचियाँ, विद्यालय में उपलब्ध भौतिक सुविधाएँ तथा विद्यालय का परिवेश इत्यादि शिक्षक द्वारा किसी विशेष विधि के चयन का आधार होती है। आइए हम लोग गणित शिक्षण की कुछ महत्त्वपूर्ण शिक्षण विधियों पर चर्चा करें।

14.4.1 आगमन–निगमन विधि

यह विधि दो पृथक् विधि आगमन तथा निगमन विधि का ऐसा समन्वय है जिसमें दोनों विधियों के दोषों को समाप्त करके उन्हें उपयोगी बनाने का प्रयत्न किया गया है। इस विधि को समझने के लिए इन दोनों विधियों को अलग–अलग समझना आवश्यक है।

आगमन विधि– गणित शिक्षण की आगमन विधि आगमनात्मक चिन्तन की प्रक्रिया पर आधारित है। आगमनात्मक चिन्तन एक प्रक्रिया है जिसमें सार्वभौमिक सत्य अथवा किसी प्रमेय को किसी विशेष अवस्था में सत्य होने की स्थिति में तथा उसी क्रम में अगली अवस्था में सत्य होने पर क्रमशः आगे की उस तरह की सभी परिस्थितियों में सत्य माना जाता है। अर्थात् इस विधि में विशिष्ट तथ्यों से सामान्य तथ्यों की ओर बढ़ते हैं। इस विधि द्वारा किसी सूत्र अथवा नियम का प्रतिपादन इस आधार पर किया जाता है कि वह सूत्र अथवा नियम

पर्याप्त संख्या में विशिष्ट परिस्थितियों में सत्य है। अर्थात् सूत्र, नियम अथवा सामान्यीकरण का प्रतिपादन आगमन तर्क के आधार पर किया जाता है। यह विधि गणित विषय के शिक्षण के लिए बहुत उपयुक्त पायी गयी है क्योंकि बहुत से गणितीय सूत्र तथा नियमों की खोज इसी विधि द्वारा की गयी है। जैसे कि–

- त्रिभुज के तीनों अन्तःकोणों का योग 180^0 होता है। जब विद्यार्थी अनेक त्रिभुजों के कोणों को मापता है तथा पाता है कि प्रत्येक त्रिभुज के तीनों अन्तःकोणों का योग 180^0 है तो वह स्वयं इस तथ्य का सामान्यीकरण कर पाता है कि किसी भी त्रिभुज के तीनों अन्तःकोणों का योग 180^0 होता है।
- शंकु का आयतन बेलन के आयतन के एक तिहाई होता है।
- शंकु का अयतन $= \frac{1}{3}\pi r^2 h$, इस सूत्र की व्युत्पत्ति आगमन विधि द्वारा की जा सकती है। इसके लिए आइए हम लोग समान ऊँचाई और व्यास वाले दो खाली पात्र लेते हैं जिसमें से एक का आकार शंक्वाकार है तथा दूसरे का आकार बेलनाकार है। अब शंक्वाकार पात्र में लकड़ी की बुरादा भरकर इसे बेलनाकार पात्र में पलट लेते हैं। अब इस क्रिया की पुनरावृत्ति विभिन्न विमाओं वाले पात्रों पर करते हैं तो हम देखते हैं कि समान ऊँचाई तथा व्यास वाले दो खाली पात्रों के लिए, शंक्वाकार पात्र से तीन बार में बेलनाकार पात्र में लकड़ी का बुरादा भरा जाता है अतः इस आधार पर हम परिणाम निकाल सकते हैं कि समान ऊँचाई और व्यास वाले शंकु का आयतन $= \frac{1}{3} \times$ बेलन का आयतन

इसी प्रकार गणित के विभिन्न प्रकरणों को भी आगमन विधि द्वारा व्युत्पन्न किया जा सकता है। आगमन विधि का प्रयोग उन परिस्थितियों में सर्वाधिक उपयुक्त होता है जब गणितीय–

- नियमों का निर्माण करना हो।
- परिभाषाओं का निर्माण करना हो।
- सूत्रों को व्युत्पन्न करना हो।
- नियमों का सामान्यीकरण करना हो।

आगमन विधि के गुण–

- यह विधि समझ को बढ़ाने में सहायक है।
- यह विधि विद्यार्थियों को सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार बनाती है।
- इस विधि में अवलोकन तथा अन्वेषण के अवसर उपलब्ध है।
- यह विधि तार्किक है तथा आलोचनात्मक चिन्तन को विकसित करती है।
- इस विधि में ज्ञात से अज्ञात की बढ़ते हैं और विद्यार्थियों की रुचि बनी रहती है।
- यह विधि विद्यार्थियों में रटन्त अधिगम की प्रवृत्ति को कम करती है।
- यह विधि अर्थपूर्ण अधिगम को बढ़ावा देती है।
- यह विधि विद्यार्थियों में आत्म विश्वास को बढ़ाती है।

आगमन विधि को दोष–

- यह विधि उच्च कक्षाओं के लिए उपयुक्त नहीं है क्योंकि उच्चस्तरीय गणितीय सिद्धान्तों को सामान्यीकरण मूर्त उदाहरणों के अवलोकन द्वारा सम्भव नहीं है।

- यह विधि गणित के उन सीमित प्रकरणों के लिए ही उपयुक्त है जहाँ विशिष्ट दृष्टांतों का अवलोकन सम्भव है।
- कुछ विशिष्ट दृष्टांतों के पर किये गये अवलोकन के आधार पर किया गया सामान्यीकरण विद्यार्थियों के मन में शंका उत्पन्न करता है।
- यह विधि गणितीय सूत्रों तथा नियमों की खोज तक ही सीमित है।
- यह विधि लम्बी, अधिक समय लेने वाली तथा अधिक परिश्रम की माँग करने वाली है।

निगमन विधि–

निगमन विधि निगमन तर्क पर आधारित है। निगमन तर्क पूर्व में स्थापित तथ्यों अथवा मौलिक मान्यताओं के आधार पर तार्किक अनुमान लगाने की प्रक्रिया है। इस विधि में शिक्षक विद्यार्थियों के समक्ष पहले से ज्ञात तथ्यों तथा सामान्यीकरण को प्रस्तुत करता है तथा अज्ञात के बारे में तर्क के आधार पर अनुमान लगाता है। अतः निगमनात्मक विधि में व्यक्ति सामान्य से विशिष्ट दृष्टांतों और अमूर्त से मूर्त की ओर आगे बढ़ता है। इस विधि में हम सूत्र, नियम या सामान्यीकरण से प्रारम्भ करते हैं तथा इसे इसी विशेष समस्या के समाधान के लिए लागू करते हैं। जैसे कि–

1. जब दो सीधी रेखाएँ एक दूसरे को प्रतिच्छेदित करती हैं तो शीर्षाभिमुख कोण बराबर होते हैं।

l_1, l_2 दो सीधी रेखाएँ हैं,

x, y शीर्षाभिमुख कोण हैं

उसी प्रकार p, q शीर्षाभिमुख कोण हैं।

उपर्युक्त सामान्यीकृत कथन के आधार पर निम्नांकित परिणाम निकाले जा सकते हैं।

$\angle x = \angle y$ (∵ शीर्षाभिमुख कोण हैं)

$\angle p = \angle q$ (∵ शीर्षाभिमुख कोण हैं)

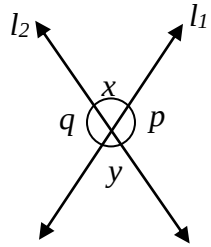

2. $x^m \times x^n = x^{m+n}$ (सामान्य नियम)

$x^4 \times x^{12} = ?$

उपर्युक्त सामान्य नियम के आधार पर

$$x^4 \times x^{12} = x^{4+12} = x^{16}$$

निगमन विधि, विद्यार्थियों को पहले से ज्ञात सूत्रों, सिद्धान्तों अथवा सामान्यीकरणों के अभ्यास हेतु उपयुक्त है। यह विधि तथ्यों अथवा नियमों के धारण तथा स्थायीकरण के लिए बहुत उपयोगी हैं क्योंकि इस विधि में अभ्यास एवं प्रशिक्षण के पर्याप्त अवसर होते हैं। निगमन विधि विशेष रूप से प्रदर्शनात्मक ज्यामिति के शिक्षण के लिए उपयुक्त होती है क्योंकि यह मूलरूप से निगमनात्मक विज्ञान पर आधारित है जहाँ प्रमेयों के रूप में कहे गए सत्य को किसी अन्य प्रमेय पर जो पहले से ही सिद्ध है, पर लागू करके सिद्ध किया जाता है। यह विधि उच्च कक्षाओं में गणित शिक्षण के लिए बहुत ही उपयोगी है।

निगमन विधि के गुण–

- यह विधि विद्यार्थियों की समस्या समाधान की गति, कौशल तथा दक्षता को बढ़ाती है।
- यह छोटी एवं सहज विधि है।
- इस विधि में शिक्षक और विद्यार्थी दोनों के ही समय एवं श्रम की बचत होती है।

- यह विधि सूत्रों तथा नियमों के स्थायीकरण में सहायक है क्योंकि इसमें अभ्यास एवं पुनरावृत्ति के अवसर उपलब्ध होते हैं।
- यह विधि विद्यार्थियों की स्मृति क्षमता को बढ़ाने में सहायक है क्योंकि उन्हें अनेक नियमों तथा सूत्रों इत्यादि का स्मरण करना होता है।
- यह विधि उच्च कक्षाओं के लिए अत्यन्त ही उपयोगी है।

निगमन विधि के दोष–

- इस विधि में विद्यार्थियों को नियमों, सूत्रों इत्यादि को याद रखना होता है, अतः यह विधि रटन्त अधिगम को बढ़ावा देती है।
- इस विधि में सामान्यीकरण के सम्बन्ध में विद्यार्थियों की शंकाओं का समाधान नहीं किया जाता है इसलिए अधिगम अपूर्ण रहता है।
- यह विधि प्रारम्भिक कक्षाओं के लिए उपयुक्त नहीं है।
- इस विधि में विद्यार्थियों की अधिगम में सहभागिता को बढ़ावा नहीं मिलता है।
- यह विधि विद्यार्थियों में चिन्तन, तर्क एवं खोज के विकास के लिए उपयुक्त नहीं है।
- यह विधि बाल मनोविज्ञान के अनुरूप नहीं होती है। अतः मनोवैज्ञानिक रूप से बालकों यह विधि के लिए अनुपयुक्त है।

आगमन तथा निगमन विधि की तुलना–

आगमन विधि	निगमन विधि
• आगमन तर्क पर आधारित है।	• निगमन तर्क पर आधारित है।
• इसमें विशिष्ट से सामान्य एवं मूर्त से अमूर्त की ओर आगे बढ़ते हैं।	• इसमें सामान्य से विशिष्ट एवं अमूर्त से मूर्त की ओर आगे बढ़ते हैं।
• यह छोटी कक्षाओं के लिए उपयुक्त है।	• यह उच्च कक्षाओं के लिए ज्यादा उपयुक्त है।
• यह विधि लम्बी, समय एवं श्रमसाध्य है।	• यह विधि छोटी, संक्षिप्त एवं सहज है।
• इस विधि में निरपेक्ष निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते, परिणाम संभावनाओं पर आधारित होते हैं।	• इसें संभावनाओं को निश्चित परिणामों में परिवर्तित कर दिया जाता है।
• यह विधि मनोवैज्ञानिक है।	• यह विधि अमनोवैज्ञानिक है।
• यह खोज की ऐसी विधि है जो बौद्धिक क्षमताओं को बढ़ाती है।	• इस विधि में केवल प्रस्तुतीकरण किया जाता है जो मौलिकता एवं सृजनात्मकता को विकसित नहीं करता।
• इस विधि में तर्क पर अधिक बल दिया जाता है।	• इस विधि में स्मरण पर अधिक बल दिया जाता है।
• इस विधि में अर्थपूर्ण अधिगम को बढ़ावा मिलता है।	• इस विधि में रटन्त अधिगम को बढ़ावा मिलता है।
• इस विधि में नियमों तथा सामान्यीकरण की खोज की जाती है।	• इस विधि में समस्या समाधान में शीघ्रता, कौशल एवं दक्षता को बढ़ाया जाता है।

निष्कर्ष–

आगमन तथा निगमन विधियों की तुलना द्वारा पता चलता है कि दोनों ही शिक्षण विधियों में अपने–अपने गुण एवं दोष हैं। लेकिन ये दोनों विधियाँ एक दूसरे के विपरीत नहीं हैं बल्कि अध्ययन–अध्यापन की दृष्टि से एक दूसरे की पूरक है। आगमन विधि नियमों, सूत्रों तथा सामान्यीकरण को व्युत्पन्न करने तथा स्थापित करने की विधि है जबकि निगमन विधि स्थापित किये गये परिणामों को विद्यार्थियों की समस्या समाधान के कौशल तथा दक्षता को बढ़ाने हेतु लागू करने की विधि है। अतः आगमन तथा निगमन विधियों का संयोजन गणित शिक्षण की आगमन–निगमन विधि कहलाती है जो वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सर्वाधिक प्रभावशाली विधि है।

14.4.2 संश्लेषण एवं विश्लेषण विधि

विश्लेषण एवं संश्लेषण विधि गणित शिक्षण की दो प्रमुख विधियाँ हैं। दोनों ही विधियाँ तर्कशास्त्र पर आधारित हैं। इन दोनों विधियों का प्रयोग गणित की ज्यामिति शाखा के शिक्षण में प्रमुख रूप से किया जाता है। आइए हम लोग गणित शिक्षण की इन दोनों विधियों पर अलग–अलग चर्चा करें।

विश्लेषण विधि–

यह विधि विश्लेषण पर आधारित है। इसी कारण इस विधि में हम लोग समस्या को उसके कई भागों में विभाजित करके उनके मध्य सम्बन्धों को खोजने का प्रयास करते हैं। विश्लेषण की इस प्रक्रिया में हम जो ज्ञात करना है अर्थात् अज्ञात से प्रारम्भ करते हैं तथा चिन्तन करते हुए उन संभावनाओं को खोजते हैं जिनके द्वारा हम ज्ञात तथ्यों से सम्बन्ध स्थापित कर सकें और वांछित परिणाम ज्ञात कर सकें। इस प्रकार से इस विधि में हम 'अज्ञात से ज्ञात', 'अमूर्त से मूर्त' तथा 'जटिल से सरल' की ओर आगे बढ़ते हैं।

उदाहरण स्वरूपः

''सिद्ध कीजिए कि वृत्त के केन्द्र से जीवा के मध्य बिन्दु को मिलाने वाली रेखा जीवा पर लम्ब होती है।''

उपर्युक्त प्रमेय को सिद्ध करने के लिए सर्वप्रथम चित्र के अनुसार रचना करेंगे।

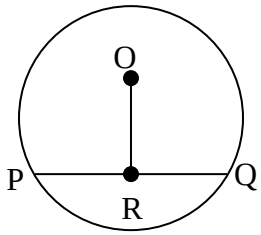

विश्लेषण की प्रक्रिया द्वारा सर्वप्रथम हम देखते है कि हमें क्या ज्ञात है।

हमें ज्ञात है कि–

O वृत्त का केन्द्र है।

PQ वृत्त की एक जीवा है।

OR केन्द्र O को R से मिलाने वाली एक ऐसी रेखा है जो जीवा PQ को समद्विभाजित करती हैं अर्थात् $PR = RQ$

क्या ज्ञात करना है?

सिद्ध करना है कि– $OR \perp PQ$

उपपत्ति–

विश्लेषण विधि का प्रयोग करते हुए हम अज्ञात से प्रारम्भ करते है। अर्थात् $OR \perp PQ$

यदि $OR \perp PQ$ तो $\angle PRO$ का मान क्या होगा अथवा हम कैसे सिद्ध कर पायेगें कि $\angle PRO=90^0$ तथा $\angle QRO = 90^0$ अथवा

हम कैसे सिद्ध कर पायेंगे कि $\angle PRO=\angle QRO$

$\angle PRO=90^0$ को सिद्ध करने के लिए हमें $\angle PRO=\angle QRO$ सिद्ध करना पड़ेगा।

इसके लिए हमें ऐसे दो त्रिभुजों की सर्वांगसमता को सिद्ध करना पड़ेगा जो कि इन दोनों कोणों को शामिल करते हों। अतः रचना द्वारा हमें ऐसे दो त्रिभुज बनाने होंगे जो $\angle PRO$ तथा $\angle QRO$ को धारण करते हों।

रचना की संभावनाओं को खोजने पर हमें प्राप्त होता है कि बिन्दु P तथा Q को बिन्दु O से सीधी रेखा द्वारा जोड़ने पर हमें दो त्रिभुज ΔPRO तथा ΔQRO प्राप्त होते हैं।

अब क्या हम इन दोनों त्रिभुजों ΔPRO तथा ΔQRO को सर्वांगसम सिद्ध कर सकते है।–

चूँकि $PR = QR$ (ज्ञात है)

$OR = OR$ (उभयनिष्ठ है)

$OP = OR$ (की त्रिज्याएँ हैं)

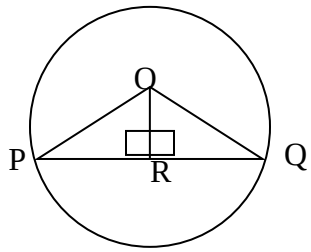

अतः ΔPRO तथा ΔQRO सर्वांगसम त्रिभज हैं

$\therefore \angle PRO = \angle QRO$

$OR \perp PQ$

यद्यपि कि विश्लेषण विधि गणित शिक्षण की एक लम्बी विधि है लेकिन फिर भी यह विधि जटिल गणितीय समस्याओं, प्रमेयों के उपपत्ति तथा बीजगणित के अनेक प्रकरणों के शिक्षण के लिए प्रभावशाली है। यह विधि विशेष रूप से अंकगणित, बीजगणित, ज्यामिति तथा त्रिकोणमिति की समस्याओं के समाधान के लिए उपयोगी है।

विश्लेषण विधि के गुण–

- इस विधि के प्रयोग से विद्यार्थियों के मस्तिष्क में किसी प्रकार की शंका नहीं रहती है क्योंकि प्रत्येक सोपान सत्यापित रहता है।
- यह विधि मनोवैज्ञानिक है।
- यह विधि विद्यार्थियों में खोज एवं प्रेक्षा के पक्ष को विकसित करने में सहायक है।
- यह विधि विद्यार्थियों में आत्मविश्वास को विकसित करती है तथा विद्यार्थियों के चिन्तन एवं तर्क शक्ति को बढ़ाती है।
- इस विधि में रटने की आवश्यकता नहीं पड़ती है।
- यह विधि अधिगम की प्रक्रिया में विद्यार्थियों के सक्रिय भूमिका को सुनिश्चित करती है।

विश्लेषण विधि के दोष

- यह विधि लम्बी, समय एवं श्रमसाध्य है।
- इस विधि द्वारा दक्षता एवं शीघ्रता को प्राप्त नहीं किया जा सकता।
- इस विधि में सूचनाओं को विद्यार्थियों के समक्ष सुसंगठित ढंग से प्रस्तुत नहीं किया जाता है।
- यह विधि गणित के प्रत्येक प्रकरण के लिए उपयोगी नहीं है।

संश्लेषण विधि–

संश्लेषण विधि, संश्लेषण की प्रक्रिया पर आधारित है। संश्लेषण का शाब्दिक अर्थ है 'अलग–अलग वस्तुओं तथा भागों को इकट्ठा करने की प्रक्रिया'। इस तरह से गणित शिक्षण की संश्लेषण विधि वह विधि है जसमें हम किसी समस्या का समाधान करने के लिए उस समस्या से सम्बन्धित सभी पूर्व सूचनाओं को एक साथ मिलाते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि यह विधि ज्ञात से अज्ञात की ओर अग्रसर होती है। इस विधि में ज्ञात परिभाषाओं मान्यताओं एवं स्वयंसिद्धियों से प्रारम्भ कर सोपानों का क्रमशः अनुसरण करते हुए अज्ञात निष्कर्ष पर पहुँचते हैं।

उदाहरण के लिए–

''सिद्ध कीजिए कि वृत्त के केन्द्र से जीवा के मध्य बिन्दु से मिलाने वाली रेखा जीवा पर लम्ब होती है।''

उपपत्ति–

दिया है–

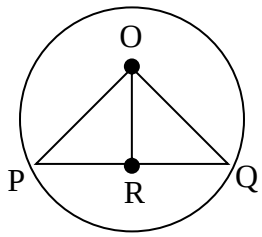

PQ एक जीवा है। OR, PQ को समद्विभाजित करती है।

सिद्ध करना है कि–

$OR \perp PQ$ अर्थात् $\angle PRO = \angle QRO = 90^0$

रचना

बिन्दु O को P तथा Q से मिलाया।

अब त्रिभुज ΔPRO तथा ΔQRO में

$PR = QR$ (दिया है)

$OR = OR$ (उभयनिष्ठ है)

$OP = OR$ (वृत्त की त्रिज्याएँ)

अतः $\Delta PRO \cong \Delta QRO$

$\Delta PRO = \Delta QRO$

$\therefore \angle PRO = \angle QRO = 90^0$ (पूरक संगत कोण)

अतः $OR \perp PQ$ (इति सिद्धम)

संश्लेषण विधि प्रमेयों, प्रमेयों के उत्पत्ति और समस्याओं के तार्किक एवं क्रमबद्ध प्रस्तुतीकरण की सर्वाधिक उपयुक्त विधि है। उच्च कक्षाओं में गणित शिक्षण हेतु यह सर्वाधिक लोकप्रिय विधि है।

विश्लेषण विधि के गुण–

- यह विधि एक तार्किक विधि है क्योंकि इसमें ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ते हैं।
- यह विधि शीघ्रता एवं दक्षता को बढ़ाती है।
- यह विधि छोटी, स्पष्ट एवं सहज विधि है।
- यह विधि धीमी गति से सीखने वाले विद्यार्थियों के लिए अधिक प्रभावशाली है।

विश्लेषण विधि के दोष–

- इस विधि में खोज तथा अन्वेषण के लिए कोई अवसर उपलब्ध नहीं होता है।
- यह विधि पूर्ण अवबोध प्रदान नहीं करती है।
- इस विधि में सभी सोपानों का प्रमापीकरण नहीं होता है।
- यह विधि विद्यार्थियों के मस्तिष्क में उत्पन्न अनेक शंकाओं का समाधान नहीं करती है।
- यह विधि विद्यार्थियों को निष्क्रिय श्रोता बनाती है तथा रटन्त अधिगम को बढ़ावा देती है।

निष्कर्ष–

यदि हम दोनों विधियों की प्रक्रिया और कार्य प्रणाली के बारें में विचार करें तो पता चलता है कि परस्पर विरोधी होते हुए भी विश्लेषण एवं संश्लेषण विधियाँ शिक्षण–अधिगम की दृष्टि से एक–दूसरे के पूरक है। अतः शिक्षण की प्रक्रिया को प्रभावशाली, रुचिकर तथा पूर्ण बनाने के लिए दोनों विधियों के संयोजन का उपयोग किया जाना चाहिए। शिक्षक को चाहिए कि समस्या के समाधान में विश्लेषण करते समय विद्यार्थियों की सहायता करें तथा संश्लेषण का कार्य पूरी तरह से विद्यार्थियों के लिए छोड़ दें।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. आगमन विधि के प्रमुख गुण क्या हैं?

.....

.....

4. विश्लेषण विधि की क्या सीमाएँ हैं?

.....

.....

14.4.3 प्रयोगशाला विधि

प्रयोगशाला विधि एक पूर्ण क्रियात्मक विधि है। गणित के ज्ञान को दैनिक जीवन से जोड़ने तथा क्रियात्मक रूप से सीखने के लिए यह विधि सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। यह विधि ज्ञात से अज्ञात, मूर्त से अमूर्त,

करके सीखने, निरीक्षण तथा परीक्षण द्वारा सीखने इत्यादि महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों पर आधारित है। इस विधि में विद्यार्थियों को गणित के नियम, कथन अथवा सामान्यीकरण की वैधता को सत्यापित करने के लिए कुछ प्रयोग अथवा निश्चित क्रियाएँ करनी होती हैं। प्रयोगशाला विधि गणित के सैद्धान्तिक ज्ञान को इसके व्यवहारिक पक्ष के साथ जोड़ने का काम करती है। यह विधि अधिगम की प्रक्रिया को रुचिकर, जीवन्त तथा अर्थपूर्ण बनाती है।

प्रयोगशाला विधि के गुण–

- यह विधि अधिगम के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है।
- यह विधि विद्यार्थियों में मूर्त वस्तुओं के साथ कार्य करने की रुचि जागृत करती है।
- यह विधि विद्यार्थियों को गणितीय नियमों की वैधता को उनके अनुप्रयोग द्वारा सत्यापित करने का अवसर प्रदान करती है।
- प्रयोग के द्वारा प्राप्त ज्ञान और कौशल विद्यार्थियों में बेहतर समझ और दीर्घकालिक धारण में सहायक होते हैं।
- यह विधि विद्यार्थियों की वैयक्तिक भिन्नता के संरक्षण में सहायक है।
- यह विधि विद्यार्थियों में आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता उत्पन्न करती है।
- यह विधि विद्यार्थियों में सामाजिक अन्तःक्रिया एवं सहकारिता के अवसर प्रदान करती है।

प्रयोगशाला विधि के दोष–

- प्रयोगशाला विधि विद्यार्थियों के मानसिक विकास में बहुत अधिक सहायक नहीं है।
- यह विधि समय, उपकरण, प्रयोगशाला की सुविधाएँ एवं योग्य तथा कुशल शिक्षकों की दृष्टि से खर्चीली है।
- इस विधि का प्रयोग सीमित है क्योंकि गणित के केवल कुछ ही प्रकरणों का इस विधि द्वारा शिक्षण किया जा सकता है।
- विद्यार्थियों की संख्या की दृष्टि से बड़ी कक्षाओं के लिए यह विधि उपयोगी नहीं है, क्योंकि इस विधि के प्रयोग के दौरान शिक्षकों को प्रत्येक विद्यार्थी पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना होता है।
- इस विधि के प्रयोग के अनुकूल पाठ्यपुस्तकों का अभाव है।
- यह विधि छोटी कक्षाओं के लिए तो उपयुक्त है परन्तु उच्च कक्षाओं के लिए अनुपयोगी है।
- इस विधि में विद्यार्थियों से एक गणितज्ञ की तरह गणितीय तथ्यों के साथ स्वतन्त्ररूप से कार्य करने, उन्हें खोजने तथा उन्हें सत्यापित करने की अत्यधिक प्रत्याशा की जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रयोगशाला विधि में जहाँ एक ओर इतने गुण हैं वहीं दूसरी ओर कुछ ऐसी असुविधाएँ तथा कमियाँ भी है जो इस प्रकार की विधि में बाधक हैं। यदि इस विधि को अकेले प्रयोग में न लाकर गणित की अन्य विधियों के साथ संयोजित कर शिक्षण किया जाय तो यह विधि विद्यार्थियों के लिए अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

प्रयोगशाला विधि द्वारा पढ़ाये जाने वाले कुछ प्रकरण–

जैसा कि हमने ऊपर जाना कि गणित के सभी प्रकरणों का प्रयोगशाला विधि द्वारा शिक्षण नहीं किया जा सकता है। आइए हम लोग कुछ ऐसे प्रकरणों के बारें में जाने जिनका शिक्षण प्रयोगशाला विधि द्वारा किया जा सकता हो–

- सूत्रों की व्युत्पत्ति–

I. वृत्त की परिधि तथा क्षेत्रफल।

II. वर्ग, आयत, समचतुर्भुज तथा समानान्तर चतुर्भुज का क्षेत्रफल।

III. विभिन्न प्रकार के त्रिभुजों का क्षेत्रफल।

IV. शंकु तथा बेलन का सम्पूर्ण पृष्ठ एवं आयतन।

सर्वसम्मिकाओं जैसे कि – $(a+b)^2$; $(a-b)^2$; $(a+b+c)^2$; (a^2+b^2) इत्यादि।

14.4.4 अनुसंधान विधि

यह गणित पढ़ाने की एक उपयोगी विधि है। एच0इ0 आर्मस्ट्रांग इस विधि के जन्मदाता है। इस विधि में बालक एक खोजकर्ता के रूप में कार्य करता है तथा शिक्षक द्वारा किसी तरह का ज्ञान विद्यार्थियों के ऊपर लादा नहीं जाता बल्कि विद्यार्थियों को स्वयं ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया जाता है। यह विधि करके सीखने के सिद्धान्त पर आधारित है। मूलतः अनुसंधान विधि में वैज्ञानिक विधि का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसके अर्न्तगत विद्यार्थियों को आँकड़ों का संग्रह कर उनका निर्वचन करके समाधान पर पहुँचने का प्रशिक्षण दिया जाता है। इस विधि का मुख्य उद्देश्य निम्नांकित हैं–

- विद्यार्थियों में पृच्छा तथा अनुसंधान की आदत को बढ़ाना।
- विद्यार्थियों में सुनने, अवलोकन करने, प्रश्न पूछने तथा खोज करने की योग्यता विकसित करना।
- विद्यार्थियों को अधिक चिन्तनशील एवं अवलोकनशील बनाना।
- भविष्य के स्व–अधिगम के लिए मजबूत आधार तैयार करना।

अनुसंधान विधि के गुण–

- यह विधि विद्यार्थियों में पृच्छा तथा अन्वेषण की आदत विकसित करती है।
- यह विधि गणित शिक्षण के लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक है।
- यह विधि विद्यार्थियों में गणितीय समझ तथा तर्क विकसित करने में सहायक है।
- यह विधि विद्यार्थियों में व्यक्तिगत प्रायोगिक कार्य, सजग अवलोकन तथा स्वतंत्र चिन्तन पर अधिक बल देती है जो उन्हें आत्मनिर्भर बनाती है।
- यह चिन्तन के वैज्ञानिक विधि का ज्ञान प्रदान करती है तथा विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिवृत्ति को बढ़ाती है।
- यह 'कर के सीखने' जैसी मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है।
- इसमें विद्यार्थी स्वगति से कार्य कर पाता है।
- यह विधि विद्यार्थियों में वास्तविक अवबोध तथा विषय पर अधिकार प्राप्त करने में सहायक है।
- यह विद्यार्थियों में समस्या समाधान के कौशल को बढ़ाती है क्योंकि विद्यार्थी गणितीय सिद्धान्तों तथा नियमों की पुनः खोज करता है।
- इस विधि के प्रयोग के दौरान शिक्षक प्रत्येक विद्यार्थी के करीब होता है अतः शिक्षक तथा शिक्षार्थी के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध विकसित हो पाता है।

अनुसंधान विधि के दोष–

- यह विधि लम्बी तथा समय साध्य है अतः पाठ्यक्रम को निर्धारित अवधि में पूरा कर पाना कठिन हो

जाता है।

- बहुत से गणितीय सत्य स्वयं विद्यार्थियों द्वारा नहीं खोजे जा सकते हैं। इस विधि में ज्ञान प्राप्त करने के बजाए वैज्ञानिक विधि के कौशल के अर्जन पर अधिक बल दिया जाता है। अतः ज्ञान को द्वितीयक रखना अधिगम में असंतुलन पैदा कर सकता है।
- अनुसंधान विधि द्वारा शिक्षण के दौरान विद्यार्थियों का मूल्यांकन कठिन होता है।
- प्रारम्भिक कक्षाओं के लिए यह विधि उतनी उपयुक्त नहीं है क्योंकि विषय के उचित आधार के लिए विद्यार्थियों को शुरूआती समय में पर्याप्त निर्देशन की आवश्यकता होती है।
- इस विधि के प्रयोग के लिए कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या कम होना तथा शिक्षकों का उच्च संसाधन से युक्त होना आवश्यक है, परन्तु दोनों ही बातें व्यवहारिक रूप से कठिन हैं।
- इस विधि के प्रयोग के लिए शिक्षकों को विशेष तैयारी की आवश्यकता होती है तथा उन्हें अधिक श्रम एवं प्रयत्न करने की आवश्यकता होती है।

अनुसंधान विधि का प्रयोग–

शिक्षक के रूप में अनुसंधान विधि से शिक्षण करने के लिए सर्वप्रथम विद्यार्थियों के समक्ष कोई गणितीय समस्या रखी जाती है प्रत्येक विद्यार्थी से समस्या का समाधान करने के लिए कहा जाता है। प्रत्येक विद्यार्थी समस्या का प्रयोगात्मक ढंग से अथवा सैद्धान्तिक ढंग से समाधान करने का प्रयास करता है। विद्यार्थियों को स्वयं के प्रयास पर निर्भर रहकर ज्ञान की पुनः खोज करनी होती है। आवश्यकता पड़ने पर वे शिक्षक से परामर्श ले सकते हैं। इस विधि के प्रयोग के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक प्रतिभाशाली तथा संसाधन युक्त हों, पुस्तकालय एवं विद्यालय की ढाँचागत सुविधाएँ अच्छी हों। यदि अनुसंधान विधि को सफलतापूर्वक प्रयोग में लाया जाएगा तो यह विधि विद्यार्थियों में समस्या समाधान, स्वतंत्र चिन्तन एवं तर्क, स्वअधिगम तथा आत्मनिर्भरता के गुण को विकसित कर सकती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. प्रयोगशाला विधि द्वारा पढ़ाये जा सकने वाले किन्हीं तीन प्रकरणों को लिखिए।

.....

.....

6. अनुसंधान विधि द्वारा शिक्षण के प्रमुख उद्देश्य क्या हैं?

.....

.....

14.4.5 परियोजना विधि

परियोजना विधि के उद्भव का श्रेय अमेरिका के महान शिक्षाशास्त्री तथा प्रयोजनवादी दार्शनिक

विचारधारा के समर्थक जॉन डीवी को है। यद्यपि कि कालान्तर में इस विधि का विकास तथा प्रयोगात्मक अनुप्रयोग किलपैट्रिक द्वारा किया गया। किलपैट्रिक महोदय ने प्रोजेक्ट शब्द को परिभाषित करते हुए बताया है कि ''प्रोजेक्ट एक सोद्देश्य क्रिया है, जिसे मन लगाकर सामाजिक वातावरण में पूरा किया जाता है।'' स्टीवेन्सन के अनुसार, ''प्रोजेक्ट किसी समस्या का समाधान करने के लिए किया जाने वाला कार्य है जो कि स्वाभाविक परिस्थिति में पूरा किया जाता है।'' अतः यह कहा जा सकता है कि परियोजना में जीवन से सम्बन्धित उद्देश्यपूर्ण क्रियाकलाप होने चाहिए तथा यह क्रियाकलाप स्वाभाविक वातावरण में पूरा होना चाहिए। परियोजना विधि में शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया को विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से तय किया जाता है तथा इस विधि में ज्ञान तथा कौशल को विद्यार्थियों द्वारा समस्या के उसके स्वाभाविक वातावरण में प्रयोगात्मक ढंग से हल द्वारा सीखा जाता है। इस प्रकार से यह विधि सृजनात्मकता, विचारशीलता, प्रेक्षण तथा पृच्छा को बढ़ाने वाली आदर्श विधि है।

परियोजना विधि के मूलभूत सिद्धान्त–

परियोजना विधि निम्नांकित मौलिक सिद्धान्तों पर आधारित है–

- अधिगम के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त – यह विधि अधिगम के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त जैसे कि– करके सीखना; जीवन अनुभव द्वारा सीखना; सम्बन्धीकरण, सहयोग एवं क्रिया द्वारा सीखने पर आधारित है।
- क्रियाशीलता का सिद्धान्त– परियोजना विधि की मूलभूत मान्यता है कि विद्यार्थी अपनी परियोजनाओं का चयन, नियोजन, क्रियान्वयन तथा मूल्यांकन स्वयं करते हैं तथा इस प्रकार सीखने के दौरान क्रियाशील रहते हैं।
- सामाजिक अनुभव का सिद्धान्त– परियोजना विधि में परियोजना का चयन वास्तविक जीवन की परिस्थितियों से किया जाता है और प्रत्येक परियोजना विद्यार्थियों के लिए सामाजिक अनुभव प्रदान करती है।
- वास्तविकता का सिद्धान्त– कोई भी परियोजना सीखने वाले के लिए प्रेरणादायी तथा रुचिकर तब तक नहीं हो सकती है जब तक कि यह सीखने वाले की दृष्टि में वास्तविक एवं स्वाभाविक न हो।
- उपयोगिता का सिद्धान्त– परियोजना विधि द्वारा प्राप्त ज्ञान अर्थपूर्ण तभी होगा जब यह व्यवहारिक तथा उपयोगी हो।

परियोजना विधि के सोपान–

परियोजना विधि द्वारा समस्या समाधान करते समय निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण किया जाना चाहिए–

- परिस्थिति का प्रस्तुतीकरण– यह परियोजना विधि का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सोपान है। इस सोपान में शिक्षक को चाहिए कि वह विद्यार्थियों के समक्ष कुछ ऐसी परिस्थितियाँ प्रस्तुत करें जो विद्यार्थियों के मन में कुछ उपयुक्त प्रश्न उत्पन्न कर सकें तथा वे उनके उत्तर प्राप्त करने के लिए तत्पर हो सकें। शिक्षक विद्यार्थियों के समक्ष, चर्चा–परिचर्चा, प्रश्नीकरण, पुस्तकालय कार्य अथवा क्षेत्र कार्य इत्यादि के माध्यम से अनेक परिस्थितियाँ उत्पन्न कर सकता है।
- उद्देश्यपूर्ण परियोजना का चयन– परियोजना का चयन स्वयं विद्यार्थियों द्वारा किया जाना चाहिए। शिक्षक अच्छे एवं उद्देश्यपूर्ण परियोजना के चयन में विद्यार्थियों को उनकी योग्यता, अभिक्षमता एवं रुचि के अनुरूप निर्देशित कर सकता है। परियोजना के चयन के दौरान परियोजना के लक्ष्य एवं प्रकृति के साथ–साथ इसकी सीमाएँ एवं क्षेत्र को स्पष्टतः परिभाषित कर लेना चाहिए।

नियोजन– परियोजना के नियोजन सोपान में परियोजना के दौरान की जाने वाली क्रियाओं एवं गतिविधियों का निर्धारण किया जाता है। इस सोपान के अर्न्तगत विद्यार्थियों द्वारा सर्वाधिक व्यवहारिक कार्ययोजना का चयन किया जाता है। इस दौरान निम्नांकित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए।

I. परियोजना की प्रकृति एवं क्षेत्र।

II. परियोजना की जटिलता की सीमा।

III. परियोजना को पूरा करने के लिए निर्धारित समय।

IV. उपलब्ध भौतिक संसाधन।

क्रियान्वयन– इस सोपान में शिक्षक विद्यार्थियों को उनकी रुचि, अभिक्षमता तथा योग्यता के अनुसार अलग–अलग कार्यों के आवंटन में सहायता करता है। समूह के प्रत्येक सदस्य को योजना के क्रियान्वयन के दौरान सक्रिय भागीदारी निभानी चाहिए। शिक्षक को परियोजना के क्रियान्वयन का सजगता पूर्वक पर्यवेक्षण तथा निर्देशन करते रहना चाहिए।

मूल्यांकन– मूल्यांकन के दौरान शिक्षक की सहायता से विद्यार्थी परियोजना के प्रगति की समीक्षा विभिन्न समयान्तराल में करते हैं। परियोजना का मूल्यांकन प्रस्तावित क्रियाओं, उनके क्रियान्वयन में कठिनाईयों तथा प्राप्त परिणाम के आलोक में किया जाना चाहिए।

अभिलेखन– विद्यार्थियों को चाहिए कि वे परियोजना के चयन से लेकर नियोजन, क्रियान्वयन तथा मूल्यांकन सोपान तक की गयी प्रत्येक गतिविधि एवं क्रियाकलाप का सम्पूर्ण अभिलेख तैयार करें।

परियोजना विधि के लाभ–

- यह विधि शिक्षण अधिगम के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है।
- इस विधि में स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करने के अवसर उपलब्ध होते हैं।
- यह विधि विद्यार्थियों को सामाजिक अन्तःक्रिया, सहकारिता तथा अनुभवों के आदान–प्रदान का अवसर प्रदान करती है।
- यह विधि विद्यार्थियों में अवलोकन, निर्वचन तथा सन्दर्भीकरण इत्यादि के कौशल को प्राप्त करने का अवसर प्रदान करती है।
- इस विधि में विद्यार्थी अधिगम में सक्रिय भागीदारी निभाते हैं।
- यह विधि विद्यार्थियों में आलोचनात्मक चिन्तन तथा समस्या समाधन के आदत को विकसित करती है।
- यह विधि विद्यार्थियों की वैयक्तिक भिन्नता को संरक्षित रखती है।
- यह विधि अधिगम को अर्थपूर्ण बनाने, विषय को क्रियात्मक बनाने तथा उसका प्रयोगात्मक अनुप्रयोग को प्रोत्साहित करती है।
- यह विद्यार्थियों में श्रम की गरिमा, आत्मविश्वास तथा आत्मानुशासन के गुणों का विकास करती है।

परियोजना विधि के दोष–

- परियोजना विधि समय तथा श्रम के दृष्टि से खर्चीली है।
- यह विधि गणितीय चिन्तन और तर्क का प्रशिक्षण नहीं देती है।
- इस विधि के द्वारा अधिगम अपूर्ण होता है क्योंकि प्रत्येक विद्यार्थी अलग–अलग कार्य करता है।
- इस विधि से किया गया शिक्षण असंगठित होता है तथा अधिगम के परिणाम असंतुलित होते हैं।

14.4.6 समस्या समाधान विधि

गणित की समस्या समाधान विधि वह विधि है जिसमें समस्या समाधान अथवा प्रतिबिम्बात्मक चिन्तन या तर्क की प्रक्रिया को शामिल किया जाता है। जैसा कि नाम से स्पष्ट है, समस्या समाधान विधि विद्यार्थियों के समक्ष समस्या का कथन करके उसका समाधान प्राप्त करने की चुनौती के साथ प्रारम्भ होती है। समस्या समाधान की प्रक्रिया में विद्यार्थी आँकड़ों का संग्रह, उसका विश्लेषण तथा निर्वचन की प्रक्रिया द्वारा समस्या का समाधान करते हैं। गणित शिक्षण में इस विधि का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों में सृजनात्मक एवं प्रतिबिम्बात्मक चिन्तन को बढ़ाना है। इसमें गणित की समस्याओं, शंकाओं तथा जटिलताओं के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई चिन्तन प्रक्रिया को शामिल किया जाता है। इस विधि में गणित की उन समस्याओं का सामान्यीकरण किया जाता है जो भविष्य में उस प्रकार की मिलती जुलती समस्याओं के समाधान में सहायक हों। समस्या समाधान विधि से शिक्षण करते समय कुछ निश्चित ओर विशिष्ट सोपानों का अनुसरण किया जाता है। आइए हम उन सोपानों को जानने का प्रयास करें।

समस्या समाधान विधि के सोपान– समस्या की पहचान तथा परिभाषीकरण– समस्या समाधान विधि का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सोपान समस्या को पहचानना तथा उसको परिभाषित करना है। समस्या विद्यार्थियों की क्रियाओं, वातावरण की क्रियाओं अथवा विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुसार कहीं से भी उत्पन्न हो सकती है। विद्यार्थियों को समस्याओं को पहचानने तथा परिभाषित करने में सक्षम होना चाहिए। चिन्हित की गई समस्या विद्यार्थियों के लिए रूचिकर, चुनौतीपूर्ण तथा अभिप्रेरणात्मक होनी चाहिए जिससे कि वे उसके समाधान में सहभागी हो सकें।

समस्या का विश्लेषण– समस्या को चिन्हित करने के पश्चात् उसे सजगतापूर्वक विश्लेषित करके यह पता किया जाना चाहिए कि कौन–कौन सी बातें ज्ञात हैं और किन बातों को हमें ज्ञात करना है। इसके अतिरिक्त समस्या के विभिन्न पक्षों के आन्तरिक सम्बन्धों को भी स्पष्टतः पहचाना जाना चाहिए।

परिकल्पना निर्माण– इस सोपान का केन्द्र बिन्दु समस्या के सम्भावित हल को खोजना होता है। ज्ञात तथ्यों तथा समस्या के उपभागों के मध्य उपस्थित अर्न्तसम्बन्धों का विश्लेषण, परिकल्पना निर्माण में विद्यार्थियों के लिए सहायक होता है।

परिकल्पना का परीक्षण– इस सोपान में समस्या के सम्भावित हल की वैधता के परीक्षण के लिए, उपयुक्त विधियों का चयन तथा उनका परीक्षण किया जाता है। यदि समस्या का समाधन निर्मित परिकल्पना द्वारा नहीं होता है तो विद्यार्थियों को अन्य वैकल्पिक परिकल्पनाओं का निर्माण कर उनका परीक्षण करने के लिए कहा जाता है।

परिणाम का सत्यापन– इस सोपान में प्राप्त परिणामों की पुनः जाँच की जाती है तथा परिणामों को सामान्यीकृत करके उन्हें दैनिक जीवन में लागू करते हैं।

समस्या समाधान विधि से शिक्षण के दौरान अध्यापक की भूमिका– समस्या समाधान विधि गणित शिक्षण की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं उपयुक्त विधि है। इस विधि के प्रयोग के दौरान शिक्षकों द्वारा समस्या समाधान के उपागमों जैसे कि विश्लेषण, संश्लेषण, आगमन अथवा निगमन का उपयोग किया जाता है। इन उपागमों को अलग–अलग अथवा उनके संयोजन के साथ गणित की समस्याओं का समाधान कराने के लिए शिक्षक को अनेक भूमिकाओं को निभाना होता है। समस्या समाधान विधि द्वारा गणित शिक्षण की सफलता शिक्षण के दौरान अध्यापक द्वारा की जाने वाली क्रियाओं पर निर्भर है। आइए समस्या समाधान विधि से शिक्षण के दौरान अध्यापक की भूमिका को जानें।

- कक्षा कक्ष में स्वतंत्रता के वातावरण को सुनिश्चित करना।
- समस्यात्मक परिस्थिति का सृजन करना।
- समस्याओं को पहचानने, उन्हें परिभाषित करने तथा उनका कथन करने में विद्यार्थियों की सहायता

करना।

- समस्या के विश्लेषण तथा उसको उप समस्याओं में विभाजित करने में विद्यार्थियों की सहायता करना।
- समस्या समाधान की पूरी प्रक्रिया के दौरान विद्यार्थियों का ध्यान मुख्य समस्या पर केन्द्रित रखना।
- विद्यार्थियों को प्रासंगिक श्रोत सामग्री की पहचान के लिए निर्देशित करना।
- संग्रहित आँकड़ों के मध्य महत्त्वपूर्ण सम्बन्धों को खोजने तथा प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करना।
- विद्यार्थियों में आलोचनात्मक चिन्तन, खोज तथा पृच्छा के गुणों को विकसित करने में सहायता देना।

समस्या समाधान विधि के गुण–

- यह विधि विद्यार्थियों में योजना बनाने, चिन्तन करने, तर्क करने तथा स्वतंत्र कार्य करने की अच्छी आदतों को विकसित करती है।
- यह विधि विद्यार्थियों की वैयक्तिक भिन्नता के अनुरूप है।
- यह विधि विद्यार्थियों में पहल तथा उत्तरदायित्व के गुणों को विकसित करती है।
- यह विधि विद्यार्थियों में समस्या की जटिलता को समझने की योग्यता विकसित करती है।
- यह विधि विद्यार्थियों में समस्या की प्रकृति को स्पष्टतः पहचानने की योग्यता विकसित करती है।
- यह विधि समस्या के सम्भावित हल को अनुमानित करने की योग्यता एवं तत्परता को विकसित करती हैं।
- यह विधि समस्या के प्रस्तावित समाधान के परीक्षण तथा आलोचनात्मक मूल्यांकन की योग्यता विकसित करती है।
- यह विधि वास्तविक जीवन की समस्याओं के समाधान का अनुभव प्रदान करती है।
- यह विद्यार्थियों में आलोचनात्मक चिन्तन के आधार पर, प्रभावशाली अधिगम के लिए मानसिक अभिवृत्ति का निर्माण करती है।

समस्या समाधान विधि के दोष–

- सभी विद्यार्थी समस्या का समाधान नहीं कर सकते।
- गणित की समस्याओं के समाधान में इस विधि का अधिक प्रयोग निरसता ले आता है।
- यह विधि समय साध्य है अतः निर्धारित समय में पाठ्यक्रम को पूरा करना सम्भव नहीं होता।
- इस विधि की सफलता गणित के ऐसे शिक्षकों पर निर्भर है जो आलोचनात्मक एवं प्रतिबिम्बात्मक चिन्तन में दक्ष हों।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. परियोजना विधि के कौन–कौन से सोपान है?

.....

.....

8. समस्या समाधान के लिए किन सोपानों का अनुसरण किया जाना चाहिए?

.....

.....

14.5 गणित शिक्षण की मुख्य प्रविधियाँ

जैसा कि इकाई के प्रारम्भ में चर्चा किया जा चुका है कि किसी एक शिक्षण विधि के अर्न्तगत एक से अधिक शिक्षण प्रविधियाँ हो सकती हैं। अब तक हमने गणित शिक्षण की अनेक प्रविधियों के बारें में चर्चा किया। अब हम गणित शिक्षण की विभिन्न प्रविधियों की चर्चा करेंगे क्योंकि गणित शिक्षण की किसी भी विधि की सफलता उसमें प्रयोग की जाने वाली प्रविधियों पर निर्भर करती है। गणित शिक्षण की कुछ महत्त्वपूर्ण प्रविधियाँ निम्नलिखित हैं–

14.5.1 मौखिक एवं लिखित कार्य

जब बिना लिखे मन ही मन में गणित की सारी क्रियाएँ की जाती हैं तथा समस्याओं का समाधान किया जाता है तो उसे मौखिक कार्य या मौखिक गणित कहा जाता है। मौखिक कार्य में समस्याएँ मौखिक अथवा लिखित दोनों ही रूप में प्रस्तुत की जा सकती हैं तथा विद्यार्थी बिना पेन या पेन्सिल की सहायता के, मन ही मन में इसका समाधान करते हैं और मौखिक रूप से उत्तर देते हैं। मौखिक कार्य प्रत्येक विद्यार्थी को, स्वप्रयास द्वारा समस्या का शुद्ध हल निकालने का अवसर देता है। मौखिक कार्य के द्वारा विद्यार्थियों को गतिपूर्वक अभ्यास करने का अवसर मिलता है जिससे आधारभूत प्रक्रियाओं को करने अथवा तथ्यों के सम्बन्ध में विचार करने की आदत विकसित होती है। मौखिक कार्य द्वारा समय और श्रम की बचत होती है एवं गणित शिक्षण के दौरान नीरसता तथा उबाऊपन में कमी आती है।

गणित के प्रश्नों को हल करने की प्रारम्भिक प्रक्रिया मौखिक गणित से प्रारम्भ होती है लेकिन जब गणित की समस्याओं में बड़ी–बड़ी संख्याओं तथा अधिक पदों का प्रयोग होने लगता है, और उनको हल करने की प्रक्रिया जटिल हो जाती है, उस समय लिखित कार्य की सहायता लेनी पड़ती है। गणित में लिखित कार्य के द्वारा विद्यार्थियों के कार्य की परख तथा उनके द्वारा स्वतंत्र अभ्यास करने की जाँच की जा सकती है। लिखित कार्य में जोड़ने घटाने की शुद्धता, चित्रों एवं चिन्हों की स्पष्टता, शुद्धता के साथ शीघ्रता, समस्या का हल निकालने के लिए सोपानों के तर्कपूर्ण तथा क्रमिक व्यवस्था एवं कार्य की सफाई पर ध्यान देना आवश्यक होता है। लिखित कार्य को समग्र रूप में भी रखा जा सकता है जिससे किसी निश्चित अवधि में विद्यार्थियों की प्रगति का मूल्यांकन किया जा सके। आइए हमलोग इस बात पर विचार करें कि मौखिक और लिखित गणित में से कौन सा कार्य अधिक महत्त्वपूर्ण है।

हम जानते हैं कि बच्चे स्वभावतः बातें करने और सुनने में अधिक रुचि लेते हैं अतः उनकी गणित की शिक्षा भी बातचीत करने एवं सुनने अर्थात् मौखिक कार्य द्वारा ही प्रारम्भ होनी चाहिए। प्रत्येक नवीन गणितीय तथ्य विद्यार्थियों के मस्तिष्क में सर्वप्रथम मोखिक रूप से ही स्थापित किया जाना चाहिए लेकिन मौखिक गणित के इस महत्त्व से यह अर्थ नहीं लगाना चाहिए कि इसके समक्ष लिखित गणित का कोई मूल्य ही नहीं है। लिखित कार्य को प्रत्येक अवस्था में मौखिक कार्य का व्यापक रूप माना जाना चाहिए क्योंकि मौखिक और लिखित कार्य मिलकर गणित शिक्षण को पूर्णता प्रदान करते हैं। उन्हें सदैव ही एक–दूसरे के सहयोगी के रूप में देखा जाना चाहिए तथा कक्षा में इकाई के रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

14.5.2 अभ्यास एवं पुनरावृत्ति

गणित के अधिगम के लिए अभ्यास सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रविधि है। कक्षा शिक्षण का लक्ष्य सदैव ही अधिगम को आदत में बदलना होता है। किसी भी विषयवस्तु पर अधिकार प्राप्त करने के लिए आदत का बनना आवश्यक होता है इसीलिए साधिकार अधिगम हेतु पुनरावृत्ति पाठ तीन प्रकार के होते हैं– पहले प्रकार के पाठ मूल विषयवस्तु के ज्ञान से सम्बन्धित होते हैं, इन पाठों में ऐसी विषयवस्तु को शामिल करना चाहिए जिससे विद्यार्थियों के अन्दर शुद्धता एवं शीघ्रता सुनिश्चित हो सकें तथा उस पर भावी अधिगम आधारित हो सकें।

दूसरें प्रकार के पुनरावृत्ति पाठ वो होते हैं जो कार्य पद्धति में दक्षता प्राप्त करने में सहायक होते हैं। इसके अन्तर्गत गणित के सोपनों का पालन करना, उनकी शुद्धता को जाँचना तथा मूल्यांकन करने के लिए शुद्ध गणना विधि का प्रयोग करना शामिल होता है।

तीसरे प्रकार के पुनरावृत्ति पाठ में ऐसे पाठों का रखा जाता है जो विद्यार्थियों में विचार करने एवं तर्क करने की शक्ति को विकसित करते हैं और विद्यार्थियों की एकाग्रचितता एवं रूचि को बढ़ाते हैं। इनके अन्तर्गत ऐसी प्रश्नावलियाँ, पहेलियाँ तथा ऐतिहासिक सामग्री शामिल होती है जो नियमित पाठ के अंश नहीं होते हैं। गणित के शिक्षण के दौरान औपचारिक अभ्यास के बजाय क्रियात्मक एवं प्रासंगिक अभ्यास को वरीयता दिया जाना चाहिए। प्रासंगिक अभ्यास के लिए विषयवस्तु का अवबोध तथा उसके प्रयोग की पूर्व जानकारी आवश्यक है। शिक्षकों को अभ्यास पाठ के आयोजन के दौरान निम्नांकित बातों को ध्यान में रखना चाहिए–

- विषयवस्तु का अवबोध किए बिना उसे रटने को प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए।
- अभ्यास को जहाँ तक सम्भव हो रोचक बनाया जाए।
- मूल बातों के सीखने और समझने के पश्चात् ही अभ्यास कराया जाना चाहिए।
- वैयक्तिक भिन्नता को ध्यान में रखकर अभ्यास कराया जाना चाहिए जिससे कि विद्यार्थी अपनी–अपनी योग्यता और कार्य क्षमता के अनुसार स्वगति से आगे बढ़ सकें।
- अभ्यास के कालांश छोटे होने चाहिए और उस दौरान विद्यार्थियों की उपलब्धि की जाँच बार–बार होनी चाहिए।
- अभ्यास का उद्देश्य केवल विद्यार्थियों को व्यस्त रखना नहीं होना चाहिए बल्कि उसमें विचारोत्तेजक स्थितियाँ होनी चाहिए ताकि यांत्रिकता से बचा जा सकें।
- अभ्यास में गति की अपेक्षा शुद्धता पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।
- अभ्यास को सजा के रूप में अथवा थोपे जाने वाले कार्य के रूप में नहीं कराना चाहिए।

14.5.3 अभ्यास कार्य तथा गृह कार्य

गणित का प्रत्येक अध्यापक गृहकार्य देता है। गृहकार्य का महत्त्वपूर्ण लाभ यह है कि यह विद्यार्थियों में स्वाध्याय एवं स्वावलम्बन की आदत विकसित करने के साथ ही साथ अभ्यास कार्य के लिए अतिरिक्त समय देता है। गणित में सीखे हुए सिद्धान्तों एवं नियमों के अभ्यास के लिए प्रायः विद्यालयों में उतना समय नहीं

मिलता है जितने में उनसे सम्बन्धित अभ्यास अथवा प्रयोग सम्बन्धित कार्य भली–भाँति किया जा सके और यही कारण है कि कक्षा में जो भी पढ़ाया जाता है उससे सम्बन्धित कार्य बच्चों को घर पर करने के लिए दे दिया जाता है। यह कार्य लिखित अथवा मौखिक रूप में याद करना, व्यवहारिक जीवन में उपयोग करना, निरीक्षण करना या निर्माण करना आदि अनेक रूपों में हो सकता है और इसे ही गृहकार्य के रूप में जाना जाता है।

कुछ शिक्षाशास्त्री विद्यार्थियों को गृहकार्य देने के पक्ष में नहीं है। उनका मानना है कि गृहकार्य देकर हम बालकों की स्वतंत्रता का अपहरण करते है तथा गृहकार्य के द्वारा बच्चों में अनेक बुराइयों को जन्म देते हैं, जैसे कि गृहकार्य पूरा न होने पर विद्यालय न जाना, झूठ बोलना, नकल करना इत्यादि। इसके अतिरिक्त गृहकार्य चूँकि बिना शिक्षक के निर्देशन के होता है अतः ये अध्ययन की अनुचित आदतों का विकास करता है लेकिन फिर भी यदि गृहकार्य को उचित मापदण्ड के अनुसार भली–भाँति सोच समझकर दिया जाए तो इससे विद्यार्थियों के खाली समय का सदुपयोग होगा, सीखे गए ज्ञाना की पुनरावृत्ति होगी साथ ही साथ अभ्यास तथा प्रयोग में आसानी होगी। गृहकार्य के स्थान पर ऐसा अभ्यास कार्य दिया जाना चाहिए जो प्रत्येक विद्यार्थी की वैयक्तिक प्रगति के अनुकूल हो तथा उसे स्वअधिगम के लिए प्रोत्साहित कर सके। अभ्यास कार्य का आयोजन शिक्षण का महत्त्वपूर्ण अंग होना चाहिए तथा इसमें दो बातें समाहित होनी चाहिए–

I. किए जाने वाले कार्य का आयोजन

II. निर्धारित समयावधि में कार्य की समाप्ति के लिए कार्य पद्धति।

अच्छे अभ्यास कार्य को आयोजित करने के कुछ सिद्धान्त निम्नलिखित हैं–

- अभ्यास कार्य सुस्पष्ट, सुनिश्चित एवं संक्षिप्त होना चाहिए।
- अभ्यास कार्य की व्याख्या इस प्रकार से होनी चाहिए कि प्रत्येक विद्यार्थी को उससे अपेक्षित कार्य की समझ हो सके।
- अभ्यास कार्य करते समय विद्यार्थियों के समक्ष आने वाली कठिनाइयों की ओर संकेत उसमें निहित होना चाहिए।
- अभ्यास कार्य रोचक प्रेरक और विचारोत्तेजक होना चाहिए।
- अभ्यास कार्य में दिए गए कार्य का लाभ भिन्न–भिन्न प्रकार का होना चाहिए।
- अभ्यास कार्य नवीन पाठ को पूर्वानुभवों व परिचित विषयवस्तु से सम्बद्ध करने वाला होना चाहिए।

14.6 सारांश

विद्यालयी पाठ्यक्रम में गणित हमेशा एक महत्त्वपूर्ण विषय रहा है। विगत् कुछ वर्षों से गणित सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को कल्पनाशील, क्रियात्मक व रुचिकर बनाने की माँग की जाती रही है। गणित शिक्षण के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए आधुनिक शिक्षाशास्त्रियों ने गणित शिक्षण की अनेक विधियों तथा प्रविधियों की खोज की है तथा गणित शिक्षण विधियों को प्रभावित करने वाले कारकों की भी पहचान की है। ये कारक उद्देश्यों, विषयवस्तु तथा शिक्षक से सम्बन्धित कारक हो सकते हैं। गणित शिक्षण की विधियों को रुचिकर एवं उपयोगी बनाने के लिए उनका चयन करते समय उद्देश्य, प्रकरण, विद्यार्थी की योग्यताएँ तथा ज्ञान की उपयोगिता इत्यादि को ध्यान में रखा जाना चाहिए। गणित शिक्षण की प्रमुख विधियों में आगमन–निगमन, विश्लेषण–संश्लेषण, प्रयोगशाला, अनुसंधान, परियोजना तथा समस्या समाधान विधि हैं। आगमन–निगमन विधि से शिक्षण कार्य करते समय शिक्षक को चाहिए कि वह प्रकरण का प्रारम्भ आगमन विधि से करें तथा आगे बढ़ते हुए निगमन विधि से उसका अन्त करें। विश्लेषण तथा संश्लेषण विधि की कार्यप्रणाली पर विचार करने से पता चलता है कि यह दोनों विधियाँ एक–दूसरे की पूरक हैं। अतः शिक्षण की प्रक्रिया को रुचिकर तथा पूर्ण बनाने के लिए दोनों विधियों के संयोजन का उपयोग किया जाना चाहिए।

ज्यामिति एवं क्षेत्रमिति जैसे गणित के प्रकरणों के शिक्षण के लिए प्रयोगशाला विधि तथा विद्यार्थियों में समस्या को स्वयं के प्रयास से हल करने की योग्यता विकसित करने के लिए अनुसंधान विधि का प्रयोग किया जाना चाहिए। गणित के उपयुक्त प्रकरणों को परियोजना विधि से पढ़ाया जाना चाहिए जिससे कि विद्यार्थियों में परियोजना बनाने तथा उनके क्रियान्वयन के गुण को विकसित किया जा सके। समस्या समाधान विधि गणित की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं उपयुक्त विधि है। इसके प्रयोग के दौरान शिक्षक द्वारा विश्लेषण–संश्लेषण, आगमन तथा निगमन उपागमों को एक साथ मिलाकर अथवा अलग–अलग अपनाया जाना चाहिए। मौखिक एवं लिखित कार्य प्रविधि का गणित शिक्षण के दौरान बहुतायत से प्रयोग किया जाता है। लिखित कार्य को सदैव ही मौखिक कार्य का व्यापक रूप माना जाना चाहिए चूँकि मौखिक और लिखित कार्य मिलकर गणित शिक्षण को पूर्णता प्रदान करते हैं। गणित शिक्षण की अन्य प्रविधियों में अभ्यास एवं पुनरावृत्ति तथा विद्यार्थियों को गृहकार्य देना है। इनका उपयोग यदि शिक्षक सजगतापूर्वक करता है तो वह गणित के शिक्षण– अधिगम को रुचिकर, सृजनात्मक एवं सहज बना सकता है।

14.7 अभ्यास के प्रश्न

1. गणित शिक्षण की विधियों के चयन के समय कौन–सी बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए?
2. उदाहरण की सहायता से आगमन तथा निगमन विधि में अन्तर कीजिए।
3. संश्लेषण विधि के गुण–दोष क्या हैं?
4. प्रयोगशाला विधि की प्रमुख सीमाएँ क्या हैं?
5. परियोजना विधि के मुख्य लाभ क्या हैं?
6. अभ्यास एवं गृहकार्य देते समय किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए?

14.8 चर्चा के बिन्दु

1. समस्या समाधान विधि से शिक्षण के दौरान शिक्षक की क्या भूमिका होनी चाहिए। चर्चा कीजिए।
2. गणित के अधिगम में मौखिक तथा लिखित कार्य का क्या महत्त्व है? चर्चा कीजिए।

14.9 बोध प्रश्नो के उत्तर

1. शिक्षण विधि 'कैसे' से सम्बन्धित है जबकि शिक्षण प्रविधि 'किसके साथ' पर बल देती है। शिक्षण विधि के अन्तर्गत शिक्षण की गति और दिशा का निर्धारण होता है जबकि प्रविधि, शिक्षण विधि पर निर्भर रहती है। शिक्षण विधियों में तार्किक एवं मनोवैज्ञानिक पक्षों के साथ–साथ सामाजिक, दार्शनिक एवं आर्थिक पक्ष को भी आधार माना जाता है, जबकि शिक्षण प्रविधि में केवल तार्किक एवं मनोवैज्ञानिक पक्ष पर ही जोर दिया जाता है।
2. शिक्षण विधियों को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों में शिक्षण के उद्देश्यों, विषयवस्तु तथा शिक्षक से सम्बन्धित कारक हैं।
3. आगमन विधि समझ को बढ़ाती है तथा विद्यार्थियों को सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय रखती है। यह विधि अवलोकन तथा अन्वेषण के अवसर को बढ़ाती है तथा तार्किक एवं आलोचनात्मक चिन्तन को विकसित करती है। इस विधि के प्रयोग से विद्यार्थियों की रुचि बनी रहती है तथा उनका आत्मविश्वास बढ़ता है। यह विधि रटन्त अधिगम को कम करके अर्थपूर्ण अधिगम को बढ़ाती है।
4. विश्लेषण विधि की सीमाओं के रूप में कहा जा सकता है कि विश्लेषण विधि लम्बी तथा समय एवं श्रम साध्य है। इस विधि के प्रयोग से विद्यार्थियों में दक्षता एवं शीघ्रता के गुण को विकसित नहीं किया जा सकता। यह विधि विद्यार्थियों के समस्त सूचनाओं को सुसंगठित ढंग से प्रस्तुत नहीं करती है तथा गणित के सभी प्रकरणों के लिए उपयोगी नहीं है।

5. प्रयोगशाला विधि द्वारा पढ़ाए जा सकने वाले तीन प्रकरण इस प्रकार हो सकते हैं–

   - शंकु तथा बेलन का सम्पूर्ण पृष्ठ एवं आयतन
   - $(a+b)^2$ एवं $(a-b)^2$ का विस्तार
   - वृत्त की परिधि तथा क्षेत्रफल

6. अनुसंधान विधि द्वारा शिक्षण के प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थियों में

   - पृच्छा एवं अनुसंधान की आदत विकसित करना।
   - सुनने, अवलोकन करने, प्रश्न पूछने तथा खोज करने की योग्यता का विकास करना।
   - भविष्य के स्वअधिगम के लिए मजबूत आधार तैयार करना।

7. परियोजना विधि के सोपानों में प्रमुखतः – परियोजना का चयन, नियोजन, क्रियान्वयन, मूल्यांकन तथा अभिलेखन है।

8. समस्या समाधान विधि के सोपान के अर्न्तगत समस्या की पहचान तथा परिभाषीकरण, विश्लेषण, परिकल्पना निर्माण, परिकल्पना परीक्षण एवं परिणामों का सत्यापन शामिल है।

14.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. यादव, एस0आर0 (2005). टीचिंग ऑफ मैथेमैटिक्स, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर.
2. मंगल, एस0के0 (2005). गणित शिक्षण, नई दिल्ली : आर्य बुक डिपो.
3. अग्रवाल, एम0बी0एल0 (2014). गणित शिक्षण, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
4. बालसुब्रमण्यम्, पी0एस0 (2010). टीचिंग ऑफ मैथेमैटिक्स, हैदराबाद : नीलकमल पब्लिकेशन्स।

इकाई– 15 : विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित की प्रासंगिकता

इकाई की संरचना

15.1 प्रस्तावना

15.2 इकाई के उद्देश्य

15.3 गणित का अर्थ एवं प्रकृति

15.3.1 गणित का अर्थ

15.3.2 गणित की प्रकृति

15.3.3 गणितीय प्रणाली

15.3.4 गणित का सहसम्बन्ध

15.4 विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित की सार्थकता

15.4.1 गणित शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्त्व

15.4.2 विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित का स्थान

15.4.3 गणित शिक्षण के मूल्य

15.5 गणित की विद्यालयी पाठ्यचर्या में वर्तमान प्रवृत्तियाँ

15.6 प्रमुख गणितज्ञों का जीवन परिचय एवं उनका योगदान

15.7 सारांश

15.8 अभ्यास के प्रश्न

15.9 चर्चा के बिन्दु

15.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

प्राचीन काल से ही गणित मानव के चिन्तन का एक प्रमुख भाग रहा है। नैपोलियन का कथन है कि– गणित की प्रगति और सुधार, राज्य की समृद्धि से जुड़े हुए है, गणित के सर्वकालिक महत्त्व और प्रासंगिकता को दर्शाता है। गणित की जड़ें हमारे दिन प्रतिदिन की क्रियाओं में निहित है तथा यह वर्तमान समय की विकसित विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का आधार है। गणित एक ऐसा विषय है जिसकी उत्पत्ति स्वयं मनुष्य ने अपनी सामाजिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए की है। प्राचीन काल में गणित का ज्ञान मानव जीवन से सम्बन्धित दैनिक समस्याओं के समाधान के लिए दिया जाता था। लेकिन धीरे–धीरे गणित अन्य विषयों के अध्ययन हेतु आवश्यक होता गया और ऐसा गणित की प्रकृति और इसकी विशेषताओं के कारण हुआ।

गणित का क्या अर्थ है तथा इसकी उत्पत्ति कैसे हुयी? इसकी विशेषताएँ क्या है? तथा गणित को विषय के रूप में विद्यालयी पाठ्यचर्या के अन्तर्गत क्यों पढ़ाया जाना चाहिए, इत्यादि प्रश्नों से सम्बन्धित उत्तर पर प्रस्तुत इकाई में विचार–विमर्श किया गया है।

15.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. गणित के अर्थ, एवं प्रकृति का वर्णन कर सकेंगे।
2. गणितीय प्रणाली, गणितीय पदों की व्याख्या कर सकेंगे।
3. गणित का उसके विभिन्न शाखाओं तथा अन्य विषयों के साथ सहसम्बन्ध को स्पष्ट कर सकेंगे।
4. विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित की सार्थकता को रेखांकित कर सकेंगे।
5. गणित शिक्षण के मूल्यों की चर्चा कर सकेंगे।
6. विद्यालयी स्तर पर गणित की वर्तमान प्रवृत्तियों का वर्णन कर सकेंगे।
7. प्रमुख गणितज्ञों का जीवन परिचय एवं योगदान की चर्चा कर सकेंगे।

15.3 गणित का अर्थ एवं प्रकृति

प्रायः सभी महान शिक्षकों एवं दार्शनिकों ने गणित को मानव विकास का प्रतीक माना है। प्राचीन काल से ही शिक्षा में गणित को उच्च स्थान प्राप्त रहा है। प्लेटो ने तो अपनी पाठशाला के द्वार पर यह यहाँ तक लिख रखा था कि जो व्यक्ति रेखागणित को नहीं समझते वे शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से पाठशाला में प्रवेश ना करें। वर्तमान समय में भी गणित को मानव के बौद्धिक एवं सांस्कृतिक विकास का सर्वश्रेष्ठ साधन मानकर पाठ्यचर्या में उच्च स्थान दिया गया है। इसका प्रमुख कारण यह है कि गणित विषय की संरचना अन्य विद्यालयी विषयों की अपेक्षा अधिक मजबूत एवं सुदृढ़ है। गणित की संरचना को जानने व समझने के लिए उसके अर्थ एवं प्रकृति को समझना आवश्यक है। आइए हमलोग गणित के अर्थ को समझने का प्रयत्न करें।

15.3.1 गणित का अर्थ

गणित' शब्द बहुत ही प्राचीन है तथा वैदिक साहित्य में इसका बहुतायत से प्रयोग किया गया है। गणित का शाब्दिक अर्थ है– वह शास्त्र जिसमें गणना की प्रधानता हो। गणित के शब्दकोषीय अर्थ को बताते हुए कहा गया है कि ''गणित या तो संख्या और स्थान का विज्ञान है अथवा यह मापन, मात्रा और परिमाण का विज्ञान है।'' इस प्रकार से कहा जा सकता है कि गणित अंक, आधार, चिन्ह (प्रतीक) इत्यादि संक्षिप्त संकेतों का वह विधान है जिसकी सहायता से परिमाण, दिशा तथा स्थान का बोध होता है।

गणित विषय का प्रारम्भ गिनती से हुआ माना जा सकता है एवं संख्या पद्धति इसका एक विशेष क्षेत्र है जिसकी सहायता से गणित की अन्य शाखाओं का विकास किया गया है। गणित को परिभाषित करते हुए बर्ट्रेण्ड रसेल ने कहा है कि ''गणित एक ऐसा विषय है जिसमें हम यह भी नहीं जानते हैं कि हम किसके बारें में बात कर रहे हैं और न ही यह जान पाते हैं कि जो हम कह रहे हैं, वह सत्य है।'' काण्ट महोदय ने गणित के बारे में बताया है कि ''एक प्राकृतिक विज्ञान केवल उसी परिस्थिति में विज्ञान है जब तक उसका स्वरूप गणितीय है। ''लॉक के अनुसार ''गणित वह मार्ग है जिसके द्वारा बच्चों के मन या मस्तिष्क में तर्क करने की आदत स्थापित होती है।'' बेकन के अनुसार, ''गणित सभी विज्ञानों का मुख्य द्वार एवं कुँजी है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गणित स्थान, संख्याओं, गणनाओं, मापन परिमाण तथा दिशा का विज्ञान है। गणित, विज्ञान की क्रमबद्ध, संगणित तथा ऐसी यथार्थ शाखा है जिसमें मात्रात्मक तथ्यों एवं सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।

15.3.2 गणित की प्रकृति

प्रत्येक विषय के शिक्षण–अधिगम के कुछ निश्चित लक्ष्य एवं उद्देश्य तथा उसका संरचना होती है जिसके आधार पर उस विषय की प्रकृति को समझा जा सकता है। किसी भी विषय की प्रकृति का निर्धारण उस विषय की संरचना के आधार पर ही किया जा सकता है। गणित विषय की संरचना के आधार पर गणित की प्रकृति के बारे में निम्नांकित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं–

- गणित में संख्या, स्थान, परिमाण तथा मापन का अध्ययन किया जाता है।
- गणित की अपनी विशेष भाषा है जो सार्वभौमिक है। इसमें गणितीय पद, गणितीय प्रत्यय, सूत्र, प्रतीक तथा सिद्धान्त शामिल है।
- गणित का ज्ञान यथार्थ, क्रमबद्ध, तार्किक एवं सुस्पष्ट होता है।
- गणित में सूक्ष्म प्रत्ययों को स्थूल रूप में परिवर्तित किया जाता है।
- गणित में प्रत्यक्ष उपपत्ति, अप्रत्यक्ष, प्रतिपरिवर्तित उपपत्ति तथा प्रतिकूल उदाहरण द्वारा अप्रमाणित करने की विधियों का प्रयोग किया जाता है।
- गणित के 'स्वयं सिद्ध स्वरूप' के अन्तर्गत अपरिभाषित पद, अभिग्रहीतियाँ तथा साध्य को शामिल किया जाता है।

15.3.3 गणितीय प्रणाली

गणित के अन्तर्गत अनेक घटक शामिल होते हैं जिन्हें हम गणितीय संरचना अथवा गणितीय प्रणाली कह सकते हैं। किसी भी गणितीय प्रणाली के निम्नांकित भाग हो सकते हैं–

अपरिभाषित पद– रेखागणित अथवा गणित की कुछ अन्य शाखाओं में किसी प्रत्यय के लिए प्रारम्भ में कुछ अपरिभाषित पदों को मान (परिकल्पित) लेना पड़ता है तथा बाद के कुछ पदों को पूर्व में परिकल्पित (माने गये) पदों के रूप में परिभाषित किया जाता है। इन अपरिभाषित पदों का चयन पूर्णतः स्वेच्छा तथा सामान्यतया गणितीय संरचना के विकास को स्पष्ट और सरल करने के लिए होता है। जैसे कि बिन्दु, रेखा, सम्मुचय, चर, समतल इत्यादि। ये पद यथार्थ निरीक्षण से निकाले जाते हैं और सहज बोध और कल्पना शक्ति पर निर्भर होते हैं।

परिभाषित पद– गणित में ऐसे पदों को अपरिभाषित पदों के रूप में परिभाषित करते हैं। उदाहरण के लिए– ऐसा त्रिभुज जिसकी दो भुजाएँ बराबर हो, समद्विबाहु त्रिभुज कहलाता है। अतः किसी समद्विबाहु त्रिभुज को परिभाषित करने के लिए विद्यार्थी को पहले त्रिभुज, 'बराबर' तथा 'भुजाएँ' इत्यादि को जानना होगा।

स्वयं–सिद्धियाँ– ये अपरिभाषित पदों से निकाले गये निश्चय कथन हैं। इनको ऐसे सम्बन्धों के रूप में व्यक्त करते हैं जिन्हें सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होती। उदाहरण के लिए–

1. दो बिन्दुओं को जोड़ने वाली एक और केवल एक ही सरल रेखा प्राप्त की जा सकती है।
2. दो रेखाएं किसी एक बिन्दु पर ही एक दूसरे से मिल सकती है।
3. किसी की सरल रेखा खण्ड का एक और केवल एक ही मध्य बिन्दु हो सकता है। उपर्युक्त तीनों उदाहरण में अपरिभाषित पद– 'रेखा' और बिन्दु है।
4. पियानो (Peano) की प्राकृतिक संख्याओं की संकल्पना भी स्वयं–सिद्ध प्रणाली, स्वयं सिद्ध संरचना का उदाहरण है। इसमें '0', 'संख्या' तथा 'परवर्ती' पद अपरिभाषित पद है तथा स्वयं सिद्ध कथन–

A_1 : 0 एक संख्या है।

A_2 : किसी संख्या की परिवर्ती एक संख्या होती है।

A_3 : किन्हीं दो संख्याओं का एक ही परिवर्ती संभव नहीं है।

A_4 : 0 किसी संख्या का परिवर्ती नहीं है।

A_5 : यदि P एक ऐसा गुण धर्म है कि–

- 0 में P का गुण धर्म है और
- जब भी N में P गुण धर्म है और N के परिवर्ती में भी P गुण धर्म है, तो प्रत्येक संख्या में P गुण धर्म होगा।

प्रमेय– प्रमेय वह कथन है जिसे स्वयं सिद्ध कथनों द्वारा तर्क से प्राप्त किया जाता है। दैनिक जीवन में हम सामान्यतः जिस तर्क का प्रयोग करते हैं उन्हें 'अनुप्रयोग के नियम' कहा जाता है। इस नियम के अनुसार–

(i) यदि कथन p, कथन q को इंगित करता है और

(ii) यदि कथन p सही है तो कथन q सदैव सही होगा।

जब हम इन अनुप्रयोग के नियमों को स्वयंसिद्धियों पर लागू करते हैं तो हम 'नये कथनों का निर्माण' करते हैं तथा इस प्रकार इसी प्रक्रिया को करते हुए क्रमशः जहाँ पहुँचते हैं वह प्रमेय कहलाता है। उदाहरण के लिए–

- अर्द्ध वृत्त का कोण समकोण होता है।
- यदि दो समान्तर रेखाओं को कोई तिर्यक रेखा काटे तो एकान्तर कोण बराबर होते हैं।
- किसी त्रिभुज में बड़ी भुजा के सामने का कोण बड़ा होता है।

15.3.4 गणित का सहसम्बंध

अपने विशिष्ट गुणों और प्रकृति के कारण गणित की दैनिक जीवन तथा अध्ययन के अन्य क्षेत्रों में व्यापक उपयोगिता साबित हुयी है। यही कारण है कि गणित ज्ञान के अन्य क्षेत्रों के साथ सहसम्बन्धित है। गणित के शिक्षक के लिए गणित विषय का अन्य विषयों के साथ सम्बन्ध का ज्ञान आवश्यक है जिससे कि वह अन्य विषयों के साथ गणित के सहसम्बन्ध का लाभ उठाते हुए अपने शिक्षण उपयोगी, प्रभावशाली एवं रुचिकर बना सके। आइए हम लोग गणित के सहसम्बन्ध को जानने व समझने का प्रयास करें।

गणित का जीवन के साथ सहसम्बन्ध– गणित एक ऐसा विषय है जिसकी हमारे दिन–प्रतिदिन के जीवन में बहुत ही अधिक उपादेयता है। यह समय तथा मात्रा के मापन में अनिवार्य आवश्यकता है। मनुष्य किसी भी प्रकार का व्यवसाय करे या किसी भी समाज में जीवन यापन करे, कोई भी दिनचर्या अपनाए, वह गणित के बिना नहीं रह सकता है। एक सामान्य व्यक्ति भी जब अपने आय की गणना करता है, अपने व्यय की योजना बनाता है तथा अपने बचत का अनुमान लगाता है तो वह बहुत से गणितीय प्रत्ययों का प्रयोग करता है। गणित के प्रारम्भिक प्रत्ययों जैसे कि ब्याज दर, बैंकिग, प्रतिशत, अनुपात का ज्ञान, समाज में सुचारू जीवन–यापन के लिए आवश्यक है। गणित शिक्षण के दौरान गणित विषय के शिक्षक को गणित के व्यवहारिक अनुप्रयोग से सम्बन्धित उदाहरणों का प्रयोग करना चाहिए जिससे कि गणित का अधिगम रुचिकर एवम् अर्थपूर्ण हो सके।

गणित का इसके विभिन्न शाखाओं के साथ सहसम्बन्ध– गणित की विभिन्न शाखाओं जैसे कि अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित, त्रिकोणमिति, निर्देशांक ज्यामिति इत्यादि पृथक् विषय रूप में नहीं पढ़ाया जाना चाहिए। कोठारी आयोग (1964–66) का मानना है कि गणित भी विभिन्न शाखाओं को

सम्बन्धित करने के लिए शिक्षण के समवाय उपागम को अपनाया चाहिए। 'फलन' के प्रत्यय तथा समुच्चय की भाषा को, अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित तथा विश्लेषण में उपयोग किया जा सकता है। गणित की विभिन्न शाखाओं को एक–दूसरे से सम्बन्धित करने के लिए गणितीय संरचना के प्रत्यय महत्त्वपूर्ण होंगे। बिन्दुपथ के प्रत्यय के द्वारा समतल एवं ठोस ज्यामिति में सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। इसी प्रकार बीजगणितीय प्रक्रिया के लिए अंकगणित को आधार बनाया जाना चाहिए जैसे कि 32 में क्या जोड़ने पर 25 प्राप्त होगा? इसे बीजगणितीय समीकरण $32+x=25$ को निर्मित करके प्राप्त किया जा सकता है। निम्नलिखित उदाहरण के द्वारा बीजगणित, अंकगणित तथा रेखागणित के सहसम्बन्ध को समझा जा सकता है–

बीजगणित– सर्वसमिका $(a+b)^2$ का विस्तार

इसे $(a+b)$ में $(a+b)$ का गुणा करके समान पदों को एकसाथ जोड़कर प्राप्त किया जा सकता है अतः $(a+b)^2=a^2+b^2+2ab$

रेखागणित– $(a+b)^2=a^2+b^2+2ab$

$(a+b)^2$ एक ऐसे वर्ग के क्षेत्रफल को प्रदर्शित करेगा जिसकी एक भुजा $(a+b)$ इकाई होगी तथा पुनः इस वर्ग को दो ऐसे वर्गों में विभाजित कर सकते हैं जिनकी भुजाएँ क्रमशः a इकाई तथा b इकाई होंगी एवं दो ऐसे आयत बनेंगे जिनकी भुजाएँ a तथा b होंगी।

अंकगणित– उसी सर्वसमिका का उपयोग करके $(101)^2$ को इस प्रकार कर सकते हैं–

$$(101)^2 = (100+1)^2 = (100)^2+(1)^2 + 2 \times (100) \times (1)$$

गणित की एक ही शाखा के विभिन्न प्रकरणों के बीच सहसम्बन्ध– गणित की किसी भी शाखा के अलग–अलग प्रकरण भी सहसम्बन्धित होते हैं जैसे बीजगणित का प्रकरण 'बहुपद', 'समीकरण' से सम्बन्धित है उसी प्रकार 'युगपद समीकरण' का हल रेखीय समीकरण के समाधान के ज्ञान पर आधारित होता है। 'द्विघात समीकरणों' के हल में 'द्विघात पदों का गुणनखण्ड' सहायक होता है। इसी प्रकार रेखागणित में त्रिभुज के क्षेत्रफल का ज्ञान 'चतुर्भुज', 'आयत', 'वर्ग', 'समानान्तर चतुर्भुज', 'सम चतुर्भुज', 'समलम्ब चतुर्भुज' इत्यादि के क्षेत्रफल को ज्ञात करने में सहायक होता है। इसी प्रकार अंकगणित में प्रतिशत के ज्ञान के बगैर 'ब्याज', 'छूट' इत्यादि की समझ नहीं हो सकती है। अतः गणित की किसी भी शाखा में प्रकरण क्रमिक रूप से व्यवस्थित होते हैं तथा एक दूसरे से सम्बन्धित एवं आश्रित होते हैं।

गणित का अन्य विषयों के साथ सहसम्बन्ध–

गणित और भौतिक विज्ञान– भौतिक विज्ञान के अध्ययन में पग–पग पर गणित की आवश्यकता होती है। भौतिक विज्ञान के नियमों जैसे कि 'गति के नियम', 'लीवर के नियम', 'प्रकाश के परावर्तन' तथा 'अपवर्तन के नियम', 'चुम्बकीय आकर्षण के नियम', 'विद्युत संचालन के नियम', 'ग्रहों की गति के नियम' इत्यादि सभी में मापन, गणना तथा पारस्परिक सम्बन्ध को जानने के लिए गणित का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

गणित और रसायन विज्ञान– रसायन विज्ञान में हम विभिन्न पदार्थों के निर्माण तथा गुणों का अध्ययन करते हैं जो कि गणित पर आधारित है। किसी भी पदार्थ की रचना ज्ञात करने के लिए चाहे

वह भार के अनुसार हो या आयतन के, हमें गणित के ज्ञान की आवश्यकता होती है। 'रासायनिक संयोग के नियम', 'अणु और परमाणु के अध्ययन', 'पदार्थों के नाम व सूत्र' इत्यादि सभी गणित के मापन, गणना इत्यादि पर आधारित होते हैं।

गणित और जीवविज्ञान– जीविज्ञान के सभी परीक्षणों एवं प्रयोगों में गणित का ज्ञान आवश्यक होता है। जन्तुओं और पदार्थों की 'कोशिकाओं की रचना', 'वंशक्रम', 'आहार', 'प्रजनन', 'वृद्धि' सभी में मापन एवं गणना का आधार गणित ही है।

गणित और अभियान्त्रिकी– अभियान्त्रिकी के अन्तर्गत 'बड़े–बड़े भवन', 'पुल', 'बाँध का निर्माण', 'रेलवे लाइन का निर्माण', 'विभिन्न प्रकार की मशीनों के निर्माण व संचालन' इत्यादि में गणित का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

गणित और सामाजिक विज्ञान– गणित, सामाजिक विज्ञान के सभी क्षेत्रों–इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र एवं नागरिक शास्त्र से नजदीकी रूप से सम्बन्धित है। इतिहास के अन्तर्गत विभिन्न शासकों का 'शासनकाल', 'साम्राज्य विस्तार', 'शासन प्रबन्ध तथा विभिन्न युद्धों' इत्यादि के बारें में जानकारी गणित की सहायता से ही होती है। भूगोल के अन्तर्गत पृथ्वी का 'आकार', 'लम्बाई–चौड़ाई', 'पृथ्वी की दैनिक तथा वार्षिक गति', 'सूर्यग्रहण व चन्द्रग्रहण', 'विभिन्न देशों की जलवायु एवं उपज' तथा 'स्थानीय समय' व 'अन्तर्राष्ट्रीय समय' के ज्ञान में गणित की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। अर्थशास्त्र के अन्तर्गत वस्तुओं के 'उत्पादन', 'क्रय–विक्रय', 'वितरण', 'आयात–निर्यात', 'मुद्रा की स्थिति एवं विनियम', 'व्यापार बैकिंग' इत्यादि सभी के लिए गणित का ज्ञान एक पूर्व आवश्यकता है। नागरिकशास्त्र के अन्तर्गत भी चुनावप्रणाली 'मतों की गणना', 'मतों के मूल्य की गणना' इत्यादि गणित के ज्ञान पर आधारित है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सम्पूर्ण सामाजिक विज्ञान गणित के ज्ञान पर आधारित है।

गणित और भाषाएँ– सभी भाषाओं का अपना व्याकरण होता है और सही अर्थों में व्याकरण भाषाओं का गणित होता है। भाषा के अन्तर्गत चिन्ह, वाक्य, विराम, क्रिया, कर्म, संज्ञा विशेषण इत्यादि का प्रयोग किया जाता है जिसके लिए गणित का ज्ञान आवश्यक होता है। गणित और भाषा का सम्बन्ध एक और दृष्टि से भी देख जा सकता है। गणित के इबारती प्रश्नों में भाषा के ज्ञान की आवश्यकता होती है। भाषा को समझे बिना न तो ऐसे प्रश्नों की रचना हो सकती है न ही उनका समाधान हो सकता है।

गणित तथा कला, संगीत एवं नृत्य– चित्रकला पूरी तरह से गणित पर आधारित है। किसी भी प्रकार का चित्र अथवा डिजाइन में रेखागणित एवं अंकगणित का ज्ञान सहायक होता है। संगीत तथा उसके सभी यंत्र गणितीय गणनाओं पर आधारित होते हैं। नृत्यकला में अंगों के संचालन, लय तथा ताल पर विभिन्न मुद्राओं की स्थिति सब कुछ गणित पर आधारित होती है।

इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि विद्यालयी स्तर पर सभी विषय गणित से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं तथा विद्यालयी स्तर पर शिक्षण के समय गणित के सभी विषयों से सम्बन्ध को ध्यान में रखकर शिक्षण करने से शिक्षण अधिगम के सकारात्मक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. गणित का अर्थ स्पष्ट कीजिए?

.....

.....

2. स्वयं–सिद्धियाँ क्या हैं?

.....

.....

3. प्रमेय को परिभाषित कीजिए?

.....

.....

15.4 विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित की सार्थकता

गणित को सभी विज्ञानों की जननी माना गया है आज के वर्तमान समय में सम्पूर्ण विश्व में ज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व बढ़ोत्तरी हुयी है तथा यदि हमें अपने को इस परिवर्तित हो रहे परिवेश में प्रभावशाली ढंग से समायोजित करना है तो हमारे लिए गणित का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। गणित हमारे दैनिक जीवन से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है तथा यह विद्यार्थियों में ज्ञान वृद्धि के साथ–साथ उनके जीविकोपार्जन में भी बहुत सहायक है और यही कारण है कि गणित के ज्ञान को प्रारम्भ से ही विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य बनाने की सिफारिश विभिन्न आयोगों और समितियों द्वारा की गई है। आइए हम लोग गणित शिक्षा एवं उसके महत्त्व को जानने व समझने का प्रयत्न करें।

15.4.1 गणित शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व

गणित का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत एवं व्यापक है और इस कारण से गणित शिक्षा हमारे सभी विद्यालयी विषयों से सम्बन्धित है और उनके ज्ञान प्राप्ति में सहायक है। गणित शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्त्व को सीमित शब्दों में व्यक्त करना बहुत ही कठिन है लेकिन फिर भी गणित शिक्षा की महत्त्वपूर्ण पक्ष को निम्नांकित ढंग से व्यक्त किया जा सकता है–

- गणित शिक्षा सिद्धान्तों एवं प्रत्ययों का ज्ञान कराकर विद्यार्थियों के लिए उत्तम गणितीय पृष्ठभूमि तैयार करती है।
- यह विद्यार्थियों को नई परिस्थितियों में गणितीय प्रत्ययों एवं सिद्धान्तों के अनुप्रयोग के योग्य बनाती है।
- यह विद्यार्थियों में दिन–प्रतिदिन की परिस्थिति में गणितीय चिन्तन एवं तर्क की योग्यता को स्थानान्तरित करती है।
- यह विद्यार्थियों में प्राकृतिक नियमों की स्पष्ट समझ प्रदान करती है।
- यह विद्यार्थियों में संस्कृति तथा नागरिकता के विकास को स्पष्ट करती है।
- यह वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास में गणित के अनुप्रयोग की समझ विकसित करती है।
- यह विद्यार्थियों में दैनिक जीवन की आवश्यकता को पूरा करने के लिए पर्याप्त गणितीय कौशल प्रदान करती है।
- यह हमारे चारों तरफ के विश्व की बेहतर समझ को प्राप्त करने में सहायक है।
- यह सामाजिक समस्याओं के स्वतंत्र समाधान की योग्यता विकसित करती है।

- यह व्यक्ति को आत्मनिर्भर, आत्मविश्वासी, सहिष्णु तथा खुले मस्तिष्क वाला बनाने में सहायक है।
- यह विश्व को समझने की दृष्टि प्रदान करती है तथा समस्याओं के समाधान की रूपरेखा प्रदान करती है।
- गणित शिक्षा संचार के आवश्यक घटकों को प्रदान करती है।
- यह अधिगमकर्ता के लिए शक्तिशाली उपकरण की तरह कार्य करती है।
- यह समस्याओं के समाधान हेतु विधि के चिन्तन की योग्यता विकसित करती है।
- यह कक्षा–कक्ष के बाहर कला, विज्ञान तथा अन्य विद्यालयी विषयों एवं दिन–प्रतिदिन के जीवन, विशेष रूप से भौतिक घटनाओं इत्यादि क्षेत्रों में गणितीय विचारों और सम्बन्धों के अनुप्रयोग की योग्यता विकसित करती है।

15.4.2 विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित का स्थान

गणित शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्त्व को समझने के पश्चात् अब यह प्रश्न उठता है कि विद्यालयी शिक्षा में गणित को क्या स्थान प्रदान किया जाए? प्राचीन काल से लेकर अब तक अनेक शिक्षाविदों, दार्शनिकों तथा मनोवैज्ञानिकों ने गणित की शिक्षा को विद्यालयी शिक्षा का अनिवार्य अंग बनाने तथा न बनाने की वकालत की है लकिन चूँकि गणित विषय की अपनी एक विशेष संरचना है अतः इस विषय को समझने के लिए विद्यार्थियों में पर्याप्त मानसिक योग्यता का विकसित होना आवश्यक माना गया है। अतः इस कारण गणित विषय को विद्यालयी शिक्षा का अनिवार्य अंग न बनाए जाने के पक्ष में निम्नांकित तर्क दिए जा सकते है–

- गणित बहुत ही जटिल विषय है तथा इसको सीखने के लिए विशेष प्रकार की बुद्धि की आवश्यकता होती है अतः सभी बच्चों को गणित की शिक्षा ग्रहण करने में कठिनाई होगी।
- गणित की शिक्षा मुख्यतः इसके अनुशासनात्मक रूप के कारण दी जाती है लेकिन यदि हमारे शिक्षक योग्य एवं संसाधन से परिपूर्ण है तो किसी भी विषय के शिक्षण से वे विद्यार्थियों के मानसिक शक्तियों को विकसित कर सकते हैं। अतः गणित को अनिवार्य विद्यालयी विषय बनाए जाने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती है।
- सभी विद्यार्थियों में विशिष्ट गणितीय अभिक्षमता तथा योग्यता नहीं होती है जिससे कि वह इस विषय में सफल निष्पादन कर सकें। इस दृष्टि से इसे विद्यालयी स्तर पर ऐच्छिक विषय के रूप में शामिल करना उचित होगा।
- उच्च कक्षाओं में गणित का ज्ञान उन्हीं विद्यार्थियों के लिए उपयोगी होता है जो भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान अथवा गणित को ही अपने भविष्य अध्ययन का विषय रखना चाहते हैं। अतः सभी विद्यार्थियों के लिए गणित की शिक्षा अनिवार्य करना उचित नहीं है।
- अन्य विषयों की अपेक्षा, विद्यालयी स्तर की परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने वाले छात्रों की संख्या गणित विषय में सर्वाधिक होती है जो विद्यार्थियों के मन में कुण्ठा विकसित करती है।

विद्यालयी शिक्षा में किसी भी विषय का महत्त्व व स्थान इस बात पर निर्भर है कि वह विषय विद्यालयी शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त ककरने में किस सीमा तक सहायक हो रहा है। यदि कोई विषय शिक्षा के उद्छेश्यों को प्राप्त करने में अधिक सहायक सिद्ध हो रहा है तो उस विषय की महत्ता स्वाभाविक है कि अधिक हो जायेगी। प्राचीन काल से ही गणित अन्य विषयों की अपेक्षा, शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति में अधिक सहायक रहा है। वर्तमान युग विज्ञान एवं तकनीकी का है तथा इस युग जो कुछ भी प्रगति विज्ञान के कारण हुयी है उसका श्रेय गणित को दिया जाना चाहिए और गणित के इस महत्त्व को ध्यान में रखते हुए विद्यालयी स्तर पर

इसको पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग बनाने के पक्ष में निम्नांकित तर्क दिये जा सकते हैं–

- गणित के अध्ययन से मानसिक प्रशिक्षण का अवसर प्राप्त होता है जो विद्यार्थियों के बौद्धिक विकास को सकारात्मक ढंग से प्रभावित करता है।
- गणित विषय के अध्ययन हेतु किसी जन्मजात विशेष योग्यता एवं कुशलता की आवश्यकता नहीं होती है।
- गणित के अध्ययन से विद्यार्थियों को उनकी तर्क शक्ति, विचार शक्ति, अनुशासन, आत्म विश्वास तथा भावनाओं पर नियंत्रण रखने का प्रशिक्षण मिलता है।
- गणित के अध्ययन से ही छात्रों में नियमित तथा क्रमबद्ध रूप से ज्ञान ग्रहण करने की आदतों का विकास होता है।
- अन्य विषयों के अध्ययन में गणित के ज्ञान की प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से आवश्यकता पड़ती है।
- गणित का ज्ञान विज्ञान तथा इसकी विभिन्न शाखाओं के अध्ययन हेतु आधार प्रदान करता है।

अतः उपर्युक्त बिन्दुओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गणित ही एक ऐसा विषय है जिसके ज्ञान की आवश्यकता जीवन भर हो सकती है और यह तभी सम्भव है जब प्रत्येक विद्यार्थी कक्षा 10 तक अनिवार्य रूप से गणित का अध्ययन करें।

15.4.3 गणित शिक्षण के मूल्य

आज विद्यालयों में गणित एक अनिवार्य विषय है। गणित विषय को विद्यालयों या पाठ्यचर्या में अनिवार्य करने के लिए किसी विशेष दृष्टिकोण से गणित का मूल्यांकन अथवा परीक्षण करने की आवश्यकता नहीं है। अन्य विषयों की भाँति गणित भी बच्चों को एक सामाजिक तथा बुद्धिमान नागरिक के रूप में विकसित करने में सहायक है। व्यापक रूप से देखा जाय तो बच्चों को विद्यालय में विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भेजा जाता है तथा सामान्यतः यह अपेक्षा की जाती है कि विद्यालय में बालक ज्ञान तथा कुशलताओं की प्राप्ति करेगा, उसकी बौद्धिक व अन्य शक्तियों का विकास होगा, तथा वांछित दृष्टिकोण एवं आदर्शों को प्राप्त करेगा।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या गणित विषय का अध्ययन करने से विद्यार्थी इन लक्ष्यों की प्राप्ति करता है? यदि गणित का शिक्षण–अधिगम इन लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक है, तो यह शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यवान है तथा हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवसथा का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। वस्तुतः गणित विषय को इतना अधिक महत्त्व देने और अनिवार्य विषय बनाने से विद्यार्थियों को विभिन्न लाभ होते हैं जिसे हम गणित शिक्षण के मूल्य कह सकते हैं आइए हम लोग गणित शिक्षण के मूल्यों का विश्लेषण करें–

बौद्धिक मूल्य– मानसिक तथा बौद्धिक विकास के लिए गणित के अध्ययन का अत्यधिक महत्त्व है। पाठ्यक्रम के अन्तर्गत कोई भी विषय के मस्तिष्क को उतना क्रियाशील नहीं बनाता है जितना कि गणित। गणित की प्रत्येक समस्या, एक ऐसे क्रम से गुजरती है जहाँ रचनात्मकता एवं सृजनात्मकता के अवसर उपलब्ध होते हैं। इस प्रकार बच्चें की सम्पूर्ण मानसिक शक्तियों का विकास गणित के अध्ययन से सरलतापूर्वक किया जा सकता है। इसके अध्ययन से बच्चों में निरीक्षण, तर्क, स्मरण, अन्वेषण, विचार, चिन्तन इत्यादि शक्तियों का विकास होता है तथा साथ ही साथ बालकों में मौलिकता, एकाग्रता, आत्मनिर्भरता तथा कठिन परिश्रम करने की आदतों का भी विकास होता है जो गणित के बौद्धिक मूल्य को प्रतिबिम्बित करता है।

प्रयोगात्मक मूल्य– मानव जीवन पूर्ण रूप से गणित के ज्ञान पर आधारित है। हमारे जीवन के प्रत्येक ज्ञान अथवा कार्य को समझने के लिए गणित के ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। हमारे जीव का कोई भी पहलू गणितीय ज्ञान के प्रयोग से अछूता नहीं है। हमारी दैनिक क्रियाएँ, माप–तौल और गणनाएँ गणित के ज्ञान तथा उसके प्रयोग पर ही आधारित हैं जो कि गणित के प्रयोगात्मक मूल्य को इंगित

करती हैं।

अनुशासन सम्बन्धी मूल्य– गणित का ज्ञान केवल विद्यार्थियों की मानसिक शक्तियों का विकास एवं उनका नियंत्रण ही नहीं करता बल्कि उनके व्यक्तित्व को गम्भीरता, विवेक एवं चिन्तनशीलता जैसे गुण भी प्रदान करता है। गणित का ज्ञान रखने वाला व्यक्ति भावनाओं के प्रवाह में आकर नियम के विरूद्ध कार्य नहीं कर पाता है तथा निर्णय लेने से पूर्व अपनी तर्क–शक्ति, विवेक, धैर्य एवं आत्मविश्वास का उचित उपयोग करता है। यही कारण है कि गणित के अध्ययन से विद्यार्थियों में अनुशासन सम्बन्धी मूल्य भी विकसित हो जाते हैं।

नैतिक मूल्य– नैतिकता एक ऐसा महत्त्वपूर्ण प्रत्यय है जो समय, व्यक्ति, स्थान, परिस्थिति से सर्वाधिक प्रभावित होता है। गणित के अध्ययन से बच्चों में चारित्रिक एवं नैतिक गुण जैसे कि स्वच्छता, यथार्थता, समयनिष्ठता, ईमानदारी, न्यायप्रियता, कर्तव्यनिष्ठता, आत्मनियंत्रण, आत्मनिर्भरता, आत्मसम्मान, स्वतः ही विकसित हो जाते हैं।

सामाजिक मूल्य– गणित का महत्त्व सामाजिक दृष्टि से अत्यधिक है। गणित का अध्ययन सामाजिक संरचना के समुचित संगठन तथा पोषण में सहायक होता है। गणितीय विधियाँ जैसे कि वैज्ञानिक विधि, आगमन विधि, निगमन विधि तथा खोज विधि इत्यादि का उपयोग सामाजिक नियमों के निर्माण तथा अनुपालन के खोज, विश्लेषण तथा अनुमान को प्राप्त करने में किया जाता है। किसी समाज में किसी व्यक्ति की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह कितने अच्छे ढंग से समुदाय का अंग बन पाता है तथा समुदाय की प्रगति में वह किस प्रकार तथा कितना योगदान कर रहा है, और कितने अच्छे ढंग से समुदाय तथा उसके कार्यों द्वारा स्वयं लाभान्वित हो रहा है। आज हमारी सामाजिक उपस्थिति, विज्ञान तथा तकनीकी के ज्ञान से पूरी तरह नियंत्रित हो रही है जिसे गणित के अध्ययन द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

गणित का ज्ञान सामाजिक संस्थाओं जैसे कि बैंक, सहकारी, रेलवे, डाक घर, बीमा कम्पनियाँ, औद्योगिक प्रतिष्ठान, आवागमन इत्यादि के समुचित संगठन तथा अनुरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एक व्यक्ति सामान्य सामाजिक जीवन यापन अच्छे ढंग से तभी कर सकता है जब उसके पास सामाजिक माँगों को पूरा करने के लिए प्रारम्भिक गणित का ज्ञान हो।

सांस्कृतिक मूल्य– संस्कृति मूल्यों की ऐसी संगठित प्रणाली होती है जिसे समाज के व्यक्तियों में औपचारिक एवं अनौपचारिक ढंग से हस्तान्तरित किया जाता है। यद्यपि कि विश्व की विभिन्न समाज की शैक्षिक प्रणालियों में पढ़ाये जाने वाली गणित की पाठ्यचर्या समान है फिर भी इसका ज्ञान एवं विषयवस्तु उस विशेष समाज की संस्कृति को प्रतिबिम्बित करता है जिसमें उसका ज्ञान प्रदान किया जा रहा है अतः गणित हमारे समाज का एक अभिन्न अंग है तथा पाठ्यक्रम में विशेष स्थान रखता है। किसी समाज में व्यक्तियों का रहन–सहन, खाना–पीना, उठना–बैठना बहुत हद तक वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी के प्रगति पर निर्भर रहता है तथा अन्ततोगत्वा वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी की प्रगति गणित के विकास एवं प्रगति पर निर्भर है।

सौन्दर्यात्मक मूल्य– सामान्यतः लोगों की यह धारणा है कि गणित एक नीरस तथा बोझिल विषय है लेकिन गणित की विभिन्न समस्याओं का समाधन करने पर व्यक्ति को उसी आनन्द की प्राप्ति होती है जो आनन्द एक मधुर गीत को सुनकर अथवा एक सुन्दर कलाकृति को देखकर होती है। गणित को कलाओं का सृजनकर्ता तथा पोषक भी कहा जाय तो गलत नहीं होगा क्योंकि सभी कलाएँ यथा– चित्रकला, मूर्तिकला, नृत्यकला अथवा संगीत की प्रगति में गणित का विशेष महत्त्व है लेविनिज ने भी स्पष्ट किया है कि ''संगीत मानव के अवचेतन मन का अंक गणित की संख्याओं से सम्बन्धित एक आधुनिक रूप से अप्रत्यक्ष व्यायाम है।

अवकाश के सदुपयोग करने के लिए गणित की संख्याओं के खेल व पहेलियाँ विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। विभिन्न गणितीय खेल या पहेलियाँ बच्चों का केवल मनोरंजन ही नहीं करती बल्कि बच्चों में आनन्द की

अनुभूति तथा गणित के ज्ञान की प्रशंसा करने की भावना को भी प्रबल करती है जो गणित के सौन्दर्यात्मक तथा कलात्मक मूल्य को दर्शाता है।

इसके अतिरिक्त गणित शिक्षण के कुछ अन्य मूल्य भी हो सकते हैं जिनमें प्रमुखतः जीविकोपार्जन से सम्बन्धित मूल्य, मनोवैज्ञानिक मूल्य, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सम्बन्धित मूल्य, मनोरंजनात्मक मूल्य तथा अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य हैं। सारांशतः यह कहा जा सकता है कि मानव जीवन का कोई ऐसा पक्ष नहीं है जो गणित के ज्ञान से सम्बन्धित एवं प्रभावित न हो रहा हो। गणित का शिक्षण अधिगम अनेक लाभप्रद मूल्यों को विकसित करता है लेकिन गणित के अधिगम से यह मूल्य स्वतः ही प्राप्त नहीं किये जा सकते, केवल गणित का संसाधन युक्त शिक्षक ही अपने प्रयासों तथा योजनाओं के माध्यम से विद्यार्थियों में इन मूल्यों को विकसित कर सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. गणित विषय को विद्यालयी पाठ्यचर्या का अनिवार्य अंग बनाने के पक्ष में किन्हीं तीन तर्कों को प्रस्तुत कीजिए?

.....

.....

5. गणित शिक्षण के महत्त्वपूर्ण मूल्य कौन–कौन से हैं?

.....

.....

15.5 गणित की विद्यालयी पाठ्यचर्या में वर्तमान प्रवृत्तियाँ

गणित पाठ्यचर्या के सन्दर्भ में विगत् कुछ वर्षों से यह सुझाव प्रदान किया जाता रहा है कि बच्चे को संख्या पद्धति के अन्तर्गत 'प्राकृतिक संख्याओं', 'भिन्नों', 'ऋणात्मक संख्याओं' से प्रारम्भ कर 'परिमेय संख्या पद्धति' तत्पश्चात् 'अपरिमेय' और 'वास्तविक संख्या पद्धति' के प्रत्यय को क्रमशः विकसित करने के बजाय 'वास्तविक संख्या पद्धति' के प्रत्यय को प्रारम्भ से ही विकसित किया जाना चाहिये, इसका आशय यह है कि अंकगणित तथा ज्यामिति के अन्तर्सम्बन्ध को प्रारम्भ से ही सुनिश्चित किया जाना चाहिये तथा इसकी सहायता से 'ऋणात्मक संख्याओं' तथा 'भिन्नों' के प्रत्यय को कुछ छोटी प्राकृतिक संख्याओं के परिचित होने के तत्काल बाद पाठ्यचर्या में शामिल कर लेना चाहिये। इसके विपरीत गणित के उच्च शिक्षाविदों का मानना है कि वास्तविक संख्याओं की चर्चा पाठ्यचर्या में तब तक नहीं की जानी चाहिये जब तक कि 'अंकगणित', 'बीजगणित' तथा 'ज्यामिति' के प्रकरणों के माध्यम से विभिन्न परिमित तथा असंख्य अपरिमित संख्या पद्धति का प्रत्यय विद्यार्थियों में विकसित न कर लिया जाय, यदि इस प्रकार की प्रणाली प्रारम्भिक कक्षाओं में विकसित कर ली जाती है तो वास्तविक संख्या पद्धति तथा उनसे सम्बन्धित संक्रियाओं को हाईस्कूल स्तर पर विकसित किया जा सकता है।

माध्यमिक स्तर के पाठ्यचर्या में शामिल किया जाने वाला सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक नवाचार अमूर्त बीजगणित का मूलभूत प्रत्यय तथा इसका ज्यामिति में अनुप्रयोग के साथ 'समूह' (Group) और 'सदिश प्रणाली' है। अमूर्त बीजगणित के शिक्षण हेतु आधार का कार्य 'अंकगणितीय संक्रियायें', 'समुच्चय सिद्धान्त' तथा 'भौतिक ज्यामिति' करती है। अतः अमूर्त बीजगणित का अध्ययन सातवें कक्षावर्ग से प्रारम्भ किया जा सकता है।

माध्यमिक विद्यालयों में अमूर्त बीजगणित के विषयवस्तु के अन्तर्गत मूलभूत संरचनाओं जैसे कि 'ग्रुप्स', 'रिंग्स', 'फील्ड्स', 'सदिश प्रणाली की संक्रियायें', मौलिक प्रत्यय जैसे कि 'होमोमारफिज़्म', 'आइसोमारफिज्म', 'एण्डोमारफिज्म' तथा कुछ सरल प्रमेयों को शामिल किया जाना चाहिये।

गणितीय पाठ्यचर्या की ज्यामितीय विषयवस्तु का संगठन इस प्रकार से होना चाहिये कि पूर्व की कक्षाओं में अध्ययन किया गया बीजगणित उसके लिये अधिक उपयोगी साबित हो। यूक्लिडियन ज्यामिति के परम्परागत् विषयवस्तु को अधिक स्पष्ट तथा तार्किक ढंग से प्रस्तुत किया जाना चाहिये।

गणितीय पाठ्यचर्या का समाकलिक दृष्टिकोण गणित को एकल विषय के रूप में देखता है तथा यह गणित को अलग–अलग उपविषयों जैसे कि अंकगणित, बीजगणित तथा रेखागणित आदि में विभाजित नहीं करता है। इस उपागम का मानना है कि इन उपविषयों के मध्य स्पष्ट विभाजन को रोका जाना चाहिये और ऐसा करने के लिये विद्यार्थियों का ध्यान गणित की मूलभूत संरचना पर केन्द्रित करना पड़ेगा तथा विभिन्न विषयों के मध्य एकक के प्रति विद्यार्थियों को जागरूक करना होगा। उदाहरणतः यूक्लिडियन संश्लेषण ज्यामिति की जगह बीजगणितीय क्रियाकलाप के माध्यम से, बीजगणित, ज्यामिति तथा त्रिकोणमिति के मध्य अवरोध को समाप्त किया जा सकता है। उसी प्रकार रेखीय बीजगणित सदिशों तथा ज्योमिति के संश्लेषणात्मक एवं विश्लेषणात्मक भागों के मध्य अन्तर्सम्बन्धों पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिये क्योंकि ये एक ही गणितीय तथ्य को तीन अलग–अलग भाषाओं में प्रस्तुत करते हैं।

इसी प्रकार 'सर्वसमिकायें', 'असाम्यताएँ', 'समीकरण', 'अवकल समीकरण के समाधान', 'सदिश तथा अदिश समीकरण' इत्यादि, सभी में बीजगणितीय संक्रियाओं का बहुतायत से उपयोग किया जाता है। इस प्रकार से सांख्यिकीय जिसे एक अलग विषय के रूप में अध्ययन किया जाता था, उसे भी हाईस्कूल स्तर की गणितीय पाठ्यचर्या में शामिल कर लिया गया है। इस तरह से माध्यमिक और उच्च माध्यमिक कक्षाओं के गणितीय पाठ्यचर्या का पुनरावलोकन अन्तर्विषयक उपागम को आधार बनाकर किया गया है और इसका कारण लगभग सभी विद्यालयी विषयों पर गणित के प्रभाव को माना जा सकता है।

15.6 प्रमुख गणितज्ञों का जीवन परिचय एवं उनका योगदान

आर्यभट्ट प्रथम (499ई0)– भारतीय गतिण शास्त्र के इतिहास में आर्यभट्ट एक बहुत ही सम्माननीय एवं प्रभावपूर्ण नाम है। इतिहास में जहाँ तक हम इस नाम की पुनरावृत्ति पाते हैं ऐसी अवस्था में यह कठिन हो जाता है कि प्राचीन काल में आर्यभट्ट नाम से कितने गणितज्ञ भारत में हुए, परन्तु वर्तमान में यह माना जाता है कि आर्यभट्ट नाम के गणित के दो विद्वान भारत में अवश्य थे इनमें से एक पटना के रहने वाले थे तथा उन्होंने आर्यभटीय नामक पुस्तक की रचना 499ई0 में की थी। इस पुस्तक के प्रथम दो पादों में गणित तथा अन्तिम दो पादों में ज्योतिष का वर्णन है। प्रथम पाद दशमीतिका में बड़ी संख्याओं को वर्णमाला के अक्षरों द्वारा निरूपण की विधि बतायी गयी है। इसके द्वितीय पाद, गणित पाद में अंक गणित, रेखागणित, बीजगणित और त्रिकोणमिति के अनेक कठिन प्रश्नों का समावेश है। बीजगणित में साधारण एवं एक वर्गीय समीकरण कुटक अर्थात् अनिर्णीत समीकरण का विस्तृत विवरण है।

रेखागणित के क्षेत्र में आर्यभट्ट ने π (पाई) का मान दशमलव के चार स्थानों तक ज्ञात किया। अंक गणित के क्षेत्र में 'वर्गमूल' तथा 'घनमूल' ज्ञात करने की विधियों तथा त्रैराशिक नियम का भी उल्लेख प्राप्त होता है। आर्यभट्ट ने ही सर्वप्रथम यह प्रतिपादित किया कि पृथ्वी गतिशील और सूर्य स्थिर है।

श्रीनिवास रामानुजम्– श्रीनिवास रामानुजम् का जन्म तमिलनाडु राज्य के इरोद नामक गाँव में 1887ई0 में हुआ था। बचपन से ही ये गणित में विशेष रुचि लेते थे। वे अपने दोस्तों मित्रों का मनोरंजन गणितीय पहेलियों एवं सूत्रों के द्वारा किया करते थे। वे अपने साथियों एवं अपने अध्यापकों से गणित के बहुत से सवाल पूछा करते थे। जब वह तीसरी कक्षा में पढ़ते थे तो एक दिन उनके गणित के अध्यापक यह पढ़ा रहे थे कि 'किसी संख्या को उसी संख्या से भाग दिया जाय तो भागफल हमेशा एक आता है।' कक्षा के सभी छात्र अपने अध्यापक की बात को चुपचाप सुन रहे थे लेकिन रामानुजम् ने तुरन्त खड़े होकर अपने अध्यापक से पूछा कि

क्या यह नियम शून्य के लिए भी लागू होगा? इस प्रकार के अनेकों गूढ़ प्रश्न पूछकर प्रारम्भ से ही वे अपने शिक्षकों को आश्चर्यचकित किया करते थे।

आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण रामानुजम् बहुत अधिक शिक्षा ग्रहण न कर सके तथा मद्रास ट्रस्ट में बहुत ही कम वेतन पर नौकरी कर ली। इसी दौरान उनकी मुलाकात डॉ0 बाकर से हुई जो उनसे बहुत प्रभावित हुए। डॉ0 बाकर के प्रयासों से इनको मद्रास विश्वविद्यालय से दो वर्ष के लिए छात्रवृत्ति मिल गई जिससे उनकी आर्थिक समस्या कम हो गयी तथा वो अपना अधिकांश समय गणित के अध्ययन में देने लगे। रामानुजम् ने अपने कुछ गणितीय लेख डॉ0 हार्डी के पास भेजे। डॉ0 हार्डी तथा उनके सहयोगी इन लेखों से बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने रामानुज को कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय बुलाने का निर्णय किया इस प्रकार उनको इंग्लैण्ड जाने की अनुमति मिल गयी। जहाँ पर उन्होंने गणित के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य किया।

15 वर्ष की अवस्था में ही रामानुजम् ने 'जादू के वर्गों' की रचना के नियमों को प्रतिपादित किया। ज्यामिति में उन्होंने वृत्त को वर्ग के रूप में व्यक्त करने पर विचार किया तथा पृथ्वी की भूमध्यरेखीय परिधि की माप इतनी शुद्धता के साथ ज्ञात की कि सही माप से बहुत कम अन्तर ही रह गया। थामस हार्डी को भेजे गये 120 प्रमेयों में से हार्डी ने 15 प्रमेय ऐसे छाँटे जिनके विषय में वे स्वयं भी बहुत आश्चर्यचकित थे। इन प्रमेयों में 'हाइपर ज्यामिति', 'इलिप्टिक इंटीगरल' तथा 'अपसारी श्रेणी' पर भी उदाहरण सम्मिलित किये गये। रामानुजम् ने आगमन विधि द्वारा गणित के सभी क्षेत्रों में कार्य किया जहाँ वे उदाहरण से प्रारम्भ करके व्यापक परिणामों तक पहुँचे। 'मॉक थीटा फंक्शन' पर उनका सम्पूर्ण कार्य मृत्युशैया पर ही हुआ। इस प्रकार गणित के क्षेत्र में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

यूक्लिड– यूक्लिड का जन्म अलैक्जैन्ड्रिया में 300ई0 पूर्व के लगभग हुआ था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा एथेन्स में हुई थी। यूक्लिड का सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ 'एलिमैण्टस' है। जिसके अब तक 1000 से अधिक संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। इस ग्रन्थ में इन्होंने 'सर्वांगसमता', 'समानता', 'बीजगणितीय सर्वसम्मिकाएँ', 'क्षेत्रफल', 'वृत्त', 'समानुपात', 'ठोस ज्यामिति' आदि विषयों का उल्लेख किया है। इसके अलावा यूक्लिड ने 'डेटा', 'आकृतियों का विभाजन' 'स्यूडेरिया' (Psendaria), 'शांक्व', 'पोरिज्म्स' तथा 'तल बिन्दु' नामक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना की है।

पाइथागोरस– पाइथागोरस का जन्म ग्रीस के निकट एशियन सागर के मध्य 'सामोस' नामक स्थान पर लगभग 580ई0 पूर्व में हुआ था। इनके गुरु का नाम थेल्स था जो यूनान के महान विद्वान थे। इन्होंने एक प्रमेय की रचना की जिसे 'पाइथागोरस प्रमेय' के नाम से जाना जाता है। इस प्रमेय में यह स्पष्ट किया गया है कि ''किसी सम्पूर्ण त्रिभुज में कर्ण पर बना वर्ग शेष दो भुजाओं पर बने वर्गों के योग के बराबर होता है।'' पाइथागोरस ने समस्त संख्याओं को सम और विषम भागों में बदलने का कार्य किया। इन्होंने कुछ संख्याओं को ''त्रिभुज संख्या'' का नाम दिया। 1, 3, 6 और 10 आदि 'त्रिभुज संख्याएँ' हैं। पहली दो संख्याओं का योग (1+2=3) प्रथम त्रिभुज संख्या, पहली तीन संख्या का योग (1+2+3=6) द्वितीय त्रिभुज संख्या। तथा प्रथम चार संख्याओं का योग (1+2+3+4=10) तीसरी त्रिभुज संख्या कहलाती है। पाइथोगोरस के समर्थकों ने 'पाइथागोरस स्कूल' की स्थापना की। इस स्कूल के गणितज्ञों ने अनेक गणितीय शब्दों जैसे–मैथेमेटिक्स, पैराबोला, इलिप्स, हाइपरबोला आदि की खोज की।

श्रीधराचार्य– भारतीय गणितज्ञों की शृंखला में श्रीधराचार्य का नाम बड़े ही आदर व सम्मान के साथ लिया जाता है। ये भाष्कराचार्य के समकालीन माने जात हैं। इनका जन्म कर्नाटक प्रान्त में सन् 991ई0 को हुआ था। इनके पिता का नाम बलदेव शर्मा व माता का नाम अलोका था। प्रारम्भिक शिक्षा इन्होंने अपने पिता से प्राप्त की जिसके अन्तर्गत मुख्य रूप से संस्कृत व कन्नड़ का ज्ञान प्राप्त किया। श्रीधराचार्य का प्रसिद्ध ग्रन्थ 'गणितसार' के नाम से जाना जाता है। इसमें 300 श्लोक हैं जिसकी वजह से यह ग्रन्थ 'त्रिशतिका' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस ग्रन्थ में प्राकृतिक संख्याओं की 'मालाएँ', 'गुणा', 'भाग', 'शून्य', 'वर्ग', 'घन', 'वर्गमूल', 'घनमूल', 'भिन्न', 'त्रैराशिक', 'ब्याज', 'मिश्रण', 'साझा' आदि प्रकरणों पर चर्चा की गयी है।

श्रीधराचार्य की प्रमुख पुस्तकों में 'त्रिशतिका', 'नवशतिका', 'पाटीगणित' तथा 'बीजगणित' प्रमुख हैं। श्रीधराचार्य को सबसे अधिक ख्याति द्विघात समीकरण के हल करने सम्बन्धी सूत्र के कारण प्राप्त हुई, इस विधि को इतनी प्रसिद्धि मिली कि इसे 'श्रीधराचार्य विधि' के नाम से पुकारा जाने लगा। अंक गणित तथा बीजगणित के साथ–साथ श्रीधराचार्य ने रेखागणित में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इन्होंने रेखागणित के अन्तर्गत 'वृत्त के क्षेत्रफल' को 'वृत्त की परिधि और व्यास' का चतुर्थांश बताया है। गणित के क्षेत्र में श्रीधराचार्य के योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता है।

भाष्कराचार्य द्वितीय – भाष्कराचार्य द्वितीय द्वारा लिखित पुस्तक 'सिद्धान्त शिरोमणि' से ज्ञात होता है कि उनका जन्म बीजापुर में हुआ था। सिद्धान्त शिरोमणि में चार अध्याय– 'लीलावती', 'बीजगणित', 'गोलाध्याय' तथा गृहगणित' शामिल है। गोलाध्याय में पृथ्वी के गोलाकार होने का विचार व्यक्त किया गया है। भाष्कराचार्य को गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त न्यूटन से पहले ही ज्ञात था। तथा उन्होंने इरसे 'धारणीकात्मक शक्ति' (Gravitational Power) कहा था। भाष्कराचार्य ने करणी (Surds), क्रमचय, संचय, घन समीकरण तथा द्विवर्गात्मक समीकरणों पर विचार प्रस्तुत किये। भाष्कराचार्य ने अवकलन स्थिरांक तथा गोले के क्षेत्रफल एवं आयतन के सूत्र भी प्रतिपादित किये।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

(क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. एलिमैण्ट्स नामक पुस्तक के लेखक कौन हैं?

.....

.....

7. द्विघात समीकरण को हल करने के सूत्र को देने वाले गणितज्ञ का क्या नाम है?

.....

.....

8. सिद्धान्तशिरोमणि के लेखक कौन है?

.....

.....

9. पाइथागोरस कहाँ के रहने वाले थे?

.....

.....

15.7 सारांश

गणित शब्द बहुत ही प्राचीन है तथा शाब्दिक रूप से इसका अर्थ उस शास्त्र से है जिसमें गणना की प्रधानता हो। गणित, विज्ञान की क्रमबद्ध, संगणित तथा ऐसी यथार्थ शाखा है जिसमें मात्रात्मक तथ्यों एवं सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। गणित की प्रकृति अमूर्त है तथा गणित की समस्याओं के समाधान में इसके 'स्वयंसिद्ध स्वरूप' का भी प्रयोग किया जाता है। गणित के स्वयंसिद्ध स्वरूप के अन्तर्गत गणितीय प्रणाली के 'अपरिभाषित पद', 'परिभाषित पद', 'स्वयंसिद्धियाँ' एवं 'प्रमेयों' का प्रयोग किया जाता है। गणित अपने

उपशाखाओं जैसे कि 'अंकगणित', 'बीजगणित' तथा 'रेखागणित' के साथ आन्तरिक रूप से सहसम्बन्धित होती है साथ ही साथ यह लगभग सभी विद्यालयी विषयों जैसे कि 'भौतिक विज्ञान', 'रसायन विज्ञान', 'जीव विज्ञान', 'सामाजिक विज्ञान' तथा 'भाषा' इत्यादि से भी घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है।

विद्यालयी पाठ्यचर्या में गणित को बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। फिर भी इसे विद्यालयी–पाठ्यचर्या का अनिवार्य अंग न बनाने के पक्ष में तर्क देते हुए कहा जा सकता है कि यह एक जटिल विषय है, इसके अध्ययन के लिए विद्यार्थियों में विशिष्ट गणितीय अभिक्षमता की आवश्यकता होती है तथा केवल विज्ञान वर्ग के विद्यार्थियों के लिए यह अधिक उपयोगी है जबकि विद्यालयी स्तर पर गणित को पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग बनाने के पक्ष में यह तर्क दिया जा सकता है कि इसके अध्ययन से विद्यार्थियों का मस्तिष्क प्रशिक्षित होता है। बौद्धिक विकास सकारात्मक होता है, उनकी तर्कशक्ति, विचारशक्ति, अनुशासन, आत्मविश्वास तथा भावनाओं पर नियंत्रण रखने जैसी शक्तियों का प्रशिक्षण प्राप्त होता है। अतः गणित विषय को विद्यालयी स्तर पर पाठ्यचर्या में अनिवार्य रूप से शामिल किया जाना चाहिए। वस्तुतः गणित विषय को इतना अधिक महत्त्व देने और अनिवार्य विषय बनाने से विद्यार्थियों को अनेक लाभ होते हैं जिसे हम गणित शिक्षण के मूल्य कहते हैं। गणित शिक्षण के प्रमुख मूल्यों में– बौद्धिक मूल्य, प्रयोगात्मक मूल्य, अनुशासन सम्बन्धी मूल्य, नैतिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य तथा सौन्दर्यात्मक मूल्य शामिल है।

गणितीय पाठ्यचर्या का समाकलित दृष्टिकोण गणित को एकल विषय के रूप में देखता है तथा गणित के अलग–अलग उपविषयों के विभाजन को रोकने की संस्तुति करता है। गणित की वर्तमान प्रवृत्तियाँ गणितीय पाठ्यचर्या के समाकलित दृष्टिकोण को अपनायी हुई प्रतीत होती हैं एवं गणित के सभी उपभागों को आपस में सम्बन्धित करके पढ़ाये जाने पर बल देती हैं। माध्यमिक स्तर की पाठ्यचर्या में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक नवाचार अमूर्त बीजगणित का मूलभूत प्रत्यय तथा इसका ज्यामिति में अनुप्रयोग के साथ समूह और सदिश प्रणाली है। अतः विद्यालयी स्तर पर अमूर्त बीजगणित तथा इसकी मूलभूत संक्रियाओं को पाठ्यक्रम में अनिवार्य रूप से शामिल किया जाना चाहिए। यद्यपि कि गणित के क्षेत्र में बहुत सारे गणितज्ञों ने अपना अनूठा योगदान दिया है लेकिन प्रमुख रूप से आर्यभट्ट, भाष्कराचार्य, श्रीनिवास रामानुजम्, श्रीधराचार्य, पाइथागोरस तथा यूक्लिड इत्यादि गणितज्ञों का योगदान अधिक सराहीन है।

15.8 अभ्यास के प्रश्न

1. गणित की प्रकृति एवं क्षेत्र को स्पष्ट कीजिए?
2. गणित में अपरिभाषित शब्द से आप क्या समझते हैं?
3. विद्यालयी स्तर पर गणित शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्त्व को समझाइए?
4. गणित शिक्षण के विभिन्न मूल्य क्या हैं?
5. गणित की विद्यालयी पाठ्यचर्या में वर्तमान प्रवृत्तियों का वर्णन कीजिए?

15.9 चर्चा के बिन्दु

1. गणित अपने विभिन्न उपशाखाओं से कि प्रकार सम्बन्धित है? चर्चा कीजिए।
2. गणित के किन्हीं दो प्रसिद्ध गणितज्ञों का जीवन परिचय एवं योगदान के विषय में चर्चा कीजिए।

15.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. गणित का शाब्दिक अर्थ है– वह शास्त्र जिसमें गणना की प्रधानता हो। गणित के शब्दकोषीय अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि 'गणित या तो संख्या और स्थान का विज्ञान है अथवा यह मापन, मात्रा और परिमााण का विज्ञान है।
2. स्वयंसिद्धियाँ, अपरिभाषित पदों से निकाले गये निश्चयात्मक कथन है तथा इनको ऐसे सम्बन्धों के

रूप में व्यक्त करते है जिन्हें सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होती।

3. 'प्रमेय' ऐसे कथन होते हैं जिन्हें स्वयंसिद्ध कथनों द्वारा तर्क से प्राप्त किया जाता है।
4. गणित विषय को विद्यालयी पाठ्यचर्या का अनिवार्य अंग बनाने के पक्ष में निम्नांकित तर्क दिये जा सकते हैं–

   (i). गणित के अध्यय से विद्यार्थियों को मानसिक प्रशिक्षण का अवसर प्राप्त होता है।

   (ii). अन्य विषयों के अध्ययन में गणित के ज्ञान की प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष आवश्यकता होती है।

   (iii). छात्रों में नियमित तथा क्रमबद्ध रूप से ज्ञान ग्रहण करने के आदतों का विकास होता है।

5. गणित शिक्षण के महत्त्वपूर्ण मूल्यों में बौद्धिक मूल्य, प्रयोगात्मक मूल्य, अनुशासन सम्बन्धी मूल्य, नैतिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य तथा सौन्दर्यात्मक मूल्य शामिल है।
6. 'एलिमैण्ट्स' नामक पुस्तक के लेखक यूक्लिड हैं।
7. द्विघात समीकरण को हल करने के सूत्र को देने वाले गणितज्ञ का नाम श्रीधराचार्य है।
8. 'सिद्धान्तशिरोमणि' के लेखक का नाम 'भाष्कराचार्य द्वितीय' है।
9. पाइथागोरस 'ग्रीस' के रहने वाले थे।

15.11 अध्ययन हेतु उपयोगी पुस्तकें

1. कुलश्रेष्ठ, ए. के. (2006), गणित शिक्षण, मेरठ : आर. लाल पब्लिकेशन।
2. जेम्स, ए. एवं बालसुब्रमण्यम्, पी. एस. (2010), टीचिंग ऑफ मैथेमैटिक्स, नई दिल्ली : नीलकमल पब्लिकेशन्स।
3. यादव, सियाराम (2005), टीचिंग ऑफ मैथेमैटिक्स, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर।

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज – 211013

"अपने भाइयों को मै सचेत करना चाहता हूँ कि मोम न बनें और आसानी से पिघल न जायें। छोटी-छोटी सी बातों के लिए ही हम अपनी भाषा को या संस्कृति को न बदलें।"

राजर्षि पुरूषोत्तमदास टंडन

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

प्रयागराज

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, प्रयागराज - 211013

www.uprtou.ac.in

टोल फ्री नम्बर- 1800-120-111-333